चन्द्रकान्ता सन्तति

बाबू देवकीनन्दन खत्री



चन्द्रकान्ता सन्तति

बाबू देवकीनन्दन खत्री

1



प्रकाशक :

भारती भाषा प्रकाशन
518/6 बी, विश्वासनगर
शाहदरा, दिल्ली-110032

आवरण : हरिप्रकाश त्यागी

संस्करण : 1995 मूल्य : 125.00

मुद्रक : विकास ऑफसेट
नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032

CHANDRAKANTA SANTATI, PART I (NOVEL) *by*
BABU DEVKINANDAN KHATRI

मूल्यहीनता का रचनालोक

चन्द्रकान्ता : चन्द्रकान्ता सन्तति

हिन्दी उपन्यास-यात्रा के एक सौ वर्ष की सम्पन्नता पर यह सोचते हुए बड़ा आश्चर्य होता है कि हिन्दी उपन्यास की लोकप्रियता का प्रारम्भ एक ऐसी रचना से होता है जिसका रचना लोक उसी प्रकार की मूल्यहीनता, आन्तरिक और बाह्य बिखराव का शिकार है जिस प्रकार की मूल्यहीनता और बिखराव का गहरा अहसास हम आज कर रहे हैं। शायद यह ऐसी मानवीय स्थिति है जो हर युग में, किसी-न किसी रूप में रही और संवेदनशील रचनाकारों को व्यग्र करती रही। मानवीय जीवन की विडम्बनायें और रचनाकार व्यवितत्वों की व्यग्रता के बीच संघर्ष और समंजन की प्रक्रिया निरन्तर चलती रही है···और यह संघर्ष रचना को सतह से उठाकर यथार्थवादी बनाने में जितना भाग निभाता रहा है, उतना ही योगदान समंजन की वृत्ति रचना को मूल्य गर्भित करती है! अर्थात कहीं-न-कहीं रचनाकार की यात्रा व्यग्रता से चलकर व्यवस्थित होने तक की यात्रा है। उसे अन्य शब्दों में मूल्यहीनता से मूल्य की ओर··· यथार्थ से आदर्श की ओर···या प्राप्त से काम्य की ओर···यात्रा की संज्ञा···या प्रक्रिया कहा जा सकता है। सर्जनात्मक स्तर पर रचनाकर जितने संश्लिष्ट जीवन को जितना वैविध्यपूर्ण बनाकर चित्रित करता है···रचना का फलक उतना ही बड़ा, बहुआयामी और अनेकार्थी होता है।···आज हिंदी उपन्यास की शताब्दी पूरी होने पर चन्द्रकान्ता और चन्द्रकान्ता संतति या इनके लेखक के लेखकीय व्यक्तित्व पर सोचते हुए, यदि अर्थों की कई दिशाएँ ! मन्तव्यों के कई धरातल अनुभव होते हैं···तो वह रचना का केवल सफल या बड़ा होना ही नहीं, उसका विश्वजनीन और मूल्यबोधक होना भी है। और स्पष्ट है कि जब हम चन्द्रकान्ता के विषय में आज बात कर रहे हैं तो उसे सिर्फ तिलिस्मी ऐयारी या मनोरंजक उपन्यास समझकर ही बात नहीं कर रहे, हमें उस रचना में कहीं कुछ और भी अर्थवान दिख़ता है।

तो यह अर्थवान क्या है? और क्या यह वस्तुतः है? या हम केवल "ढूँढ़ निकालने" के रोमाँस से चमत्कृत होना या करना चाहते हैं! शायद ऐसा नहीं है! हिंदी उपन्यास पर जितना भी काम हुआ है, उसमें, अधिकांश में चन्द्रकान्ता जैसी रचनाओं का मूल्यांकन गम्भीर सामाजिक मूल्य गर्भित स्थिति और दृष्टि की रचनात्मक टकराहट के रूप से नहीं हुआ। उस पर पृष्ठों के पृष्ठ लिखे गये हैं। सारांश दिया गया है।

पात्रों की विशेषताएँ बताई गई हैं। तिलिस्मी और जासूसी उपन्यासों का सैद्धांतिक विश्लेषण कर उनका परीक्षण किया गया है···पर समाजगत मूल्यवत्ता की दृष्टि से वह 'अर्थवान' बहुत-कुछ छूटता गया जिसने प्रेमचन्द जैसे उपन्यासकार को एक निर्मित धरा-तल दिया···जिसका पक्ष या विपक्ष से उपयोग कर प्रेमचन्द ने उपन्यास विधा को हिन्दी के संदर्भ में आगे बढ़ाया ! मेरी जानकारी में चन्द्रकान्ता के पुनर्अध्ययन की सर्जनात्मक कोशिश प्रसिद्ध कथाकार राजेन्द्र यादव ने की···उनकें अध्ययन का मूल ही···उनके रचनात्मक सरोकारों को स्पष्ट करता है। उन्होंने इस उपन्यास पर विचार क्यों किया ? उसकी चर्चा करते वे कहते हैं—

सबसे बड़ा कारण तो मुझे यही लगता है कि जैसा कॅओस, मूल्यों का जैसा धपला, सही गलत की पहचान का जैसा एक सिरे से गायब हो जाना, उस समय के समाज में, या कम-से-कम इस उपन्यास में आया है, लोग जिस आसानी से ख़ेमे बदलते हैं; शायद आज आस-पास की स्थिति एकदम वैसी ही है। और इस बात की पड़ताल मेरे अपने लिए बहुत जरूरी हो गयी थी कि उस चतुर्दिक कॅऑस में वे क्या सूत्र, युक्ति, जिद या आस्था थी जो लेखक को साधे हुए थीं, क्या था जो छः हजार पन्नों तक लेखक को चलाये रख सका ? इसके बहाने संभव है, वही जीज मैं अपने भीतर भी खोज सकूँ ! (अठारह उपन्यास-पृ० 17-18)लेकिन यह प्रश्न केवल एक लेखक का पूर्ववर्ती लेखक से टकराना या, सार्थकता खोजना ही नहीं है···यह एक कृति को उसके सांस्कृतिक परिदृश्य के बाद दूसरे सांस्कृतिक परिदृश्यमें देखना भी है

तिलिस्म का स्वरूप और प्रकृति

तिलिस्मी और ऐथारी के उपन्यासों की प्रकृति ही विचित्र है। संयोगों और चमत्कारों के बावजूद उनमें मानवीय भावनाओं में केन्द्रित व्यक्ति व्यापार का अद्भुत चित्रण मिलता है। फिर आखिर यह तिलिस्म है क्या ?···इस पर प्रकाश डालते खत्री जी ने लिखा कि "खजाने की रक्षा के लिए मन्त्र युक्त बनी इमारत तिलिस्म कहलाती है।" (हिन्दी उपन्यास के सौ वर्ष पृ० 24) ऐसे में ज्योतिष के ज्ञाता ज्योतिष शास्त्र के आधार पर सब ग्रह आदि देखकर बताते हैं कि इस वंश में कोई होनहार राजकुमार होगा, और वह इस सम्पत्ति का अधिकारी होगा। जब वह अपनी सम्पत्ति को पाने की कोशिश करेगा तब उसका विरोध भी होगा, लेकिन उसी की शक्ति से डरावनी शक्लों और रासायनिक दवाओं के योग से बने पुतलों आदि का नाश होकर तिलिस्म टूटेगा— तिलिस्म का स्वरूप कुछ ऐसा है कि वह आसानी से नहीं टूटता, और उस सारे जन्तर मन्तर में एक बार प्रवेश करने पर सामान्य रूप से निकलने का रास्ता नहीं मिलता, किन्तु कहीं-न-कहीं वहाँ पर सारे तिलिस्म के रहस्य को खोलने वाली और मार्ग दर्शन वाली एक किताब जरूर होती है और यह किताब भी उसी राजकुमार को मिलती है जो नायक होता है और तिलिस्म को तोड़ने में सफल हो जाता है।

तिलिस्मी संरचना में ऐयारों का गठन और कार्य प्रणाली बड़ी विचित्र होती है

और यह बहुत महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। ये ऐयार और ऐयारा नायक राजकुमार के सहायक होते हैं। जासूसी उपन्यासों में जो काम जासूस करते हैं, वही काम तिलिस्मी उपन्यासों में ऐयार और ऐयारा करते हैं।—पलक झपककर कहीं भी पहुँचना, वेष बदलना, शत्रु को चकमा देना और अपने बटुए में विचित्र चीजें रखना, किसी को बेहोश कर देना, और फिर समय आने पर होश में लाकर अपना काम करा लेना, संघर्ष आदि ये सारे काम तिलिस्मी संरचना के अंग हैं। लेकिन खत्री जी ने इस सारे रचनात्मक विधान में अपनी मौलिकता भी स्थापित की है। यद्यपि चन्द्रकान्ता और चन्द्रकान्ता संतति तथा भूतनाथ आदि रचनाओं में कथानक लगभग एक-सा ही है और बाहर से वह केवल रहस्यमय और मनोरंजक लगता है, लेकिन यदि उसमें भी जीवन की अर्थवत्ता ढूँढ़ी जाये तो अनेक सार्थक और मूल्य गर्भित संकेत मिल जायेंगे। यह विचित्र बात है कि राजकुमार, राजकुमारी का प्रेम फिर उस प्रेम को पाने के लिए विरोधी शक्तियों का संघर्ष, शौर्य और निष्ठा के अन्तरंग संयोग पर जीवन विकास की विविध छवियाँ ऐसी कृतियों को समय बाहर नहीं होने देतीं। तिलिस्म का यह स्वरूप ही जहाँ रहस्यमयता पैदा करता है, वहाँ कौतूहल और मनोरंजन का आधार भी होता है।

देवकीनन्दन खत्री की प्रथम रचना 'चद्रकान्ता' है और उसी क्रम में 'चन्द्रकान्ता संतति' आती है। चन्द्रकान्ता में नौगढ़ के राजकुमार वीरेन्द्रसिंह और विजयगढ़ की राजकुमारी चन्द्रकान्ता के प्रेम और संघर्ष की कहानी है। वीरेन्द्रसिंह, चन्द्रकान्ता पर मुग्ध होते हैं और उसे पाना चाहते हैं। लेकिन क्रूरसिंह भी चन्द्रकान्ता से विवाह करना चाहता है और शिवदत्त (चुनार का राजा) से मिलकर दोनों प्रेमियों के बीच बाधा बनता है। अन्त में क्रूरसिंह की मृत्यु होती है और नायक-नायिका का मिलन हो जाता है। उन्हें तिलिस्म में से बहुत अधिक सम्पत्ति मिलती है।

वीरेन्द्रसिंह और चन्द्रकान्ता की मृत्यु कथा को अन्य प्रासंगिक कथाओं से विस्तार दिया गया है। चपला और तेजसिंह भी प्रमुख पात्र होते हैं। और वे पाठक की कौतूहल वृत्ति को बनाये रखते हैं। इतनी विस्तृत कथा को लेखक अत्यन्त सुगठित रूप में आगे बढ़ाता रहता है।

'चन्द्रकान्ता संतति' में—24 भागों में इसी कथा को विकसित किया गया है। चन्द्रकान्ता के दो राजकुमार इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह के प्रेम पर आधारित लगभग पूर्ववर्ती कथा के अनुरूप वस्तु विन्यास किया गया है। चन्द्रकान्ता में जहाँ एक युगल का संघर्ष प्रमुख है वहाँ संतति में दो युगल प्रमुख हैं। और इस कारण पात्रों की संख्या बढ़ गई है। और खत्री जी ने इन बढ़े हुए पात्रों को भी अत्यन्त कुशलता से निभाया है। अनेक विद्वानों ते खत्री जी की कथा संगठनात्मक शक्ति की प्रसंसा की है।

सर्जनात्मक उपलब्धि

जैसा कि पहले कहा गया है कि हिंदी उपन्यास पर काम करते हुए ऐतिहासिक मोड़ और शुरूआत की दृष्टि से चन्द्रकान्ता का नाम लेना बहुत अनिवार्य हो जाता है।

लेकिन, वह केवल रचना के इतिहास बिन्दु की संज्ञा ही नहीं है, उसके अनेक रचनात्मक आयाम भी सामने आते हैं। और शायद इन रचनात्मक आयामों से प्रेरित होकर ही और उन्हें नयी रचनाशीलता के संदर्भ में प्रासंगिक मानते हुए ही कथाकार राजेन्द्र यादव ने चन्द्रकान्ता पर पुनर्विचार किया। उन्होंने इसे किसी-न-किसी रूप में उन प्रमुख रचनाओं के समकक्ष माना है जो अपने युग की मानसिकता और अन्तर व्यथा को गहरे में पकड़ती हैं। उन्होंने बहुत व्यापक स्तर पर उस पूरे राजनैतिक, सामाजिक परिप्रेक्ष्य को सामने रखा है जिसमें खत्री जी ने चन्द्रकान्ता की रचना की। और उसके निष्कर्ष बहुत दूर तक हमें प्रभावित भी करते हैं।

मुख्य बात यह है कि आज इस उपन्यास की चर्चा-परिचर्चा केवल प्रकाशन स्तर पर ही अर्थवान है या रचनात्मक स्तर पर भी। हमारे विचार में रचनात्मक स्तर पर इसका पर्यवेक्षण किसी न किसी रूप में साहित्य और समाज के आन्तरिक रिश्तों को समझने में सहायक होगा। चन्द्रकान्ता के कथानक का सुगठित फैलाव एक मूल्यहीनता का रचनालोक उपस्थिति करता है। "प्रेम और सम्पत्ति" दो केन्द्रीय आधारों पर हुआ संघर्ष महाभारत के कथा विकास के समान अपनी युगीन रचना सीमा में बढ़ता चलता जाता है। महाभारत में एक कथा के बीच कथा निकलती है और फिर मूल कथा से जुड़ कर उसमें समा जाती है। लेकिन उसका यह समा जाना उन अर्थों का निषेध कभी नहीं करता जिसके लिए उस कथा की रचना होती है।'चन्द्रकान्ता संतति' में भी एक घटना के बाद दूसरी घटना जैसे एक जिज्ञासा के बाद दूसरी जिज्ञासा कथा को सरल और संश्लिष्ट बनाती चलती है। इसके साथ-साथ यह रचना एक विराट धोखे-छल-फरेब की दुनिया, मरने-मारने का संसार, हिंसक मानसिकता और आम आदमी की कम कीमत का अहसास एक बड़े स्तर पर कराकर सामाजिक मूल्यहीनता का लोक निर्मित करती है। यह जानना कितना आश्चर्यजनक है कि सामंती व्यवस्था में सामान्य व्यक्ति समाज के विशिष्ट व्यक्ति के लिए प्राण दे देते हैं और क्योंकि वे दास दासी होते हैं अतः यह प्राणोत्सर्ग उनके कर्त्तव्य में आता है। अर्थात् व्यक्तिगत राजनैतिक प्राकृतिक किसी भी तरह के संकट में यदि कष्ट होता है तो वह कष्ट आम आदमी को होता है। मरता है तो सामान्य व्यक्ति मरता है। पूरी भ्रष्ट और चरित्रहीन व्यवस्था में आसानी से छोटे आदमियों को मार दिया जाता है। इस तरह यदि जासूसी और कौतूहल रचना धर्मिता की सीमा से परे मूल्य स्तर पर चन्द्रकान्ता को देखा जाये तो वह 'मूल्य हीनता का रचना लोक' प्रस्तुत करती है। एक व्यवस्था के पक्ष और विपक्ष में आने वाले कभी महत्वपूर्ण पात्र अपनी अपरिवर्तन शीलता में अपने-अपने कामों को अन्जाम देते रहते हैं और एक दूसरे स्तर पर चलने वाली कहानी दूसरे स्तर पर चलने वाले जीवन का एहसास कराती रहती है। यही नहीं हम यह भी जान सकते हैं कि समय के उस खंड में सामन्ती व्यवस्था में समाज के विभिन्न वर्गों के रिश्तों की संरचना कैसी थी और किस प्रकार वास्तविकता और चमत्कार के बीच सत्य को पकड़ने का संघर्ष मनुष्य जीवन के लिए महत्वपूर्ण होता है।

राजेन्द्र जी ने अपने लेख में इस बात पर भी बल दिया है कि खत्री जी के सामने

शायद एक आदर्श भारतीय राज्य का स्वप्न रहा होगा जिसके तहत उन्होंने इतनी असंगति और व्यवस्था के बावजूद अपनी बात कही। उन्होंने 1857 के पहले स्वतन्त्रता संग्राम की पृष्ठभूमि में भी इस रचना को देखकर इसके प्रति सोचने और समझने का नया दृष्टिकोण दिया है। हमारे विचार में 'चन्द्रकान्ता और चन्द्रकान्ता संतति' एक ऐसी महत्वपूर्ण रचना है जिसे एक प्रमुख सर्जनात्मक साहित्य अंश के रूप में देखना होगा। विराट कथानक और उसके बीच फैलता हुआ मूल्यहीनता का संसार के बाद सामंजस्य पूर्ण अंत, निश्चत ही एक ऐसे रचनाकार की दृष्टि से साक्षात कराता है जो केवल आपके मनोरंजन के लिए नहीं लिख रहा है, अपितु उससे परे उसका एक सृजनात्मक आशय भी है। चन्द्रकान्ता को लेकर इस सर्जनात्मक आशय की खोज बहुत कम हो पाई है। और आगे हम इस ओर कितना प्रवृत्त हो पायेंगे, यह इस बात पर निर्भर करता है कि हमारी सोच में पुरानी कृतियों के लिए जो साँचा बन चुका है, उसे तोड़ने की मानसिकता में हम आते हैं या नहीं।...

डॉ० विनय
25 बंग्लो रोड, दिल्ली-7

भूमिका

[प्रथम संस्करण से]

आज हिन्दी के बहुत से उपन्यास हुए हैं जिनमें कई तरह की बातें व राजनीति भी लिखी गई है, राजदरबार के तरीके व सामान भी जाहिर किये गये हैं, मगर राजदरबार में ऐयार (चालाक) भी नौकर हुआ करते थे जोकि हरफन-मौला, याने सूरत बदलना, बहुत सी दवाओं का जानना, गाना-बजाना, दौड़ना, अस्त्र चलाना, जासूसों का काम देना वगैरह बहुत-सी बातें जाना करते थे। जब राजाओं में लड़ाई होती थी तो ये लोग अपनी चालाकी से बिना खून गिराये व पलटनों की जानें गँवाये लड़ाई खत्म करा देते थे। इन लोगों की बड़ी कदर की जाती थी। इसी ऐयारी पेशे से आज-कल बहुरूपिये दिखाई देते हैं। वे सब गुण तो इन लोगों में रहे नहीं, सिर्फ शक्ल बदलना रह गया वह भी किसी काम का नहीं। इन ऐयारों का बयान हिन्दी किताबों में अभी तक मेरी नजरों से नहीं गुजरा। अगर हिन्दी पढ़ने वाले इस मजे को देख लें तो कई बातों का फायदा हो। सबसे ज्यादा फायदा तो यह है कि ऐसी किताबों को पढ़ने वाला जल्दी किसी के धोखे में न पड़ेगा। इन सब बातों का खयाल करके मैंने यह 'चन्द्रकान्ता' नामक उपन्यास लिखा। इस किताब में नौगढ़ और विजयगढ़ दो पहाड़ी रजवाड़ों का हाल कहा गया है। इन दोनों रजवाड़ों में पहले आपस का खूब मेल रहना, फिर वजीर के लड़के की बदमाशी से बिगाड़ होना, नौगढ़ के कुमार वीरेन्द्रसिंह का विजयगढ़ की राजकुमारी चन्द्रकान्ता पर आशिक होकर तकलीफें उठाना, विजयगढ़ के दीवान के लड़के क्रूरसिंह का महाराज जयसिंह से बिगड़ कर चुनार जाना और चन्द्रकान्ता की तारीफ करके वहाँ के राजा शिवदत्तसिंह को उभाड़ लाना वगैरह—इस बीच में ऐयारी भी अच्छी तरह से दिखलाई गई है, और ये राज्य पहाड़ी होने से इसकी पहाड़ी नदियों, दर्रों, भयानक जंगलों और खूबसूरत एवं दिलचस्प घाटियों का बयान भी अच्छी तरह से आया है।

मैंने आज तक कोई किताब नहीं लिखी है, यह पहला श्रीगणेश है, इसलिए इसमें किसी तरह की गलती या भूल का हो जाना ताज्जुब नहीं, जिसके लिए मैं आप लोगों से क्षमा माँगता हूँ, बल्कि बड़ी मेहरबानी होगी अगर आप लोग मेरी भूल को पत्र द्वारा मुझ पर जाहिर करेंगे क्योंकि यह ग्रन्थ बहुत बड़ा है, आगे और छप रहा है, भूल मालूम हो जाने से दूसरी जिल्दों में उसका खयाल किया जायेगा।

[आषाढ़, सम्वत् 1944 दि०] —देवकीनन्दन खत्री

बाबू देवकीनन्दन खत्री की संक्षिप्त जीवनी

बाबू देवकीनन्दन खत्री का जन्म सन् 1861 में मुजफ्फरपुर में हुआ। (विक्रमी संवत् 1918, आषाढ़-कृष्ण सप्तमी, शनिवार) आपके पूर्वज पंजाब के निवासी थे। महाराजा रणजीतसिंह की मृत्यु के पश्चात् पंजाब में अराजकता-सी फैल गई थी जिसके फलस्वरूप आपके पूर्वज लाहौर छोड़ कर काशी चले आये।

आपकी माता पूसा, (मुजफ्फरपुर) के बाबू जीवनलाल महता की पुत्री थीं। इस कारण आपके पिता लाला ईश्वर दयाल जी प्रायः वहीं रहा करते थे। बाबू देवकीनन्दन खत्री के बचपन का अधिकांश समय पूसा में ही बीता। वहीं आपने उर्दू-फारसी में आरम्भिक शिक्षा प्राप्त की। बाद में हिन्दी, संस्कृत तथा अंग्रेजी शिक्षा आपने काशी में रहकर प्राप्त की।

गया जिले के टिकारी राज्य में आपके पिताजी के व्यावसायिक सम्बन्ध थे। इस कारण गया में आपने एक कोठी खोली जिसके प्रबन्धक देवकीनन्दन खत्री थे। गया का कारोबार अच्छा होने के कारण खत्री जी की अच्छी खासी आय थी। वहाँ मौज-मस्ती में इन्होंने अपना समय बिताया। कुछ दिनों पीछे टिकारी राज्य नाबालिगी के कारण सरकारी प्रबन्ध में चला गया। इस कारण आपके पिताजी का सम्बन्ध भी राज्य से टूट गया और वे सपरिवार काशी चले गए। खत्रीजी की अवस्था उस समय चौबीस वर्ष की थी।

टिकारी राज्य में काशी-नरेश ईश्वरीप्रसादनारायण सिंह की बहिन का विवाह हुआ था। इसलिए काशी में भी खत्री जी, पुराने सम्बन्धों के कारण, काशिराज के कृपा पात्र हुए। आपने मुसाहिब बनकर दरबार में रहना उचित नहीं समझा, परन्तु चकिया और नौगढ़ के जंगलों का ठेका ले लिया। इन जंगलों में विभिन्न प्रकार की लकड़ी, गोंद तथा अन्य वस्तुओं की पैदावार से इन्हें अच्छी-खासी आमदनी होती थी। अपने कारोबार की सुचारु व्यवस्था के लिए आप स्वयं इन जंगलों में सब जगहों में घूमते-फिरते थे। इसी अवस्था में आपने इन जंगलों-पहाड़ों की भरपूर सैर की। इसी जमाने में आपका बीहड़ों, खोहों तथा प्राचीन अवशेषों से भी साक्षात्कार हुआ। आपने इन दर्शनीय स्थानों को बड़ी सावधानी से देखा-समझा, जो आगे आपके उपन्यासों की पृष्ठ-भूमि बना।

कुछ विशेष कारणों से इन जंगलों का ठेका खत्री जी को छोड़ना पड़ा और ये घर आ गये तथा काशी में रहने लगे। इन्हीं दिनों आपको कुछ लिखने की धुन समाई

और आपने 'चन्द्रकान्ता' नामक उपन्यास लिखना प्रारम्भ किया। 'चन्द्रकान्ता' का पहला भाग सन् 1888 में छपा। इस उपन्यास में उन्होंने अपने युवावस्था के अनुभव तथा आँखों-देखी जंगल-जीवन की बहार का वर्णन किया।

उपन्यास छपते ही जनसाधारण में इतना लोकप्रिय हुआ कि लोग केवल इस उपन्यास को पढ़ने के लिए हिन्दी सीखने लगे। खत्रीजी ने 'चन्द्रकान्ता' तथा 'चन्द्र कान्ता सन्तति' के सभी भाग अल्प आयास में लिख डाले और हिन्दी के हजारों पाठक बनाये। अपने इस प्रयास की सफलता ने खत्री जी को और भी उत्साहित किया और आपने सन् 1898 के सितम्बर महीने में 'लहरी प्रेस' खोलकर उसी में अपने लिखे ग्रन्थ छापना प्रारम्भ कर दिया।

आपके अन्य उपन्यास 'नरेन्द्रमोहिनी' (सन् 1893), वीरेन्द्रवीर (1896), कुसुमकुमारी (1899), काजल की कोठरी (1902), भूतनाथ (1906), गुप्त गोदना (1906) भी प्रकाशित हुए। इनके अतिरिक्त 'नौलखा हार' तथा 'अनूठी बेगम' भी आपके और उपन्यास हैं।

अपने 'लहरी प्रेस' से ही खत्री जी ने 'सुदर्शन' नामक मासिक पत्रिका भी निकाली। परन्तु दो वर्षों के पश्चात् यह पत्रिका सम्पादक की मृत्यु के कारण बन्द हो गई। बाबू देवकी नन्दन खत्री ने हिन्दी साहित्य का अपने 'ऐयारी' उपन्यासों द्वारा बहुत उपकार किया। इनकी कल्पनाशक्ति भी अद्भुत थी। यही कारण है कि अभी तक आपके उपन्यासों के पाठक मिलते जा रहे हैं। हिन्दी के इस महान् आरम्भिक उपन्यासकार का देहान्त सन् 1913 में हुआ था।

चन्द्रकान्ता सन्तति

पहला भाग

1

नौगढ़ के राजा सुरेन्द्रसिंह के लड़के वीरेन्द्रसिंह की शादी विजयगढ़ के महाराज जयसिंह की लड़की चन्द्रकान्ता के साथ हो गई। बारात वाले दिन तेजसिंह की आखिरी दिल्लगी के सबब चुनार के महाराज शिवदत्त को मशालची बनना पड़ा। बहुतों की यह राय हुई कि महाराज शिवदत्त का दिल अभी तक साफ नहीं हुआ, इसलिए अब इनको कैद ही में रखना मुनासिब है, मगर महाराज सुरेन्द्रसिंह ने इस बात को नापसन्द करके कहा कि "महाराज शिवदत्त को हम छोड़ चुके हैं। इस वक्त जो तेजसिंह से उनकी लड़ाई हो गई, यह हमारे साथ वैर रखने का सबूत नहीं हो सकता। आखिर महाराज शिवदत्त क्षत्रिय हैं, जब तेजसिंह उनकी सूरत बना बेइज्जती करने पर उतारू हो गए तो यह देखकर भी वह कैसे बर्दाश्त कर सकते थे? मैं यह भी नहीं कह सकता कि महाराज शिवदत्त का दिल हम लोगों की तरफ से बिल्कुल साफ हो गया क्योंकि अगर उनका दिल साफ ही हो जाता तो इस बात को छिप कर देखने के लिए आने की जरूरत क्या थी? तो भी यह समझ कर कि तेजसिंह के साथ इनकी यह लड़ाई हमारी दुश्मनी के सबब नहीं कही जा सकती, हम फिर इनको छोड़ देते हैं। अगर अब भी ये हमारे साथ दुश्मनी करेंगे तो क्या हर्ज है! ये भी मर्द हैं और हम भी मर्द हैं। देखा जाएगा।"

महाराज शिवदत्त फिर छूट कर न मालूम कहाँ चले गए। वीरेन्द्रसिंह की शादी होने के बाद महाराज सुरेन्द्रसिंह और जयसिंह की राय से चपला की शादी तेजसिंह के साथ और चम्पा की शादी देवीसिंह के साथ की गई। चम्पा दूर के नाते में चपला की बहिन होती थी।

बाकी सब ऐयारों की शादी हो चुकी थी। उन लोगों की घर-गृहस्थी चुनार ही में थी, अदल-बदल करने की जरूरत न पड़ी, क्योंकि शादी होने की थोड़े ही दिन बाद बड़ी धूमधाम के साथ कुँअर वीरेन्द्रसिंह चुनार के गद्दी पर बैठाए गए और कुँअर छोड़ राजा कहलाने लगे। तेजसिंह उनके राज-दीवान मुकर्रर हुए और इसलिए सब ऐयारों को भी चुनार ही में रहना पड़ा।

सुरेन्द्रसिंह अपने लड़के को आँखों के सामने से हटाना नहीं चाहते थे, लाचार होकर नौगढ़ की गद्दी फतहसिंह के सुपुर्द कर वे भी चुनार ही में रहने लगे, मगर राज्य का काम बिल्कुल वीरेन्द्रसिंह के जिम्मे था, हाँ, कभी-कभी राय दे देते थे। तेजसिंह के साथ जीतसिंह भी बड़ी आजादी के साथ चुनार में रहने लगे। महाराज सुरेन्द्रसिंह और जीतसिंह में बहुत मुहब्बत थी और वह मुहब्बत दिन-दिन बढ़ती गई। असल में जीतसिंह इसी लायक थे कि उनकी जितनी भी कदर की जाती थोड़ी थी। शादी के दो बरस बाद चन्द्रकान्ता को लड़का पैदा हुआ। उसी साल चपला और चम्पा को भी लड़का पैदा हुआ। इसके तीन बरस बाद चन्द्रकान्ता ने दूसरे लड़के का मुख देखा। चन्द्रकान्ता के बड़े लड़के का नाम इन्द्रजीतसिंह, छोटे का नाम आनन्दसिंह तथा चपला के लड़के का नाम भैरोंसिंह और चम्पा के लड़के का नाम तारासिंह रखा गया।

जब ये चारों लड़के कुछ बड़े और बातचीत करने लायक हुए तब इनके लिखने-पढ़ने और तालीम का इन्तजाम किया गया और राजा सुरेन्द्रसिंह ने इन चारों लड़कों को जीतसिंह की शागिर्दी और हिफाजत में छोड़ दिया।

भैरोंसिंह और तारासिंह ऐयारी के फन में बड़े तेज और चालाक निकले। इनकी ऐयारी का इम्तिहान बराबर लिया जाता था। जीतसिंह का हुक्म था कि भैरोंसिंह और तारासिंह सारे ऐयारों को, बल्कि अपने बाप तक को, धोखा देने की कोशिश करें और इसी तरह पन्नालाल वगैरह ऐयार भी उन दोनों लड़कों को भुलावा दिया करें। धीरे-धीरे ये दोनों लड़के इतने तेज और चालाक हो गए कि पन्नालाल वगैरह की ऐयारी इनके सामने दब गई।

भैरोंसिंह और तारासिंह इन दोनों में ज्यादा चालाक कौन था, इसके कहने की कोई जरूरत नहीं, आगे मौका पड़ने पर आप ही मालूम हो जाएगा, हाँ इतना कह देना जरूरी है कि भैरोंसिंह को इन्द्रजीतसिंह के साथ और तारासिंह को आनन्दसिंह के साथ ज्यादा मुहब्बत थी।

चारों लड़के होशियार हुए अर्थात् इन्द्रजीतसिंह, भैरोंसिंह और तारासिंह की उम्र अट्ठारह वर्ष की और आनन्दसिंह की उम्र पन्द्रह वर्ष की हुई। इतने दिनों तक चुनार राज्य में बराबर शान्ति रही, बल्कि पिछली तकलीफें और महाराज शिवदत्त की शैतानी एक स्वप्न की तरह सभी के दिल में रह गई।

इन्द्रजीतसिंह को शिकार का बहुत शौक था। जहाँ तक बन पड़ता, वे रोज शिकार खेला करते। एक दिन किसी बनरखे ने हाजिर होकर बयान किया कि इन दिनों फलाँ जंगल की शोभा खूब बढ़ी-चढ़ी है और शिकार के जानवर भी इतने आये हुए हैं कि अगर वहाँ महीना-भर टिक कर शिकार खेला जाय, तो भी न घटे और कोई दिन खाली न जाय। यह सुनकर दोनों भाई बहुत खुश हुए। अपने बाप राजा वीरेन्द्रसिंह से शिकार खेलने की इजाजत माँगी और कहा कि "हम लोगों का इरादा आठ दिन तक जंगल में रह कर शिकार खेलने का है।" इसके जवाब में राजा वीरेन्द्रसिंह ने कहा कि "इतने दिनों तक जंगल में रह कर शिकार खेलने का हुक्म मैं नहीं दे सकता—अपने दादा से पूछो, अगर वे हुक्म दें तो कोई हर्ज नहीं।"

यह सुनकर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह ने अपने दादा महाराज सुरेन्द्रसिंह के पास जाकर अपना मतलब अर्ज किया। उन्होंने खुशी से मंजूर किया और हुक्म दिया कि शिकारगाह में इन दोनों के लिए खेमा खड़ा किया जाय और जब तक ये शिकारगाह में रहें, पाँच सौ फौज बराबर इनके साथ रहे।

शिकार खेलने का हुक्म पाकर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह बहुत खुश हुए और अपने दोनों ऐयार भैरोंसिंह और तारासिंह को साथ लेकर पाँच सौ फौज के साथ चुनार से रवाना हुए।

चुनार से पाँच कोस दक्षिण एक घने और भयानक जंगल में पहुँच कर उन्होंने डेरा डाला। दिन थोड़ा बाकी रह गया, इसलिए यह राय ठहरी कि आज आराम करें, कल सवेरे शिकार का बन्दोबस्त किया जाय मगर बनरखों[1] को शेर का पता लगाने के लिए आज ही कह दिया जाएगा। भैंसा[2] बाँधने की कोई जरूरत नहीं, शेर का शिकार पैदल ही किया जाएगा।

दूसरे दिन सवेरे बनरखों ने हाजिर होकर उनसे अर्ज किया कि इस जंगल में शेर तो हैं मगर रात हो जाने के सबब हम लोग उन्हें अपनी आँखों से न देख सके, अगर आज के दिन शिकार न खेला जाय तो हम लोग देखकर उनका पता दे सकेंगे।

आज के दिन भी शिकार खेलना बन्द रखा गया। पहर-भर दिन बाकी रहते इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह घोड़ों पर सवार हो अपने दोनों ऐयारों को साथ लेकर घूमने और दिल बहलाने के लिए डेरे से बाहर निकले और टहलते हुए दूर तक चले गए।

---

1. जंगलों की हिफाजत के लिए जो नौकर रहते हैं उनको बनरखे कहते हैं। शिकार खेलाने का काम बनरखों का ही है। ये लोग जंगल में घूम-घूमकर और शिकारी जानवरों के पैर का निशान देख और उसी अन्दाज पर जाकर पता लगाते हैं कि शेर इत्यादि कोई शिकारी जानवर इस जंगल में हैं या नहीं, अगर हैं तो कहां हैं। बनरखों का काम है कि अपनी आँखों से देख आवें तब खबर करें।

2. खास शेर के शिकार में भैंसा बाँधा जाता है। भैंसा बाँधने के दो कारण हैं। एक तो शिकार को अटकाने के लिए अर्थात् जब बनरखा आकर खबर दे कि फलाँ जंगल में शेर है, उस वक्त या कई दिनों तक अगर शिकार खेलने वाले व्यक्ति को किसी कारण शिकार खेलने की फुरसत न हुई और शेर को अटकाना चाहा तो भैंसा बाँधने का हुक्म दिया जाता है। बनरखे भैंसा ले जाते हैं और जिस जगह शेर का पता लगता है, उसके पास ही किसी भयानक और सायेदार जंगल या नाले में मजबूत खूंटा गाड़कर भैंसे को बाँध देते हैं। जब शेर भैंसे की बू पाता है तो वहीं आता है और भैंसे को खाकर उसी जंगल में कई दिनों मस्त और बेफिक्र पड़ा रहता है। इस तरकीब से दो-चार भैंसा देकर महीनों शेर को अटका लिया जाता है। शेर को जब तक खाने के लिए मिलता है वह दूसरे जंगल में नहीं जाता है। शेर का पेट अगर एक दफे खूब भर जाय तो उसे सात-आठ दिनों तक खाने की परवाह नहीं रहती। खुले भैंसे को शेर जल्दी नहीं मार सकता।

   दूसरे जब मचान बाँधकर शेर का शिकार किया चाहते हैं या एक जंगल से दूसरे जंगल में अपने सुभीते के लिए उसे ले जाना चाहते हैं, तब इसी तरह भैंसे बाँधकर हटाते ले जाते हैं। इसको शिकारी लोग 'मरी' भी कहते हैं।

ये लोग धीरे-धीरे टहलते और बातें करते जा रहे थे कि बाइँ तरफ से शेर के गरजने की आवाज आई जिसे सुनते ही चारों अटक गये और घूम कर उस तरफ देखने लगे जिधर से आवाज आई थी।

लगभग दो सौ गज की दूरी पर एक साधु शेर पर सवार जाता दिखाई पड़ा जिसकी लम्बी-लम्बी और घनी जटाएँ पीछे की तरफ लटक रही थीं—एक हाथ में त्रिशूल दूसरे में शंख लिए हुए था। इसकी सवारी का शेर बहुत बड़ा था और उसकी गर्दन के बाल जमीन तक लटक रहे थे।

इसके आठ-दस हाथ पीछे एक शेर और जा रहा था जिसकी पीठ पर आदमी के बदले बोझ लदा हुआ नजर आया। शायद यह असबाब उन्हीं शेर पर सवार महात्मा का हो।

शाम हो जाने के सबब से साधु की सूरत साफ मालूम न पड़ी तो भी उसे देख इन चारों को बड़ा ताज्जुब हुआ और कई तरह की बातें सोचने लगे।

इन्द्रजीतसिंह— इस तरह शेर पर सवार होकर घूमना मुश्किल है।

आनन्दसिंह—कोई अच्छे महात्मा मालूम होते हैं।

भैरोंसिंह—पीछे वाले शेर को देखिए जिस पर असबाब लदा हुआ है, किस तरह भेड़ की तरह सिर नीचा किये जा रहा है।

तारासिंह—शेरों को वश में कर लिया है।

इन्द्रजीतसिंह—जी चाहता है उनके पास चल कर दर्शन करें।

आनन्दसिंह—अच्छी बात है। चलिए, पास से देखें, कैसा शेर है।

तारासिंह—बिना पास गए महात्मा और पाखण्डी में भेद न मालूम होगा।

भैरोंसिंह—शाम तो हो गई है, खैर चलिए, आगे से बढ़ कर रोकें।

आनन्दसिंह—आगे से चल कर रोकने से बुरा न मानें।

भैरोंसिंह—हम ऐयारों का पेशा ही ऐसा है कि पहले तो उनका साधु होना ही विश्वास नहीं करते!

इन्द्रजीतसिंह—आप लोगों की क्या बात है जिनकी मूंछ हमेशा ही मुड़ी रहती हैं। खैर, चलिए तो सही।

भैरोंसिंह—चलिए।

चारों आदमी आगे घूम कर बाबाजी के सामने गए जो शेर पर सवार जा रहे थे। इन लोगों को अपने पास आते देख बाबाजी रुक गए। पहले तो इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह के घोड़े शेरों को देख कर अड़े, मगर फिर ललकारने से आगे बढ़े। थोड़ी दूर जाकर दोनों भाई घोड़ों के ऊपर से उतर पड़े, भैरोंसिंह और तारासिंह ने दोनों घोड़ों को पेड़ से बाँध दिया, इसके बाद पैदल ही चारों आदमी महात्मा से पास पहुँचे।

बाबाजी—(दूर ही से) आओ राजकुमार इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह! कहो, कुशल तो है?

इन्द्रजीतसिंह—(प्रणाम करके) आपकी कृपा से सब मंगल है।

बाबाजी—(भैरोंसिंह और तारासिंह की तरफ देखकर) कहो भैरों और तारा, अच्छे हो ?

दोनों—(हाथ जोड़ कर) आपकी दया से !

बाबाजी—राजकुमार, मैं खुद तुम लोगों के पास जाने को था, क्योंकि तुमने शेर का शिकार करने के लिए इस जंगल में डेरा डाला है। मैं गिरनार जा रहा हूँ, घूमता-फिरता इस जंगल में भी आ पहुँचा। यह जंगल अच्छा मालूम होता है इसलिए दो-तीन दिन तक यहाँ रहने का विचार है, कोई अच्छी जगह देख कर धूनी लगाऊँगा। मेरे साथ सवारी और असबाब लादने के कई शेर हैं, इसलिए कहता हूँ कि धोखे में मेरे किसी शेर को मत मारना, नहीं तो मुश्किल होगी। सैकड़ों शेर पहुँच कर तुम्हारे लश्कर में हलचल मचा डालेंगे और बहुतों की जान जाएगी। तुम प्रतापी राजा सुरेन्द्रसिंह[1] के लड़के हो, इसलिए तुम्हें पहले ही से समझा देना मुनासिब है, जिसमें किसी तरह का दुख न हो।

इन्द्रजीतसिंह—महाराज, मैं कैसे जानूंगा कि यह आपका शेर है ? ऐसा ही है, तो शिकार नहीं खेलूंगा।

बाबाजी—नहीं, तुम शिकार खेलो, मगर मेरे शेरों को मत मारो !

इन्द्रजीतसिंह—मगर यह कैसे मालूम होगा कि फलाँ शेर आपका है ?

बाबाजी—देखो, मैं अपने शेरों को बुलाता हूँ, पहचान लो।

बाबाजी ने शंख बजाया। भारी शंख की आवाज चारों तरफ जंगल में गूँज गई और हर तरफ से गुर्राहट की आवाज आने लगी। थोड़ी ही देर में इधर-उधर से दौड़ते हुए पाँच शेर और आ पहुँचे। ये चारों दिलावर और बहादुर थे, अगर कोई दूसरा होता तो डर से उसकी जान निकल जाती। इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह के घोड़े शेरों को देख कर उछलने-कूदने लगे, मगर रेशम की मजबूत बागडोर से बँधे हुए थे इससे भाग न सके। इन शेरों ने आकर बड़ी ऊधम मचाई—इन्द्रजीतसिंह वगैरह को देख कर गरजने-कूदने और उछलने लगे, मगर बाबाजी के डाँटते ही सब ठंडे हो सिर नीचा कर भेड़-बकरी की तरह खड़े हो गए।

बाबाजी—देखो इन शेरों को पहचान लो, अभी दो-चार और हैं, मालूम होता हैं उन्होंने शंख की आवाज नहीं सुनी। खैर, अभी तो मैं इसी जंगल में हूँ, उन बाकी शेरों को भी दिखला दूँगा—कल भर शिकार और बन्द रखो।

भैरोंसिंह—फिर आपसे मुलाकात कहाँ होगी ? आपकी धूनी किस जगह लगेगी ?

बाबाजी—मुझे तो यही जगह आनन्द की मालूम होती है। कल इसी जगह आना, मुलाकात होगी।

बाबाजी शेर से नीचे उतर पड़े और जितने शेर उस जगह आए थे, वे सब बाबाजी के चारों तरफ घूमने तथा मुहब्बत से उनके बदन को चाटने और सूंघने लगे।

---

1. साधु महाशय भूल गए, वीरेन्द्रसिंह की जगह सुरेन्द्रसिंह का नाम ले बैठे।

ये चारों आदमी थोड़ी देर तक वहाँ और अटकने के बाद बाबाजी से बिदा हो खेमे में आये।

जब सन्नाटा हुआ तो भैरोंसिंह ने इन्द्रजीतसिंह से कहा—"मेरे दिमाग में इस समय बहुत-सी बातें घूम रही हैं। मैं चाहता हूँ कि हम लोग चारों आदमी एक जगह बैठ कमेटी कर कुछ राय पक्की करें।"

इन्द्रजीतसिंह ने कहा—"अच्छा, आनन्द और तारा को भी इसी जगह बुला लो।"

भैरोंसिंह गये और आनन्दसिंह तथा तारासिंह को उसी जगह बुला लाए। उस वक्त सिवाय इन चारों के उस खेमे में और कोई न रहा। भैरोंसिंह ने अपने दिल का हाल कहा, जिसे सभी ने बड़े गौर से सुना। इसके बाद पहर भर तक कमेटी करके निश्चय कर लिया कि क्या करना चाहिए।

यह कमेटी कैसी हुई, भैरोंसिंह का क्या इरादा हुआ और उन्होंने क्या निश्चय किया तथा रात-भर ये लोग क्या करते रहे, इसके कहने की कोई जरूरत नहीं, समय पर सब खुल जाएगा।

सवेरा होते ही चारों आदमी खेमे के बाहर हुए और अपनी फौज के सरदार कंचनसिंह को बुलाकर कुछ समझा कर बाबाजी की तरफ रवाना हुए। जब लश्कर से दूर निकल गए, आनन्दसिंह, भैरोंसिंह और तारासिंह तो तेजी के साथ चुनार की तरफ रवाना हुए और इन्द्रजीतसिंह अकेले बाबाजी से मिलने गए।

बाबाजी शेरों के बीच धूनी रमाये बैठे थे। दो शेर उनके चारों तरफ घूम-घूम कर पहरा दे रहे थे। इन्द्रजीतसिंह ने पहुँच कर प्रणाम किया और बाबाजी ने आशीर्वाद देकर बैठने के लिए कहा।

इन्द्रजीतसिंह ने बनिस्बत कल के आज दो शेर और ज्यादा देखे। थोड़ी देर चुप रहने के बाद बातचीत होने लगी।

बाबाजी—कहो इन्द्रजीतसिंह, तुम्हारे भाई और ऐयार कहाँ रह गए? वे क्यों नहीं आए?

इन्द्रजीतसिंह—हमारे छोटे भाई आनन्दसिंह को बुखार आ गया, इस सबब से वह नहीं आ सका। उसी की हिफाजत में दोनों ऐयारों को छोड़ मैं अकेला आपके दर्शन को आया हूँ।

बाबाजी—अच्छा क्या हर्ज है, आज शाम तक वह अच्छे हो जाएंगे। कहो आज कल तुम्हारे राज्य में कुशल तो है?

इन्द्रजीतसिंह—आपकी कृपा से सब आनन्द है।

बाबाजी—बेचारे वीरेन्द्रसिंह ने भी बड़ा कष्ट पाया! खैर जो हो, दुनिया में उनका नाम रह जाएगा। इस हजार वर्ष के अन्दर कोई ऐसा राजा नहीं हुआ जिसने तिलिस्म तोड़ा हो। एक और तिलिस्म है, असल में वही भारी और तारीफ के लायक है।

इन्द्रजीतसिंह—पिताजी तो कहते हैं कि वह तिलिस्म तेरे हाथ से टूटेगा।

बाबाजी—हाँ ऐसा ही होगा, वह जरूर तुम्हारे हाथ से फतह होगा, इसमें कोई सन्देह नहीं।

इन्द्रजीतसिंह—देखें, कब तक ऐसा होता है, उसकी ताली का तो कहीं पता ही नहीं लगता।

बाबाजी—ईश्वर चाहेगा तो एक ही दो दिन में तुम उस तिलिस्म को तोड़ने में हाथ लगा दोगे, उस तिलिस्म की ताली मैं हूँ, कई पुश्तों से हम लोग उस तिलिस्म के दरोगा होते चले आए हैं। मेरे परदादा, दादा और बाप उसी तिलिस्म के दरोगा थे, जब मेरे पिता का देहान्त होने लगा तब उन्होंने उसकी ताली मेरे सुपुर्द कर मुझे उसका दरोगा मुकर्रर कर दिया। अब वक्त आ गया है कि मैं उसकी ताली तुम्हारे हवाले करूँ क्योंकि वह तिलिस्म तुम्हारे नाम पर बाँधा गया है और सिवाय तुम्हारे कोई दूसरा उसका मालिक नहीं बन सकता।

इन्द्रजीतसिंह—तो अब देर क्या है?

बाबाजी—कुछ नहीं, कल से तुम उसके तोड़ने में हाथ लगा दो, मगर एक बात तुम्हारे फायदे की हम कहते हैं।

इन्द्रजीतसिंह—वह क्या?

बाबाजी—तुम उसके तोड़ने में अपने भाई आनन्द को भी शरीक कर लो, ऐसा करने से दौलत भी दूनी मिलेगी और नाम भी दोनों भाइयों का दुनिया में हमेशा के लिए बना रहेगा।

इन्द्रजीतसिंह—उसकी तो तबीयत ही ठीक नहीं!

बाबाजी—क्या हर्ज है! तुम अभी जाकर जिस तरह बने, उसे मेरे पास ले आओ, मैं बात की बात में उसको चंगा कर दूंगा। आज ही तुम लोग मेरे साथ चलो, जिसमें कल तिलिस्म टूटने में हाथ लग जाय, नहीं तो साल भर फिर मौका न मिलेगा।

इन्द्रजीतसिंह—बाबाजी, असल बात यह है कि मैं अपने भाई की बढ़ती नहीं चाहता। मुझे यह मंजूर नहीं कि मेरे साथ उसका भी नाम हो।

बाबाजी—नहीं-नहीं, तुम्हें ऐसा नहीं सोचना चाहिए, दुनिया में भाई से बढ़ के कोई रत्न नहीं है।

इन्द्रजीतसिंह—जी हाँ, दुनिया में भाई से बढ़ के रत्न नहीं, तो भाई से बढ़ के कोई दुश्मन भी नहीं, यह बात मेरे दिल में ऐसी बैठ गयी है कि उसके हटाने के लिए ब्रह्मा भी आकर समझावें-बुझावें, तो भी कुछ नतीजा न निकलेगा।

बाबाजी—बिना उसको साथ लिए तुम तिलिस्म नहीं तोड़ सकते।

इन्द्रजीतसिंह—(हाथ जोड़कर) बस, तो जाने दीजिए। माफ कीजिये, मुझे तिलिस्म तोड़ने की जरूरत नहीं!

बाबाजी—क्या तुम्हें इतनी जिद है?

इन्द्रजीतसिंह—मैं कह जो चुका कि ब्रह्मा भी मेरी राय नहीं पलट सकते।

बाबाजी—खैर, तब तुम्हीं चलो, मगर इसी वक्त चलना होगा।

इन्द्रजीतसिंह—हाँ-हाँ, मैं तैयार हूँ, अभी चलिए।

बाबाजी उसी समय उठ खड़े हुए। अपनी गठड़ी-मुटड़ी बाँध एक शेर पर लाद दिया तथा दूसरे पर आप सवार हो गये। इसके बाद एक शेर की तरफ देखकर कहा, "बच्चा गंगाराम, यहाँ तो आओ !" वह शेर तुरन्त इनके पास आया। बाबाजी ने इन्द्रजीतसिंह से कहा, "तुम इस पर सवार हो लो।" इन्द्रजीतसिंह कूदकर सवार हो गये और बाबाजी के साथ-साथ दक्षिण का रास्ता लिया। बाबाजी के साथी शेर भी कोई आगे कोई पीछे, कोई बायें कोई दायें हो बाबाजी के साथ जाने लगे।

सब शेर तो पीछे रह गये, मगर दो शेर जिन पर बाबाजी और इन्द्रजीतसिंह सवार थे, आगे निकल गये। दोपहर तक दोनों चलते गये। जब दिन ढलने लगा, बाबाजी ने इन्द्रजीतसिंह से कहा, "यहाँ ठहर कर कुछ खा-पी लेना चाहिए।" इसके जवाब में कुमार बोले, "बाबाजी, खाने-पीने की कोई जरूरत नहीं। आप महात्मा ही ठहरे, मुझे कोई भूख नहीं है, फिर अटकने की क्या जरूरत है ? जिस काम में पड़े, उसमें सुस्ती करना ठीक नहीं !"

बाबाजी ने कहा, "शाबाश, तुम बड़े बहादुर हो। अगर तुम्हारा दिल इतना मजबूत न होता तो तिलिस्म तुम्हारे ही हाथ से टूटेगा, ऐसा बड़े लोग न कह जाते, खैर चलो।"

कुछ दिन बाकी रहा जब ये दोनों एक पहाड़ी के नीचे पहुँचे। बाबाजी ने शंख बजाया, थोड़ी ही देर में चारों तरफ से सैकड़ों पहाड़ी लुटेरे हाथ में बरछे लिए आते दिखाई पड़े और ऐसे ही बीस-पच्चीस आदमियों को साथ लिए पूरब की तरफ से आता हुआ राजा शिवदत्त नजर पड़ा, जिसे देखते ही इन्द्रजीतसिंह ने ऊँची आवाज में कहा, "इनको मैं पहचान गया, यही महाराज शिवदत्त हैं। इनकी तस्वीर मेरे कमरे में लटकी हुई है। दादाजी ने इनकी तस्वीर मुझे दिखा कर कहा था कि हमारे सबसे भारी दुश्मन यही महाराज शिवदत्त हैं। ओफ-ओह, हकीकत में बाबाजी ऐयार ही निकले, जो सोचा था वही हुआ ! खैर क्या हर्ज है। इन्द्रजीतसिंह को गिरफ्तार कर लेना जरा टेढ़ी खीर है !"

शिवदत्त—(पास पहुँचकर) मेरा आधा कलेजा तो ठंडा हुआ, मगर अफसोस, तुम दोनों भाई हाथ न आये।

इन्द्रजीतसिंह—जी, इस भरोसे न रहियेगा कि इन्द्रजीतसिंह को फाँस लिया। उनकी तरफ बुरी निगाह से देखना भी बहुत खतरे का काम है !

ग्रन्थकर्ता—भला इसमें भी कोई शक है !

2

इस जगह पर थोड़ा-सा हाल महाराज शिवदत्त का भी बयान करना मुनासिब मालूम होता है। महाराज शिवदत्त को हर तरह से कुंअर वीरेंद्रसिंह के मुकाबले में हार माननी पड़ी। लाचार उसने शहर छोड़ दिया और अपने कई पुराने खैरख्वाहों को

साथ ले चुनार के दक्खिन की तरफ रवाना हुआ।

चुनार से थोड़ा ही दूर दक्खिन में लम्बा-चौड़ा घना जंगल है। यह विंध्य के पहाड़ी जंगल का सिलसिला राबर्ट्सगंज, सरगुजा और सिंगरौली होता हुआ सैकड़ों कोस तक चला गया है जिसमें बड़े-बड़े पहाड़, घाटियाँ, दर्रे और खोह पड़ते हैं। बीच में दो-दो चार-चार कोस के फासले पर गाँव भी आबाद हैं। कहीं-कहीं पहाड़ों पर पुराने जमाने के टूटे-फूटे आलीशान किले अभी तक दिखाई पड़ते हैं। चुनार से आठ-दस कोस दक्षिण अहरौरा के पास पहाड़ पर पुराने जमाने के एक बर्बाद किले के निशान आज भी देखने से चित्त का भाव बदल जाता है। गौर करने से यह मालूम होता है कि जब यह किला दुरुस्त होगा तो तीन कोस से ज्यादे लम्बी-चौड़ी जमीन इसने घेरी होगी, आखिर में यह किला काशी के मशहूर राजा चेतसिंह के अधिकार में था। इन्हीं जंगलों में अपनी रानी और कई खैरख्वाहों को मय उनकी औरतों और बाल-बच्चों के साथ लिए घूमते-फिरते महाराज शिवदत्त ने चुनार से लगभग पचास कोस दूर जाकर एक हरी-भरी सुहावनी पहाड़ी के ऊपर के एक पुराने टूटे हुए मजबूत किले में डेरा डाला और उसका नाम शिवदत्तगढ़ रखा जिसमें उस वक्त भी कई कमरे और दालान रहने लायक थे। यह छोटी पहाड़ी अपने चारों तरफ के ऊँचे पहाड़ों के बीच में इस तरह छिपी और दबी हुई थी कि यकायक किसी का यहाँ पहुँचना और कुछ पता लगाना मुश्किल था।

इस वक्त महाराज शिवदत्त के साथ सिर्फ बीस आदमी थे जिनमें तीन मुसलमान ऐयार थे जो शायद नाजिम और अहमद के रिश्तेदारों में से थे और यह समझ कर महाराज शिवदत्त के साथ हो गये थे कि इनके साथ मिले रहने से कभी-न-कभी राजा वीरेन्द्रसिंह से बदला लेने का मौका मिल ही जायगा, दूसरे सिवाय शिवदत्त के और कोई इस लायक नजर भी न आता था जो इन बेईमानों को ऐयारी के लिए अपने साथ रखता। नीचे लिखे नामों से तीनों ऐयार पुकारे जाते थे—बाकरअली, खुदाबख्श और यारअली। इन सब ऐयारों और साथियों ने रुपये-पैसे से भी जहाँ तक बन पड़ा, महाराज शिवदत्त की मदद की।

राजा वीरेन्द्रसिंह की तरफ से शिवदत्त का दिल साफ न हुआ, मगर मौका न मिलने के सबब मुद्दत तक उसे चुपचाप बैठे रहना पड़ा। अपनी चालाकी और होशियारी से वह पहाड़ी भील और खरवार इत्यादि जाति के आदमियों का राजा बन बैठा और उनसे मालगुजारी में गल्ला घी शहद और बहुत-सी जंगली चीजें वसूल करने और उन्हीं लोगों की मार्फत शहर में भेजवा और बिकवाकर रुपया बटोरने लगा। उन्हीं लोगों को होशियार करके थोड़ी-बहुत फौज भी उसने बना ली। धीरे-धीरे वे पहाड़ी जाति के लोग भी होशियार हो गये और खुद शहर में जाकर गल्ला वगैरह बेच रुपये इकट्ठा करने लगे। शिवदत्तगढ़ भी अच्छी तरह आबाद हो गया।

इधर बाकरअली वगैरह ऐयारों ने भी अपने कुछ साथियों को, जो चुनार से इनके साथ आये थे, ऐयारी के फन में खूब होशियार किया। इस बीच में एक लड़का और उसके बाद लड़की भी महाराज शिवदत्त के घर पैदा हुई। मौका पाकर अपने बहुत-से आदमियों और ऐयारों को साथ ले वह शिवदत्तगढ़ के बाहर निकला और

राजा वीरेन्द्रसिंह से बदला लेने की फिक्र में कई महीने तक घूमता रहा। अब महाराज शिवदत्त का इतना ही मुख्तसिर हाल लिखकर हम इस बयान को समाप्त करते हैं और फिर इन्द्रजीतसिंह के किस्से को छेड़ते हैं।

इन्द्रजीतसिंह के गिरफ्तार होने के बाद उन बनावटी शेरों ने भी अपनी हालत बदली और असली सूरत के ऐयार बन बैठे जिनमें यारअली, बाकरअली और खुदाबख्श मुखिया थे। महाराज शिवदत्त बहुत ही खुश हुआ और समझा कि अब मेरा जमाना फिरा, ईश्वर चाहेगा तो मैं फिर चुनार की गद्दी पाऊँगा और अपने दुश्मनों से पूरा बदला लूंगा।

इन्द्रजीतसिंह को कैद कर वह शिवदत्तगढ़ को ले गया। सभी को ताज्जुब हुआ कि कुँअर इन्द्रजीतसिंह ने गिरफ्तार होते समय कुछ उत्पात न मचाया, किसी पर गुस्सा न निकाला, किसी पर हरबा न उठाया, यहाँ तक कि आँखों से रंज, अफसोस या क्रोध भी जाहिर न होने दिया। हकीकत में यह ताज्जुब की बात थी भी कि बहादुर वीरेन्द्रसिंह का शेरदिल लड़का ऐसी हालत में चुप रह जाय और बिना हुज्जत किये बेड़ी पहन ले, मगर नहीं, इसका कोई सबब जरूर है जो आगे चलकर मालूम होगा।

3

चुनारगढ़ किले के अन्दर एक कमरे में महाराज सुरेन्द्रसिंह, वीरेन्द्रसिंह, जीतसिंह, तेजसिंह, देवीसिंह, इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह बैठे हुए कुछ बातें कर रहे हैं।

जीतसिंह—भैरों ने बड़ी होशियारी का काम किया कि अपने को इन्द्रजीतसिंह की सूरत बना शिवदत्त के ऐयारों के हाथ फँसाया।

सुरेन्द्रसिंह—शिवदत्त के ऐयारों ने चालाकी तो की थी मगर···

वीरेन्द्रसिंह—बाबाजी शेर पर सवार हो सिद्ध तो बने लेकिन अपना काम सिद्ध न कर सके।

इन्द्रजीतसिंह—मगर जैसे हो, भैरोंसिंह को अब बहुत जल्द छुड़ाना चाहिए।

जीतसिंह—कुमार, घबराओ मत। तुम्हारे दोस्त को किसी तरह की तकलीफ नहीं हो सकती, लेकिन अभी उसका शिवदत्त के यहाँ फँसे ही रहना मुनासिब है। वह बेवकूफ नहीं है, बिना मदद के आप ही छूटकर आ सकता है जिस पर पन्नालाल, रामनारायण, चुन्नीलाल, बद्रीनाथ और ज्योतिषीजी उसकी मदद को भेजे ही गये हैं। देखो तो क्या होता है! इतने दिनों तक चुपचाप बैठे रहकर शिवदत्त ने फिर अपनी खराबी कराने पर कमर बाँधी है।

देवीसिंह—कुमारों के साथ जो फौज शिकारगाह में गयी है, उसके लिए अब क्या हुक्म होता है?

जीतसिंह—अभी शिकारगाह से डेरा उठाना मुनासिब नहीं। (तेजसिंह की

तरफ देखकर) क्यों तेज ?

तेजसिंह—(हाथ जोड़कर) जी हाँ, शिकारगाह में डेरा कायम रहने से हम लोग बड़ी खूबसूरती और दिल्लगी से अपना काम निकाल सकेंगे।

सुरेन्द्रसिंह—कोई ऐयार शिवदत्तगढ़ से लौटे तो कुछ हाल-चाल मालूम हो।

तेजसिंह—कल तो नहीं, मगर परसों तक कोई-न-कोई जरूर आयेगा।

पहर भर से ज्यादे देर तक बातचीत होती रही। कुल बात को खोलना हम मुनासिब नहीं समझते बल्कि आखिरी बात का पता तो हमें भी न लगा जो मजलिस उठने के बाद जीतसिंह ने अकेले में तेजसिंह को समझायी थी। खैर, जाने दीजिए, जो होगा देखा जायगा, जल्दी क्या है।

गंगा के किनारे ऊँची बारहदरी में इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह दोनों भाई बैठे जल की कैफियत देख रहे हैं। बरसात का मौसम है, गंगा खूब बढ़ी हुई हैं, किले के नीचे जल पहुँचा है, छोटी-छोटी लहरें दीवारों में टक्कर मार रही हैं, अस्त होते हुए सूर्य की लालिमा जल में पड़कर लहरों की शोभा दूनी बढ़ा रही है, सन्नाटे का आलम है, इस बारहदरी में सिवाय इन दोनों भाइयों के कोई तीसरा दिखाई नहीं देता।

इन्द्रजीतसिंह—अभी जल कुछ और बढ़ेगा।

आनन्दसिंह—जी हाँ, पिछले साल तो गंगा आज से कहीं ज्यादा बढ़ी हुई थीं, जब दादाजी ने हम लोगों को तैरकर पार जाने के लिए कहा था।

इन्द्रजीतसिंह—उस दिन भी खूब ही दिल्लगी हुई, भैरोंसिंह सभी में तेज रहा, बद्रीनाथ ने कितना ही चाहा कि उसके आगे निकल जाय, मगर न हो सका।

आनन्दसिंह—हम दोनों भी कोस भर दूर तक उस किश्ती के साथ ही गए जो हम लोगों की हिफाजत के लिए संग गयी थी।

इन्द्रजीतसिंह—बस वही तो हम लोगों का आखिरी इम्तिहान रहा, फिर तब से जल में तैरने की नौबत ही कहाँ आयी।

आनन्दसिंह—कल तो मैंने दादाजी से कहा था कि आजकल गंगाजी खूब बढ़ी हुई हैं, तैरने को जी चाहता है।

इन्द्रजीतसिंह—तब क्या बोले ?

आनन्दसिंह—कहने लगे कि बस, अब तुम लोगों का तैरना मुनासिब नहीं है, हँसी होगी। तैरना भी एक इल्म है जिसमें तुम लोग होशियार हो चुके। अब क्या जरूरत है ? ऐसा ही जी चाहे तो किश्ती पर सवार होकर जाओ, सैर करो।

इन्द्रजीतसिंह—उन्होंने बहुत ठीक कहा, चलो किश्ती पर थोड़ी दूर घूम आयें।

बातचीत हो ही रही थी कि चोबदार ने आकर अर्ज किया, "एक बहुत बूढ़ा जवहरी हाजिर है, दर्शन करना चाहता है।"

आनन्दसिंह—यह कौन-सा वक्त है ?

चोबदार—(हाथ जोड़कर) ताबेदार ने तो चाहा था कि इस समय उसे बिदा करे मगर यह खयाल करके ऐसा करने का हौसला न पड़ा कि एक तो लड़कपन ही से वह इस दरबार का नमकख्वार है और महाराज की भी उस पर निगाह रहती है, दूसरे

अस्सी वर्ष का बुड्ढा है, तीसरे वह कहता है कि अभी इस शहर में पहुँचा हूँ, महाराज का तो दर्शन कर चुका हूँ, सरकार के भी दर्शन हो जायें तब आराम से सराय में डेरा डालूँ और हमेशा से उसका यही दस्तूर भी है।

इन्द्रजीतसिंह—अगर ऐसा है तो उसे आने ही देना मुनासिब है।

आनन्दसिंह—अब आज किश्ती पर सैर करने का रंग नजर नहीं आता।

इन्द्रजीतसिंह—क्या हर्ज है, कल सही।

चोबदार सलाम करके चला गया और थोड़ी देर में सौदागर को लेकर हाजिर हुआ। हकीकत में वह सौदागर बहुत ही बुड्ढा था, रेयासत और शराफत उसके चेहरे से बरसती थी। आते ही सलाम करके उसने दोनों भाइयों को दो अँगूठियाँ दीं और कबूल होने के बाद इशारा पाकर जमीन पर बैठ गया।

इस बुड्ढे जवहरी की इज्जत की गयी, मिजाज का हाल तथा सफर की कैफियत पूछने के बाद डेरे पर जाकर आराम करने और कल फिर हाजिर होने का हुक्म हुआ, सौदागर सलाम करके चला गया।

सौदागर ने जो दो अँगूठियाँ दोनों भाइयों को नजर दी थीं उनमें आनन्दसिंह की अँगूठी पर निहायत खुशरंग मानिक जड़ा हुआ था और इन्द्रजीतसिंह की अँगूठी पर सिर्फ एक छोटी-सी तस्वीर थी जिसे कल फिर एक दफे निगाह भरकर इन्द्रजीतसिंह ने देखा और कुछ सोच चुप ही रहे।

एकान्त होने पर रात को शमादान की रोशनी में फिर उस अँगूठी को देखा जिसमें नगीने की जगह एक कमसिन हसीन औरत की तस्वीर जड़ी हुई थी। चाहे यह तस्वीर कितनी ही छोटी क्यों न हो मगर मुसौवर ने गजब की सफाई इसमें खर्च की थी। इसे देखते-देखते एक मरतबे तो इन्द्रजीतसिंह की यह हालत हो गई कि अपने को और उस औरत की तस्वीर को भूल गए, मालूम हुआ कि स्वयं वह नाजनीन इनके सामने बैठी है और यह उससे कुछ कहना चाहते हैं, मगर उसके हुस्न के रुआब में आकर चुप रह जाते हैं। यकायक यह चौंक पड़े और अपनी बेवकूफी पर अफसोस करने लगे, लेकिन इससे क्या होता है? उस तस्वीर ने तो एक ही सायत में इनके लड़कपन को धूल में मिला दिया और नौजवानी की दीवानी सूरत इनके सामने खड़ी कर दी। थोड़ी देर पहले सवारी शिकार कसरत वगैरह के पेचीले कायदे दिमाग में घूम रहे थे, अब ये एक दूसरी ही उलझन में फँस गये और दिमाग किसी अद्वितीय रत्न के मिलने की फिक्र में गोते खाने लगा। महाराज शिवदत्त की तरफ से अब क्या ऐयारी होती है, भैरोंसिंह क्योंकर और कब कैद से छूटते हैं, देखें, बद्रीनाथ वगैरह शिवदत्तगढ़ में जाकर क्या करते हैं, अब शिकार खेलने की नौबत कब तक आती है, एक ही तीर में शेर को गिरा देने का मौका कब मिलता है, किश्ती पर सवार हो दरिया की सैर करने कब जाना चाहिए इत्यादि खयालों को भूल गए। अब तो यह फिक्र पैदा हुई कि सौदागर को यह अँगूठी क्योंकर हाथ लगी? यह तस्वीर खयाली है या असल में किसी ऐसी की है जो इस दुनिया में मौजूद है? क्या सौदागर उसका पता-ठिकाना जानता होगा? खूबसूरती की इतनी ही हद है या और भी कुछ है? नजाकत, सुडौली और सफाई वगैरह का खजाना यही है

या कोई और ? इसकी मुहब्बत के दरिया में हमारा बेड़ा क्योंकर पार होगा ?

कुअर इन्द्रजीतसिंह ने आज बहाना करना भी सीख लिया और घड़ी भर में ही उस्ताद हो गए। पेट फूला है, भोजन न करेंगे, सिर में दर्द है, किसी का बोलना बुरा मालूम होता है, सन्नाटा हो तो शायद नींद आए, इत्यादि बहानों से उन्होंने अपनी जान बचाई और तमाम रात चारपाई पर करवटें बदल-बदल कर इस फिक्र में काटी कि सवेरा हो तो सौदागर को बुला कर कुछ पूछें।

सवेरे उठते ही जवहरी को हाजिर करने का हुक्म दिया, मगर घण्टे-भर के बाद चोबदार ने वापस आकर अर्ज किया कि सराय में सौदागर का पता नहीं लगता।

इन्द्रजीतसिंह—उसने अपना डेरा कहाँ पर बतलाया था ?

चोबदार—ताबेदार को तो उसकी जुबानी यही मालूम हुआ था कि सराय में उतरेगा, मगर वहाँ दरियाफ्त करने से मालूम हुआ कि यहाँ कोई सौदागर नहीं आया।

इन्द्रजीतसिंह—किसी दूसरी जगह उतरा होगा, पता लगाओ।

"बहुत खूब" कह कर चोबदार तो चला गया मगर इन्द्रजीतसिंह कुछ तरद्दुद में पड़ गये। सिर नीचा करके सोच रहे थे कि किसी के पैर की आहट ने चौंका दिया, सिर उठा कर देखा तो कुँअर आनन्दसिंह थे।

आनन्दसिंह—स्नान का समय तो हो गया।

इन्द्रजीतसिंह—हाँ, आज कुछ देर हो गई।

आनन्दसिंह—तबीयत कुछ सुस्त मालूम होती है ?

इन्द्रजीतसिंह—रात भर सिर में दर्द था।

आनन्दसिंह—अब कैसा है ?

इन्द्रजीतसिंह—अब तो ठीक है।

आनन्दसिंह—कल कुछ झलक सी मालूम पड़ी थी कि उस अँगूठी में कोई तस्वीर जड़ी हुई है जो उस जौहरी ने नजर की थी।

इन्द्रजीतसिंह—हाँ, थी तो।

आनन्दसिंह—कैसी तस्वीर है ?

इन्द्रजीतसिंह—न मालूम वह अँगूठी कहाँ रख दी कि मिलती ही नहीं। मैंने भी सोचा था कि दिन को अच्छी तरह देखूंगा, मगर···

ग्रन्थकर्ता—सच है, इसकी गवाही तो मैं भी दूंगा !

अगर भेद खुल जाने का डर न होता तो कुँअर इन्द्रजीतसिंह सिवा 'ओफ' करने और लम्बी-लम्बी साँसें लेने के कोई दूसरा काम न करते मगर क्या करें लाचारी से सभी मामूली काम और अपने दादा के साथ बैठकर भोजन भी करना पड़ा, हाँ शाम को इनकी बेचैनी बहुत बढ़ गई जब सुना कि तमाम शहर छान डालने पर भी उस जवहरी का कहीं पता न लगा और यह भी मालूम हुआ कि उस जवहरी ने बिलकुल झूठ कहा था कि महाराज का दर्शन कर आया हूँ, अब कुमार के दर्शन हो जायँ तब आराम से सराय में डेरा डालूं। वह वास्तव में महाराज सुरेन्द्रसिंह और वीरेन्द्रसिंह से नहीं मिला था।

तीसरे दिन इनको बहुत ही उदास देख आनन्दसिंह ने किश्ती पर सवार होकर

गंगाजी की सैर करने और दिल बहलाने के लिए जिद की, लाचार उनकी बात माननी ही पड़ी।

एक छोटी-सी खूबसूरत और तेज जाने वाली किश्ती पर सवार हो इन्द्रजीतसिंह ने चाहा कि किसी को साथ न ले जायें सिर्फ दोनों भाई ही सवार हों और खे कर दरिया की सैर करें। किसकी मजाल थी जो इनकी बात काटता, मगर एक पुराने खिदमतगार ने जिसने कि वीरेन्द्रसिंह को गोद में खिलाया था और अब इन दोनों के साथ रहता था ऐसा करने से रोका और जब दोनों भाइयों ने न माना तो वह खुद किश्ती पर सवार हो गया। पुराना नौकर होने के खयाल से दोनों भाई कुछ न बोले, लाचार साथ ले जाना ही पड़ा।

आनन्दसिंह—किश्ती को धारा में ले जाकर बहाव पर छोड़ दीजिये। फिर खे कर ले आवेंगे।

इन्द्रजीतसिंह—अच्छी बात है।

सिर्फ दो घण्टे दिन बाकी था जब दोनों भाई किश्ती पर सवार हो दरिया की सैर करने को गए क्योंकि लौटते समय चाँदनी रात का भी आनन्द लेना मंजूर था।

चुनार से दो कोस पश्चिम गंगा के किनारे पर एक छोटा-सा जंगल था। जब किश्ती उसके पास पहुँची, वंशी की और साथ ही गाने की बारीक सुरीली आवाज इन लोगों के कानों में पड़ी। संगी[illegible] एक ऐसी चीज है कि हर एक के दिल को चाहे वह कैसा ही नासमझ क्यों न हो अपनी तरफ खींच लेती है, यहाँ तक कि जानवर भी इसके वश में होकर अपने को भूल जाता है। दो-तीन दिन से कुँअर इन्द्रजीतसिंह का दिल चुटीला हो रहा था, दरिया की बहार देखना तो दूर रहा, इन्हें अपने तन-बदन की भी सुध न थी। ये तो अपनी प्यारी तस्वीर की धुन में सिर झुकाए बैठे कुछ सोच रहे थे, इनके हिसाब चारों तरफ सन्नाटा था, मगर इस सुरीली आवाज ने इनकी गर्दन घुमा दी और उस तरफ देखने को मजबूर किया जिधर से वह आ रही थी।

किनारे की तरफ देखने से यह तो मालूम न हुआ कि वंशी बजाने या गाने वाला कौन है मगर इस बात का अन्दाज जरूर मिल गया कि वे लोग बहुत दूर नहीं हैं जिनके गाने की आवाज सुनने वालों पर जादू का सा असर कर रही है।

इन्द्रजीतसिंह—आहा, क्या सुरीली आवाज है!

आनन्दसिंह—दूसरी आवाज भी आई। बेशक कई औरतें मिल कर गा-बजा रही हैं।

इन्द्रजीतसिंह—(किश्ती का मुँह किनारे की तरफ फेर कर) ताज्जुब है कि इन लोगों ने गाने-बजाने और दिल बहलाने के लिए ऐसी जगह पसन्द की। जरा देखना चाहिए।

आनन्दसिंह—क्या हर्ज है, चलिए।

बूढ़े खिदमतगार ने किनारे पर किश्ती लगाने और उतरने के लिए मना किया और बहुत समझाया मगर इन दोनों ने न माना। किश्ती किनारे लगाई और उतर कर उस तरफ चले जिधर से आवाज आ रही थी। जंगल में थोड़ी ही दूर जाकर दस-पन्द्रह

नौजवान औरतों का एक झुंड नजर पड़ा जो रंग-बिरंगी पोशाक और कीमती जेवरों से अपने हुस्न को दूना किए ऊँचे पेड़ से लटकते हुए एक झूले को झुला रही थीं। कोई वंशी कोई मृदंगी बजाती, कोई हाथ से ताल दे-देकर गा रही थी। उस हिंडोले पर सिर्फ एक ही औरत गंगा की तरफ रुख किए बैठी थी। ऐसा मालूम होता था मानो परियाँ साक्षात् किसी देवकन्या को झूला झुला और गा-बजा कर इसलिए प्रसन्न कर रही हैं कि खूबसूरती बढ़ने और नौजवानी के स्थिर रहने का वरदान पावें। मगर नहीं, उनके भी दिल की दिल ही में रही और कुँअर इन्द्रजीतसिंह तथा आनन्दसिंह को आते देख हिंडोले पर बैठी हुई नाजनीन को अकेली छोड़ न जाने क्यों भाग ही जाना पड़ा।

आनन्दसिंह—भैया, वे सब तो भाग गईं!

इन्द्रजीतसिंह—हाँ, मैं इस हिंडोले पास जाता हूँ, तुम देखो कि वे औरतें किधर गईं?

आनन्दसिंह—बहुत अच्छा।

चाहे जो हो मगर कुँअर इन्द्रजीतसिंह ने उसे पहचान ही लिया जो हिंडोले पर अकेली रह गई थी। भला यह क्यों न पहचानते? जवहरी की नजर दी हुई अँगूठी पर उसकी तस्वीर देख चुके थे, इनके दिल में उसकी तस्वीर खुद गई थी, अब तो मुँहमाँगी मुराद पाई, जिसके लिए अपने को मिटाना मंजूर था, उसे बिना परिश्रम पाया, फिर क्या चाहिए?

आनन्दसिंह पता लगाने के लिए उन औरतों के पीछे गए, मगर वे ऐसा भागीं कि झलक तक दिखाई न दी, लाचार आधे घण्टे तक हैरान होकर फिर उस हिंडोले के पास पहुँचे, हिंडोले पर बैठी हुई औरत को कौन कहे अपने भाई को भी वहाँ न पाया। घबरा कर इधर-उधर ढूँढ़ने और पुकारने लगे, यहाँ तक कि रात हो गई और यह सोच कर किश्ती के पास पहुँचे कि शायद वहाँ चले गये हों, लेकिन वहाँ भी सिवाय उस बूढ़े खिदमतगार के किसी दूसरे को न देखा। जी बेचैन हो गया, खिदमतगार को सब हाल बताकर बोले, "जब तक अपने प्यारे भाई का पता न लगा लूँगा घर न जाऊँगा, तू जाकर यहाँ का हाल सब को खबर कर दे।"

खिदमतगार ने हर तरह से आनन्दसिंह को समझाया और घर चलने के लिए कहा मगर कुछ फायदा न निकला। लाचार उसने किश्ती उसी जगह छोड़ी और पैदल रोता-कलपता किले की तरफ रवाना हुआ। क्योंकि यहाँ जो कुछ हो चुका था, उसका हाल राजा वीरेन्द्रसिंह से कहना भी उसने आवश्यक समझा।

4

खिदमतगार ने किले में पहुँच कर और यह सुन कर कि इस समय दोनों एक ही जगह बैठे हैं कुँअर इन्द्रजीतसिंह के गायब होने का हाल और सबब जो कुँअर आनन्द-सिंह की जुबानी सुना था, महाराज सुरेन्द्रसिंह और वीरेन्द्रसिंह के पास हाजिर होकर

अर्ज किया। इस खबर के सुनते ही उन दोनों के कलेजे में चोट सी लगी। थोड़ी देर तक घबराहट के सबब कुछ सोच न सके कि क्या करना चाहिए। रात भी एक पहर से ज्यादा जा चुकी थी। आखिर जीतसिंह, तेजसिंह और देवीसिंह को बुला कर खिदमतगार की जुबानी जो कुछ सुना था कहा और पूछा कि अब क्या करना चाहिए ?

तेजसिंह—उस जंगल में इतनी औरतों का इकट्ठे होकर गाना-बजाना और इस तरह धोखा देना बेसबब नहीं है।

सुरेन्द्रसिंह—जब से शिवदत्त के उभरने की खबर सुनी है, एक खटका सा बना रहता है। मैं समझता हूँ यह भी उसी की शैतानी है।

वीरेन्द्रसिंह—दोनों लड़के ऐसे कमजोर भी तो नहीं हैं कि जिसका जी चाहे, उन्हें पकड़ ले।

सुरेन्द्रसिंह—ठीक है मगर आनन्दसिंह का भी वहाँ रह जाना बुरा ही हुआ।

तेजसिंह—बेचारा खिदमतगार जबर्दस्ती साथ हो गया था, नहीं तो पता भी न लगता कि दोनों कहाँ चले गये। खैर, उनके बारे में जो कुछ सोचना है सोचिये मगर मुझे जल्द इजाजत दीजिये कि हजार सिपाहियों को साथ लेकर वहाँ जाऊँ और इसी वक्त उस छोटे से जंगल को चारों तरफ से घेर लूँ, फिर जो कुछ होगा देखा जायगा।

सुरेन्द्रसिंह—(जीतसिंह से) क्या राय है ?

जीतसिंह—तेज ठीक कहता है, इसे अभी जाना चाहिए।

हुक्म पाते ही तेजसिंह दीवानखाने के ऊपर बुर्ज पर चढ़ गए, जहाँ बड़ा-सा नक्कारा और उसके पास ही एक भारी चोब इसलिए रक्खा हुआ था कि वक्त-बे-वक्त कोई जरूरत आ पड़े और फौज को तुरन्त तैयार करना हो, तो इस नक्कारे पर चोब मारी जाय। इसकी आवाज भी निराले ढंग की थी जो किसी नक्कारे की आवाज से मिलती न थी और इसके बजाने के लिए तेजसिंह ने कई इशारे भी मुकर्रर किये हुए थे।

तेजसिंह ने चोब उठा कर जोर से एक दफा नक्कारे पर मारा जिसकी आवाज तमाम शहर में बल्कि दूर-दूर तक गूँज गई। चाहे इसका सबब किसी शहर वाले की समझ में न आया हो मगर सेनापति समझ गया कि इसी वक्त हजार फौजी सिपाहियों की जरूरत है जिसका इन्तजाम उसने बहुत जल्द किया।

तेजसिंह अपने सामान से तैयार हो किले के बाहर निकले और हजार सिपाही तथा बहुत से मशालचियों को साथ ले उस छोटे से जंगल की तरफ रवाना होकर बहुत जल्दी ही वहाँ जा पहुँचे।

थोड़ी-थोड़ी दूर पर पहरा मुकर्रर करके चारों तरफ से उस जंगल को घेर लिया। इन्द्रजीतसिंह तो गायब हो ही चुके थे, आनन्दसिंह के मिलने की बहुत तरकीब की गई मगर उनका भी पता न लगा। तरद्दुद में रात बिताई, सवेरा होते ही तेजसिंह ने हुक्म दिया कि एक तरफ से इस जंगल को तेजी के साथ काटना शुरू करो जिसमें दिन भर में तमाम जंगल साफ हो जाय।

उसी समय महाराज सुरेन्द्रसिंह और जीतसिंह भी वहाँ आ पहुँचे। जंगल का काटना इन्होंने भी पसन्द किया और बोले कि "बहुत अच्छा होगा, अगर हम लोग इस

जंगल से एकदम ही निश्चिन्त हो जायें ।"

इस छोटे जंगल को काटते देर ही कितनी लगनी थी, जिस पर महाराज की मुस्तैदी के सबब यहाँ कोई भी ऐसा नजर नहीं आता था जो पेड़ों की कटाई में न लगा हो । दोपहर होते-होते जंगल कट के साफ हो गया, मगर किसी का कुछ पता न लगा यहाँ तक कि इन्द्रजीतसिंह की तरह आनन्दसिंह के भी गायब हो जाने का निश्चय करना पड़ा । हाँ, इस जंगल के अन्त में एक कमसिन नौजवान हसीन और बेशकीमती गहने-कपड़े से सजी हुई औरत की लाश पाई गई जिसके सिर का पता न था ।

यह लाश महाराज सुरेन्द्रसिंह के पास लाई गई । अब सब की परेशानी और बढ़ गई और तरह-तरह के खयाल पैदा होने लगे । लाचार उस लाश को साथ लेकर शहर की तरफ लौटे । जीतसिंह ने कहा, "हम लोग जाते हैं, तारासिंह को भेज सब ऐयारों को जो शिवदत्त की फिक्र में गए हुए हैं बुलवा कर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह की तलाश में भेजेंगे, मगर तुम इसी वक्त उनकी खोज में जहाँ तुम्हारा दिल गवाही दे, जाओ ।"

तेजसिंह अपने सामान से तैयार ही थे । उसी वक्त सलाम करके एक तरफ को रवाना हो गए, और महाराज रूमाल से आँखों को पोंछते हुए चुनार की तरफ बिदा हुए ।

उदास हो पोतों की जुदाई से दुःखी महाराज सुरेन्द्रसिंह घर पहुँचे । दोनों लड़कों के गायब होने का हाल चन्द्रकान्ता ने भी सुना । वह बेचारी दुनिया के दुःख-सुख को अच्छी तरह समझ चुकी थी, इसलिए कलेजा मसोसकर रह गई । जाहिर में रोना-चिल्लाना उसने पसन्द न किया, मगर ऐसा करने से उसके नाजुक दिल पर और भी सदमा पहुँचा, घड़ी भर में ही उसकी सूरत बदल गई । चपला और चम्पा को चन्द्रकान्ता से कितनी मुहब्बत थी इसको आप लोग खूब जानते हैं, लिखने की कोई जरूरत नहीं । दोनों लड़कों के गायब होने का गम इन दोनों को चन्द्रकान्ता से ज्यादा हुआ और दोनों ने निश्चय कर लिया कि मौका पाकर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह का पता लगाने की कोशिश करेंगी ।

महाराज सुरेन्द्रसिंह के आने की खबर पाकर वीरेन्द्रसिंह मिलने के लिए उनके पास गए । देवीसिंह भी वहाँ मौजूद थे । वीरेन्द्रसिंह के सामने ही महाराज ने सब हाल देवीसिंह से कहकर पूछा कि "अब क्या करना चाहिए ?"

देवीसिंह—मैं पहले तो उस लाश को देखना चाहता हूँ जो उस जंगल में पाई गई थी ।

सुरेन्द्रसिंह—हाँ, तुम उसे जरूर देखो ।

जीतसिंह -(चोबदार से) उस लाश को, जो जंगल में पाई गई थी, इसी जगह लाने के लिए कहो ।

"बहुत अच्छा" कहकर चोबदार बाहर चला गया, मगर थोड़ी ही देर में वापस आकर बोला, "महाराज के साथ आते-आते न मालूम वह लाश कहाँ गुम हो गई । कई आदमी उसकी खोज में परेशान हैं मगर पता नहीं लगता !"

वीरेन्द्रसिंह—अब फिर हम लोगों को होशियारी से रहने का जमाना आ गया ।

जब हजारों आदमियों के बीच से लाश गुम हो गई तो मालूम होता है अभी बहुत कुछ उपद्रव होने वाला है।

जीतसिंह—मैंने तो समझा था कि अब जो कुछ थोड़ी-सी उम्र रह गई है आराम से कटेगी; मगर नहीं, ऐसी उम्मीद किसी को कुछ भी न रखनी चाहिए।

सुरेन्द्रसिंह—खैर, जो होगा देखा जायगा, इस समय क्या करना मुनासिब है, इसे सोचो।

जीतसिंह—मेरा विचार था कि तारासिंह को बद्रीनाथ वगैरह के पास भेजते जिसमें वे लोग भैरोंसिंह को छुड़ाकर और किसी कार्रवाई में न फँसें और सीधे यहाँ चले आवें, मगर ऐसा करने को भी जी नहीं चाहता। आज भर आप और सब्र करें, अच्छी तरह सोच कर कल मैं अपनी राय दूंगा।

5

पण्डित बद्रीनाथ, पन्नालाल, रामनारायण, चुन्नीलाल और जगन्नाथ ज्योतिषी भैरोंसिंह ऐयार को छुड़ाने के लिए शिवदत्तगढ़ की तरफ गए। हुक्म के मुताबिक कंचनसिंह सेनापति ने शेर वाले बाबाजी के पीछे जासूस भेज कर पता लगा लिया था कि भैरोंसिंह ऐयार शिवदत्तगढ़ किले के अन्दर पहुँचाए गए हैं। इसलिए इन ऐयारों का पता लगाने की जरूरत न पड़ी, सीधे शिवदत्तगढ़ पहुँचे और अपनी-अपनी सूरत बदल कर शहर में घूमने लगे। पाँचों ने एक-दूसरे का साथ छोड़ दिया, मगर यह ठीक कर लिया था कि सब लोग घूम-फिर कर फलाँ जगह इकट्ठे हो जायेंगे।

दिन-भर घूम-फिर कर भैरोंसिंह का पता लगाने के बाद सब ऐयार शहर के बाहर एक पहाड़ी पर इकट्ठे हुए और रात-भर सलाह करके राय कायम करने में काटी, दूसरे दिन ये लोग फिर सूरत बदल-बदलकर शिवदत्तगढ़ में पहुँचे। रामनारायण और चुन्नीलाल ने अपनी सूरत उसी जगह के चोबदारों की सी बनाई और वहाँ पहुँचे जहाँ भैरोंसिंह कैद थे। कई दिनों तक कैद रहने के सबब उन्होंने अपने को जाहिर कर दिया था और असली सूरत में एक कोठरी के अन्दर, जिसके तीन तरफ लोहे का जंगला लगा हुआ था, बन्द थे। उसी कोठरी के बगल में उसी तरह की कोठरी और थी जिसमें गद्दी लगाए बूढ़ा दारोगा बैठा था और कई सिपाही नंगी तलवार लिए घूम-घूम कर पहरा दे रहे थे। रामनारायण और चुन्नीलाल उस कोठरी के दरवाजे पर जाकर खड़े हुए और बूढ़े दारोगा से बात-चीत करने लगे।

रामनारायण—आपको महाराज ने याद किया है।

बूढ़ा—क्यों, क्या काम है? भीतर आओ, बैठो, चलते हैं।

रामनारायण और चुन्नीलाल कोठरी के अन्दर गए और बोले—

रामनारायण—मालूम नहीं, क्यों बुलाया है, मगर ताकीद की है कि जल्द बुला लाओ।

बूढ़ा—अभी घंटा-भर भी नहीं हुआ जब किसी ने आ के कहा था कि महाराज खुद आने वाले हैं, क्या वह बात झूठ थी ?

रामनारायण—हाँ, महाराज आने वाले थे, मगर अब न आवेंगे।

बूढ़ा—अच्छा, आप दोनों आदमी इसी जगह बैठें और कैदी की हिफाजत करें। मैं जाता हूँ।

रामनारायण—बहुत अच्छा।

रामनारायण और चुन्नीलाल को कोठरी के अन्दर बैठा कर बूढ़ा दारोगा बाहर आया और चालाकी से झट उस कोठरी का दरवाजा बन्द करके बाहर से बोला, "वन्दगी ! मैं दोनों को पहचान गया कि ऐयार हो ! कहिये, अब हमारी कैद में आप फँसे या नहीं ? मैंने भी क्या मजे में पता लगा लिया। पूछा कि अभी तो मालूम हुआ था कि महाराज खुद आने वाले हैं, आपने भी झट कबूल कर लिया और कहा कि 'हाँ आने वाले थे मगर अब न आवेंगे।' यह न समझे कि मैं धोखा देता हूँ। इसी अक्ल पर ऐयारी करते हो ? खैर, आप लोग भी इसी कैदखाने की हवा खाइये और जान लीजिए कि मैं बाकरअली ऐयार आप जैसेलोगों को मजा चखाने के लिए ही इस जगह बैठाया गया हूँ।"

बूढ़े की बात सुन रामनारायण और चुन्नीलाल चुप हो गए, बल्कि शरमा कर सिर नीचा कर लिया। बूढ़ा दारोगा वहाँ से रवाना हुआ और शिवदत्त के पास पहुँच इन दोनों ऐयारों के गिरफ्तार करने का हाल कहा। महाराज ने खुश होकर बाकरअली को इनाम दिया और खुशी-खुशी खुद रामनारायण और चुन्नीलाल को देखने आये।

बद्रीनाथ, पन्नालाल और ज्योतिषीजी को भी यह मालूम हो गया कि हमारे साथियों में से दो ऐयार पकड़े गए। अब तो एक की जगह तीन आदमियों के छुड़ाने के फिक्र करनी पड़ी।

कुछ रात गए ये तीनों ऐयार घूम फिर कर शहर के बाहर की तरफ जा रहे थे कि पीछे से काले कपड़े से अपना तमाम बदन छिपाये एक आदमी लपकता हुआ उनके पास आया और लपेटा हुआ एक छोटा-सा कागज उनके सामने फेंक और अपने साथ आने के लिए हाथ से इशारा करके तेजी से आगे बढ़ा।

बद्रीनाथ ने उस पुर्जे को उठा कर सड़क के किनारे एक बनिये की दुकान पर जलते हुए चिराग की रोशनी में पढ़ा, सिर्फ इतना ही लिखा था—"भैरोंसिंह"। बद्रीनाथ समझ गए कि भैरोंसिंह किसी तरकीब से निकल भागा है और यही जा रहा है। बद्रीनाथ ने भैरोंसिंह के हाथ का लिखा भी पहचाना।

भैरोंसिंह पुर्जा फेंककर इन तीनों को हाथ के इशारे से बुला गया था और दस-बारह कदम आगे बढ़कर अब इन लोगों के आने की राह देख रहा था।

बद्रीनाथ वगैरह खुश होकर आगे बढ़े और उस जगह पहुँचे जहाँ भैरोंसिंह काले कपड़े से बदन को छिपाये सड़क के किनारे आड़ देकर खड़ा था। बातचीत करने का मौका न था, आगे-आगे भैरोंसिंह और पीछे-पीछे बद्रीनाथ, पन्नालाल और ज्योतिषीजी

तेजी से कदम बढ़ाते शहर के बाहर हो गये।

रात अँधेरी थी। मैदान में जाकर भैरोंसिंह ने काला कपड़ा उतार दिया। इन तीनों ने चन्द्रमा की रोशनी में भैरोंसिंह को पहचाना—खुश होकर बारी-बारी से तीनों ने उसे गले लगाया और तब एक पत्थर की चट्टान पर बैठकर बातचीत करने लगे।

बद्रीनाथ—भैरोंसिंह, इस वक्त तुम्हें देखकर तबीयत बहुत ही खुश हुई!

भैरोंसिंह—मैं तो किसी तरह छूट आया, मगर रामनारायण और चुन्नीलाल बेढब जा फँसे हैं।

ज्योतिषी—उन दोनों ने भी क्या यही धोखा खाया?

भैरोंसिंह—मैं उनके छुड़ाने की भी फिक्र कर रहा हूँ।

पन्नालाल—वह क्या?

भैरोंसिंह—सो सब कहने-सुनने का मौका तो रात-भर है मगर इस समय मुझे भूख बड़े जोर से लगी है, कुछ हो तो खिलाओ।

बद्रीनाथ—दो-चार पेड़े हैं, जी चाहे तो खा लो।

भैरोंसिंह—इन दो-चार पेड़ों से क्या होगा? खैर, पानी का तो बन्दोबस्त होना चाहिए।

बद्रीनाथ—फिर क्या करना चाहिए?

भैरोंसिंह—(हाथ से इशारा करके) वह देखो, शहर के किनारे जो चिराग जल रहा है अभी देखते आये हैं कि वह हलवाई की दूकान है और वह ताजी पूरियाँ बना रहा है, बल्कि पानी भी उसी हलवाई से मिल जायगा।

पन्नालाल—अच्छा, मैं जाता हूँ।

भैरोंसिंह—हम लोग भी साथ चलते हैं, सब का इकट्ठा ही रहना ठीक है। कहीं ऐसा न हो कि आप फँस जायँ और हम लोग राह ही देखते रहें।

पन्नालाल—फंसना क्या खिलवाड़ हो गया!

भैरोंसिंह—खैर हर्ज ही क्या है अगर हम लोग साथ चलें? तीन आदमी किनारे खड़े हो जायंगे, एक आदमी आगे बढ़कर सौदा ले लेगा।

बद्रीनाथ—हाँ-हाँ, यही ठीक होगा, चलो, हम लोग एक साथ चलें।

चारों ऐयार एक साथ वहाँ से रवाना हुए और उस हलवाई के पास पहुँचे, जिसकी अकेली दूकान शहर के किनारे पर थी। बद्रीनाथ, ज्योतिषीजी और भैरोंसिंह कुछ इधर ही खड़े रहे और पन्नालाल सौदा खरीदने दुकान पर गये। जाने के पहले ही भैरोंसिंह ने कहा, "मिट्टी के बर्तन में पानी भी देने का इकरार हलवाई से पहले कर लेना नहीं तो पीछे हुज्जत करेगा।"

पन्नालाल हलवाई की दूकान पर गये और दो सेर पूरी तथा सेर भर मिठाई माँगी। हलवाई ने खुद पूछा—"पानी भी चाहिए या नहीं?"

पन्नालाल—हाँ-हाँ, पानी जरूर देना होगा।

हलवाई—कोई बर्तन है?

पन्नालाल—बर्तन तो है, मगर छोटा है। तुम्हीं किसी मिट्टी के ठिलिए में जल दे दो।

हलवाई—एक घड़ा जल के लिए आठ आने और देने पड़ेंगे।

पन्नालाल—इतना अन्धेर ! खैर, हम देंगे।

पूरी, मिठाई और एक घड़ा जल लेकर चारों ऐयार वहाँ से चले मगर यह खबर किसी को भी न थी कि कुछ दूर पीछे दो आदमी साथ लिए छिपता हुआ हलवाई भी आ रहा है। मैदान में एक बड़े पत्थर की चट्टान पर बैठ चारों ने भोजन किया जल पिया और हाथ-मुँह धो निश्चिन्त हो धीरे-धीरे आपस में बातचीत करने लगे। आधा घंटा भी न बीता होगा कि चारों बेहोश होकर चट्टान पर लेट गये। तभी दोनों आदमियों को साथ लिए हलवाई इनकी खोपड़ी पर आ मौजूद हुआ।

हलवाई के साथ आये दोनों आदमियों ने बद्रीनाथ, ज्योतिषीजी और पन्नालाल की मुश्कें कस डालीं और कुछ सुँघाकर भैरोंसिंह को होश में लाकर बोले, "वाह जी अजायबसिंह ! आपकी चालाकी तो खूब काम कर गयी ! अब तो शिवदत्तगढ़ में आए हुए पाँचों नालायक हमारे हाथ फँसे ! महाराज से सबसे ज्यादे इनाम पाने का काम तो आप ही ने किया !"

6

बहुत-सी तकलीफें उठाकर महाराज सुरेन्द्रसिंह और वीरेन्द्रसिंह तथा इन्हीं की बदौलत चन्द्रकान्ता, चपला, चम्पा, तेजसिंह और देवीसिंह वगैरह ने थोड़े दिन खूब सुख लूटा मगर अब वह जमाना न रहा। सच है, सुख और दुख का पहरा बराबर बदलता रहता है। खुशी के दिन बात की बात में निकल गये, कुछ मालूम न पड़ा, यहाँ तक कि मुझे भी कोई बात उन लोगों की लिखने लायक न मिली, लेकिन अब उन लोगों को मुसीबत की घड़ी काटे नहीं कटती। कौन जानता था कि गया-गुजरा शिवदत्त फिर बला की तरह निकल आयेगा ? किसे खबर थी कि बेचारी चन्द्रकान्ता की गोद से पले-पलाये दोनों होनहार लड़के यों अलग कर दिये जायेंगे ? कौन साफ कह सकता था कि इन लोगों की वंशावली और राज्य में जितनी तरक्की होगी, यकायक उतनी ही ज्यादा आफतें आ पड़ेंगी ? खैर खुशी के दिन तो उन्होंने काटे, अब मुसीबत की घड़ी कौन झेले ? हाँ, बेचारे जगन्नाथ ज्योतिषी ने इतना जरूर कह दिया था कि वीरेन्द्रसिंह के राज्य और वंश की बहुत-कुछ तरक्की होगी, मगर मुसीबत को लिए हुए। खैर, आगे जो कुछ होगा देखा जायेगा, पर इस समय तो सबके सब तरद्दुद में पड़े हैं। देखिए, अपने एकान्त के कमरे में महाराज सुरेन्द्रसिंह कैसी चिन्ता में बैठे हैं और बाईं तरफ गद्दी का कोना दबाये राजा वीरेन्द्रसिंह अपने सामने बैठे हुए जीतसिंह की सूरत किस बेचैनी से देख रहे हैं। दोनों बाप-बेटा अर्थात देवीसिंह और तारासिंह अपने पास ऊपर के दर्जे पर बैठे हुए बुजुर्ग और गुरु के समान जीतसिंह की तरफ झुके हुए इस उम्मीद में बैठे हैं कि देखें, अब आखिरी

हुक्म क्या होता है। सिवाय इन लोगों के इस कमरे में और कोई भी नहीं है, एकदम सन्नाटा छाया हुआ है। न मालूम इसके पहले क्या-क्या बातें हो चुकी हैं, मगर इस वक्त तो महाराज सुरेन्द्रसिंह ने यह सन्नाटा सिर्फ इतना ही कहके तोड़ा, "खैर, चम्पा और चपला की बात मान लेनी चाहिए।"

जीतसिंह—जो मर्जी, मगर देवीसिंह के लिए क्या हुक्म होता है ?

सुरेन्द्रसिंह—और तो कुछ नहीं सिर्फ इतना ही खयाल है कि चुनार की हिफाजत ऐसे वक्त क्योंकर होगी ?

जीतसिंह—मैं समझता हूँ कि यहाँ की हिफाजत के लिए तारा बहुत है और फिर वक्त पड़ने पर इस बुढ़ौती में भी मैं कुछ कर गुजरूँगा।

सुरेन्द्रसिंह—(कुछ मुस्कुराकर और उम्मीद भरी निगाहों से जीतसिंह की तरफ देखकर) खैर, जो मुनासिब समझो।

जीतसिंह—(देवीसिंह से) लीजिए साहब, अब आपको भी पुरानी कसर निकालने का मौका दिया जाता है, देखें, आप क्या करते हैं। ईश्वर इस मुस्तैदी को पूरा करें।

इतना सुनते ही देवीसिंह उठ खड़े हुए और सलाम कर कमरे के बाहर चले गये।

7

अपने भाई इन्द्रजीतसिंह की जुदाई से व्याकुल हो उसी समय आनन्दसिंह उस जंगल के बाहर हुए और मैदान में खड़े हो इधर-उधर निगाह दौड़ाने लगे। पश्चिम की तरफ दो औरतें घोड़ों पर सवार धीरे-धीरे जाती हुई दिखाई पड़ीं। ये तेजी के साथ उस तरफ बढ़े, और उन दोनों के पास पहुँचने की उम्मीद में दो कोस तक पीछा किये चले गये मगर उम्मीद पूरी न हुई, क्योंकि पहाड़ी के नीचे पहुँचकर वे दोनों रुकीं और अपने पीछे आते हुए आनन्दसिंह की तरफ देख घोड़ों को एकदम तेज कर पहाड़ी की बगल से घुमाती हुई गायब हो गयीं।

खूब खिली हुई चाँदनी रात होने के सबब से आनन्दसिंह को ये दोनों औरतें दिखाई पड़ीं और इन्होंने इतनी हिम्मत भी की, पर पहाड़ी के पास पहुँचते ही उन दोनों के भाग जाने से इनको बड़ा ही रंज हुआ। खड़े होकर सोचने लगे कि अब क्या करना चाहिए। इनको हैरान और सोचते हुए छोड़कर निर्दयी चन्द्रमा ने भी धीरे-धीरे अपने घर का रास्ता लिया और अपने दुश्मन को जाते देख मौका पाकर अँधेरे ने चारों तरफ हुकूमत जमाई। आनन्दसिंह और भी दुःखी हुए। क्या करें ? कहाँ जायें ? किससे पूछें कि इन्द्रजीतसिंह को कौन ले गया ?

दूर से एक रोशनी दिखाई पड़ी। गौर करने से मालूम हुआ कि किसी झोंपड़ी

के आगे आग जल रही है। आनन्दसिंह उसी तरफ चले और थोड़ी ही देर में कुटी के पास पहुँचकर देखा कि पत्तों की बनाई हुई हरी झोंपड़ी के आगे आठ-दस आदमी जमीन पर फर्श बिछाये बैठे हैं जो कि दाढ़ी और पहरावे से साफ मुसलमान मालूम पड़ते हैं। बीच में दो मोमी शमादान जल रहे हैं। एक आदमी फारसी के शेर पढ़कर सुना रहा है, और बाकी सब 'वाह-वाह' की धुन लड़ा रहे हैं। एक तरफ आग जल रही है और दो-तीन आदमी कुछ खाने की चीजें पका रहे हैं। आनन्दसिंह फर्श के पास जाकर खड़े हो गये।

आनन्दसिंह को देखते ही सबके सब उठ खड़े हुए और बड़ी इज्जत से उनको फर्श पर बैठाया। उस आदमी ने जो फारसी के शेर पढ़-पढ़कर सुना रहा था, खड़े हो रँगीली भाषा में कहा, "खुदा का शुक्र है कि शाहजादे-चुनार ने इस मजलिस में पहुँचकर हम लोगों की इज्जत को 'फल्के-हफ्तुम'[1] तक पहुँचाया। इस बियाबान जंगल में हम लोग क्या खातिर कर सकते हैं सिवाय इससे कि इनके कदमों को अपनी आँखों पर जगह दें और इत्र व इलायची पेश करें!"

केवल इतना ही कहकर इत्रदान और इलायची की डिब्बी उनके आगे ले गया। पढ़े-लिखे भले आदमियों की खातिर जरूरी समझकर आनन्दसिंह ने इत्र सूँघा और इलायची ले लीं। इससे बाद इनसे इजाजत लेकर वह फिर फारसी कविता पढ़ने लगा। दूसरे आदमियों ने दो-एक तकिये इनके अगल-बगल में रख दिये।

इत्र की विचित्र खुशबू ने इनको मस्त कर दिया, इनकी पलकें भारी हो गयीं और बेहोशी ने धीरे-धीरे अपना असर जमा कर इनको फर्श पर सुला दिया। दूसरे दिन दोपहर को आँख खुलने पर इन्होंने अपने को एक दूसरे ही मकान में मसहरी पर पड़े हुए पाया। घबराकर उठ बैठे और इधर-उधर देखने लगे।

पाँच कमसिन और खूबसूरत औरतें सामने खड़ी दिखाई दीं, जिनमें से एक सरदारिन की तरह कुछ आगे बढ़ी हुई थी। उसके हुस्न और अदा को देख आनन्दसिंह दंग हो गये। उसकी बड़ी-बड़ी आंखों और बाँकी चितवन ने उन्हें आपे से बाहर कर दिया, उसकी जरा-सी हंसी ने इनके दिल पर बिजली गिराई, और आगे बढ़ हाथ जोड़ इस कहने ने तो और भी सितम ढाया कि—"क्या आप मुझसे खफा हैं?"

आनन्दसिंह भाई की जुदाई, रात की बात, ऐयारों के धोखे में पड़ना, सब-कुछ बिलकुल भूल गये और उसकी मुहब्बत में चूर होकर बोले—"तुम्हारी-सी परीजमाल से और रंज!"

वह औरत पलंग पर बैठ गयी और आनन्दसिंह के गले में हाथ डाल के बोली, "खुदा की कसम खाकर कहती हूँ कि सालभर से आपके इश्क ने मुझे बेकार कर दिया। सिवाय आपके ध्यान के खाने-पीने की बिलकुल सुध नहीं रहती, मगर मौका न मिलने से लाचार थी।"

---

1. मुसलमानों की किताबों में सात दर्जे आसमान के लिखे हैं। सबसे ऊपर वाले दर्जे का नाम फल्के-हफ्तुम है।

आनन्दसिंह— (चौंककर) हैं ! क्या तुम मुसलमान हो जो खुदा की कसम खाती हो ?

औरत—(हँसकर) हाँ, क्या मुसलमान बुरे होते हैं ?

आनन्दसिंह यह कहकर उठ खड़े हुए—"अफसोस अगर तुम मुसलमान न होतीं तो मैं तुम्हें जी-जान से प्यार करता, मगर एक औरत के लिए अपना मजहब नहीं बिगाड़ सकता।"

औरत—(हाथ थामकर) देखो बेमुरौवती मत करो ! मैं सच कहती हूँ कि अब तुम्हारी जुदाई मुझसे न सही जायगी !

आनन्दसिंह—मैं भी सच कहता हूँ कि मुझसे किसी तरह की उम्मीद मत रखना।

औरत—(भौंहें सिकोड़कर) क्या यह बात दिल से कहते हो ?

आनन्दसिंह—हाँ, बल्कि कसम खाकर !

औरत—पछताओगे और मुझ-सी चाहने वाली कभी न पाओगे।

आनन्दसिंह—(अपना हाथ छुड़ाकर) लानत है ऐसी चाहत पर !

औरत—तो तुम यहाँ से चले जाओगे ?

आनन्दसिंह—जरूर !

औरत—मुमकिन नहीं।

आनन्दसिंह—क्या मजाल कि तुम मुझको रोको।

औरत—ऐसा खयाल भी न करना।

"देखें, मुझे कौन रोकता है !" कहकर आनन्दसिंह उस कमरे के बाहर हुए और उसी कमरे की एक खिड़की, जो दीवार में लगी हुई थी, खोल वे औरतें वहाँ से निकल गयीं।

आनन्दसिंह इस उम्मीद में चारों तरफ घूमने लगे कि कहीं रास्ता मिले तो बाहर हो जायें मगर उनकी उम्मीद किसी तरह पूरी न हुई।

यह मकान बहुत लम्बा-चौड़ा न था। सिवाय इस कमरे और एक सहन के और कोई जगह इसमें न थी। चारों तरफ ऊँची-ऊँची दीवारों के सिवाय बाहर जाने के लिए कहीं कोई दरवाजा न था। हर तरह से लाचार और दुखी हो फिर उसी पलंग पर आ लेटे और सोचने लगे—

"अब क्या करना चाहिए ! इस कम्बख्त से किस तरह जान बचे ? यह तो ही ही नहीं सकता कि मैं इसे चाहूँ या प्यार करूँ। राम-राम, मुसलमानिन् और इश्क ! यह तो सपने में भी नहीं होने का। तब फिर क्या करूँ ? लाचारी है, जब किसी तरह छुट्टी न देखूंगा तो इस खंजर से जो मेरी कमर में है अपनी जान दे दूंगा।"

कमर से खंजर निकालना चाहा, देखा तो कमर खाली है। फिर सोचने लगे—

"गजब हो गया, इस हरामजादी ने तो मुझे किसी लायक न रखा। अगर कोई दुश्मन आ जाय तो मैं क्या कर सकूँ ? बेहया अगर मेरे पास आवे तो गला दबाकर मार डालूं। नहीं, नहीं, वीर-पुत्र होकर स्त्री पर हाथ उठाना ! यह मुझसे न होगा, तब क्या

भूखे-प्यासे जान दे देनी पड़ेगी ? मुसलमानिन के घर में अन्न-जल कैसे ग्रहण करूँ ! हाँ, ठीक है, एक सूरत निकल सकती है। (दीवार की तरफ देखकर) इसी खिड़की से वे लोग बाहर निकल गयी हैं। अब की अगर यह खिड़की खुले और वह कमरे में आवे तो मैं जबर्दस्ती इसी राह से बाहर हो जाऊँगा।"

भूखे-प्यासे दिन बीत गया, अँधेरा हुआ चाहता था कि वही छोटी-सी खिड़की खुली और चारों औरतों को साथ लिए वह पिशाची आ मौजूद हुई। एक औरत हाथ में रोशनी, दूसरी पानी, तीसरी तरह-तरह की मिठाइयों से भरा चाँदी का थाल उठाये हुए और चौथी पान का जड़ाऊ डिब्बा लिए साथ मौजूद थी।

आनन्दसिंह पलंग से उठ खड़े हुए और बाहर निकल जाने की उम्मीद में उस खिड़की के अन्दर घुसे। उन औरतों ने इन्हें बिलकुल न रोका क्योंकि वे जानती थीं कि सिर्फ इस खिड़की ही के पार चले जाने से उनका काम न चलेगा।

खिड़की पार तो हो गये मगर आगे अँधेरा था। इस छोटी-सी कोठरी में चारों तरफ घूमे मगर रास्ता न मिला। हाँ, एक तरफ बन्द दरवाजा मालूम हुआ जो किसी तरह खुल न सकता था, लाचार फिर उसी कमरे में लौट आये।

उस औरत ने हँसकर कहा, "मैं पहले ही कह चुकी हूँ कि आप मुझसे अलग नहीं हो सकते। खुदा ने मेरे ही लिए आपको पैदा किया है। अफसोस कि आप मेरी तरफ खयाल नहीं करते और मुफ्त में अपनी जान गँवाते हैं! बैठिये, खाइये, पीजिए, आनन्द लीजिये, किस सोच में पड़े हैं!"

आनन्द—मैं तेरा छुआ खाऊँ ?

औरत—क्यों, क्या हर्ज है ? खुदा सबका है, उसी ने हमको भी पैदा किया, आपको भी पैदा किया। जब एक ही बाप के सब लड़के हैं तो आपस में छूत कैसी !

आनन्दसिंह—(चिढ़कर) खुदा ने हाथी भी पैदा किया, गदहा भी पैदा किया, कुत्ता भी पैदा किया, सूअर भी पैदा किया, मुर्गा भी पैदा किया—जब एक ही बाप के सब लड़के हैं तो परहेज काहे का !

औरत – खैर खुशी आपकी, न मानियेगा पछताइयेगा, अफसोस कीजियेगा और आखिर झख मार फिर वही कीजियेगा जो मैं कहती हूँ। भूखे-प्यासे जान देना मुश्किल बात है—लो, मैं जाती हूँ।

खाने-पीने का सामान और रोशनी वहीं छोड़ चारों लौंडियाँ उस खिड़की के अंदर घुस गयीं। आनन्दसिंह ने चाहा कि जब यह शैतान खिड़की के अन्दर जाय तो मैं भी जबर्दस्ती साथ हो लूँ – या तो पार ही हो जाऊँगा या इसे भी न जाने दूँगा, मगर उनका यह ढंग भी न लगा।

वह मदमाती औरत खिड़की के अन्दर की तरफ पैर लटका कर बैठ गयी और इनसे बात करने लगी।

औरत—अच्छा, आप मुझसे शादी न करें इसी तरह मुहब्बत रखें।

आनन्दसिंह—कभी नहीं, चाहे जो हो।

औरत—(हाथ का इशारा करके) अच्छा, उस औरत से शादी करेंगे जो आपके

पीछे खड़ी है ? वह तो हिन्दुआनी है !

"मेरे पीछे दूसरी औरत कहाँ से आई !" ताज्जुब से पीछे फिर आनन्दसिंह ने देखा। उस नालायक को मौका मिला, खिड़की के अन्दर हो झट किवाड़ बन्द कर दिया।

आनन्दसिंह पूरा धोखा खा गए, हर तरह से हिम्मत टूट गई—लाचार फिर उसी पलंग पर लेट गये। भूख से आँखें निकली आती थीं, खाने-पीने का सामान मौजूद था मगर वह जहर से भी कई दर्जे बढ़ के था। दिल में समझ लिया कि अब जान गई। कभी उठते, कभी बैठते, कभी दालान के बाहर निकल कर टहलते, आधी रात जाते-जाते भूख की कमजोरी ने उन्हें चलने-फिरने लायक न रखा, फिर पलंग पर आकर लेट गये, और ईश्वर को याद करने लगे।

यकायक बाहर धमाके की आवाज आई, जैसे कोई कमरे की छत पर से कूदा हो। आनन्दसिंह उठ बैठे और दरवाजे की तरफ देखने लगे।

सामने से एक आदमी वहाँ आता हुआ दिखाई पड़ा, जिसकी उम्र लगभग चालीस वर्ष होगी। सिपाहियाना पोशाक पहने, माथे पर त्रिपुण्ड लगाये, कमर में नीमचा खंजर और ऊपर से कमन्द लपेटे, बगल में मुसाफिरी का झोला, हाथ में दूध से भरा लोटा लिए आनन्दसिंह के सामने आ खड़ा हुआ और बोला—

"अफसोस, आप राजकुमार होकर वह काम करना चाहते हैं जो ऐयारों-जासूसों या अदने सिपाहियों के करने लायक हो ! नतीजा यह निकला कि इस चाण्डालिन के यहाँ फँसना पड़ा। इस मकान में आए आपको कै दिन हुए ? घबराइये मत, मैं आपका दोस्त हूँ, दुश्मन नहीं !

इस सिपाही को देख आनन्दसिंह ताज्जुब में आ गए और सोचने लगे कि यह कौन है जो ऐसे वक्त में मेरी मदद को पहुँचा ! खैर, जो भी हो, बेशक यह हमारा खैर-ख्वाह है, बदख्वाह नहीं।

आनन्दसिंह—जहाँ तक खयाल करता हूँ, यहाँ आये दूसरा दिन है।

सिपाही—कुछ अन्न-जल तो न लिया होगा !

आनन्दसिंह—कुछ नहीं।

सिपाही—हाय ! राजा वीरेन्द्रसिंह के प्यारे लड़के की यह दशा ! लीजिए, मैं आपको खाने-पीने के लिए देता हूँ !

आनन्दसिंह—पहले मुझे मालूम होना चाहिए कि आपकी जाति उत्तम है और मुझे धोखा देकर अधर्मी करने की नीयत नहीं है।

सिपाही—(दाँत के नीचे जुबान दबाकर) राम-राम ! ऐसा स्वप्न में भी खयाल न कीजिएगा कि मैं धोखा देकर आपको अजाति करूँगा। मैंने पहले ही सोचा था कि आप शक करेंगे, इसीलिए ऐसी चीजें लाया हूँ जिनके खाने-पीने में आप उज्र न करें। पलंग पर से उठिए, बाहर आइए।

आनन्दसिंह उसके साथ बाहर गए। सिपाही ने लोटा जमीन पर रख दिया और झोले में से कुछ मेवा निकाल उनके हाथ में देकर बोला, "लीजिए इसे खाइए और (लोटे

की तरफ इशारा करके) यह दूध है, पीजिए।"

आनन्दसिंह की जान-में-जान आ गई, प्यास और भूख से दम निकला जाता था, ऐसे समय में थोड़े मेवे और दूध का मिल जाना क्या थोड़ी खुशी की बात है ? मेवा खाया, दूख पीया, जी ठिकाने हुआ, इसके बाद उस सिपाही को धन्यवाद देकर बोले, "अब मुझे किसी तरह इस मकान के बाहर कीजिए।"

सिपाही—मैं आपको इस मकान के बाहर ले चलूंगा मगर इसकी मजदूरी भी तो मुझे मिलनी चाहिए।

आनन्दसिंह—जो कहिये, दूँगा।

सिपाही—आपके पास क्या है जो मुझे देंगे ?

आनन्दसिंह—इस वक्त भी हजारों रुपये का माल मेरे बदन पर है।

सिपाही—मैं यह सब-कुछ नहीं चाहता।

आनन्दसिंह—फिर ?

सिपाही—उसी कम्बख्त के बदन पर जो कुछ जेवर हैं वे मुझे दीजिए और एक हजार अशर्फी।

आनन्दसिंह—यह कैसे हो सकेगा ? वह तो यहाँ मौजूद नहीं है और हजार अशर्फी भी कहाँ से आवें ?

सिपाही—उसी से लेकर दीजिए।

आनन्दसिंह—क्या वह मेरे कहने से देगी ?

सिपाही—(हँसकर) वह तो आपके लिए जान देने को तैयार है। इतनी रकम की क्या बिसात है।

आनन्दसिंह—तो क्या आज मुझे यहाँ से न छुड़ावेंगे ?

सिपाही—नहीं, मगर आप कोई चिन्ता न करें, आपका कोई कुछ बिगाड़ नहीं सकता, कल जब वह राँड आवे तो उससे कहिए कि तुमसे मुहब्बत तब करूँगा, जब अपने बदन का कुल जेवर और एक हजार अशर्फी यहाँ रख दो, उसके दूसरे दिन आओ तो जो कहोगी मैं मानूंगा। वह तुरन्त अशर्फी मँगा देगी और कुछ जेवर भी उतारकर देगी। नालायक बड़ी मालदार है, उसे कम न समझिये।

आनन्दसिंह—खैर, जो कहोगे करूँगा।

सिपाही--जब तक आप यह न करेंगे मैं आपको इस कैद से न छुडाऊँगा। आप यह न सोचिए कि उसे धोखा देकर या जबर्दस्ती उस राह से चले जायेंगे जिधर से वह आती-जाती है। यह कभी नहीं हो सकेगा, उसके आने-जाने के लिए कई रास्ते हैं।

आनन्दसिंह—अगर वह तीन-चार दिन न आवे तब ?

सिपाही—क्या हर्ज है, मैं आपकी बराबर ही सुध लेता रहूंगा और खाने-पीने को पहुँचाया करूँगा।

आनन्दसिंह—अच्छा, ऐसा ही सही।

वह सिपाही कमन्द लगाकर छत पर चढ़ा और दीवार फाँद मकान के बाहर हो गया।

थोड़ी रात बच गई थी जो आनन्दसिंह ने इसी सोच-विचार में काटी कि यह कौन है जो ऐसे वक्त में मेरी मदद को पहुँचा। इसे लालच बहुत है। कोई ऐयार मालूम पड़ता है। ऐयारों का जितना ज्यादे खर्च होता है, उतना ही लालच भी करते हैं। खैर, कोई हो, अब तो जो कुछ उसने कहा है, करना ही पड़ेगा।

रात बीत गई, सवेरा हुआ। वह औरत फिर उन्हीं चारों लौंडियों को लिए आ पहुँची। देखा कि आनन्दसिंह पलंग पर पड़े हैं और खाने-पीने का सामान ज्यों-का-त्यों उसी जगह रखा है जहाँ वह रख गई थी।

औरत—आप क्यों जिद करके भूखे-प्यासे अपनी जान देते हैं।

आनन्दसिंह—इसी तरह मर जाऊँगा, मगर तुमसे मुहब्बत न करूँगा, हाँ अगर एक बात मेरी मानो तो तुम्हारा कहा करूँ।

औरत—(खुश होकर और उनके पास बैठ कर) जो कहो मैं करने को तैयार हूँ, मगर मुझसे जिद न करो।

आनन्दसिंह—अपने बदन पर से कुल जेवर उतार दो और एक हजार अशर्फी मँगा दो।

औरत—(आनन्दसिंह के गले में हाथ डालकर) बस इतने ही के लिए? लो, मैं अभी देती हूँ!

एक हजार अशर्फी लाने के लिए उसने दो लौंडियों को कहा और अपने बदन से कुल जेवर उतार दिए। थोड़ी ही देर में वे दोनों लौंडियाँ अशर्फियों का तोड़ा लिए आ मौजूद हुईं।

औरत—लीजिये, अब आप खुश हुए? अब तो उज्र नहीं?

आनन्दसिंह—नहीं, मगर एक दिन की और मोहलत माँगता हूँ! कल इसी वक्त तुम आओ, बस, मैं तुम्हारा हो जाऊँगा।

औरत—अब यह नया ढकोसला क्या निकाला? आज भी भूखे-प्यासे काटोगे तो तुम्हारी क्या दशा होगी?

आनन्दसिंह—इसकी फिक्र न करो, मुझे कई दिनों तक भूखे-प्यासे रहने की आदत है।

औरत—लाचारी है, खैर यह भी सही, ठहरिये, मैं आती हूँ।

इतना कहकर आनन्दसिंह को उसी जगह छोड़ चारों लौंडियों को साथ ले वह कमरे के बाहर चली गई। घण्टा भर बीतने पर भी वह न लौटी तो आनन्दसिंह उठे और कमरे के बाहर जा उसे ढूँढ़ने लगे मगर कहीं पता न लगा। बाहर की दीवार में छोटी-छोटी दो आलमारियाँ लगी हुई दिखाई दीं। अन्दाज कर लिया कि शायद उस खिड़की की तरह यह भी बाहर जाने का कोई रास्ता हो और इधर ही से वे लोग निकल गई हों।

सोच और फिक्र में तमाम दिन बिताया, पहर रात जाते-जाते कल की तरह वही सिपाही फिर पहुँचा और मेवा-दूध आनन्दसिंह को दिया।

आनन्दसिंह—लीजिए, आपकी फर्माइश तैयार है।

सिपाही—तो बस अब आप भी इस मकान के बाहर चलिये। एक रोज के कष्ट

में इतनी रकम हाथ आई। क्या बुरा हुआ?

सब-कुछ सामान अपने कब्जे में करने के बाद सिपाही कमरे के बाहर निकला और सहन में पहुँच कमन्द के जरिये से आनन्दसिंह को मकान के बाहर निकालने के बाद आप भी बाहर हो गया। मैदान की हवा लगने से आनन्दसिंह का जी ठिकाने हुआ। समझे कि अब जान बची। बाहर से देखने पर मालूम हुआ कि यह मकान, एक पहाड़ी के अन्दर है, कारीगरों ने पत्थर तोड़कर इसे तैयार किया है। इस मकान के अगल-बगल में कई सुरंगें भी दिखाई पड़ीं।

आनन्दसिंह को लिए हुए वह सिपाही कुछ दूर चला गया जहाँ कसे-कसाये दो घोड़े पेड़ से बँधे थे। बोला, "लीजिये, एक पर आप सवार होइये दूसरे पर मैं चढ़ता हूँ, चलिए, आपको घर तक पहुँचा आऊँ।"

आनन्दसिंह—चुनार यहाँ से कितनी दूर और किस तरफ है?

सिपाही—चुनार यहाँ से बीस कोस है। चलिये, मैं आपके साथ चलता हूँ। इन घोड़ों में इतनी ताकत है कि सवेरा होते-होते हम लोगों को चुनार पहुँचा दें। आप घर चलिये, इन्द्रजीतसिंह के लिए कुछ फिक्र न कीजिये, उनका पता भी बहुत जल्द ही लग जायेगा, आपके ऐयार लोग उनकी खोज में निकले हुए हैं।

आनन्दसिंह—ये घोड़े कहाँ से लाये?

सिपाही—कहीं से चुरा लाए, इसका कौन ठिकाना है?

आनन्दसिंह—खैर यह तो बताओ, तुम कौन हो और तुम्हारा नाम क्या है?

सिपाही—यह मैं नहीं बता सकता और न आपको इसके बारे में कुछ पूछना मुनासिब ही है!

आनन्दसिंह—खैर, अगर कहने में कुछ हर्ज है तो···

आनन्दसिंह अपना पूरा मतलब कहने भी न पाये थे कि कोई चौंकाने वाली चीज इन्हें नजर आई। स्याह कपड़ा पहने हुए किसी को अपनी तरफ आते देखा। सिपाही और आनन्दसिंह दोनों एक पेड़ की आड़ में हो गये, और वह आदमी इनके पास ही से कुछ बड़बड़ाता हुआ निकल गया, जिसे यह गुमान भी न था कि इस जगह पर कोई छिपा हुआ मुझे देख रहा है।

उसकी बड़बड़ाहट इन दोनों ने सुनी, वह कहता जाता था—"अब मेरा कलेजा ठण्डा हुआ, अब मैं घर जाकर बेशक सुख की नींद सोऊँगी और उस हरामजादे की लाश को गीदड़ और कौए कल दिन भर में खा जायेंगे, जिसने मुझे औरत जानकर दबाना चाहा था और यह न समझा था कि इस औरत का दिल हजार मर्दों से भी बढ़कर है!"

आनन्दसिंह और सिपाही दोनों उसकी तरफ टकटकी लगाये देखते रहे जिसकी बकवाद से मालूम हो गया था कि कोई औरत है, वह देखते-देखते नजरों से गायब हो गई।

सिपाही—बेशक इसने कोई खून किया है।

आनन्दसिंह—और वह भी इसी जगह कहीं पास ही में, खोजने से जरूर पता लगेगा।

दोनों आदमी इधर-उधर ढूंढ़ने लगे, बहुत तकलीफ करने की नौबत न आई और दस ही कदम पर एक तड़पती हुई लाश पर इन दोनों की नजर पड़ी ।

सिपाही ने अपने बगल से एक थैली निकाली और चकमक पत्थर से आग झाड़ मोमबत्ती जला उस तड़पती लाश को देखा । मालूम हुआ कि किसी ने कटार या खञ्जर इसके कलेजे के पार कर दिया है, खून बराबर बह रहा है, जख्मी पैर पटकता और बोलने की कोशिश करता है मगर बोला नहीं जाता ।

सिपाही ने अपनी थैली से एक छोटी बोतल निकाली जिसमें किसी तरह का अर्क भरा हुआ था । इसमें से थोड़ा अर्क जख्मी के मुह में डाला । गले के नीचे उतरते ही उसमें कुछ बोलने की ताकत आई और बहुत ही धीमी आवाज से उसने नीचे लिखे हुए कई टूटे-फूटे शब्द अपने मुँह से निकालने के साथ ही दम तोड़ दिया—

"ओफ···सोस, यह खूबसूरत पिशाची···तेजसिंह···की···जान···मेरी तरह··· उसके फन्दे में···हाय !···इन्द्रजीतसिंह को···!!"

उस बेचारे मरने वाले के मुँह से निकले हुए ये दो-चार शब्द कैसे ही बेजोड़ क्यों न हों, मगर इन दोनों सुनने वालों के दिलों को तड़पा देने के लिए बहुत काफी थे । आनन्दसिंह से ज्यादा उस सिपाही को बेचैनी हुई जो अपने में बहुत कुछ कर गुजरने की कुदरत रखता था और जानता था कि इस वक्त अगर कोई हाथ कुँअर इन्द्रजीतसिंह और तेजसिंह की मदद को बढ़ सकता है तो वह सिर्फ मेरा ही हाथ है ।

सिपाही—कुमार, अब आप घर जाइए । इन टूटी-फूटी बेजोड़ मगर मतलब से भरी बातों की जो इस मरने वाले के मुँह से अनायास निकल पड़ी हैं सुनकर निश्चय हो गया कि आपके बड़े भाई और ऐयारों के सिरताज तेजसिंह किसी आफत में. जो बहुत जल्द तबाह कर देने की कुदरत रखती है, फँस गये हैं । ऐसी हालत में मैं जो बहुत कुछ कर गुजरने का हौसला रखता हूं किसी तरह नहीं अटक सकता और मेरा मतलब तभी सिद्ध होगा जब उस औरत को खोज निकालूंगा जो अभी यह आफत कर गई और आगे कई तरह के फसाद करने वाली है ।

आनन्दसिंह—तुम्हारा कहना बहुत सही है, मगर क्या तुम कह सकते हो कि ऐसी खबर पाकर मैं चुपचाप घर चले जाना पसन्द करूँगा और जान से ज्यादे प्यारों की मदद से जी चुराऊँगा ?

सिपाही—(कुछ सोच कर) अच्छा, तो ज्यादा बात करने का मौका नहीं है, चलिए । हाँ, सुनिये तो, आपके पास कोई हर्बा तो है नहीं ! काम पड़ने पर क्या कर सकेंगे ? मेरे पास एक खंजर और एक नीमचा है, दोनों में जो चाहें, एक आप ले लें ।

आनन्दसिंह—बस, नीमचा मेरे हवाले कीजिए और चलिये ।

आनन्दसिंह ने नीमचा अपनी कमर में लगाया और सिपाही के साथ पैदल ही उस तरफ को बढ़ चले जिधर वह खूनी औरत बकती हुई चली गई थी ।

ये दोनों ठीक उसी रास्ते की पगडण्डी पकड़े हुए थे जिस पर वह औरत गई थी । थोड़ी-थोड़ी दूर पर साँस रोक कर इधर-उधर की आहट लेते, जब कुछ मालूम न होता तो फिर तेजी के साथ बढ़ते चले जाते ।

कोस भर के बाद पहाड़ी उतरने की नौबत पहुँची । वहाँ ये दोनों फिर रुके और चारों तरफ देखने लगे। छोटी-सी घंटी बजाने की आवाज आई। घंटी किसी खोह या गड़हे के अन्दर बजाई गई थी जो वहाँ से बहुत करीब था जहाँ ये दोनों बहादुर खड़े हो इधर-उधर देख रहे थे।

ये दोनों उसी तरफ मुड़े जिधर से घंटी की आवाज आई थी। फिर आवाज आई, अब तो ये दोनों उस खोह के मुँह पर पहुँच गये जो पहाड़ी की कुछ ढाल उतर कर पग-डंडी के रास्ते से बाईं तरफ हट कर थी और जिसके अन्दर से घंटी की आवाज आई थी। बेधड़क दोनों आदमी खोह के अन्दर घुस गये। अब फिर एक बार घंटी बजने की आवाज आई और साथ ही एक रोशनी भी चमकती हुई दिखाई दी जिसकी वजह से उस खोह का रास्ता साफ मालूम होने लगा, बल्कि उन दोनों ने देखा कि कुछ दूर आगे एक औरत खड़ी है जो रोशनी होते ही बाईं तरफ हट कर किसी दूसरे गड़हे में उतर गई जिसका रास्ता बहुत छोटा बल्कि एक ही आदमी के जाने लायक था। इन दोनों को विश्वास हो गया कि यह वही औरत है जिसकी खोज में हम लोग इधर आये हैं।

रोशनी गायब हो गई मगर अन्दाज से टटोलते हुए ये दोनों भी उस गड़हे के मुँह पर पहुँच गये जिसमें वह औरत उतर गई थी। उस पर एक पत्थर अटकाया हुआ था लेकिन उस अनगढ़ पत्थर के अगल-बगल छोटे-छोटे ऐसे कई सूराख थे जिनके जरिये से गड़हे के अन्दर का हाल ये दोनों बखूबी देख सकते थे।

दोनों उसी जगह बैठ गये और सूराखों की राह से अन्दर का हाल देखने लगे। भीतर रोशनी बखूबी थी। सामने की तरफ चट्टान पर बैठी वही औरत दिखाई पड़ी जिसने अभी तक अपने मुँह से नकाब नहीं उतारी थी और थकावट के सबब लम्बी साँस ले रही थी। उसके पास ही एक कमसिन खूबसूरत हब्शी छोकरी बड़ा-सा छुरा हाथ में लिए खड़ी थी, दूसरी तरफ एक बदसूरत हब्शी कुदाल से जमीन खोद रहा था। बीच में छत के सहारे एक उल्टी लाश लटक रही थी, एक तरफ कोने में जल से भरा हुआ मिट्टी का घड़ा, एक लोटा और कुछ खाने का सामान पड़ा हुआ था। उस गड़हे में इतना ही कुछ था जो लिख चुके हैं।

कुछ देर बाद उस औरत ने अपने मुँह से नकाब को उतार दिया। अहा, क्या खूबसूरत गुलाब-सा चेहरा है मगर गुस्से से आँखें ऐसी सुर्ख और भयानक हो रही हैं कि देखने से डर मालूम पड़ता है। वह औरत उठ खड़ी हुई और अपने पास वाली छोकरी के हाथ से छुरा ले उस लटकती हुई लाश के पास पहुँची और दो अंगुल गहरी एक लकीर उसकी पीठ पर खींची।

हाय-हाय, ऐसी हसीन और इतनी संगदिली ! इतनी बेदर्दी ! अभी-अभी एक खून किये चली आती है और यहाँ पहुँच कर फिर अपने राक्षसीपन का नमूना दिखला रही है ! वह लाश किसकी है ? कहीं यह भी कोई चुनार का खैरख्वाह या हमारे उपन्यास का पात्र न हो।

पीठ पर जख्म खाते ही लाश फड़की। अब मालूम हुआ कि वह मुर्दा नहीं है कोई जीता आदमी तकलीफ देने के लिए लटकाया गया है। जख्म खाकर लटका हुआ

वह आदमी तड़पा और आह भर कर बोला—

"हाय, मुझे क्यों तकलीफ देती हो, मैं कुछ नहीं जानता !"

औरत—नहीं, तुझे बताना ही होगा ! तू खूब जानता है ! (पीठ पर फिर गहरी छुरी चला कर) बता, बता !

उल्टा आदमी—हाय, मुझे एक ही दफे क्यों नहीं मार डालतीं ? मैं किसी का हाल क्या जानूँ, मुझे इन्द्रजीतसिंह से क्या वास्ता ?

औरत – (फिर छुरी से काट कर) मैं खूब जानती हूँ, तू बड़ा पाजी है; तुझे सब कुछ मालूम है। बता, नहीं तो गोश्त काट-काट कर जमीन पर गिरा दूँगी।

उल्टा आदमी—हाय, इन्द्रजीतसिंह की बदौलत मेरी यह दशा !

अभी तक कुँअर आनन्दसिंह और वह सिपाही छिपे-छिपे सब-कुछ देख रहे थे, मगर जब उस उल्टे टँगे हुए आदमी के मुँह से यह निकला कि 'हाय, इन्द्रजीतसिंह की बदौलत मेरी यह दशा !' तब मारे गुस्से के उनकी आँखों में खून उतर आया। पत्थर हटा दोनों आदमी बेधड़क अन्दर चले गये और उस बेदर्द छुरी चलाने वाली औरत के सामने पहुँच आनन्दसिंह ने ललकारा—"खबरदार ! रख दे छुरा हाथ से !"

औरत—(चौंक कर) हैं, तुम यहाँ क्यों चले आये ? खैर, अगर आ ही गये तो चुपचाप खड़े होकर तमाशा देखो। यह न समझो कि तुम्हारे धमकाने से मैं डर जाऊँगी। (सिपाही की तरफ देख कर) तुम्हारी आँखों में भी क्या धूल पड़ गई है ? अपने हाकिम को नहीं पहचानते ?

सिपाही—(खूब गौर से देख कर) हाँ, ठीक है, तुम्हारी सभी बातें अनोखी होती हैं।

औरत—अच्छा तो आप दोनों आदमी यहाँ से जाइये और मेरे काम में हर्ज न डालिए।

सिपाही—(आनन्दसिंह से) चलिए, इन्हें छोड़ दीजिए। ये जो चाहें सो करें, आपको क्या ?

आनन्दसिंह—(कमर से नीमचा निकाल कर) वाह, क्या कहना है ! मैं बिना इस आदमी को छुड़ाये कब टलने वाला हूँ !

औरत—(हँस कर) मुँह धो रखिए !

बहादुर वीरेन्द्रसिंह के बहादुर लड़के आनन्दसिंह को ऐसी बातों के सुनने की ताब कहाँ थी ? वह दो-चार आदमियों को समझते ही क्या थे ? 'मुँह धो रखिए' इतना सुनते ही जोश चढ़ आया। उछल कर एक हाथ नीमचे का लगाया जिससे वह रस्सी कट गई जो उस आदमी के पैर से बँधी हुई थी और जिसके सहारे वह लटक रहा था, साथ ही फुर्ती से उस आदमी को सम्हाला और जोर से जमीन पर गिरने न दिया।

अब तो वह सिपाही भी आनन्दसिंह का दुश्मन बन बैठा और ललकार कर बोला, "यह क्या लड़कपन है ?"

हम ऊपर लिख चुके हैं कि इस सुरंग में दो औरतें और एक हब्शी गुलाम हैं। अब वह सिपाही भी उनके साथ मिल गया और चारों ने आनन्दसिंह को पकड़ लिया,

मगर वाह रे आनन्दसिंह ! एक झटका दिया कि चारों दूर जा गिरे। इतने में बाहर से आवाज आई—

"आनन्दसिंह खबरदार ! जो किया सो ठीक किया। अब आगे कुछ हौसला न करना, नहीं तो सजा पाओगे !!"

आनन्दसिंह ने घबरा कर बाहर की तरफ देखा तो एक योगिनी नजर पड़ी जो जटा बढ़ाये भस्म लगाये गेरुआ वस्त्र पहने दाहिने हाथ में त्रिशूल और बाएँ हाथ में आग से भरा धधकता हुआ खप्पर, जिसमें कोई खुशबूदार चीज जल रही थी और बहुत धुआँ निकल रहा था, लिए हुए आ मौजूद हुई।

में ताज्जुब आकर सभी उसकी सूरत. देखने लगे। थोड़ी देर में उस खप्पर से निकला हुआ धुआँ सुरंग की कोठरी में भर गया और उसके असर से जितने वहाँ थे सभी बेहोश होकर जमीन पर गिर पड़े। बस, अकेली वही योगिनी होश में रही जिसने सभी को बेहोश देख कोने में पड़े हुए घड़े से जल निकाल खप्पर की आग बुझा दी।

8

अब थोड़ा-सा हाल शिवदत्तगढ़ का भी लिख देना मुनासिब मालूम होता है। यह हम पहले लिख चुके हैं कि महाराज शिवदत्त को एक लड़का और एक लड़की भी हुई थी। इस समय लड़के की उम्र जिसका नाम भीमसेन है अठारह वर्ष की हो गई थी, पर लड़की किशोरी की उम्र अभी पन्द्रह वर्ष से ज्यादा न होगी। इस समय बेचारी किशोरी शिवदत्तगढ़ में मौजूद नहीं है क्योंकि महाराज शिवदत्त ने रंज होकर उसे उसके ननिहाल भेज दिया है। रंज होने का कारण हम यहाँ पर नहीं लिखते, क्योंकि यह बहुत पेचीदा बात है, खुलते-खुलते खुल जायेगी।

भीमसेन शिवदत्तगढ़ में मौजूद है। उसे सिपहगिरी से बहुत शौक है, बदन में ताकत भी अच्छी है। तलवार खंजर नेजा तीर गदा इत्यादि चलाने में होशियार और राजकाज के मामले में भी तेज है मगर अपने पिता महाराज शिवदत्त की चाल को पसन्द नहीं करता, पर फिर भी महाराज शिवदत्त को उससे बहुत ही ज्यादा प्रेम है।

एक दिन भीमसेन मामूली तौर पर बीस हमजोलियों को साथ ले घोड़े पर सवार हो शिकार खेलने के लिए शिवदत्तगढ़ के बाहर निकला और एक ऐसे जंगल में गया जिसमें बनैले सूअर बहुत थे। उसका इरादा भी यही था कि घोड़ा दौड़ा कर बरछे से बनैले सूअर को मारे।

जंगल में घूमने-फिरने लगे। एक ताकतवर और मजबूत सूअर भीमसेन की बगल से होता हुआ पूरब की तरफ भागा। भीमसेन ने भी उसके पीछे घोड़ा दौड़ाया, मगर वह बहुत तेजी के साथ भागा जा रहा था इसलिए बहुत दूर निकल गया। उसके संगी-साथी सब पीछे छूट गए। यकायक भीमसेन ने देखा कि कि सामने की तरफ जिधर

सूअर भागा जाता है, एक औरत घोड़े पर सवार हाथ में बरछी लिए इस ताक में खड़ी है कि सूअर पास आये तो बरछी से मार ले।

जब सूअर ऐसे ठिकाने पर पहुँचा जहाँ से वह औरत इतनी दूर रह गई जितनी दूर उसके पीछे भीमसेन था वह बाईं तरफ को मुड़ा और पहले से ज्यादा तेजी के साथ भागा। भीमसेन और वह औरत दोनों ही ने उसके पीछे घोड़ा फेंका मगर भीमसेन से पहले उस औरत ने पहुँच कर बरछी मारी जिसके लगते ही वह सूअर गिरा।

अपना शिकार एक औरत के हाथ से मरते देख भीमसेन को क्रोध चढ़ आया और आँखें लाल हो गईं। ललकार कर औरत से बोला—"तूने मेरे शिकार पर क्यों बरछी चलाई ?"

औरत—क्या शिकार पर तुम्हारा नाम खुदा हुआ था ?

भीमसेन—क्यों नहीं ? मेरा जंगल, मेरा शिकार। इतनी देर से मैं इसके पीछे चला आ रहा हूँ !

औरत—वाह रे तेरा जंगल और वाह रे तेरा शिकार ! तीन कोस से दौड़े चले आते हैं, एक सूअर न मारा गया। शर्म तो आती नहीं, उल्टे लाल आँखें कर मर्दानगी दिखा रहे हैं !

भीमसेन—क्या कहूँ, तेरी खूबसूरती पर रहम आता है, औरत समझ कर छोड़ देता हूँ, नहीं तो जरूर मजा चखा देता।

औरत—मैं भी छोकरा समझ कर छोड़ देती हूँ, नहीं तो दोनों कान पकड़ कर उखाड़ लेती !

भीमसेन—(दाँत पीस कर) बस, अब सहा नहीं जाता। जुबान सम्हाल !

औरत – नहीं सहा जाता तो अपने हाथ से अपना मुँह पीट ! यहाँ तो जुबान हमेशा योंही चलती रही है और चलती रहेगी !

इस औरत की खूबसूरती, सवारी का ढंग, बदन की सुडौली और फुर्ती यहाँ तक बढ़ी-चढ़ी थी कि आदमी घण्टों देखा करे और जी न भरे, मगर इसकी जली-कटी बातों ने भीमसेन को आपे से बाहर कर दिया। आखों के आगे अँधेरा छा गया, बिना कुछ सोचे-बिचारे उस औरत पर बरछी का वार किया। औरत ने बड़ी फुर्ती से बर्छी को ढाल पर रोका और हँस कर कहा, "कुछ और हौसला रखता हो तो दिखा !"

घण्टे भर तक दोनों में बरछी की लड़ाई हुई। इस समय अगर कोई इस फन का उस्ताद होता तो उस औरत की फुर्ती देख बेशक खुश हो जाता और 'वाह-वाह' या 'शाबाश' कहे बिना न रहता। आखिर उस औरत की बरछी जिसका फल जहर से बुझाया हुआ था भीमसेन की जाँघ में लगी जिसके लगते ही तमाम बदन में जहर फैल गया और वह बदहवास होकर जमीन पर गिर पड़ा।

9

भीमसेन के साथियों ने बहुत खोजा मगर भीमसेन का पता न लगा, लाचार कुछ रात जाते-जाते लौट आये और उसी समय महाराज शिवदत्त के पास जाकर अर्ज किया किया कि आज शिकार खेलने के लिए कुमार जंगल में गये थे, एक बनैले सूअर के पीछे घोड़ा फेंकते हुए न मालूम कहाँ चले गये, बहुत तलाश किया मगर पता न लगा।

अपने लड़के के गायब होने का हाल सुन महाराज शिवदत्त बहुत घबरा गये। थोड़ी देर तक तो उन लोगों पर खफा होते रहे जो भीमसेन के साथ थे। आखिर कई जासूसों को बुला कर भीमसेन का पता लगाने के लिए चारों तरफ रवाना किया और ऐयारों को भी हर तरह की ताकीद की, मगर तीन दिन बीत लाने पर भी भीमसेन का पता न लगा।

एक दिन लड़के की जुदाई से व्याकुल हो अपने कमरे में अकेले बैठे तरह-तरह की बातें सोच रहे थे कि एक खास खिदमतगार ने वहाँ पहुँच अपने पैर की धमक से उन्हें चौंका दिया। जब वे उस खिदमतगार की तरफ देखने लगे तो उसने एक लिफाफा दिखा कर कहा, "चोबदार ने यह लिफाफा हुजूर में देने के लिए मुझे सौंपा है। उसी चोबदार की जुबानी मालूम हुआ कि कोई ऊपरी आदमी यह लिफाफा देकर चला गया, चोबदारों ने उसे रोकना चाहा था मगर वह फुर्ती से निकल गया।"

महाराज शिवदत्त ने वह लिफाफा लेकर खोला। अपने लड़के भीमसेन के हाथ का लेख पहचाना, बहुत खुश हुए, मगर चिट्ठी पढ़ लेने से तरद्दुद की निशानी उनके चेहरे पर झलकने लगी। चिट्ठी का मतलब यह था—

"यह जान कर आपको बहुत रंज होगा कि मुझे एक औरत ने बहादुरी से गिरफ्तार कर लिया, मगर क्या करूँ लाचार हूँ, इसका हाल हाजिर होने पर कर्ज करूँगा। इस समय मेरी छुट्टी तभी हो सकती है जब आप वीरेन्द्रसिंह के कुल ऐयारों को, जो आपके यहाँ कैद हैं, छोड़ दें और वे खुशी-राजी से अपने घर पहुँच जाएँ। मेरा पता लगाना व्यर्थ है, मैं बहुत ही बेढब जगह कैद किया गया हूँ।

आपका आज्ञाकारी पुत्र—
भीम।"

चिट्ठी पढ़ कर महाराज शिवदत्त की अजब हालत हो गई। सोचने लगे, "क्या भीम को एक औरत ने पकड़ लिया? वह बड़ा होशियार ताकतवर और शस्त्र चलाने में निपुण था। नहीं-नहीं, उस औरत ने जरूर कोई धोखा दिया होगा! पर अब तो उन ऐयारों को छोड़ना ही पड़ेगा जो मेरी कैद में हैं! हाय, किस मुश्किल से ये ऐयार गिरफ्तार हुए थे और अब क्या सहज ही में छूटे जाते हैं। खैर लाचारी है, क्या करें।"

बहुत देर तक सोच-विचार कर महाराज शिवदत्त ने बाकरअली ऐयार को बुला कर कहा, "वीरेन्द्रसिंह के ऐयारों को छोड़ दो, जब तक वे अपने घर नहीं पहुँचते, हमारा लड़का एक औरत की कैद से नहीं छूटता।"

बाकरअली—(ताज्जुब से) यह क्या बात हुजूर ने कही? मेरी समझ में कुछ न आया!

शिवदत्तसिंह—भीमसेन को एक औरत ने गिरफ्तार कर लिया है। वह कहती है कि जब तक वीरेन्द्रसिंह के ऐयार न छोड़ दिए जायेंगे, तुम भी घर न जाने पाओगे।

बाकरअली—यह कैसे मालूम हुआ?

शिवदत्तसिंह—(चिट्ठी दिखा कर) यह देखो, खास भीमसेन के हाथ का लिखा हुआ है। इस चिट्ठी पर किसी तरह का शक नहीं हो सकता।

बाकरअली—(पढ़ कर) ठीक है। इतने दिनों तक कुमार का पता न लगना ही कहे देता था कि उन्हें किसी ने धोखा देकर फँसा लिया। अब यह भी मालूम हो गया कि किसी औरत ने मर्दों के कान काटे हैं।

शिवदत्तसिंह—ताज्जुब है, एक औरत ने बहादुरी से भीम को कैसे गिरफ्तार कर लिया! खैर, इसका खुलासा हाल तभी मालूम होगा जब भीम से मुलाकात होगी और जब तक वीरेन्द्रसिंह के ऐयार चुनार नहीं पहुँच जाते, भीम की सूरत देखने को तरसते रहेंगे। तुम जाके उन ऐयारों को अभी छोड़ दो, मगर यह मत कहना कि तुम लोग फलाँ वजह से छोड़े जाते हो, बल्कि यह कहना कि हमसे और वीरेन्द्रसिंह से सुलह हो गई, बस, तुम जल्द चुनार जाओ। ऐसा कहने से वे कहीं न रुक कर सीधे चुनार चले जाएँगे।

बाकरअली महाराज शिवदत्तसिंह के पास से उठा और वहाँ पहुँचा जहाँ बद्री-नाथ वगैरह ऐयार कैद थे। उसने सबको कैदखाने से बाहर किया और कहा—"अब आप लोगों से हमसे कोई दुश्मनी नहीं, आप लोग अपने घर जाइए, क्योंकि हमारे महाराज से और राजा वीरेन्द्रसिंह से सुलह हो गई।"

बद्रीनाथ—बहुत अच्छी बात है! बड़ी खुशी का मौका है। पर अगर आपका कहना ठीक है तो हमारे ऐयारी के बटुए और खंजर भी दे दीजिए।

बाकरअली—हाँ-हाँ, लीजिये, इसमें क्या उज्र है! अभी मँगाये देता हूँ बल्कि मैं खुद जाकर ले आता हूँ।

दो-तीन ऐयारों को साथ ले इन ऐयारों के बटुए वगैरह लेने के लिए बाकरअली अपने मकान की तरफ गया और इधर पंडित बद्रीनाथ तथा पन्नालाल वगैरह निराला पाकर आपस में बातें करने लगे।

पन्नालाल—क्यों यारो, यह क्या मामला है जो आज हम लोग छोड़े जाते हैं?

रामनारायण—सुलह वाली बात तो हमारी तबीयत में नहीं बैठती।

चुन्नीलाल—अजी कैसी सुलह और कहाँ का मेल! इसमें जरूर कोई दूसरा ही मामला है।

ज्योतिषी—बेशक शिवदत्त लाचार होकर हम लोगों को छोड़ रहा है।

बद्रीनाथ—क्यों साहब भैरोंसिंह, आप इस बारे में क्या सोचते हैं?

भैरोंसिंह—सोचेंगे क्या? असल जो बात है मैं समझ गया।

बद्रीनाथ—भला कहिये तो सही, क्या समझे!

भैरोंसिह—इसमें कोई शक नहीं कि हमारे साथियों में से किसी ने यहाँ के किसी मुड्ड को पकड़ पाया है और इनको कहला भेजा है कि जब तक हमारे ऐयार चुनार न पहुँच जाएँगे उसको न छोड़ेंगे। बस, इसी से ये बातें बनाई जा रही हैं जिसमें हम लोग जल्दी चुनार पहुँचें।

बद्रीनाथ—शाबाश, बहुत ठीक सोचा। इसमें कोई शक नहीं। मैं समझता हूँ कि शिवदत्त की जोरू या लड़का या लड़की पकड़ी गई है तभी वह इतना कर रहा है, नहीं तो दूसरे की वह परवाह करने वाला नहीं है, जिस पर हम लोगों के मुकाबिले में।

भैरोंसिह—बस-बस, यही बात है! और अब हम लोग सीधे चुनार क्यों जाने लगे, जब तक कुछ दक्षिणा न ले लें।

बद्रीनाथ—देखो तो, क्या दिल्लगी मचाता हूँ।

भैरोंसिह—(हँस कर) मैं तो शिवदत्त से साफ कहूँगा कि मेरे पैरों में दर्द है, तीन महीने में भी चुनार नहीं पहुँच सकता, घोड़े पर सवार होना मुश्किल है, बैल की सवारी से कसम खा चुका हूँ, पालकी पर घायल बीमार या अमीर लोग चढ़ते हैं, बस बिना हाथी के मेरा काम नहीं चलता, सो भी बिना हौदे के चढ़ने की मुझे आदत नहीं। तेजसिंह दीवान का लड़का, बिना चाँदी-सोने के हौदे पर चढ़ नहीं सकता!

चुन्नीलाल—भाई बाकर ने मुझे बेढब छकाया है। मैं तो जब तक बाकर की आधा माशे नाक न ले लूँगा यहाँ से टलने वाला नहीं, चाहे जान रहे या जाय।

चुन्नीलाल की बात सुनकर सभी हँस पड़े और देर तक इसी तरह की बातचीत करते रहे, तब तक बाकरअली भी इन सबके बटुए और खंजर लिए हुए आ पहुँचा।

बाकरअली—लो साहबो, ये आपके बटुए और खंजर हाजिर हैं।

बद्रीनाथ—क्यों यार, कुछ चुराया तो नहीं! और तो खैर बस, मुझे अपनी अशर्फियों का धोखा है, हम लोगों के बटुए में खूब मजेदार चमकती हुई अशर्फियाँ थीं।

बाकरअली—अब लगे झूठ-मूठ का बखेड़ा मचाने।

रामनारायण—(मुँह बना कर) हैं, सच कहना! इन बातों से तो मालूम होता है कि अशर्फियाँ डकार गये! (पन्नालाल वगैरह की तरफ देख कर) लो भाइयो, अपनी चीजें देख लो!

पन्नालाल—देखें क्या? हम लोग जब चुनार से चले थे तो सौ-सौ अशर्फियाँ सब को खर्च के लिए मिली थीं। वे सब ज्यों-की-त्यों बटुए में मौजूद थीं।

भैरोंसिह—भाई, मेरे पास तो अशर्फियाँ नहीं थीं, हाँ, एक छोटी-सी पोटली जवाहिरात की जरूर थी, सो गायब है। अब कहिए, इतनी बड़ी रकम छोड़कर कैसे चुनार जाऊँ?

बद्रीनाथ—अच्छी दिल्लगी है! दोनों राजाओं में सुलह हो गई और इस खुशी में लुट गए हम लोग! चलो, एक दफे महाराज शिवदत्त से अर्ज करें। अगर सुनेंगे तो बेहतर है, नहीं तो इसी जगह अपना गला काटकर रख जायेंगे, धन-दौलत लुटा मैं कर चुनार जाना हमें मंजूर नहीं!

बाकरअली हैरान कि इन लोगों ने अजब ऊधम मचा रक्खा है। कोई कहता है

मेरी अशर्फियाँ गायब हैं, कोई कहता है मेरी जवाहिरात की पोटली गुम हो गई, कोइ कहता है हम लुट गए, अब क्या किया जाय? हम तो इस फिक्र में हैं कि जिस तरह हो ये लोग जल्द चुनार पहुँचें जिसमें भीमसेन की जान बचे, मगर ये लोग तो खमीरी आटे की तरह फैले ही जाते हैं। खैर, एक दफे इनको धमकी देनी चाहिए।

बाकरअली—देखो, तुम लोग बदमाशी करोगे तो फिर कैद कर लिए जाओगे!

बद्रीनाथ—जी हाँ! मैं भी यही सोच रहा हूँ।

पन्नालाल—ठीक है, जरूर कैद कर लिए जायेंगे, क्योंकि अपनी जमा माँग रहे हैं। चुपचाप चले जायँ तो बेहतर है, जिसमें बखूबी रकम पचा जाओ और कोई सुनने भी न पावे!

भैरोंसिह—यह धमकी तो आप अपने घर में खर्च कीजियेगा। भलमनसी इसी में है कि हम लोगों की जमा बाएँ हाथ से रख दीजिये! और नहीं, तो चलिये राजा साहब के पास, जो कुछ होगा उन्हीं के सामनें निपट लेंगे।

बाकरअली—अच्छी बात है, चलिये।

सब कोई—चलिये, चलिये!

यह मसखरों का झुण्ड बाकरअली के साथ महाराज शिवदत्त के पास पहुँचा।

बाकरअली—महाराज, देखिए, ये लोग झगड़ा मचाते हैं!

भैरोंसिह—जी हाँ, कोई अपनी जमा माँगे तो कहिये, झगड़ा मचाते हैं।

शिवदत्तसिंह—क्या मामला है?

भैरोंसिह—महाराज मुझसे सुनिये! जब से हमारे सरकार से और आपसे सुलह हो गई और हम लोग छोड़ दिये गए तो हम लोगों की वे चीजें भी मिल जानी चाहिए जो कैद होते समय जब्त कर ली गई थीं।

शिवदत्तसिंह—क्यों नहीं मिलेंगी?

भैरोंसिह—ईश्वर आपको सलामत रक्खे! क्या इन्साफ किया है! आगे सुनिए, जब हम लोगों ने अपनी चीजें मियाँ बाकर से माँगीं, तो बस बटुआ और खंजर तो दे दिया मगर बटुए में जो कुछ रकम थी, गायब कर गए। दो-दो चार-चार अशर्फियाँ और दस-दस बीस-बीस रुपये तो छोड़ दिये, बाकी अपनी कब्र में गाड़ आये! अब इन्साफ आपके हाथ है!

शिवदत्तसिंह—(बाकर से) क्यों जी, यह क्या मामला है?

बाकरअली—महाराज, ये सब झूठे हैं।

भैरोंसिह—जी हाँ, हम सबके सब झूठे हैं और आप अकेले सच्चे हैं?

शिवदत्तसिंह—(भैरों से) खैर, जाने दो, तुम लोगों का जो कुछ गया है हमसे लेकर अपने घर जाओ, हम बाकर से समझ लेंगे।

भैरोंसिह—महाराज, सौ-सौ अशर्फियाँ तो इन लोगों की गई हैं और एक पोटली जवाहिरात की मेरी गई है। अब बहुत बखेड़ा कौन करे बस एक हजार अशर्फियाँ मँगवा दीजिये, तो हम लोग अपने घर का रास्ता लें। रकम तो ज्यादे गई है मगर आपका क्या कसूर!

बाकरअली—यारो, गजब मत करो !

भैरोंसिंह—हाँ साहब, हम लोग गजब करते हैं। खैर लीजिए, अब एक पैसा न माँगेंगे। जी में समझ लेंगे खैरात किया, अब चुनार भी न जायँगे (उठना चाहता है)।

शिवदत्तसिंह—अजी, घबराते क्यों हो ! जो कुछ तुमने कहा है वह हम देते हैं। (बाकर से) क्या तुम्हारी शामत आयी है !

महाराज शिवदत्त ने बाकरअली को ऐसी डाँट बताई कि बेचारा चुपके से दूर जा खड़ा हुआ। हजार अशर्फियाँ मँगवा कर भैरोंसिंह के आगे रख दी गईं, ये लोग अपने अपने बटुए में रख उठ खड़े हुए, यह भी न पूछा कि तुम्हारा कौन कैद हो गया जिसके लिए इतना सह रहे हो ? हाँ शिवदत्तगढ़ के बाहर होते-होते इन लोगों ने पता लगा ही लिया कि भीमसेन किसी ऐयार के पंजे में पड़ गया है।

शिवदत्तगढ़ के बाहर होकर सीधे चुनार का रास्ता लिया। दूसरे दिन शाम को जब चुनार पन्द्रह कोस बाकी रह गया, सामने से एक सवार तेज घोड़ा फेंकता हुआ इसी तरफ आता दिखाई पड़ा। पास आने पर भैरोंसिंह ने पहचाना कि शिवदत्त का लड़का भीमसेन है।

भीमसेन ने इन ऐयारों के पास पहुँच कर घोड़ा रोका और हँसकर भैरोंसिंह की तरफ देखा जिसे वह बखूबी पहचानता था।

भैरोंसिंह—क्यों साहब, आपको छुट्टी मिली ? (अपने साथियों की तरफ देख कर) महाराज शिवदत्त के पुत्र कुमार भीमसेन यही हैं।

भीमसेन—आप ही लोगों की रिहाई पर मेरी छुट्टी बदी थी। आप लोग चले आये, तो मैं क्यों रोका जाता ?

भैरोंसिंह—हमारे किस साथी ने आपको गिरफ्तार किया ?

भीमसेन—सो मुझे मालूम नहीं, शिकार खेलते समय घोड़े पर सवार एक औरत ने पहुँच कर नेजे से मुझे जख्मी किया। जब मैं बेहोश हो गया तो मुश्कें बाँध एक खोह में ले गई और इलाज करके आराम किया। आगे का हाल आप जानते ही हैं, मुझे यह न मालूम हुआ कि वह औरत कौन थी मगर इसमें शक नहीं कि थी वह औरत ही।

भैरोंसिंह—खैर, अब आप अपने घर जाइये, मगर देखिए आपके पिता ने व्यर्थ हम लोगों से वैर बाँध रक्खा है। जब वे राजकुमार वीरेन्द्रसिंह के कैदी हो गये थे उस वक्त हमारे महाराज सुरेन्द्रसिंह ने उन्हें बहुत तरह से समझा कर कहा था कि आप हम लोगों से वैर छोड़ चुनार में रहें, हम चुनार की गद्दी आपको फेर देते हैं। उस समय तो हजरत को फकीरी सूझी थी, योगाभ्यास की धुन में प्राण की जगह बुद्धि को ब्रह्माण्ड में चढ़ा ले गये थे लेकिन अब फिर गुदगुदी मालूम होने लगी। खैर, हमें क्या, उनकी किस्मत में जन्म-भर दुःख ही भोगना बदा है तो कोई क्या करे ! इतना भी नहीं सोचते कि जब चुनार के मालिक थे तब तो कुँअर वीरेन्द्रसिंह से जीते नहीं, अब न मालूम क्या कर लेंगे !

भीमसेन—मैं सच कहता हूँ कि उनकी बातें मुझे पसन्द नहीं मगर क्या करूँ, पिता के विरुद्ध होना धर्म नहीं।

भैरोंसिंह—ईश्वर करे, इसी तरह आपकी धर्म में बुद्धि बनी रहे, अच्छा जाइये।

भीमसेन ने अपने घर का रास्ता लिया और हमारे चोखे ऐयारों ने चुनार की सड़क नापी।

10

अब हम अपने पाठकों को फिर उसी खोह में ले चलते हैं जिसमें कुँअर आनन्दसिंह को बेहोश छोड़ आये हैं अथवा जिस खोह में अपनी जान बचानेवाले सिपाही के साथ पहुँच कर उन्होंने एक औरत को छुरे से लाश काटते देखा था और योगिनी ने पहुँच कर सब को बेहोश कर दिया था।

थोड़ी देर के बाद आनन्दसिंह को छोड़ योगिनी बाकी सब लोगों को कुछ सुँघा कर होश में लाई। बेहोश आनन्दसिंह उठाकर एक किनारे रख दिए गए और फिर वही काम अर्थात् लटकते हुए आदमी को छुरे से काट-काट कर पूछना कि 'इन्द्रजीतसिंह के बारे में जो कुछ जानता है बता' जारी हुआ। सिपाही ने भी उन लोगों का साथ दिया। मगर वह आदमी भी कितना जिद्दी था! बदन के टुकड़े-टुकड़े हो गए, मगर जब तक होश में रहा यही कहता गया कि हम कुछ नहीं जानते। हब्शी ने पहले ही से कब्र खोद रखी थी, दम निकल जाने पर वह आदमी उसी में गाड़ दिया गया।

इस काम से छुट्टी पा योगिनी ने सिपाही की तरफ देख कर कहा, "बाहर जंगल से लकड़ी काट काम चलाने लायक एक छोटी-सी डोली बना लो, उस पर आनन्दसिंह को रख तुम और हब्शी मिल कर उठा ले जाओ, चुनार के किले के पास इनको रख देना जिसमें होश आने पर अपने घर पहुँच जायँ, तकलीफ न हो, बल्कि होश में लाने की तरकीब करके तब तुम इनसे अलग होना और जहाँ जी चाहे, चले जाना। हम लोगों से अगर मिलने की जरूरत हो तो इसी जगह आना।"

सिपाही—मेरी भी यही राय थी। आनन्दसिंह को तकलीफ क्यों होने लगी; क्या मुझको इसका खयाल नहीं है!

योगिनी—क्यों नहीं, बल्कि मुझसे ज्यादे होगा। अच्छा, तुम जाओ, जिस तरह बने इस काम को कर लो, हम लोग अब अपने काम पर जाती हैं। (दूसरी औरत की तरफ देखकर जिसने छुरी से उस लाश को काटा था) चलो बहिन, चलें, इस छोकरी को इसी जगह छोड़ दो, मजे में रहेगी, फिर पूछा जायगा।

इन दोनों औरतों का अभी बहुत-कुछ हाल हमें लिखना है, इसलिए जब तक इन दोनों का असल भेद और नाम न मालूम हो जाय, तब तक पाठकों के समझने के लिए कोई फर्जी नाम जरूर रख देना चाहिए। एक का नाम तो योगिनी रख ही दिया गया, दूसरी का वनचरी समझ लीजिए। योगिनी और वनचरी दोनों खोह के बाहर निकलीं और कुछ दक्खिन झुकते हुए पूरब का रास्ता लिया। इस समय रात बीत चुकी

थी और सुबह की सुफेदी के साथ लुपलुपाते हुए दो-चार तारे आसमान पर दिखाई दे रहे थे ।

पहर दिन चढ़े तक ये दोनों बराबर चलती गईं, जब धूप कुछ कड़ी हुई, जंगल में एक जगह वेल के पेड़ों की घनी छाँह देखकर वहाँ टिक गईं जिसके पास ही पानी का झरना वह रहा था । दोनों ने कमर से बटुआ खोला और कुछ मेवा निकाल कर खाने तथा पानी पीने के बाद जमीन पर नरम-नरम पत्ते बिछा कर सो रहीं ।

ये दोनों तमाम रात की जगी हुई थीं, लेटते ही नींद आ गई । दोपहर तक खूब सोईं । जब पहर दिन बाकी रहा उठ बैठीं और चश्मे के पानी से हाथ-मुँह धो फिर चल पड़ीं । इस तरह मौके-मौके पर टिकती हुई ये दोनों कई दिन तक बराबर चलती गईं । एक दिन आधी रात तक बराबर चलते जाने के बाद एक तालाब के किनारे पहुँचीं जो बगल वाली पहाड़ी के नीचे सटा हुआ था ।

इस लम्बे-चौड़े संगीन और निहायत खूबसूरत तालाब के चारों तरफ पत्थर की सीढ़ियाँ और छोटी-छोटी बारहदरियाँ इस तौर पर बनी हुई थीं जो बिल्कुल जल के किनारे ही पड़ती थीं । तालाब के ऊपर भी चारों तरफ पत्थर का फर्श और बैठने के लिए हर एक तरफ सिंहासन की तरह चार-चार चबूतरे निहायत खूबसूरत मौजूद थे । ताज्जुब की बात यह थी कि इस तालाब के बीच का जाट लकड़ी की जगह पीतल का इतना मोटा बना हुआ था कि दोनों तरफ दो आदमी खड़े होकर हाथ नहीं मिला सकते थे । जाट के ऊपर लोहे के एक बदसूरत आदमी का चेहरा उठाया हुआ था ।

तालाब के ऊपर चारों तरफ बड़े-बड़े सायेदार दरख्त ऐसे घने लगे हुए थे कि सभी की डालियाँ आपस में गुँथ रही थीं । दोनों उस तालाब पर खड़े होकर उसकी शोभा देखने लगीं । थोड़ी देर बाद दोनों एक चबूतरे पर बैठ गईं, मगर मुँह तालाब ही की तरफ किये हुए थीं ।

यकायक जाट के पास का पानी खलबलाया और एक आदमी तैरता हुआ जल के ऊपर दिखाई दिया । इन दोनों की टकटकी उसी तरफ बँध गई, वह आदमी किनारे आया और ऊपर की सीढ़ी पर खड़ा हो चारों तरफ देखने लगा । अब मालूम हो गया कि वह औरत है । योगिनी और वनचरी ने चबूतरे के नीचे होकर अपने को छिपा लिया मगर उस औरत की तरफ बराबर देखती रहीं ।

उस औरत की उम्र बहुत कम मालूम होती थी जो अभी-अभी तालाब से बाहर हो इधर-उधर सन्नाटा देख हवा में अपनी धोती सुखा रही थी । थोड़ी हीं देर में साड़ी सूख गयी जिसे पहन कर उसने एक तरफ का रास्ता लिया ।

मालूम होता है योगिनी और वनचरी इसी की ताक में बैठी थीं क्योंकि जैसे ही वह औरत वहाँ से चल खड़ी हुई, वैसे ही ये दोनों उस पर लपकीं और जबरदस्ती गिरफ्तार कर लेना चाहा, मगर वह कमसिन औरत इन दोनों को अपनी तरफ आते देख और इन दोनों के मुकाबले अपनी जीत न समझ कर लौट पड़ी और फुर्ती के साथ उन दरख्तों में से एक पर चढ़ गई जो उस तालाब के चारों तरफ लगे हुए थे । योगिनी और वनचरी दोनों उस दरख्त के नीचे पहुँचीं, योगिनी खड़ी रही और वनचरी उसे

पकड़ने के लिए ऊपर चढ़ी।

हम ऊपर लिख आये हैं कि यह दरख्त इतने पास-पास लगे हुए थे कि सभी की डालियाँ आपस में गुँथ रही थीं। वनचरी को पेड़ पर चढ़ते देख वह जलचरी ऊपर ही ऊपर दूसरे पेड़ पर कूद गई। यह देखकर योगिनी ने उसके आगे वाले तीसरे पेड़ को जा घेरा, जिसमें वह बीच में फँसी रह जाय और आगे न जाने पावे, मगर यह चालाकी भी न चली। जब उस औरत ने अपने बगल वाले पेड़ को दुश्मनों से घिरा हुआ पाया, पेड़ के नीचे उतर आई लौर तालाब की सीढ़ियों को तै करते हुए धम्म से जल में कूद पड़ी। योगिनी और वनचरी भी साथ ही पेड़ से उतरीं और उसके पीछे जाकर इन दोनों ने भी अपने को जल में डाल दिया।

11

सूर्य भगवान अस्त होने के लिए जल्दी कर रहे हैं। शाम की ठण्डी हवा अपनी चाल दिखा रही है। आसमान साफ है क्योंकि अभी-अभी पानी बरस चुका है और पछवा हवा ने रूई के पहल की तरह जमे हुए बादलों को तूम-तूम कर उड़ा दिया है। अस्त होते हुए सूर्य की लालिमा ने आसमान पर अपना पूरा दखल जमा लिया है और निकले हुए इन्द्रधनुष पर जिला दे उसके रंगदार जौहर को अच्छी तरह उभाड़ रक्खा है। बाग की रविशों पर जिन पर कुदरती भिश्ती अभी घंटा भर पहले ही छिड़काव कर गया है, घूम-घूम कर देखने से धुले-धुलाये रंग-बिरंगे पत्तों की कैफियत और उन सफेद कलियों की बहार दिल और जिगर को क्या ही ताकत दे रही है जिनके एक तरफ का रंग तो असली, मगर दूसरा हिस्सा अस्त होते हुए सूर्य की लालिमा पड़ने से ठीक सुनहला हो रहा है। उस तरफ से आये हुए खूशबू के झपेटे कहे देते हैं कि अभी तक तो आप दृष्टान्त ही में अनहोनी समझ कर कहा-सुना करते थे, मगर आज 'सोने और सुगन्ध' वाली कहावत देखिए अपनी आँखों के सामने मौजूद ये अधखिली कलियाँ सच किए देती हैं। चमेली की टट्टियों में नाजुक-नाजुक सफेद फूल तो खिले हुए हैं ही, मगर कहीं-कहीं पत्तियों में से छन कर आई हुई सूर्य की आखिरी किरणें धोखे में डालती हैं। यह समझ कर कि आज इन्हीं सुफेद चमेलियों में जर्द चमेली भी खिली हुई है, शौक भरा हाथ बिना बढ़े नहीं रहता। सामने की बनाई हुई सब्जी जिसकी दूब सावधानी से काट कर मालियों ने सब्ज मखमली फर्श का नमूना दिखला दिया है, आँखों को क्या ही तरावट दे रही है। देखिये उसी के चारों तरफ सजे हुए गमलों में खुशरंग पत्तों वाले छोटे जंगली पौधे अपने हुस्न और जमाल के घमंड में पैसे ऐंठे जाते हैं। इनस भी रविशों और क्यारियों के किनारे गुलमेंहदी के पेड़ ठीक पल्टनों की कतार की तरह खड़े दिखाई देते हैं, क्योंकि छुटपने ही से उनकी फैली हुई डालियाँ काटकर मालियों ने मनमानी सूरतें बना डाली हैं। कहने ही को सूरजमुखी का फूल सूर्य की तरफ घूमा रहता है मगर

नहीं, यहाँ तो देखिये सामने सूर्यमुखी के कितने ही पेड़ लगे हैं जिनके बड़े-बड़े फूल अस्त होते हुए दिवाकर की तरफ पीठ किए हसरत-भरी निगाहों से देखती हुई उस हसीन नाजनीन के अलौकिक रूप की छटा देख रहे हैं जो उस बाग के बीचोंबीच बने हुए कमरे की छत पर खड़ी उसी तरफ देख रही है जिधर सूर्य भगवान अस्त होते दिख रहे हैं। उधर ही से बाग में आने का रास्ता है। मालूम होता है वह किसी आने वाले की राह देख रही है, तभी तो सूर्य की किरणों को सह कर भी एकटक उधर ही ध्यान लगाये है।

इस कमसिन परीजमाल का चेहरा पसीने से भर गया मगर किसी आने वाले की सूरत न देख पड़ी। घबरा कर बायें हाथ अर्थात् दक्खिन तरफ मुड़ी और उस बनावटी छोटे से पहाड़ को देखकर दिल बहलाना चाहा जिसमें रंग-बिरंगे खुशनुमा पत्तों वाले करोटन, कौलियस, वरबीना, बिगूनिया, मौस इत्यादि पहाड़ों पर के छोटे-छोटे पौधे बहुत ही कारीगरी से लगाये हुए थे, और बीच में मौके-मौके से घुमा-फिरा कर पेड़ों को तरी पहुँचाने और पहाड़ी की खूबसूरती को बढ़ाने के लिए नहर काटी हुई थी, ऊपर ढाँचा खड़ा करके निहायत खूबसूरत रेशमी जाल इसलिए डाला हुआ था कि हर तरह की बोलियों से दिल खुश करने वाली उन रंग-बिरंगी नाजुक चिड़ियों के उड़ जाने का खौफ न रहे जो उनके अन्दर छोड़ी हुई हैं और इस समय शाम होते देख अपने घोंसलों में, जो पत्तों के गुच्छों में बनाए हैं, जा बैठने के लिए उतावली हो रही हैं।

हाय, इस पहाड़ी की खूबसूरती से भी उसका परेशान और किसी की जुदाई में व्याकुल दिल न बहला, लाचार छत के ऊपर की तरफ खड़ी हो उन तरह-तरह के नक्शों वाली क्यारियों को देख अपने घबड़ाये हुए दिल को फुसलाना चाहा, जिनमें नीले, पीले, हरे, लाल, चौरंगे नाजुक मौसमी फूलों के छोटे-छोटे तख्ते सजाये हुए थे, जिनके देखने से बेशकीमत गलीचे का गुमान हो रहा था और उसी के बीच में एक चक्करदार फव्वारा छूट रहा था जिसकी बारीक धारों का जाल दूर-दूर तक फैल रहा था। रंग-बिरंगी तितलियाँ उड़-उड़कर उन रंगीन फूलों पर इस तरह बैठती थीं कि फूलों में और उनमें बिल्कुल फर्क नहीं मालूम पड़ता था, जब तक वे फिर से उड़कर किसी दूसरे फूलों के गुच्छे पर न जा बैठतीं।

इन फूलों और फव्वारों के छींटों ने भी उसके मन की कली न खिलाई, लाचार वह पूरब तरफ आई और अपनी उन सखियों की कार्रवाई देखने लगी जो चुन-चुन कर खुशबूदार फूलों के गजरों और गुच्छों के बनाने में अपने नाजुक हाथों को तकलीफ दे रही थीं। कोई अंगूर की टट्टियों में घुसकर लाल पके हुए अंगूरों की ताक में थी, कोई पके हुए आम तोड़ने की धुन में उन पेड़ों की डालियों तक लग्घे पहुँचा रही थी जिनके नीचे चारों तरफ गड्ढे खुदवा कर इसलिए जल से भरवा दिये गये थे कि पेड़ से गिरे हुए आम चुटीले न होने पावें।

अब सूर्य की लालिमा बिल्कुल जाती रही और धीरे-धीरे अँधेरा होने लगा। वह बेचारी किसी तरह अपने दिल को न बहला सकी, बल्कि अँधेरे में बाग के चारों तरफ के बड़े-बड़े पेड़ों की सूरत डरावनी मालूम होने लगी, दिल की धड़कन बढ़ती ही

गई, लाचार वह छत के नीचे उतर आई और एक सजे-सजाये कमरे में चली गई।

इस कमरे की सजावट मुख्तसिर ही थी, एक झाड़ और दस-बारह हाँडियाँ छत से लटक रही थीं, चारों तरफ दुशाखी दीवारगीरों में मोमबत्तियाँ जल रही थीं, जमीन पर फर्श बिछा हुआ था और एक तरफ गद्दी लगी हुई थी जिसके आगे दो फर्शी झाड़ अपनी चमक-दमक दिखा रहे थे, उनके बगल ही में एक मसहरी थी जिस पर थोड़े से खुशबूदार फूल और दो-तीन गजरे दिखाई दे रहे थे। अच्छे-अच्छे कपड़ों और गहनों से दिमागदार बनी हुई दस-बारह कमसिन छोकरियाँ भी इधर-उधर घूम-घूमकर ताखों (आलों) पर रक्खे हुए गुलदस्तों में फूलों के गुच्छे सजा रही थीं।

वह नाजनीन जिसका नाम किशोरी था कमरे में आई मगर गद्दी पर न बैठ कर मसहरी पर जा लेटी और आँचल से मुँह ढाँप न मालूम क्या सोचने लगी। उन्हीं छोकरियों में से एक पंखा झलने लगी, बाकी अपनी मालिक को उदास देख सुस्त खड़ी हो गईं मगर निगाहें सभी की मसहरी की तरफ ही थीं।

थोड़ी देर तक इस कमरे में सन्नाटा रहा, इसके बाद किसी आने वाले की आहट मालूम हुई। सभी की निगाह सदर दरवाजे की तरफ घूम गई। किशोरी ने भी मुँह फेरा और उसी तरह देखने लगी। एक नौजवान लड़का सिपाहियाना ठाठ से उस कमरे में आ पहुँचा जिसे देखते ही किशोरी घबरा कर उठ बैठी और बोली—

"कमला, मैं कब से राह देख रही हूँ! तैंने इतने दिन क्यों लगाये?"

पाठक समझ गये होंगे कि यह सिपाहियाना ठाठ से आने वाला नौजवान लड़का असल में मर्द नहीं है बल्कि कमला के नाम से पुकारी जाने वाली कोई ऐयारा है।

कमला—यही सोच के मैं चली आई कि तुम घबरा रही होगी, नहीं तो दो दिन का काम और था।

किशोरी—क्या अभी पूरा हाल मालूम नहीं हुआ?

कमला—नहीं।

किशोरी—चुनार में तो हलचल खूब मची होगी!

कमला—इसका क्या पूछना है! मुझे भी जो कुछ थोड़ा-बहुत हाल मिला, वह चुनार ही में।

किशोरी—अच्छा, क्या मालूम हुआ?

कमला—बूढ़े सौदागर की सूरत बना जब मैं तुम्हारी तस्वीर से जड़ी अँगूठी दे आई, उसी समय से उनकी सूरत-शक्ल, बातचीत और हाल-चाल में फर्क पड़ गया, दूसरे दिन मेरी (सौदागर की) बहुत खोज की गयी।

किशोरी—इसमें कोई शक नहीं कि मेरी आह ने अपना असर किया! हाँ, फिर क्या हुआ?

कमला—उसके दूसरे या तीसरे दिन उन्हें उदास देख आनन्दसिंह किश्ती पर हवा खिलाने ले गये, साथ में एक बूढ़ा नौकर भी था। बहाव की तरफ कोस डेढ़ कोस जाने के बाद किनारे के जंगल से गाने-बजाने की आवाज आई। उन्होंने किश्ती किनारे लगाई और उतरकर देखने लगे। वहाँ तुम्हारी सूरत बन माधवी ने पहले ही जाल फैला

रखा था, यहाँ तक कि उसने अपना मतलब साध लिया और न मालूम किस ढंग से उन्हें लेकर गायब हो गई। उस बूढ़े नौकर की जुबानी जो उनके साथ गया था मालूम हुआ कि माधवी के साथ कई औरतें भी थीं जो इन दोनों भाइयों को देखते ही भागीं। आनन्दसिंह उन औरतों के पीछे लपके लेकिन वे भुलावा देकर निकल गयीं और आनन्दसिंह ने लौट-कर आने पर अपने भाई को भी न पाया, तब गंगा किनारे पहुँच डोंगी पर बैठे हुए खिद-मतगार से सब हाल कहा।

किशोरी—यह कैसे मालूम हुआ कि माधवी ने मेरी सूरत बनाकर उन्हें धोखा दिया?

कमला—लौटती समय जब मैं उस जंगल के कुछ इधर निकल आई, जो अब बिलकुल साफ हो गया है, तो जमीन पर पड़ी हुई एक जड़ाऊ 'कँगनी' नजर आई। उठा-कर देखा। मैं उस कँगनी को खूब पहचानती थी, कई दफे माधवी के हाथ में देख चुकी थी, बस मुझे पूरा यकीन हो गया कि यह काम इसी का है, आखिर उसके घर पहुँची और उसकी हमजोलियों की बातचीत से निश्चय कर लिया।

किशोरी—देखो, राँड ने मेरे ही साथ दगाबाजी की!

कमला—कैसी कुछ!

किशोरी—तो इन्द्रजीतसिंह अब उसी के घर में होंगे?

कमला—नहीं, अगर वहाँ होते तो क्या मैं इस तरह खाली लौट आती?

किशोरी—फिर उन्हें कहाँ रखा है?

कमला—इसका पता नहीं लगा। मैंने चाहा था कि खोज लगाऊँ मगर तुम्हारी तरफ खयाल करके दौड़ी आई।

किशोरी—(ऊँची साँस लेकर) हाय, उस शैतान की बच्ची ने मेरा ध्यान उनके दिल से निकाल दिया होगा!

इतना कह किशोरी रोने लगी, यहाँ तक कि हिचकी बँध गयी। कमला ने उसे बहुत समझाया और कसम खाकर कहा कि मैं अन्न उसी दिन खाऊँगी, जिस दिन इन्द्रजीतसिंह को तुम्हारे पास ला बैठाऊँगी।

पाठक इस बात के जानने की इच्छा रखते होंगे कि यह किशोरी कौन है? इस का नाम हम पहले लिख आये हैं और अब फिर कहे देते हैं कि यह महाराज शिवदत्त की लड़की है, मगर यह किसी दूसरे मौके से मालूम होगा कि किशोरी शिवदत्तगढ़ से बाहर क्यों कर दी गयी या बाप का घर छोड़ अपने ननिहाल में क्यों दिखाई देती है।

थोड़ी देर सन्नाटा रहने बाद फिर किशोरी और कमला में बातचीत होने लगी।

किशोरी—कमला, तू अकेली क्या कर सकेगी?

कमला—मैं तो वह कर सकूँगी जो चपला और चम्पा के किये भी न हो सकेगा।

किशोरी—तो क्या आज तू फिर जायगी?

कमला—हाँ जरूर जाऊँगी, मगर दो-एक बातों का फैसला आज ही तुमसे कर लूँगी, नहीं तो पीछे बदनामी देने को तैयार होओगी।

किशोरी—बहिन, ऐसी क्या बात है जो मैं तुझी पर बदनामी देने पर उतारू

हो जाऊँगी ? एक तू ही तो मेरी दुख-सुख की साथी है ।

कमला—यह सब सच है, मगर आपस का मामला बहुत टेढ़ा होता है ।

किशोरी—खैर, कुछ कह तो सही !

कमला—कुँअर इन्द्रजीतसिंह को तुम चाहती हो, इसी सबब से उनके कुटुम्ब भर की भलाई तुम अपना धर्म समझती हो, मगर तुम्हारे पिता से और उस घराने से पूरा बैर बँध रहा है, ताज्जुब नहीं कि तुम्हारी और इन्द्रजीतसिंह की भलाई करते-करते मेरे सबब से तुम्हारे पिता को तकलीफ पहुँचे, मगर ऐसा हुआ तो बेशक तुम्हें रंज होगा ।

किशोरी—इन बातों को न सोच ! मैंने तो उसी दिन अपने घर को इस्तीफा दे दिया जिस दिन पिता ने मुझे निकाल बाहर किया, अगर ननिहाल में मेरा ठिकाना न होता या मेरे नाना का उनको खौफ न होता तो शायद वे उसी दिन मुझे वैकुण्ठ पहुँचा देते। अब मुझे उस घर से रत्ती भर मुहब्बत नहीं है । पर बहन, तूने यह बड़ा काम किया कि उस दुष्टा को वहाँ से निकाल लाई और मेरे हवाले किया । जब मैं गम की मारी घबड़ा जाती हूँ तभी उस पर दिल का बुखार निकालती हूँ जिससे कुछ ढाढ़स हो जाती है ।

कमला—मुझे तो अभी तक उसके ऊपर गुस्सा निकालने का मौका ही न मिला, कहो तो आज चलते-चलाते मैं भी कुछ बुखार निकाल लूँ ?

किशोरी—क्या हर्ज है, जा, ले आ ।

कमला तभी कमरे के बाहर चली गयी । उसके पीछे आधे घंटे तक किशोरी को चुपचाप कुछ सोचने का मौका मिला । उसकी सहेलियाँ वहाँ मौजूद थीं मगर किसी को बोलने का हौसला नहीं पड़ा ।

आधे घण्टे बाद कमला एक कैदी औरत को लिए हुए फिर उस कमरे में दाखिल हुई ।

इस औरत की उम्र तीस वर्ष से कम न होगी, चेहरे-मोहरे और रंगत से दुरुस्त थी, कह सकते हैं कि अगर इसे अच्छे कपड़े और गहने पहनाये जायें तो बेशक हसीनों की पंक्ति में बैठाने लायक हो, पर न मालूम इसकी ऐसी दुर्दशा क्यों कर रखी है और किस कसूर पर कैदी बना डाला है ।

इस औरत को देखते ही किशोरी का चेहरा लाल हो गया और मारे गुस्से के तमाम बदन थर-थर काँपने लगा । कमला ने उसकी यह दशा देख अपने काम में जल्दी की और उन सहेलियों में से जो उस कमरे में मौजूद सब कुछ देख रही थीं एक की तरफ कुछ इशारा करके हाथ बढ़ाया । वह दूसरे कमरे में चली गई और एक बेंत लाकर उसने कमला के हाथ में दे दिया ।

कई औरतों ने मिलकर उस कैदी औरत के हाथ-पैर एक साथ ही मजबूत बाँ और उसे गेंद की तरह लुढ़का दिया ।

यहाँ तक तो किशोरी चुपचाप देखती रही, मगर जब कमला कमर कसकर, बेंत लेकर खड़ी हो गई तो किशोरी का कोमल कलेजा दहल गया और इसके आगे जो कुछ होने वाला था उसे देखने की ताब न लाकर वह दो सहेलियों को साथ ले कमरे के बाहर

निकल बाग की रविशों पर टहलने लगी ।

किशोरी चाहे बाहर चली गई, मगर कमरे के अन्दर से आती हुई चिल्लाने की आवाज बराबर उसके कानों में पड़ती रही । थोड़ी देर बाद ही कमला किशोरी के पास पहुँची जो अभी तक बाग में टहल रही थी ।

किशोरी—कहो, उसने कुछ बताया या नहीं ?

कमला—कुछ नहीं, खैर कहाँ जाती है, आज नहीं कल, कल नहीं परसों, आखिर बतावेगी ही । अब मुझे रुखसत करो क्योंकि बहुत-कुछ काम करना है !

किशोरी—अच्छा जा, मैं भी अब घर जाती हूँ, नहीं तो नानी इसी जगह पहुँचकर रंज होने लगेंगी । (कमला के गले मिलकर) देख अब मैं तेरे ही भरोसे पर जी रही हूँ !

कमला—जब तक दम में दम है तब तक तेरे काम से बाहर नहीं हूँ ।

कमला वहाँ से रवाना हुई । उसके जाने के बाद किशोरी भी अपनी सखियों को साथ ले वहाँ से चली और थोड़ी ही दूर पर एक बड़ी हवेली के अन्दर जा पहुँची ।

12

अब हम आपको एक दूसरी सरजमीन पर ले चलकर एक-दूसरे ही रमणीक स्थान की सैर कराते हैं, इसके साथ-ही-साथ बड़े-बड़े ताज्जुब के खेल और अद्भुत बातों को दिखाकर अपने किस्से का सिलसिला दुरुस्त करना चाहते हैं । मगर यहाँ एक जरूरी बात लिख देने की इच्छा होती है जिसके जानने से आगे चलकर आपको कुछ ज्यादा आनन्द मिलेगा ।

इस जगह बहुत-सी अद्भुत बातों को पढ़कर आप ऐसा न समझ लें कि यह तिलिस्म है और इसमें ऐसी बातें हुआ ही करती हैं, बल्कि उसे दुरुस्त और होने वाली समझकर खूब गौर करें क्योंकि अभी यह पहला ही हिस्सा है । इस सन्तति के चार हिस्सों में तो हम तिलिस्म का नाम भी न लेंगे, आगे चलकर देखा जायगा ।

आप ध्यान कर लें कि एक अच्छे रमणीक स्थान में पहुँचकर सैर कर रहे हैं । यह जमीन जो लगभग हजार गज के चौड़ी और इतनी ही लम्बी होगी, चारों तरफ की चार खूबसूरत पहाड़ियों से घिरी हुई है । बीच की सब्जी और गुलबूटों की बहार देखने ही लायक है । इस कुदरती बगीचे में जंगली फूलों के पेड़ ज्यादे दिखाई देते हैं, उन्हीं में मिले-जुले गुलाबों के पेड़ भी बेशुमार हैं और कोई भी ऐसा नहीं कि जिनमें सुन्दर कलियाँ और फूल न दिखाई देते हों । बीच में बड़े-बड़े तीन झरने भी खूबसूरती से बह रहे हैं । बरसात का मौसम है, चारों तरफ से पहाड़ों पर से गिरा हुआ जल इन झरनों में जोश मार रहा है । पूरब तरफ पहाड़ी के नीचे पहुँचकर ये तीनों झरने एक हो गए हैं और अन्दाज से ज्यादे आया हुआ जल गड़हे में गिरकर न मालूम कहाँ निकल जाता है । यहाँ

की आबहवा ऐसी उत्तम है कि अगर वर्षों का बीमार भी आवे तो दो दिन में तन्दुरुस्त हो जाय और यहाँ की सैर से कभी जी न घबराये।

बीचोंबीच में एक आलीशान इमारत बनी हुई है, मगर चाहे उसमें हर तरह की सफाई क्यों न हो फिर भी वह किसी पुराने जमाने की मालूम होती है। उसी इमारत के सामने एक छोटी-सी खूबसूरत बावली बनी हुई है जिसके चारों तरफ की जमीन कुछ ज्यादा खूबसूरत मालूम होती है और फूल-पत्ते भी मौके से लगाए हुए हैं।

यह इमारत सुनसान और उदास नहीं है, इसमें पन्द्रह-बीस नौजवान खूबसूरत औरतों का डेरा है। देखिए इस शाम के सुहावने समय में वे सब घर से निकलकर चारों तरफ मैदान में घूम-घूमकर जिन्दगी का मजा ले रही हैं। सभी खुश, सभी की मस्तानी चाल, सभी फूलों को तोड़-तोड़कर आपस में गेंदबाजी कर रही हैं। हमारे नौजवान नायक कुँअर इन्द्रजीतसिंह भी एक हसीन नाजनीन के हाथ में हाथ दिये बावली के पूरब की तरफ टहल रहे हैं, बात-बात में हँसी-दिल्लगी हो रही है, दीन-दुनिया की सुध भूले हुए हैं।

लीजिए वे दोनों थककर बावली के किनारे एक खूबसूरत संगमरमर की चट्टान पर बैठ गये और बातचीत होने लगी—

इन्द्रजीतसिंह—माधवी, मेरा शक किसी तरह नहीं जाता। क्या सचमुच तुम वही हो जो उस दिन गंगा-किनारे जंगल में झूला झूल रही थीं?

माधवी—आप रोज मुझसे यही सवाल करते हैं और मैं कसम खाकर इसका जवाब दे चुकी हूँ, मगर अफसोस कि मेरी बात पर विश्वास नहीं करते।

इन्द्रजीतसिंह—(अँगूठी की तरफ देखकर) इस तस्वीर से तो कुछ फर्क मालूम होता है।

माधवी—यह दोष मुसौवर का है।

इन्द्रजीतसिंह—खैर जो हो, फिर भी तुमने मुझे अपने वश में कर रखा है।

माधवी—जी हाँ ठीक है, मुझसे मिलने का उद्योग तो आप ही ने किया था!

इन्द्रजीतसिंह—अगर मैं उद्योग न करता तो क्या तुम मुझे जबर्दस्ती ले आतीं?

माधवी—खैर, जाने दीजिए, मैं कबूल करती हूँ कि आपने मेरे ऊपर अहसान किया, बस!

इन्द्रजीतसिंह—(हँसकर) बेशक तुम्हारे ऊपर अहसान किया कि दिल और जान तुम्हारे हवाले किये।

माधवी—(शरमा कर और सिर नीचा करके) बस रहने दीजिये, ज्यादे सफाई न दीजिये!

इन्द्रजीतसिंह—अच्छा इन बातों को छोड़ो और अपने वादे को याद करो! आज कौन दिन है? बस, आज तुम्हारा पूरा हाल सुने बिना न मानूँगा चाहे जो हो, मगर देखो, फिर उन भारी कसमों की याद दिलाता हूँ जो मैं कई दफे तुम्हें दे चुका, मुझसे झूठ कभी न बोलना, नहीं तो अफसोस करोगी।

माधवी—(कुछ देर तक सोचकर) अच्छा, आज भर मुझे और माफ कीजिए,

आपसे बढ़कर मैं दुनिया में किसी को नहीं समझती और आप ही की शपथ खाकर कहती हूँ कि कल जो पूछेंगे सब ठीक-ठीक कह दूँगी, कुछ न छिपाऊँगी। (आसमान की तरफ देखकर) अब समय हो गया, मुझे दो घण्टे की फुरसत दीजिए।

इन्द्रजीतसिंह—(लम्बी साँस लेकर) खैर कल ही सही, जाओ मगर दो घण्टे से ज्यादा न लगाना।

माधवी उठी और मकान के अन्दर चली गयी। उसके जाने के बाद इन्द्रजीतसिंह अकेले रह गये और सोचने लगे कि यह माधवी कौन है? इसका कोई बड़ा बुजुर्ग भी है या नहीं! यह अपना हाल क्यों छिपाती है! सुबह-शाम दो-दो तीन-तीन घंटे के के लिए कहाँ और किससे मिलने जाती है? इसमें तो कोई शक नहीं कि यह मुझसे मुहब्बत करती है मगर ताज्जुब है कि मुझे यहाँ क्यों कैद कर रखा है। चाहे यह सरजमीन कैसी ही सुंदर और दिल लुभाने वाली क्यों न हो, फिर भी मेरी तबीयत यहाँ से उचाट हो रही है। क्या करें कोई तरकीब नहीं सूझती, बाहर का कोई रास्ता नहीं दिखाई देता। यह तो मुमकिन ही नहीं कि पहाड़ चढ़कर कोई पार हो जाय, और यह भी दिल नहीं कबूल करता कि इसे किसी तरह रंज करूँ, और अपना मतलब निकालूं, क्योंकि मैं अपनी जान इस पर न्यौछावर कर चुका हूँ।

ऐसी-ऐसी बहुत-सी बातों को सोचते इनका जी बेचैन हो गया, घबड़ा कर उठ खड़े हुए और इधर-उधर टहलकर दिल बहलाने लगे। चश्मे का जल निहायत साफ था; बीच की छोटी-छोटी खुशरंग कंकरियाँ और तेजी के साथ दौड़ती हुई मछलियाँ साफ दिखाई पड़ती थीं, इसी की कैफियत देखते किनारे-किनारे जाकर दूर निकल गए और वहाँ पहुँचे जहाँ तीनों चश्मों का संगम हो गया था, और अन्दाज से ज्यादा आया हुआ जल पहाड़ी के नीचे एक गड़हे में गिर रहा था।

एक बारीक आवाज इनके कान में आयी। सिर उठाकर पहाड़ की तरफ देखने लगे। ऊपर पन्द्रह-बीस गज की दूरी पर एक औरत दिखाई पड़ी जिसे अब तक इन्होंने इस हाते के अन्दर कभी नहीं देखा था। उस औरत ने हाथ के इशारे से ठहरने के लिए कहा तथा ढोकों की आड़ में जहाँ तक बन पड़ा, अपने को छिपाती हुई नीचे उतर आई और आड़ देकर इन्द्रजीतसिंह के पास इस तरह खड़ी हो गयी जिसमें उन नौजवान छोकरियों में से कोई इसे देखने न पावे जो यहाँ की रहने वालियाँ चारों तरफ घूमकर चुहलबाजी में दिल बहला रही हैं और जिनका कुछ हाल हम ऊपर लिख आये हैं।

उस औरत ने एक लपेटा हुआ कागज इन्द्रजीतसिंह के हाथ में दिया। इन्होंने कुछ पूछना चाहा मगर उसने यह कहकर कुमार का मुँह बन्द कर दिया कि "बस जो कुछ है इसी चिट्ठी से आपको मालूम हो जायेगा, मैं जबानी कुछ कहना नहीं चाहती और न यहाँ ठहरने का मौका है, क्योंकि कोई देख लेगा, तो हम आप दोनों ऐसी आफत में फँस जायेंगे कि जिससे छुटकारा मुश्किल होगा। मैं उसी की लौंडी हूँ जिसने यह चिट्ठी आपके पास भेजी है!"

उसकी बात का इन्द्रजीतसिंह क्या जवाब देंगे, इसका इन्तजार न करके वह औरत पहाड़ी पर चढ़ गई और चालीस-पचास हाथ जा एक गड़हे में घुसकर न मालूम

कहाँ लोप हो गई। इन्द्रजीतसिंह ताज्जुब में आकर खड़े आधी घड़ी तक उस तरफ देखते रहे, मगर फिर वह नजर न आई, लाचार इन्होंने कागज खोला और बड़े गौर से पढ़ने लगे, यह लिखा था—

"हाय, मैंने तस्वीर बनकर अपने को आपके हाथ में सौंपा, मगर आपने मेरी कुछ भी खबर न ली, बल्कि एक दूसरी ही औरत के फन्दे में फँस गये, जिसने मेरी सूरत बना आपको पूरा धोखा दिया। सच है, वह परीजमाल जब आपके बगल में बैठी है तो फिर मेरी सुध क्यों आने लगी!

"आपको मेरी ही कसम है, पढ़ने के बाद इस चिट्ठी के इतने टुकड़े कर डालिये कि एक अक्षर भी दुरुस्त न बचने पावे।

आपकी दासी—"किशोरी।"

इस चिट्ठी के पढ़ते ही कुमार के कलेजे में एक धड़कन-सी पैदा हुई। घबड़ा कर एक चट्टान पर बैठ गये, और सोचने लगे—"मैंने पहले ही कहा था कि इस तस्वीर से उसकी सूरत नहीं मिलती। चाहे यह कितनी ही हसीन और खूबसूरत क्यों न हो, मगर मैंने तो अपने को उसी के हाथ बेच डाला है, जिसकी तस्वीर खुशकिस्मती से अब तक मेरे हाथ में मौजूद है। तब क्या करना चाहिए? यकायक इससे तकरार करना भी मुनासिब नहीं। अगर यह इसी जगह मुझे छोड़ कर चली जाये और अपनी सहेलियों को भी लेती जाये तो मैं क्या करूँगा? घबड़ाकर सिवाय प्राण दे देने के और क्या कर सकता हूँ, क्योंकि यहाँ से निकलने का रास्ता मालूम नहीं। यह भी नहीं हो सकता कि इन दोनों पहाड़ियों पर चढ़कर पार हो जाऊँ, क्योंकि सिवाय ऊँची सीधी चट्टानों के चढ़ने लायक रास्ता कहीं भी नहीं मालूम पड़ता। खैर जो हो, आज मैं जरूर उसके दिल में कुछ खुटका पैदा करूँगा। नहीं-नहीं आज भर और चुप रहना चाहिए, कल उसने अपना हाल कहने का वादा किया ही है आखिर कुछ-न-कुछ झूठ जरूर कहेगी, बस उसी समय टोकूंगा। एक बात और है। (कुछ रुक कर) अच्छा देखा जायेगा। यह औरत जो मुझे चिट्ठी दे गई है यहाँ किस तरह पहुँची? (पहाड़ी की तरफ देखकर) जितनी दूर ऊँचे उसे मैंने देखा था वहाँ तक तो चढ़ जाने का रास्ता मालूम होता है, शायद इतनी दूर तक लोगों की आमदरफ्त होती होगी। खैर ऊपर चलकर देखूँ तो सही कि बाहर निकल जाने के लिए कोई सुरंग तो नहीं है।"

इन्द्रजीतसिंह उस पहाड़ी पर वहाँ तक चढ़ गये जहाँ वह औरत नजर पड़ी थी। ढूँढ़ने से एक सुरंग ऐसी नजर आई, जिसमें आदमी बखूबी घुस सकता था। इन्हें विश्वास हो गया कि इसी राह से वह आई थी और बेशक हम भी इसी राह से बाहर हो जायेंगे। खुशी-खुशी उस सुरंग में घुसे। दस-बारह कदम अँधेरे में गए होंगे, कि पैर के नीचे जल मालूम पड़ा। ज्यों-ज्यों आगे जाते थे, जल ज्यादा जान पड़ता था, मगर यह भी हौसला किये बराबर चले ही गये। जब गले बराबर जल में जा पहुँचे और मालूम हुआ कि आगे उपर चट्टान जल के साथ मिली हुई है, तैर कर भी कोई नहीं जा सकता और रास्ता बिल्कुल नीचे की तरफ झुकता अर्थात ढलवाँ ही मिलता जाता है, तो लाचार होकर लौट आए मगर इन्हें विश्वास हो गया कि वह औरत जरूर इसी राह

से आई थी, क्योंकि उसे गीले कपड़े पहने इन्होंने देखा भी था।

वे औरतें जो पहाड़ी के बीच वाले दिलचस्प मैदान में घूम रही थीं इन्द्रजीतसिंह को कहीं न देख घबरा गई और दौड़ती हुई उस हवेली के अन्दर पहुँचीं, जिसका जिक्र हम ऊपर कर आये हैं। तमाम मकान छान डाला, जब पता न लगा तो उन्हीं में से एक बोली, "बस अब सुरंग के पास चलना चाहिए, जरूर उसी जगह होंगे।" आखिर वे सब औरतें वहाँ पहुँचीं, जहाँ सुरंग के बाहर निकल कर गीले कपड़े पहने इन्द्रजीतसिंह खड़े कुछ सोच रहे थे।

इन्द्रजीतसिंह को सोच-विचार करते और सुरंग में आते-जाते दो घण्टे लग गये। रात हो गई थी, चन्द्रमा पहले ही से निकला हुए थे, जिसकी चाँदनी ने दिलचस्प जमीन पर फैलकर अजीब समाँ जमा रखा था। दो घण्टे बीत जाने पर माधवी भी लौट आयी थी मगर उस मकान में या उसके चारों तरफ अपनी किसी लौंडी या सहेली को न देख घबरा गई और उस समय तो उसका कलेजा और भी दहलने लगा, जब उसने देखा कि अभी तक घर में चिराग तक नहीं जला। उसने भी इधर-उधर ढूँढ़ना नापसन्द किया, और सीधे उसी सुरंग के पास पहुँची। अपनी सब सखियों और लौंडियों को भी वहाँ पाया और यह भी देखा कि इन्द्रजीतसिंह गीले कपड़े पहने सुरंग के मुहाने से नीचे की तरफ आ रहे हैं।

क्रोध में भरी माधवी ने अपनी सखियों की तरफ देख कर धीरे से कहा, "लानत है तुम लोगों की गफलत पर। इसीलिए तुम हरामखोरिनों को मैंने यहाँ रखा था!" गुस्सा ज्यादा चढ़ आया था, और हो- काँप रहे थे इससे कुछ और ज्यादा न कह सकी, फिर भी इन्द्रजीतसिंह के नीचे आने तक बड़ी कोशिश से माधवी ने अपने गुस्से को पचाया और बनावटी तौर पर हँसकर इन्द्रजीतसिंह से पूछा, "क्या आप उस नहर के अन्दर गये थे?"

इन्द्रजीतसिंह—हाँ।

माधवी—भला यह कौन-सी नादानी थी! न मालूम इसके अन्दर कितने कीड़े-मकोड़े और बिच्छू होंगे। हम लोगों को तो डर के मारे कभी यहाँ खड़े होने का भी हौसला नहीं पड़ता।

इन्द्रजीतसिंह—घूमते-फिरते चश्मे का तमाशा देखते यहाँ तक आ पहुँचे, जी में आया कि देखें यह गुफा कितनी दूर तक चली गई है। जब अन्दर गये तो पानी में भींग कर लौटना पड़ा।

माधवी—खैर चलिए, कपड़े बदलिए।

कुँअर इन्द्रजीतसिंह का खयाल और भी मजबूत हो गया। वह सोचने लगे कि इस सुरंग में जरूर कोई भेद है, तभी तो ये सब घबड़ाई हुई यहाँ आ जमा हुईं।

इन्द्रजीतसिंह आजतमाम रात सोच-विचार में पड़े रहे। इनके रंग-ढंग से माधवी का भी माथा ठनका और वह भी रात भर चारों तरफ खयाल दौड़ाती रही।

13

दूसरे दिन खा-पीकर निश्चिन्त होने बाद दोपहर को जब दोनों एकान्त में बैठे, तो इन्द्रजीतसिंह ने माधवी से कहा—

"अब मुझसे सब्र नहीं हो सकता, आज तुम्हारा ठीक-ठीक हाल सुने बिना कभी न मानूँगा ओर इससे बढ़कर निश्चिन्ती का समय भी दूसरा न मिलेगा ।"

माधवी—जी हाँ, आज मैं जरूर अपना हाल कहूँगी ।

इन्द्रजीतसिंह—तो बस कह चलो, अब देर काहे की है ? पहले यह बताओ कि तुम्हारे माँ-बाप कहाँ हैं और यह सरजमीन किस इलाके में हैं जिसके अन्दर मैं बेहोश करके लाया गया ?

माधवी—यह इलाका गयाजी का है, यहाँ के राजा की मैं लड़की हूँ, इस समय मैं खुद मालिक हूँ, माँ-बाप को मरे पाँच वर्ष हो गये ।

इन्द्रजीतसिंह—ओफ-ओह, तो मैं गयाजी के इलाके में आ पहुँचा ! (कुछ सोच कर) तो तुम मेरे लिए चुनार गई थीं ?

माधवी—जी हाँ, मैं चुनार गई थी और यह अँगूठी, जो आपके हाथ में है, सौदागर की मार्फत मैंने ही आपके पास भेजी थी ।

इन्द्रजीतसिंह—हाँ ठीक है । तो मालूम पड़ता है, किशोरी भी तुम्हारा ही नाम है ?

किशोरी के नाम ने माधवी को चौंका दिया और घबराहट में डाल दिया । मालूम हुआ जैसे उसकी छाती में किसी ने बड़े जोर से मुक्का मारा हो । फौरन उसका खयाल उस सुरंग पर गया जिसके अन्दर से गीले कपड़े पहने हुए इन्द्रजीतसिंह निकले थे । वह सोचने लगी, "इनका उस सुरंग के अन्दर जाना बेसबब नहीं था, या तो कोई मेरा दुश्मन आ पहुँचा या फिर मेरी सखियों में से किसी ने भंडा फोड़ा ।" उसी वक्त से इन्द्रजीतसिंह का खौफ भी उसके कलेजे में बैठ गया और वह इतना घबराई कि किसी तरह अपने को सम्हाल न सकी, बहाना करके उनके पास से उठ खड़ी हुई और बाहर दालान में जाकर टहलने लगी ।

इन्द्रजीतसिंह भी चेहरे के चढ़ाव-उतार से उसके चित्त का भाव समझ गये, और बहाना करके बाहर जाते समय उसे रोकना मुनासिब न समझ कर चुप रहे ।

आधे घण्टे तक माधवी उस दालान में टहलती रही, जब उसका जी कुछ ठिकाने हुआ तब उसने टहलना बन्द किया और एक दूसरे कमरे में चली गई जिसमें उसकी दो सखियों का डेरा था जिन्हें वह जान से ज्यादा मानती थी और जिनका बहुत कुछ भरोसा भी रखती थी । ये दोनों सखियाँ भी जिनका नाम ललिता और तिलोत्तमा था उसे बहुत चाहती थीं और ऐयारी विद्या को भी अच्छी तरह जानती थीं ।

माधवी को कुसमय आते देख उसकी दोनों सखियाँ जो इस वक्त पलंग पर लेटी हुई कुछ बातें कर रही थीं, घबराकर उठ बैठीं और तिलोत्तमा ने आगे बढ़ कर पूछा,

"बहिन, क्या है जो इस वक्त यहाँ आई हो? तुम्हारे चेहरे पर तरद्दुद की निशानी पाई जाती है!"

माधवी—क्या कहूँ बहिन, इस समय वह बात हुई जिसकी कभी उम्मीद न थी!

ललिता—सो क्या, कुछ कहो तो!

माधवी—चलो बैठो, कहती हूँ, इसीलिए तो आई हूँ।

बैठने के बाद कुछ देर तक तो माधवी चुप रही, इसके बाद इन्द्रजीतसिंह से जो कुछ बातचीत हुई थी कहकर बोली, "इसमें कोई शक नही कि किशोरी का कोई दूत यहाँ आ पहुँचा और उसी ने यह सब भेद खोला है। मैं तो उसी समय खटकी थी जब उनको गीले कपड़े पहने सुरंग के मुँह पर देखा था। बड़ी ही मुश्किल हुई, मैं इनको यहाँ से बाहर अपने महल में भी नहीं ले जा सकती, क्योंकि वह चाण्डाल सुनेगा तो पूरी दुर्गत कर डालेगा, और मैं उस पर किसी तरह का दबाव भी नहीं डाल सकती, क्योंकि राज्य का काम बिल्कुल उसी के हाथ में है, जब चाहे चौपट कर डाले! जब राज्य ही नष्ट हुआ तो फिर यह सुख कहाँ? अभी तक तो इन्द्रजीतसिंह का हाल उसे बिल्कुल नहीं मालूम है मगर अब क्या होगा सो नहीं कह सकती!"

माधवी घण्टे भर तक अपनी चालाक सखियों से राय मिलाती रही, आखिर जो कुछ करना था उसे निश्चय कर वहाँ से उठी और उस कमरे में पहुँची जिसमें इन्द्रजीतसिंह को छोड़ आई थी।

जब तक माधवी अपनी सखियों के साथ बैठी बातचीत करती रही, तब तक हमारे इन्द्रजीत सिंह भी अपने ध्यान में डूबे रहे। अब माधवी के साथ उन्हें कैसा बर्ताव करना चाहिए और किस चालाकी से अपना पल्ला छुड़ाना चाहिए सो सब उन्होंने सोच लिया और उसी ढंग पर चलने लगे।

जब माधवी इन्द्रजीत के पास आई तो उन्होंने पूछा, "क्यों, एकदम घबड़ा कर कहाँ चली गई थीं?"

माधवी—न मालूम क्यों जी मिचला गया था, इसीलिए दौड़ी चली गई। कुछ गरमी भी मालूम होने लगी, जाकर एक कै की, तब होश ठिकाने हुए।

इन्द्रजीतसिंह—अब तबीयत कैसी है?

माधवी—अब तो अच्छी है।

इसके बाद इन्द्रजीतसिंह ने कुछ छेड़-छाड़ न कीं और हंसी-खुशी में दिन बिता दिया, क्योंकि जो कुछ करना था वह तो दिल में था। जाहिर में तकरार कर माधवी के दिल में शक पैदा करना मुनासिब न समझा।

माधवी का तो मामूल ही था कि वह शाम को चिराग जले बाद इन्द्रजीतसिंह से पूछ कर दो घण्टे के लिए न मालूम किस राह से कहीं जाया करती थी। आज भी अपने वक्त पर उसने जाने का इरादा किया और इन्द्रजीतसिंह से छुट्टी माँगी।

इन्द्रजीतसिंह—न मालूम क्यों तुमसे कुछ ऐसी मोहब्बत हो गई है कि एक पल को भी आँखों के सामने से दूर जाने देने को जी नहीं चाहता। मुझे उम्मीद है कि तुम मेरी बात मान लोगी और कहीं जाने का इरादा न करोगी

माधवी—(खुश होकर) शुक्र है कि आपको मेरा इतना ध्यान है। अगर ऐसी मर्जी है तो मैं बहुत जल्द लौट आऊँगी !

इन्द्रजीतसिंह—आज तो नहीं जाने देंगे। अहा, देखो कैसी घटा उठी आ रही है, वाह, इस समय भी तुम्हारे जी में कुछ रस नहीं पैदा होता !

इस समय इन्द्रजीतसिंह ने दो-एक बातें जिस ढंग से माधवी से कीं इसके पहले नहीं की थी इसलिए उसके जी की कली खिली जाती थी, मगर वह ऐसे फेर में पड़ी हुई थी कि जी ही जानता होगा, न तो इन्द्रजीतसिंह को नाखुश करना चाहती थी और न अपने मामूली काम में ही बाधा डालने की ताकत रखती थी। आखिर कुछ सोच-विचार कर इस समय इन्द्रजीतसिंह का हुक्म मानना ही उसने मुनासिब समझा और हँसी-खुशी में दिल बहलाया। आज चारपाई पर लेटे हुए इन्द्रजीतसिंह के पास रह कर उनको अपने जाल में फँसाने के लिए उसने क्या-क्या काम किए, इसे हम अपनी सीधी-सादी लेखनी से लिखना पसन्द नहीं करते, हमारे मनचले पाठक बिना समझे भी न रहेंगे। माधवी को इस बात का बिल्कुल खयाल न था कि शादी होने पर ही किसी से हँसान-बोलना मुनासिब है। वह जी का आ जाना ही शादी समझती थी। चाहे वह अभी तक कुँआरी ही क्यों न हो मगर मेरा जी नहीं चाहता कि मैं उसे कुँआरी लिखूं, क्योंकि उसकी चाल-चलन ठीक न थी। यह सभी कोई जानते हैं कि खराब चाल-चलन रहने का नतीजा बहुत बुरा होता है मगर माधवी के दिल में इसका गुमान भी न था।

इन्द्रजीतसिंह के रोकने से माधवी अपने मामूली तौर पर जहाँ वह रोज जाती थी आज न गई मगर इस सबब से आज उसका जी बेचैन था। आधी रात के बाद जब इन्द्रजीतसिंह गहरी नींद में सो रहे थे, वह अपनी चारपाई से उठी और जहाँ रोज जाती थी चली गई, हाँ आने में उसे आज बहुत देर लगी। इसी बीच में इन्द्रजीतसिंह की आँख खुली और माधवी का पलंग खाली देखकर उन्हें निश्चय हो गया कि आज भी वह अपने मामूली ठिकाने पर जरूर गई।

वह कौन ऐसी जगह है जहाँ बिना गये माधवी का जी नहीं मानता और ऐसा करने से वह एक दिन भी अपने को क्यों नहीं रोक सकती? इसी सोच-विचार में इन्द्रजीतसिंह को फिर नींद न आई और वह बराबर जागते ही रह गये। जब माधवी आई तब वह जाग रहे थे, मगर इस तरह खुर्राटे लेने लगे कि माधवी को उनके जागते रहने का जरा भी गुमान न हुआ।

इसी सोच-विचार और दाँव-घात में कई दिन और बीत गये और इन्द्रजीतसिंह ने उसका शाम का जाना बिल्कुल रोक दिया। वह अब भी आधी रात को बराबर जाया करती और सुबह होने के पहले ही लौट आती।

एक दिन रात को इन्द्रजीतसिंह खूब होशियार रहे और किसी तरह अपनी आँखों में नींद को न आने दिया, एक बारीक कपड़े से मुंह ढंके चारपाई पर लेटे धीरे-धीरे खुर्राटे लेते रहे।

आधी रात के बाद माधवी अपने पलंग पर से उठी और धीरे-धीरे इन्द्रजीतसिंह के पास आकर कुछ देर तक देखती रही। जब उसे निश्चय हो गया कि वह सो रहे हैं तब

उसने अपने आँचल के साथ बँधी ताली से एक आलमारी खोली और उसमें से एक लम्बी चाभी निकाल फिर इन्द्रजीत के पास आई तथा कुछ देर तक खड़ी रह कर वह सो रहे हैं इस बात का निश्चय कर लिया। इसके बाद उसने वह शमादान गुलकर दिया जो एक तरफ खूबसूरत चौकी के ऊपर जल रहा था।

माधवी की यह सब कार्रवाई इन्द्रजीतसिंह देख रहे थे। जब उसने शमादान गुल किया और कमरे के बाहर जाने लगी वह अपनी चारपाई से उठ खड़े हुए और दबे कदम तथा अपने को हर तरह से छिपाये हुए उसके पीछे रवाना हुए।

सोने वाले कमरे से बाहर निकल माधवी एक दूसरी कोठरी के पास पहुँची और उसी चाभी से जो उसने आलमारी में से निकाली थी उस कोठरी का ताला खोला, मगर अन्दर जाकर फिर बन्द कर लिया। कुँअर इन्द्रजीतसिंह इससे ज्यादा कुछ न देख सके और अफसोस करते हुए उसी कमरे की तरफ लौटे जिसमें उनका पलंग था।

अभी कमरे के दरवाजे तक पहुँचे भी न थे कि पीछे से किसी ने उनके मोढ़े पर हाथ रक्खा। वे चौंके और पीछे फिर कर देखने लगे। एक औरत नजर पड़ी मगर उसे किसी तरह पहचान न सके। उस औरत ने हाथ के इशारे से उन्हें मैदान की तरफ चलने के लिए कहा और इन्द्रजीतसिंह भी बेखटके उसके पीछे मैदान में दूर तक चले गये। वह औरत एक जगह खड़ी हो गई और बोली, "क्या तुम मुझे पहचान सकते हो?" इसके जवाब में इन्द्रजीतसिंह ने कहा, "नहीं, तुम्हारी सी काली औरत तो आज तक मैंने देखी ही नहीं!"

समय अच्छा था, आसमान पर बादल के टुकड़े इधर-उधर घूम रहे थे, चन्द्रमा निकला हुआ था जो कभी-कभी बादलों में छिप जाता और थोड़ी ही देर में फिर साफ दिखाई देता था। वह औरत बहुत ही काली थी और उसके कपड़े भी गीले थे। इन्द्रजीत सिंह उसे पहचान न सके, तब उसने अपना बाजू खोला और एक जख्म का दाग उन्हें दिखा कर फिर पूछा, "क्या अब भी तुम मुझे नहीं पहचान सकते?"

इन्द्रजीतसिंह—(खुश होकर) क्या मैं तुम्हें चाची कहकर पुकार सकता हूँ?

औरत—हाँ, बेशक पुकार सकते हो।

इन्द्रजीतसिंह—अब मेरी जान बची, अब मैं समझा कि यहाँ से निकल सकूँगा।

औरत—अब तो तुम यहाँ से बखूबी निकल जा सकते हो क्योंकि जिस राह से माधवी जाती है वह तुमने देख ही लिया है और अब उस जगह को भी बखूबी जान गये होगे जहाँ वह ताली रखती है, मगर खाली निकल भागने में मजा नहीं है। मैं चाहती हूँ कि इसके साथ ही कुछ फायदा भी हो। आखिर मेरा यहाँ आना ही किस काम का होगा और उस मेहनत का नतीजा भी क्या निकलेगा जो तुम्हारा पता लगाने के लिए हम लोगों ने की है? सिवाय इसके तुम यह भी क्यों कर जान सकते हो कि माधवी कहाँ जाती है या क्या करती है?

इन्द्रजीतसिंह—हाँ बेशक, इस तरह तो सिवाय निकल भागने के और कोई फायदा नहीं हो सकता, फिर जो हुक्म करो, मैं तैयार हूँ।

औरत—जब माधवी उस राह से बाहर जाय, तो उसके पीछे हो जाने से उसका

सब हाल मालूम होगा और हमारा काम भी निकलेगा।

इन्द्रजीतसिंह—मगर यह कैसे हो सकेगा ? वह तो कोठरी के अन्दर जाते ही ताला बन्द कर लेती है।

औरत—हाँ सो ठीक है, मगर तुमने देखा होगा कि उस दरवाजे के बीचोंबीच में ताला जड़ा है जिसे खोल कर वह अन्दर गई और फिर उसी ताले को भीतर से बन्द कर लिया।

इन्द्रजीतसिंह—मैंने अच्छी तरह खयाल नहीं किया।

औरत—मैं बखूबी देख चुकी हूँ, उस ताले में बाहर-भीतर दोनों तरफ से ताली लगती है।

इन्द्रजीतसिंह—खैर, इससे मतलब ?

औरत—मतलब यह है कि अगर इसी तरह की एक ताली हमारे पास भी हो, तो उसके पीछे जाने का अच्छा मौका मिले।

इन्द्रजीतसिंह—अगर ऐसा हो तो क्या बात !

औरत—यह कोई बड़ी बात नहीं है, जहाँ पर वह ताली रखती है वह जगह तो तुम्हें मालूम ही होगी ?

इन्द्रजीतसिंह—हाँ, मालूम है।

औरत—बस तो मुझे वह जगह बता दो और तुम आराम करो। मैं कल आकर उस ताली का साँचा ले जाऊँगी और परसों उसी तरह की दूसरी ताली बना लाऊँगी।

जहाँ ताली रहती थी उस जगह का पता पूछ कर वह काली औरत चली गई और इन्द्रजीतसिंह अपने पलंग पर जा कर सो रहे।

14

इन्द्रजीतसिंह ने दूसरे दिन पुनः मामूली समय पर माधवी को जाने नहीं दिया, आधी रात तक हँसी-दिल्लगी ही में काटी। इसके बाद दोनों अपने-अपने पलंग पर सो रहे। कुमार को तो खुटका लगा ही हुआ था कि आज वह काली औरत आवेगी इसलिए उन्हें नींद न आई, बारीक चादर से मुँह ढाँके पड़े रहे, मगर माधवी थोड़ी ही देर में सो गई।

वह काली औरत भी अपने मौके पर आ पहुँची। पहले तो उसने दरवाजे पर खड़े होकर झाँका, जब सन्नाटा मालूम हुआ तो अन्दर चली आई और दरवाजा धीरे-से बन्द कर लिया। इन्द्रजीतसिंह उठ बैठे। उसने अपने मुँह पर उँगली रख चुप रहने का इशारा किया और माधवी के पास पहुँच कर उसे देखा। मालूम हुआ कि वह अच्छी तरह सो रही है।

काली औरत ने अपने बटुए में से बेहोशी की बुकनी निकाली और धीरे से माधवी

को सुँघा दिया । थोड़ी देर तक खड़ी रहने के बाद माधवी की नब्ज देखी, जब विश्वास हो गया कि वह बेहोश हो गई तब उसके आँचल ले ताली खोल ली और आलमारी में से सुरंग (जिस राह से माधवी आती-जाती थी) की ताली निकाल मोम पर उसका साँचा लिया और फिर उसी तरह ताली अलमारी में रख ताला बन्द कर अलमारी की ताली पुनः माधवी के आँचल में बाँध इन्द्रजीतसिंह के पास आकर बोली, "मैं साँचा ले चुकी, अब जाती हूँ, कल दूसरी ताली बना कर लाऊँगी, तुम माधवी को रात भर इसी तरह बेहोश पड़ी रहने दो । आज वह अपने ठिकाने न जा सकी, इसीलिए सवेरे देखना कैसा घबराती है।"

सवेरे को कुछ दिन चढ़े माधवी की आँख खुली, घबरा कर उठ बैठी। उसने अपने दिल का भाव बहुत-कुछ छिपाया मगर उसके चेहरे पर बदहवासी बनी रही जिससे इन्द्रजीतसिंह समझ गए कि रात इसकी आँख न खुली और मामूली जगह पर न जा सकी इसका इसे बहुत रंज है। दूसरे दिन आधी रात बीतने पर इन्द्रजीतसिंह को सोता समझ माधवी अपने पलंग पर से उठी, शमादान बुझा कर आलमारी में से ताली निकाली और कमरे के बाहर हो उसी कोठरी के पास पहुँची, ताला खोल अन्दर गई और भीतर से फिर ताला बन्द कर लिया। इन्द्रजीतसिंह भी छिपे हुए माधवी के साथ ही साथ कमरे के बाहर निकले थे, जब वह कोठरी के अन्दर चली गई तो यह इधर-उधर देखने लगे, उस काली औरत को भी पास ही मौजूद पाया।

माधवी के जाने के आधी घड़ी बाद काली औरत ने उसी नई ताली से कोठरी का दरवाजा खोला जो बमूजिब साँचे के आज वह बना कर लाई थी। इन्द्रजीतसिंह को साथ ले अन्दर जाकर फिर वह ताला बन्द कर दिया। भीतर बिल्कुल अँधेरा था इसलिए काली औरत को अपने बटुए से सामान निकाल मोमबत्ती जलानी पड़ी, जिससे मालूम हुआ कि इस छोटी-सी कोठरी में केवल बीस-पचीस सीढ़ियाँ नीचे उतरने के लिए बनी हैं, अगर बिना रोशनी किए ये दोनों आगे बढ़ते तो बेशक नीचे गिर कर अपने सिर मुँह या पैर से हाथ धोते।

दोनों नीचे उतरे, वहाँ एक बन्द दरवाजा और मिला, वह भी उसी ताली से खुल गया। अब एक बहुत लम्बी सुरंग में दूर तक जाने की नौबत पहुँची। गौर करने से साफ मालूम होता था कि यह सुरंग पहाड़ी के नीचे-नीचे तैयार की गई है, क्योंकि चारों तरफ सिवाय पत्थर के ईंट, चूना या लकड़ी दिखाई नहीं पड़ती थी। यह सुरंग अन्दाज में दो सौ गज लम्बी होगी। इसे तै करने के बाद फिर बन्द दरवाजा मिला। उसे खोलने पर यहाँ भी ऊपर चढ़ने के लिए वैसी ही सीढ़ियाँ मिलीं जैसी शुरू में पहली कोठरी खोलने पर मिली थीं। काली औरत समझ गई कि अब यह सुरंग खतम हो गई और इस कोठरी का दरवाजा खुलने से हम लोग जरूर किसी मकान या कमरे में पहुँचेंगे इसलिए उसने कोठरी को अच्छी तरह देख-भालकर मोमबत्ती गुल कर दी।

हम ऊपर लिख आये हैं और फिर याद दिलाते हैं कि सुरंग में जितने दरवाजे हैं सभी में इसी किस्म के ताले लगे हैं जिनमें बाहर-भीतर दोनों तरफ से चाबी लगती है, इस हिसाब से ताला लगाने का सूराख इस पार से उस पार तक ठहरा, अगर दरवाजे

के उस तरफ अँधेरा न हो तो उस सूराख में आँख लगा कर उधर की चीज बखूबी देखने में आ सकती है।

जब काली औरत मोमबत्ती गुल कर चुकी तो उसी ताली के सूराख से आती हुई एक बारीक रोशनी कोठरी के अन्दर मालूम पड़ी। उस ऐयारा ने सूराख में आँख लगा के देखा, एक बहुत बड़ा आलीशान कमरा बड़े तकल्लुफ से सजा हुआ नजर पड़ा, उसी कमरे में वेशकीमत मसहरी पर एक अधेड़ आदमी के पास बैठी कुछ बातचीत और हँसी-दिल्लगी करती हुई माधवी भी दिखाई पड़ी। अब विश्वास हो गया कि इसी से मिलने के लिए माधवी रोज आया करती है। इस मर्द में किसी तरह की खूबसूरती न थी तिस पर भी माधवी न मालूम इसकी किस खूबी पर जी-जान से मर रही थी और यहाँ आने में अगर इन्द्रजीतसिंह विघ्न डालते थे तो क्यों इतना परेशान हो जाती थी।

उस काली औरत ने इन्द्रजीतसिंह को भी उधर का हाल देखने के लिए कहा। कुमार बहुत देर तक देखते रहे। उन दोनों में क्या बातचीत हो रही थी, सो तो मालूम न हुआ मगर उनके हाव-भाव में मुहब्बत की निशानी पाई जाती थी। थोड़ी देर के बाद दोनों पलंग पर सो रहे। उसी समय कुँअर इन्द्रजीतसिंह ने चाहा कि ताला खोल कर उस कमरे में पहुँचें और दोनों नालायकों को कुछ सजा दें, मगर काली औरत ने ऐसा करने से उन्हें रोका और कहा, "खबरदार, ऐसा इरादा भी न करना, नहीं तो हमारा बना-वनाया खेल बिगड़ जायेगा और बड़े-बड़े हौसलों के पहाड़ मिट्टी में मिल जायेंगे, बस, इस समय वापस चलने के और कुछ मुनासिब नहीं है।

काली औरत ने जो कुछ कहा, लाचार इन्द्रजीतसिंह को मानना और वहाँ से लौटना ही पड़ा। उसी तरह ताला खोलते और बन्द करते, बराबर चले आये और उस कमरे के दरवाजे पर पहुँचे, जिसमें इन्द्रजीतसिंह सोया करते थे। कमरे के अन्दर न जाकर काली औरत इन्द्रजीतसिंह को मैदान में ले गई और नहर के किनारे पर स्थित पत्थर की चट्टान पर बैठने के बाद दोनों में यों बातचीत होने लगी--

इन्द्रजीतसिंह—तुमने उस कमरे में जाने से व्यर्थ ही मुझे रोक दिया।

औरत—ऐसा करने के क्या फायदा होता? यह कोई गरीब कंगाल का घर नहीं है। बल्कि ऐसे की अमलदारी है, जिसके यहाँ हजारों बहादुर और एक-से-एक लड़ाके मौजूद हैं, क्या बिना गिरफ्तार हुए तुम निकल जाते? कभी नहीं। तुम्हारा यह सोचना भी ठीक नहीं है कि जिस राह से मैं आती-जाती हूँ उसी राह से तुम भी इस सरजमीन के बाहर हो जाओगे क्योंकि वह राह सिर्फ हम लोगों के आने-जाने लायक है, तुम उससे किसी तरह नहीं जा सकते फिर जान-बूझ। कर अपने को आफत में फँसाना कौन बुद्धिमानी थी!

इन्द्रजीतसिंह—क्या जिस राह से तुम आती-जाती हो, उससे मैं नहीं जा सकता?

औरत—कभी नहीं, इसका खयाल भी न करना।

इन्द्रजीतसिंह—सो क्यों?

औरत—इसका सबब भी जल्दी ही मालूम हो जायेगा।

इन्द्रजीतसिंह—खैर, तो अब क्या करना चाहिए?

औरत—अब तुम्हें सब्र करके दस-पन्द्रह दिन और यहीं रहना मुनासिब है।

इन्द्रजीतसिंह—अब मैं किस तरह उस बदकारा के साथ रह सकूंगा ?

औरत—जिस तरह भी हो सके।

इन्द्रजीतसिंह—खैर, फिर इसके बाद क्या होगा ?

औरत– इसके बाद यह होगा कि तुम सहज ही में सिर्फ इस खोह के बाहर ही न हो जाओगे, बल्कि एकदम से यहाँ का राज्य ही तुम्हारे कब्जे में आ जायेगा।

इन्द्रजीतसिंह—क्या वह कोई राजा था, जिसके पास माधवी बैठी थी ?

औरत—नहीं, यह राज्य माधवी का है और वह इसका दीवान था।

इन्द्रजीतसिंह—माधवी तो अपने राज्य को कुछ भी नहीं देखती !

औरत—अगर वह इस लायक होती तो दीवान की खुशामद क्यों करती !

इन्द्रजीतसिंह—इस हिसाब से तो दीवान ही को राजा कहना चाहिए।

औरत—बेशक !

इन्द्रजीतसिंह—खैर, अब तुम क्या करोगी ?

औरत—इसके बताने की अभी कोई जरूरत नहीं, दस-बारह दिन बाद मैं तुमसे मिलूंगी और जो कुछ इतने दिनों में कर सकूंगी, उसका हाल कहूँगी। बस, अब मैं जाती हूँ। अपने दिल को जिस तरह हो सके, सम्हालो और माधवी पर किसी तरह यह मत जाहिर होने दो कि उसका भेद तुम पर खुल गया या तुम उससे कुछ रंज हो, इसके बाद देखना कि इतना बड़ा राज्य कैसे सहज ही में हाथ लगता है जिसका मिलना हजारों सिर कटने पर भी मुश्किल है।

इन्द्रजीतसिंह—खैर, यह तमाशा भी जरूर ही देखने लायक होगा।

औरत—अगर बन पड़ा तो इस वायदे के बीच में एक-दो दफे आकर तुम्हारी सुध ले जाऊँगी।

इन्द्रजीतसिंह—जहाँ तक हो सके, जरूर आना।

इसके बाद वह काली औरत चली गई और इन्द्रजीतसिंह अपने कमरे में आकर सो रहे।

पाठक समझते होंगे कि इस काली औरत या इन्द्रजीतसिंह ने जो कुछ किया या कहा-सुना, किसीको मालूम नहीं हुआ, मगर नहीं, वह भेद उसी वक्त खुल गया और काली औरत के काम में बाधा डालने वाला भी तभी पैदा हो गया। बल्कि, उसने उसी वक्त से छिपे-छिपे अपनी कार्रवाई भी शुरू कर दी, जिसका हाल माधवी तक को मालूम न हो सका।

15

जब इस जगह थोड़ा-सा हाल इस राज्य का और साथ ही इसके माधवी का भी लिख देना जरूरी है।

किशोरी की माँ अर्थात् शिवदत्त की रानी दो बहिनें थीं। एक जिसका नाम कलावती था शिवदत्त के साथ ब्याही थी, और दूसरी मायावती गया के राजा चन्द्रदत्त से ब्याही थी। इसी मायावती की लड़की यह माधवी थी जिसका हाल हम ऊपर लिख आये हैं।

माधवी को दो वर्ष की छोड़ कर उसकी माँ मर गई थी, मगर माधवी का बाप चन्द्रदत्त होशियार होने पर माधवी को गद्दी देकर मरा था। अब आप समझ गये होंगे कि माधवी और किशोरी दोनों आपस में मौसेरी बहिनें थीं।

माधवी का बाप चन्द्रदत्त बहुत ही शौकीन और ऐयाश आदमी था। अपनी रानी को जान से ज्यादा मानता था। खास राजधानी गयाजी छोड़ कर प्रायः राजगृह में रहा करता था जो गया से दो मंजिल पर एक बड़ा भारी मशहूर तीर्थ है। यह दिलचस्प और खुशनुमा पहाड़ी उसे कुछ ऐसी भायी कि साल में दस महीने इसी जगह रहा करता था। एक आलीशान मकान भी बनवा लिया। यह खुशनुमा और दिलचस्प जमीन, जिसमें कुमार इन्द्रजीतसिंह बेबस पड़े हैं कुदरती तौर पर पहले ही की बनी हुई थी मगर इसमें आने-जाने का रास्ता और यह मकान चन्द्रदत्त ही ने बनवाया था।

माधवी के माँ-बाप दोनों ही शौकीन थे। माधवी को अच्छी शिक्षा देने का उन लोगों को जरा भी ध्यान न था। वह दिन-रात लाड़-प्यार ही में पला करती थी और एक खूबसूरत और चंचल दाई की गोद में रह कर अच्छी बातों के बदले हाव-भाव ही सीखने में खुश रहती थी। इसी सबब से इसका मिजाज लड़कपन ही से खराब हो गया था। बच्चों की तालीम पर यदि उनके माँ-बाप ध्यान न दे सकें तो मुनासिब है कि उन्हें किसी ज्यादा उम्र वाली और नेकचलन दाई की गोद में दे दें, मगर माधवी के माँ-बाप को इसका कुछ भी खयाल न था और आखिर इसका नतीजा बहुत ही बुरा निकला।

माधवी के समय में इस राज्य में तीन आदमी मुखिया थे, बल्कि यों कहना चाहिए कि इस राज्य का आन्तद ये तीन ही ले रहे थे और तीनों दोस्त एक-दिल हो रहे थे। इनमें से एक तो दीवान अग्निदत्त था, दूसरा कुबेरसिंह सेनापति और तीसरा धर्मसिंह जो शहर की कोतवाली करता था।

अब हम अपने किस्से की तरफ झुकते हैं और उस तालाब पर पहुँचते हैं जिसमें एक नौजवान औरत को पकड़ने के लिए योगिनी और वनचरी कूदी थीं। आज इस तालाब पर हम अपने कई ऐयारों को देखते हैं जो आपस में बातचीत और सलाह करके कोई भारी आफत मचाने की तरकीब जमा रहे हैं।

पण्डित बद्रीनाथ, भैरोंसिंह और तारासिंह तालाब के ऊपर पत्थर के चबूतरे पर बैठे यों बातचीत कर रहे हैं—

भैरोंसिंह—कुमार को यहाँ से निकाल ले जाना तो कोई बड़ी बात नहीं है।

तारा—मगर उन्हें भी तो कुछ सजा देनी चाहिए जिनकी बदौलत कुमार इतने दिनों से तकलीफ उठा रहे हैं।

भैरोंसिंह—जरूर, बिना सजा दिए जी कब मानेगा।

बद्रीनाथ—जहाँ तक हम समझते हैं, कल वाली राय बहुत अच्छी है।

भैरोसिंह—उससे बढ़ कर कोई राय नहीं हो सकती। ये लोग भी क्या कहेंगे कि किसी से काम पड़ा था।

बद्रीनाथ—यहाँ तो बस ललिता और तिलोत्तमा ही शैतानी की जड़ हैं। सुनते हैं उनकी ऐयारी भी बहुत बढ़ी-चढ़ी है।

तारा—पहले उन्हीं दोनों की खबर ली जायेगी।

भैरोसिंह—नहीं-नहीं, इसकी कोई जरूरत नहीं। उन्हें गिरफ्तार किये बिना ही हमारा काम चल जायेगा, व्यर्थ कई दिन बर्बाद करने का मौका नहीं है।

तारा—हाँ, यह ठीक है। हमें उनकी इतनी जरूरत भी नहीं है और क्या ठिकाना जब तक हम लोग अपना काम करें तब तक वे चाची के फंदे में आ फँसें।

भैरोंसिंह—बेशक ऐसा ही होगा, क्योंकि उन्होंने कहा भी था कि तुम लोग इस काम को करो ,तब तक बन पड़ेगा तो मैं ललिता और तिलोत्तमा को भी फँसा लूँगी।

बद्रीनाथ—खैर, जो होगा, देखा जायेगा। अब हम लोग अपने काम में क्यों देर कर रहे हैं ?

भैरोंसिंह—देर की जरूरत क्या है उठिए, हाँ, पहले अपना-अपना शिकार बाँट लीजिए।

बद्रीनाथ—दीवान साहब को मेरे लिए छोड़िए।

भैरोंसिंह—हाँ, आपका-उनका वजन बराबर है। अच्छा, मैं सेनापति की खबर लूँगा।

तारा—-तो वह चाण्डाल कोतवाल मेरे बाँटे पड़ा ! खैर, यही सही।

भैरोंसिंह—अच्छा, अब यहाँ से चलो।

ये तीनों ऐयार वहाँ से उठे ही थे कि दाहिनी तरफ से छींक की आवाज आई।

बद्रीनाथ—धत्तेरे की, क्या तेरे छींकने का कोई दूसरा समय न था ?

तारा—क्या आप छींक से डर गए ?

बद्रीनाज—मैं छींक से नहीं डरा, मगर छींकने वाले से जी खटकता है।

भैरोंसिंह—हमारे काम में विघ्न पड़ता दिखाई देता है।

बद्रीनाथ—इस दुष्ट को पकड़ना चाहिए, बेशक यह चुपके-चुपके हमारी बातें सुनता रहा।

तारा—छींक नहीं, बदमाशी है !

बद्रीनाथ ने इधर-उधर बहुत ढूँढ़ा, मगर छींकने वाले का पता न लगा।

लाचार तरद्दुद ही में तीनों वहाँ से रवाना हुए।

चन्द्रकान्ता सन्तति

दूसरा भाग

1

घण्टा भर दिन बाकी है। किशोरी अपने उसी बाग में, जिसका कुछ हाल ऊपर लिख चुके हैं, कमरे की छत पर सात-आठ सखियों के बीच में उदास तकिए के सहारे बैठी आसमान की तरफ देख रही है। सुगन्धित हवा के झोंके उसे खुश करना चाहते हैं मगर वह अपनी धुन में ऐसी उलझी हुई है कि दीन-दुनिया की खबर नहीं है। आसमान पर पश्चिम की तरफ लालिमा छाई है। श्याम रंग के बादल ऊपर की तरफ उठ रहे हैं, जिनमें तरह-तरह की सूरतें बात-की-बात में पैदा होतीं और देखते-देखते बदल कर मिट जाती हैं। अभी यह बादल का टुकड़ा खण्ड-पर्वत की तरह दिखाई देता था, अभी उसके ऊपर शेर की मूरत नजर आने लगी, लीजिए, शेर की गर्दन इतनी बढ़ी कि साफ ऊँट की शक्ल बन गई और लहमे भर में हाथी का रूप धर सूंड़ दिखाने लगी। उसी के पीछे हाथ में बन्दूक लिए एक सिपाही की शक्ल नजर आई, लेकिन यह बन्दूक छोड़ने के पहले खुद ही धुंआ होकर फैल गया।

बादलों की यह ऐयारी इस समय न मालूम कितने आदमी देख-देख कर खुश होते होंगे, मगर किशोरी के दिल की धड़कन इसे देख-देख कर बढ़ती ही जाती है। कभी तो उसका सिर पहाड़-सा भारी हो जाता है, कभी माधवी बाघिन की सूरत ध्यान में आती है, कभी बाकरअली शुतुरमुहार की बदमाशी याद आती है; कभी हाथ में बन्दूक लिए हरदम जान लेने को तैयार बाप की याद तड़पा देती है।

कमला को गए कई दिन हुए, आज तक वह लौटकर नहीं आई। इस सोच ने किशोरी को और भी दुःखी कर रखा है। धीरे-धीरे शाम हो गई, सखियाँ सब पास बैठी ही रहीं, मगर सिवाय ठंडी-ठंडी साँस लेने के किशोरी ने किसी से बातचीत न की और वे सब भी दम न मार सकीं।

कुछ रात जाते-जाते बादल अच्छी तरह से घिर आये, आँधी भी चलने लगी। किशोरी छत पर से नीचे उतर आई और कमरे के अन्दर मसहरी पर जा लेटी, थोड़ी ही देर बाद कमरे के सदर दरवाजे का पर्दा हटा और कमला अपनी असली सूरत में आती दिखाई पड़ी।

कमला के न आने से किशोरी उदास हो रही थी, उसे देखते ही पलंग पर से उठी, आगे बढ़कर कमला को गले से लगा लिया और गद्दी पर अपने पास ला बैठाया, कुशल-मंगल पूछने के बाद बातचीत होने लगी—

किशोरी—कहो बहिन, तुमने इतने दिनों में क्या-क्या काम किया ? उनसे मुलाकात भी हुई या नहीं ?

कमला—मुलाकात क्यों न होती ? आखिर मैं गई थी किस लिए !

किशोरी—कुछ मेरा हालचाल भी पूछते थे ?

कमला—तुम्हारे लिए तो जान देने को तैयार हैं, क्या हाल-चाल भी न पूछेंगे ? बस, दो ही एक दिन में तुमसे मुलाकात हुआ चाहती है।

किशोरी—(खुश होकर) हाँ ! तुम्हें मेरी ही कसम, मुझसे झूठ न बोलना !

कमला—क्या तुम्हें विश्वास है कि मैं तुमसे झूठ बोलूंगी ?

किशोरी—नहीं-नहीं, मैं ऐसा नहीं समझती हूँ, लेकिन इस खयाल से कहती हूँ कि कहीं दिल्लगी न सूझी हो।

कमला—ऐसा कभी मत सोचना।

किशोरी—खैर, यह कहो कि माधवी की कैद से उन्हें छुट्टी मिली या नहीं, और अगर मिली तो क्यों कर ?

कमला—इन्द्रजीतसिंह को माधवी ने उसी पहाड़ी के बीच वाले मकान में रखा था, जिसमें वह पारसाल मुझे और तुम्हें दोनों की आँखों पर पट्टी बाँध कर ले गई थी।

किशोरी—बड़े बेढब ठिकाने छिपा रखा था।

कमला—मगर वहाँ भी उनके ऐयार लोग पहुँच गये !

किशोरी—भला वे लोग क्यों न पहुँचेंगे, हाँ, तब क्या हुआ ?

कमला—(किशोरी की सखियों और लौंडियों की तरफ देखके) तुम लोग जाओ, अपना काम करो।

किशोरी—हाँ, अभी काम नहीं है, फिर बुलावेंगे तो आना।

सखियों और लौंडियों के चले जाने पर कमला ने देर तक बातचीत करने के बाद कहा—

"माधवी का और अग्निदत्त दीवान का हाल भी चालाकी से इन्द्रजीतसिंह ने जान लिया, आजकल उनके कई ऐयार वहाँ पहुँचे हुए हैं। ताज्जुब नहीं कि दस-पाँच दिन में वे लोग उस राज्य को ही गारत कर डालें।"

किशोरी—मगर तुम तो कहती हो कि इन्द्रजीतसिंह वहाँ से छूट गये !

कमला—हाँ, इन्द्रजीतसिंह तो वहाँ से छूट गये, मगर उनके ऐयारों ने अभी तक माधवी का पीछा नहीं छोड़ा, इन्द्रजीतसिंह के छुड़ाने का बन्दोबस्त तो उनके ऐयारों ने ही किया था, मगर आखिर में मेरे ही हाथ से उन्हें छुट्टी मिली। मैं उन्हें चुनार पहुँचा कर तब यहाँ आई हूँ और जो कुछ मेरी जुबानी उन्होंने तुम्हें कहला भेजा है, उसे कहना तथा उनकी बात मानना ही मुनासिब समझती हूँ।

किशोरी—उन्होंने क्या कहा है ?

कमला—यों तो वे मेरे सामने बहुत-कुछ बक गये, मगर असल मतलब उनका यही है कि तुम चुपचाप चुनार उनके पास बहुत जल्द पहुँच जाओ।

किशोरी—(देर तक सोचकर) मैं तो अभी चुनार जाने को तैयार हूँ, मगर इस में बड़ी हँसाई होगी।

कमला—अगर तुम हँसाई का खयाल करोगी तो बस हो चुका, क्योंकि तुम्हारे माँ-बाप इन्द्रजीतसिंह के पूरे दुश्मन हो रहे हैं, जो तुम चाहती हो उसे वे खुशी से कभी मंजूर न करेंगे। आखिर जब तुम अपने मन की करोगी तभी लोग हँसेंगे, ऐसा ही है तो इन्द्रजीतसिंह का ध्यान दिल से दूर करो या फिर बदनामी कबूल करो।

किशोरी—तुम सच कहती हो। एक न एक दिन बदनामी होनी ही है, क्योंकि इन्द्रजीतसिंह को मैं किसी तरह भूल नहीं सकती। आखिर तुम्हारी क्या राय है ?

कमला—सखी, मैं तो यही कहूँगी कि अगर तुम इन्द्रजीतसिंह को नहीं भूल सकतीं तो उनसे मिलने के लिए इससे बढ़कर कोई दूसरा मौका तुम्हें न मिलेगा। चुनार में जाकर बैठी रहोगी तो कोई भी तुम्हारा कुछ बिगाड़ न सकेगा। आज कौन ऐसा है जो महाराज वीरेन्द्रसिंह से मुकाबला करने का साहस रखता हो ? तुम्हारे पिता अगर ऐसा करते हैं तो यह उनकी भूल है। आज सुरेन्द्रसिंह के खानदान का सितारा बड़ी तेजी से आसमान पर चमक रहा है और उनसे दुश्मनी का दावा करना अपने को मिट्टी में मिला देना है।

किशोरी—ठीक है, मगर इस तरह वहाँ चले जाने से इन्द्रजीतसिंह के बड़े लोग कब खुश होंगे ?

कमला—नहीं-नहीं, ऐसा मत सोचो। क्योंकि तुम्हारी और इन्द्रजीतसिंह की मुहब्बत का हाल वहाँ किसी से छिपा नहीं है। सभी लोग जानते हैं कि इन्द्रजीतसिंह तुम्हारे बिना जी नहीं सकते, फिर उन लोगों को इन्द्रजीतसिंह से कितनी मुहब्बत है यह तुम खुद जानती हो। अस्तु; ऐसी दशा में वे लोग तुम्हारे जाने से कब नाखुश हो सकते हैं। दूसरे, दुश्मन की लड़की अपने घर में आ जाने से वे लोग अपनी जीत समझेंगे। मुझे महारानी चन्द्रकान्ता ने खुद कहा था कि जिस तरह बने तुम समझा-बुझाकर किशोरी को ले आओ, बल्कि उन्होंने अपनी खास सवारी का रथ और कई लौंडी-गुलाम भी मेरे साथ भेजे हैं !

किशोरी—(चौंककर) क्या उन लोगों को अपने साथ लाई हो ?

कमला—हाँ, जब महारानी चन्द्रकान्ता की इतनी मुहब्बत तुम पर देखी, तभी तो मैं भी वहाँ चलने के लिए राय देती हूँ।

किशोरी—अगर ऐसा है तो मैं किसी तरह रुक नहीं सकती, अभी तुम्हारे साथ चली चलूंगी, मगर देखो सखी, तुम्हें बराबर मेरे साथ रहना पड़ेगा।

कमला—भला मैं कभी तुम्हारा साथ छोड़ सकती हूँ !

किशोरी—अच्छा, तो यहाँ किसी से कुछ कहना-सुनना तो है नहीं ?

कमला—किसी से कुछ कहने की जरूरत नहीं, बल्कि तुम्हारी इन सखियों और

लौंडियों को भी कुछ पता नहीं लगना चाहिए जिनको मैंने इस समय यहाँ से हटा दिया है।

किशोरी--वह रथ कहाँ खड़ा है ?

कमला—इसी बगल वाली आम की बारी में रथ और चुनार से आये हुए लौंडी, गुलाम सब मौजूद हैं।

किशोरी—खैर, चलो, देखा जायगा। राम मालिक हैं।

किशोरी को साथ ले कमला चुपके से कमरे के बाहर निकली और पेड़ों में छिपती हुई बाग से निकल कर बहुत जल्द उस आम की बारी में जा पहुँची जिसमें रथ और लौंडी-गुलामों के मौजूद रहने का पता दिया था। वहाँ किशोरी ने कई लौंडी-गुलामों और उस रथ को भी मौजूद पाया जिसमें बहुत तेज चलने वाले ऊँचे काले रंग के नागौरी बैलों की जोड़ी जुती हुई थी। किशोरी और कमला दोनों सवार हुईं और रथ तेजी के साथ रवाना हुआ।

इधर घण्टा भर समय बीत जाने पर भी जब किशोरी ने अपनी सखियों और लौंडियों को आवाज न दी तब वे लाचार होकर बिना बुलाये उस कमरे में पहुँचीं जिस में कमला और किशोरी को छोड़ गई थीं। मगर वहाँ दोनों में से किसी को मौजूद न पाया। घबरा कर इधर-उधर ढूँढ़ने लगीं, मगर कहीं पता न चला। तमाम बाग छान डाला, पर किसी की सूरत दिखाई न पड़ी। सभी में खलबली मच गई, मगर क्या हो सकता था।

आधी रात तक कोलाहल मचता रहा। उसी समय कमला भी वहाँ आ मौजूद हुई। सभी ने उसे चारों तरफ से घेर लिया और पूछा, "हमारी किशोरी कहाँ है ?"

कमला—यह क्या मामला है जो तुम लोग इस बुरी तरह घबरा रही हो ? क्या किशोरी कहीं चली गई ?

एक—चली नहीं गई तो कहाँ हैं ? तुम उन्हें कहाँ छोड़ आईं ?

कमला—क्या किशोरी को मैं अपने साथ ले गई थी, जो मुझसे पूछती हो ? वह कब से गायब है ?

एक—पहर-भर से तो हम लोग ढूँढ़ ही रही हैं ! तुम दोनों इसी कमरे में बातें कर रही थीं, हम लोगों को हट जाने के लिए कहा। फिर न मालूम क्या हुआ, कहाँ चली गईं।

कमला—बस-बस, अब मैं समझ गई। तुम लोगों ने धोखा खाया, मैं तो अभी चली ही आती हूँ। हाय, यह क्या हुआ ! बेशक दुश्मन अपना काम कर गए और हम लोगों को आफत में डाल गए। हाय, अब मैं क्या करूँ, कहाँ जाऊँ, किससे पूछूँ कि मेरी प्यारी किशोरी को कौन ले गया।

2

किशोरी खुशी-खुशी रथ पर सवार हुई और रथ खूब तेजी से जाने लगा। वह कमला भी उसके साथ थी। इन्द्रजीतसिंह के विषय में तरह-तरह की बातें कहकर उस का दिल बहलाती जाती थी। किशोरी भी बड़े प्रेम से उन बातों को सुनने में लीन हो रही थी। कभी सोचती कि जब इन्द्रजीतसिंह के सामने जाऊँगी तो किस तरह खड़ी होऊँगी, क्या कहूँगी? अगर वे यह पूछ बैठेंगे कि तुम्हें किसने बुलाया तो क्या जवाब दूँगी? नहीं-नहीं, वे ऐसा कभी न पूछेंगे, क्योंकि मुझ पर प्रेम रखते हैं। मगर उनके घर की औरतें मुझे देखकर अपने दिल में क्या कहेंगी! वे जरूर समझेंगी कि किशोरी बड़ी बेहया औरत है। इसे अपनी इज्जत और प्रतिष्ठा का कुछ भी ध्यान नहीं है। हाय, उस समय तो मेरी बड़ी ही दुर्गति होगी, जिन्दगी जंजाल हो जायगी, किसी को मुँह न दिखा सकूँगी!

ऐसी ही बातों को सोचती, कभी खुश होती, कभी इस तरह बेसमझे-बूझे चल पड़ने पर अफसोस करती थी। कृष्ण पक्ष की सप्तमी थी, अँधेरे ही में रथ के बैल बराबर दौड़े जा रहे थे। चारों तरफ से घेरकर चलने वाले सवारों के घोड़ों की टापों की बढ़ती हुई आवाज दूर-दूर तक फैल रही थी। किशोरी ने पूछा, "क्यों कमला, क्या लौंडियाँ भी घोड़ों पर ही सवार होकर साथ-साथ चल रही हैं?" जिसके जवाब में कमला सिर्फ 'जी हाँ' कहकर चुप हो रही।

अब रास्ता खराब और पथरीला आने लगा। पहियों के नीचे पत्थर के छोटे-छोटे ढोंकों के पड़ने से रथ उछलने लगा, जिसकी धमक से किशोरी के नाजुक बदन में दर्द पैदा हुआ।

किशोरी—ओफ ओह, अब तो बड़ी तकलीफ होने लगी।

कमला—थोड़ी दूर तक यहाँ रास्ता खराब है, आगे हम एक अच्छी सड़क पर जा पहुँचेंगे।

किशोरी—मालूम होता है हम लोग सीधी और साफ सड़क छोड़ किसी दूसरी ही तरफ से जा रहे हैं।

कमला—जी नहीं।

किशोरी—नहीं क्या? जरूर ऐसा ही है।

कमला—अगर ऐसा भी है तो क्या बुरा हुआ। हम लोगों की खोज में जो लोग निकलेंगे, वे हमें पा तो न सकेंगे।

किशोरी—(कुछ सोचकर) खैर जो किया, अच्छा किया, मगर रथ का पर्दा तो उठा, जरा हवा लगे और इधर-उधर की कैफियत भी देखने में आवे, रात का तो समय है।

लाचार होकर कमला ने रथ का पर्दा उठा दिया और किशोरी ताज्जुब-भरी निगाहों से दोनों तरफ देखने लगी।

अब तक तो रात अँधेरी थी, मगर अब विधाता ने किशोरी को यह बताने के लिए कि देख, तू किस बला में फँसी हुई है, तेरे रथ को चारों तरफ से घेरकर चलने वाले सवार कौन हैं, तू किस राह से जा रही है, यह पहाड़ी जंगल कैसा भयानक है—आसमान पर माहताबी जलाई। चन्द्रमा निकल आया और धीरे-धीरे ऊँचा होने लगा जिसकी रोशनी में किशोरी ने सब सामान देख लिये और एकदम चौंक उठी। चारों तरफ की भयानक पहाड़ी और जंगल ने उसका कलेजा दहला दिया। उसने उन सवारों की तरफ अच्छी तरह देखा जो रथ घेरे हुए साथ-साथ जा रहे थे। वह बखूबी समझ गई कि इन सवारों में, जैसा कि कहा गया था, कोई भी औरत नहीं, सब मर्द ही हैं। उसे निश्चय हो गया कि वह आफत में फँस गई है, और घबराहट में नीचे लिखे कई शब्द उसकी जुबान से निकल पड़े—

"चुनार तो पूरब में है, मैं दक्खिन तरफ क्यों जा रही हूँ? इन सवारों में तो एक भी लौंडी नजर नहीं आती। बेशक मुझे धोखा दिया गया। मैं निश्चय कह सकती हूँ कि मेरी प्यारी कमला कोई दूसरी ही है, अफसोस!"

रथ में बैठी हुई कमला किशोरी के मुँह से इन बातों को सुनकर होशियार हो गई और झट रथ से नीचे कूद पड़ी, साथ ही गाड़ीवान ने भी बैलों को रोका और सवारों ने बहुत पास आकर रथ को घेर लिया।

अब किशोरी को अपने धोखा खाने और आफ़त में फँस जाने का पूरा विश्वास हो गया और वह एकदम चिल्ला कर बेहोश हो गई।

3

सुबह का सुहावना समय भी बड़ा ही मजेदार होता है। जबर्दस्त भी पहले सिरे का है। क्या मजाक कि इसकी अमलदारी में कोई धूम तो मचावे, इसके आने की खबर दो घण्टे पहले ही से हो जाती है। वह देखिए, आसमान के जगमगाते हुए तारे कितनी बेचैनी और उदासी के साथ हसरत-भरी निगाहों से जमीन की तरफ देख रहे हैं जिनकी सूरत और चलाचली की बेचैनी देख बागों की सुन्दर कलियों ने भी मुस्कुराना शुरू कर दिया है, अगर यही हालत रही तो सुबह होते तक जरूर खिलखिला कर हँस पड़ेंगी।

लीजिए अब दूसरा ही रंग बदला। प्रकृति की न मालूम किस ताकत ने आसमान की स्याही को धो डाला और इसकी हुकूमत की रात बीतते देख उदास तारों को भी बिदा होने का हुक्म सुना दिया। इधर बेचैन तारों की घबराहट देख अपने हुस्न और जमाल पर भूली हुई खिलखिला कर हँसने वाली कलियों को सुबह की ठण्डी-ठण्डी हवा ने खूब ही आड़े हाथों लिया और मारे थपेड़ों के उनके उस बनाव को बिगाड़ना शुरू कर दिया जो दो ही घण्टे पहले प्रकृति की किसी लौंडी ने दुरुस्त कर दिया था।

मोतियों से ज्यादे आबदार ओस की बूंदों को बिगाड़ते और हँसती हुई कलियों

का शृंगार मिटते देख उनकी तरफदार खुशबू से न रहा गया, वह झट फूलों से अलग हो सुबह की ठण्डी हवा से उलझ पड़ी और इधर-उधर फैल धूम मचाना शुरू कर दिया। अपनी फरियाद सुनाने के लिए उन नौजवानों के दिमागों में घुस-घुस कर उन्हें उठाने की फिक्र करने लगीं जो रात भर जाग-जाग कर इस समय खूबसूरत पलंगड़ियों पर सुस्त पड़ रहे थे। जब उन्होंने कुछ न सुना और करवट बदल कर रह गये तो मालियों को जा घेरा। झट उठ बैठे और कमर कस कर उस जगह पहुँचे जहाँ फूलों और उमंग भरे हवा के झपेटों से कहा-सुनी हो रही थी। कम्बख्त छोटे लोगों का यह दिमाग कहाँ कि ऐसों का फैसला करें, बस फूलों को तोड़-तोड़ कर चंगेर भरने लगे। चलो छुट्टी हुई, न रहे बाँस न बाजे बाँसुरी। क्या अच्छा झगड़ा मिटाया है ! इसके बदले में वे बड़े-बड़े दरख्त खुश हो हवा की मदद से झुक-झुक कर मालियों को सलाम करने लगे जिनकी टहनियों में एक भी फूल दिखाई नहीं देता था। ऐसा क्यों न करें ? उनमें था ही क्या जो दूसरों को महक देते, अपनी सूरत सभी को भाती है और अपना-सा होते देख सभी खुश होते हैं।

लीजिए उन परीजमालों ने भी पलंग का पीछा छोड़ा और उठते ही आईने के मुकाबिल हो बैठीं जिनके बनाव को चाहने वालों ने रात भर में बिथोर कर रख दिया था। झटपट अपनी सम्बुली जुल्फों को सुलझा, माहताबी चेहरों को गुलाबजल से साफ कर, अलबेली चाल से अठखेलियाँ करतीं, चम्पई दुपट्टे सँभालती, रविशों पर घूमने और फूलों के मुकाबले में रुक-रुक कर पूछने लगीं कि 'कहिये, आप अच्छे या ?' हम जब जवाब न पाया तो हाथ बढ़ा तोड़ लिया और बालियों में झुमकी की जगह रख आगे बढ़ीं। गुलाब की पटरी तक पहुँची थीं कि काँटों ने आँचल पकड़ा और इशारे से कहा, "जरा ठहर जाइए, आपके इस तरह लापरवाही से जाने से उलझन होती है, और नहीं तो चार आँखें ही करती और आँसू पोंछती जाइए !"

जाने दीजिए ये सब घमण्डी हैं। हमें तो कुछ उन लोगों की कुलबुलाहट भली मालूम होती है जो सुबह होने के दो घण्टे पहले ही उठ, हाथ-मुँह धो, जरूरी कामों से छुट्टी पा बगल में धोती दबा गंगाजी की तरफ लपके जाते हैं और वहाँ पहुँच स्नान कर, भस्म का चन्दन लगा, पटरों पर बैठ संध्या करते-करते सुबह के सुहावने समय का आनन्द पतित-पावनी श्रीगंगाजी की पाप-नाशिनी तरंगों में ले रहे हैं। इधर गुप्ती में घुसी उँगलियों ने प्रेमानन्द में मग्न मनराज की आज्ञा से गिरिजापति का नाम ले एक दाना पीछे हटाया और उधर तरनतारिणी भागवती जाह्नवी की लहरें तख्तों ही से छू-छू कर दस-बीस जन्म का पाप बहा ले गईं। सुगन्धित हवा के झपेटे कहते फिरते हैं— "जरा ठहर जाइये, अर्घा न उठाइये, अभी भगवान् सूर्यदेव के दर्शन देर में होंगे, तब तक आप कमल के फूलों को खोल कर इस तरह पर श्रीगंगाजी को चढ़ाइये कि लड़ी टूटने न पावे, फिर देखिये, देवता उसे खुद-ब-खुद मालाकार बना देते हैं या नहीं !"

ये सब तो सत्पुरुषों के काम हैं जो यहाँ भी आनन्द ले रहे हैं और वहाँ भी मजा लूटेंगे। आप जरा मेरे साथ चल कर उन दो दिलजलों की सूरत देखिये जो रात भर जागते और इधर-उधर दौड़ते रहे हैं और सुबह के सुहावने समय में एक पहाड़ की चोटी पर चढ़ चारों तरफ देखते हुए सोच रहे हैं कि किधर जायँ, क्या करें ? चाहे वे

कितने ही बेचैन क्यों न हों मगर पहाड़ों से टक्कर खाते हुए सुबह की ठण्डी-ठण्डी हवा के झोंकों के डपटने और हिला कर जताने से उन छोटे-छोटे जंगली फूलों के पौधों की तरफ नजर डाल ही देते हैं जो दूर तक कतार बाँधे मस्ती से झूम रहे हैं, उन क्यारियों की तरफ ताक ही लेते हैं जिनके फूल ओस के बोझ से तंग हो टहनियाँ छोड़ पत्थर के ढोकों का सहारा ले रहे हैं, उन साखू और शीशम के पत्तों की घनघनाहट सुन ही लेते हैं जो दक्खिन से आती हुई सुगन्धित हवा को रोक, रहे-सहे जहर को चूस, गुणकारी बना उन तक आने का हुक्म देते हैं।

इन दो आदमियों में से एक तो लगभग बीस वर्ष की उम्र का बहादुर सिपाही है जो ढाल-तलवार के अलावा हाथ में तीर-कमान लिये बड़ी मुस्तैदी से खड़ा है, मगर दूसरे के बारे में हम कुछ नहीं कह सकते कि वह कौन या किस दर्जे और इज्जत का आदमी है। इसकी उम्र चाहे पचास से ज्यादे क्यों न हो मगर अभी तक इसके चेहरे पर बल का नाम-निशान नहीं है, जवानों की तरह खूबसूरत चेहरा दमक रहा है, बेशकीमत पोशाक और हरबों की तरफ खयाल करने से तो यही कहने को जी चाहता है कि किसी फौज का सेनापति है, मगर नहीं, उसका रुआबदार और गम्भीर चेहरा इशारा करता है कि यह कोई बहुत ही ऊँचे दर्जे का आदमी है जो कुछ देर खड़ा एकटक वायुकोण की तरफ देख रहा है।

सूर्य की किरणों के साथ ही साथ लाल वर्दी में बेशुमार फौजी आदमी उत्तर से दक्खिन की तरफ जाते दिखाई पड़े जिससे इस बहादुर का चेहरा जोश में आकर और भी दमक उठा और यह धीरे से बोला, "लो, हमारी फौज भी आ पहुँची !"

थोड़ी ही देर में वह फौज इस पहाड़ी के नीचे आकर रुक गई जिस पर ये दोनों खड़े थे और एक आदमी पहाड़ी के ऊपर चढ़ता हुआ दिखाई दिया जो बहुत जल्द इन दोनों के पास पहुँच कर सलाम कर खड़ा हो गया।

इस नये आये हुए आदमी की उम्र भी पचास से कम न होगी। इसके सिर और मूँछों के बाल चौथाई सुफेद हो चुके थे। कद के साथ-साथ खूबसूरत चेहरा भी कुछ लम्बा था। इसका रंग सिर्फ गोरा ही न था, बल्कि अभी तक रगों में दौड़ती हुई खून की सुर्खी इसके गालों पर अच्छी तरह उमड़ रही थी, बड़ी-बड़ी स्याह और जोश भरी आँखों में गुलाबी डोरियाँ बहुत भली मालूम होती थीं। इसकी पोशाक ज्यादे कीमत की या कामदार न थी, मगर कम दाम की भी न थी। उम्दे और मोटे स्याह मखमल की यह पोशाक इतनी चुस्त थी कि उसके अंगों की सुडौली कपड़े के ऊपर से जाहिर हो रही थी। कमर में सिर्फ एक खंजर और लपेटा हुआ कमन्द दिखाई देता था, बगल में सुर्ख मखमल का एक बटुआ भी लटक रहा था।

पाठकों को ज्यादा देर तक हैरानी में न डाल कर साफ-साफ कह देना ही पसन्द करते हैं कि यह तेजसिंह हैं और इनके पहले पहुँचे हुए दोनों आदमियों में एक राजा वीरेन्द्रसिंह और दूसरे उनके छोटे लड़के कुँअर आनन्दसिंह हैं, जिनके लिए हमें ऊपर कुछ फजूल बक जाना पड़ा।

राजा वीरेन्द्रसिंह और तेजसिंह कुछ देर तक सलाह करते रहे, इसके बाद तीनों

बहादुर पहाड़ी के नीचे उतर अपनी फौज में मिल गये और दिल खुश करने के सिवाय बहादुरों को जोश में भर देने वाले बाजे की आवाज के तालों पर एक साथ कदम रखती हुई वह फौज दक्खिन की तरफ रवाना हुई।

4

हम ऊपर लिख ही आये हैं कि माधवी के यहाँ तीन आदमी—अर्थात् दीवान अग्निदत्त, कुबेरसिंह सेनापति और धर्मसिंह कोतवाल—मुखिया थे और तीनों मिलकर माधवी के राज्य का आनन्द लेते थे।

इन तीनों में अग्निदत्त का दिन बहुत मजे में कटता था, क्योंकि एक तो वह दीवान के मर्तबे पर था, दूसरे माधवी ऐसी खूबसूरत औरत उसे मिली थी। कुबेरसिंह और धर्मसिंह इसके दिली दोस्त थे, मगर कभी-कभी जब उन दोनों को माधवी का ध्यान आ जाता तो चित्त की वृत्ति बदल जाती और जी में कहते कि 'अफसोस, माधवी मुझे न मिली।'

पहले इन दोनों को यह खबर न थी कि माधवी कैसी है। बहुत कहने-सुनने पर एक दिन दीवान साहब ने इन दोनों को माधवी को देखने का मौका दिया था। उसी दिन से इन दोनों ही के जी में माधवी की सूरत चुभ गई थी और उसके बारे में बहुत-कुछ सोचा करते थे।

आज हम आधी रात के समय दीवान अग्निदत्त को अपने सुनसान कमरे में अकेले चारपाई पर लेटे किसी सोच में डूबे हुए देखते हैं। न मालूम वह क्या सोच रहा है या किस फिक्र में पड़ा है, हाँ, एक दफे उसके मुँह से यह आवाज जरूर निकली—"कुछ समझ में नहीं आता! इसमें तो कोई सन्देह नहीं कि उसने अपना दिल खुश करने का कोई सामान वहाँ पैदा कर लिया है। तो मैं बेफिक्र क्यों बैठा हूँ? खैर पहले अपने दोस्तों से तो सलाह कर लूँ।" यह कहने के साथ ही वह चारपाई से उठ बैठा और कमरे में धीरे-धीरे टहलने लगा, आखिर उसने खूँटी से लटकती हुई अपनी तलवार उतार ली और मकान के नीचे उतर आया।

दरवाजे पर बहुत से सिपाही पहरा दे रहे थे। दीवान साहब को कहीं जाने के लिए तैयार देख ये लोग भी साथ चलने को तैयार हुए, मगर दीवान साहब के मना करने से उन लोगों को लाचार हो उसी जगह अपने काम पर मुस्तैद रहना पड़ा।

अकेले दीवान साहब वहाँ से रवाना हुए और बहुत जल्द कुबेरसिंह सेनापति के मकान पर जा पहुँचे जो इनके यहाँ से थोड़ी ही दूर पर एक सुन्दर सजे हुए मकान में बड़े ठाठ के साथ रहता था।

दीवान साहब को विश्वास था कि इस समय सेनापति अपने ऐशमहल में आनन्द से सोता होगा, वहाँ से बुलवाना पड़ेगा, मगर नहीं, दरवाजे पर पहुँचते ही पहरे वालों

से पूछने पर मालूम हुआ कि सेनापति साहब अभी तक अपने कमरे में हैं, बल्कि कोतवाल साहब भी इस समय उन्हीं के पास हैं।

अग्निदत्त यह सोचता हुआ ऊपर चढ़ गया कि आधी रात के समय कोतवाल यहाँ क्यों आया है और ये दोनों इस समय क्या सलाह-विचार कर रहे हैं। कमरे में पहुँचते ही देखा कि सिर्फ वे ही दोनों एक गद्दी पर तकिये के सहारे लेटे हुए कुछ बात कर रहे हैं जो यकायक दीवान साहब को अन्दर पैर रखते देख उठ खड़े हुए और सलाम करने के बाद सेनापति साहब ने ताज्जुब में आकर पूछा—

"यह आधी रात के समय आप घर से क्यों निकले?"

दीवान—ऐसा ही मौका आ पड़ा, लाचार सलाह करने के लिए आप दोनों से मिलने की जरूरत हुई।

कोतवाल—आइए बैठिए, कुशल तो है?

दीवान—हाँ, कुशल ही है, मगर कई खुटकों ने जी बेचैन कर रखा है।

सेनापति—सो क्या? कुछ कहिए भी तो!

दीवान—हाँ कहता हूँ, इसीलिए तो आया हूँ, मगर पहले (कोतवाल की तरफ देख कर) आप तो कहिए इस समय यहाँ कैसे पहुँचे?

कोतवाल—मैं तो यहाँ बहुत देर से हूँ, सेनापति साहब की विचित्र कहानी ने ऐसा उलझा रक्खा था कि बस क्या कहूँ। हाँ, आप अपना हाल कहिए, जी बेचैन हो रहा है।

दीवान—मेरा कोई नया हाल नहीं है, केवल माधवी के विषय में कुछ सोचने-विचारने आया हूँ।

सेनापति—माधवी के विषय में अब किस नये सोच ने आपको आ घेरा? कुछ तकरार की नौबत तो नहीं आई?

दीवान—तकरार की नौबत अभी आई तो नहीं, मगर आना चाहती है।

सेनापति—सो क्यों?

दीवान—उसके रंग-ढंग आजकल बेढब नजर आते हैं, तभी तो देखिए, इस समय मैं यहाँ हूँ, नहीं तो पहर रात के बाद क्या कोई मेरी सूरत देख सकता था?

कोतवाल – वहाँ उसका जी कैसे लगता है?

दीवान—यही तो ताज्जुब है, मैं सोचता हूँ कि कोई मर्द वहाँ जरूर है क्योंकि वह कभी अकेले रहने वाली नहीं।

दीवान—पता लगाना चाहिए।

दीवान—पता लगाने के उद्योग में मैं कई दिन से लगा हूँ मगर कुछ हो नहीं सका। जिस दरवाजे को खोल कर वह आती और जाती है उसकी ताली भी इसीलिए बनवाई कि धोखे में वहाँ तक जा पहुँचूं, मगर काम न चला, क्योंकि जाती समय अन्दर से वह न मालूम ताले में क्या कर जाती है कि चाभी नहीं लगती।

कोतवाल—तो दरवाजा तोड़ के वहाँ पहुँचना चाहिए।

दीवान—ऐसा करने से बड़ा फसाद मचेगा।

कोतवाल—फसाद करके कोई क्या कर लेगा ? राज्य तो हम तीनों की मुट्ठी में है !

इतने ही में बाहर किसी आदमी के पैरों की चाप मालूम हुई। तीनों देर तक उसी तरफ देखते रहे, मगर कोई न आया। कोतवाल यह कहता हुआ कि 'कहीं कोई छिप के बातें सुनता न हो।' उठा, और कमरे के बाहर जाकर इधर-उधर देखने लगा, मगर किसी का पता न चला, लाचार फिर कमरे में चला आया और बोला, "कोई नहीं है, खाली धोखा हुआ।"

इस जगह विस्तार से यह लिखने की कोई जरूरत नहीं कि इन तीनों में क्या-क्या बातचीत होती रही या इन लोगों ने कौन-सी सलाह पक्की की, हाँ, इतना कहना जरूरी है कि बातों-ही-बातों में इन तीनों ने रात बिता दी और सवेरा होते ही अपने-अपने घर का रास्ता लिया।

दूसरे दिन पहर रात जाते-जाते कोतवाल साहब के घर में एक विचित्र बात हुई। वे अपने कमरे में बैठे कचहरी के कुछ जरूरी कागजों को देख रहे थे कि इतने ही में शोरगुल की आवाज उनके कानों में आई। गौर करने से मालूम हुआ कि बाहर दरवाजे पर लड़ाई हो रही है। कोतवाल साहब के सामने जो मोमी शमादान जल रहा था उसी के पास एक घण्टी पड़ी हुई थी, उठा कर बजाते ही एक खिदमतगार दौड़ा-दौड़ा सामने आया और हाथ जोड़ कर खड़ा हो गया। कोतवाल साहब ने कहा, "दरियाफ्त करो, बाहर कैसा कोलाहल मचा हुआ है ?"

खिदमतगार दौड़ा बाहर गया और तुरन्त लौट कर बोला, "न मालूम कहाँ से दो आदमी आपस में लड़ते हुए आये हैं, फरियाद करने के लिए बेधड़क भीतर धँसे आते थे। पहरे वालों ने रोका तो उन्हीं से झगड़ा करने लगे।"

कोतवाल—उन दोनों की सूरत-शक्ल कैसी है ?

खिदमतगार—दोनों भले आदमी मालूम पड़ते हैं, अभी मूँछें नहीं निकली हैं, बड़े ही खूबसूरत हैं, मगर खून से तर-बतर हो रहे हैं।

कोतवाल—अच्छा, कहो, उन दोनों को हमारे सामने हाजिर करें।

हुक्म पाते ही खिदमतगार फिर बाहर गया और थोड़ी ही देर में कई सिपाही उन दोनों को लिए हुए कोतवाल के सामने हाजिर हुए। नौकर की बात बिल्कुल सच निकली। वे दोनों कम-उम्र और बहुत खूबसूरत जवान थे, बदन पर लिबास भी बेशकीमत था, कोई हर्बा उनके पास न था, मगर खून से उन दोनों का कपड़ा तर हो रहा था।

कोतवाल—तुम लोग आपस में क्यों लड़ते हो, और हमारे आदमियों से फसाद करने पर उतारू क्यों हुए ?

एक—(सलाम करके) हम दोनों भले आदमी हैं, सरकारी सिपाहियों ने बद-जबानी की, लाचार गुस्सा तो चढ़ा ही हुआ था, बात बिगड़ गई।

कोतवाल—अच्छा, इसका फैसला पीछे होता रहेगा, पहले तुम यह कहो कि आपस में क्यों खूनखराबी कर बैठे और तुम दोनों का मकान कहाँ है ?

दूसरा—जी हम दोनों आपकी रैयत हैं और गयाजी में रहते हैं, दोनों सगे भाई हैं, एक औरत के पीछे लड़ाई हो रही है कि जिसका फैसला आपसे चाहते हैं, बाकी हाल इतने आदमियों के सामने कहना हम लोग पसन्द नहीं करते।

कोतवाल साहब ने सिर्फ उन दोनों को वहां रहने दिया, बाकी सबको वहाँ से हटा दिया, निराला होने पर फिर उन दोनों से लड़ाई का सबब पूछा।

एक—हम दोनों भाई सरकार से कोई मौजा ठीका लेने के लिए यहाँ आ रहे थे। यहाँ से तीन कोस पर एक पहाड़ी है, कुछ दिन रहते ही हम दोनों वहाँ पहुँचे और थोड़ा सुस्ताने की नीयत से उतर पड़े, घोड़ों को चरने के लिए छोड़ दिया और एक पेड़ के नीचे पत्थर की चट्टान पर बैठ बातचीत करने लगे···

दूसरा—(सिर हिला कर) नहीं, कभी नहीं।

पहला—सरकार इसे हुक्म दीजिये कि चुप रहे, पहले मैं कह लूँ, फिर जो कुछ इसके जी में आये कहे।

कोतवाल—(दूसरे को डाँट कर) बेशक ऐसा ही करना होगा!

दूसरा—बहुत अच्छा।

पहला—थोड़ी ही देर बैठे थे कि पास ही किसी औरत के रोने की बारीक आवाज आई जिसके सुनने से कलेजा पानी हो गया।

दूसरा—ठीक, बहुत ठीक।

कोतवाल—(लाल आँखें करके) क्यों जी, तुम फिर बोलते हो?

दूसरा—अच्छा, अब न बोलूँगा!

पहला—हम दोनों उठकर उसके पास गए। आह, ऐसी खूबसूरत औरत तो आज तक किसी ने न देखी होगी, बल्कि मैं जोर देकर कहता हूं कि दुनिया में ऐसी खूबसूरत कोई दूसरी न होगी। वह अपने सामने एक तस्वीर को, जो चौखटे में जड़ी हुई थी, रखे बैठी थी और उसे देख फूट-फूट कर रो रही थी।

कोतवाल—वह तस्वीर किसकी थी, तुम पहचानते हो?

पहला—जी हाँ, पहचानता हूँ, वह मेरी तस्वीर थी।

दूसरा—झूठ-झूठ, कभी नहीं, बेशक वह तस्वीर आपकी थी! मैं इस समय बैठा उस तस्वीर से आपकी सूरत मिलान कर गया, बिल्कुल आपसे मिलती है, इसमें कोई शक नहीं! आप इसके हाथ में गंगा-जल देकर पूछिये, किसकी तस्वीर थी?

कोतवाल—(ताज्जुब में आकर) क्या मेरी तस्वीर थी?

दूसरा—बेशक आपकी तस्वीर थी, आप इससे कसम देकर पूछिये तो सही।

कोतवाल—(पहले से) क्यों जी, तुम्हारा भाई क्या कहता है?

पहला—जी ई ई···

कोतवाल—(जोर से) साफ-साफ कहो, सोचते क्या हो?

पहला—जी, बात तो यही ठीक है, आप ही की तस्वीर थी।

कोतवाल—फिर झूठ क्यों बोले?

पहला—बस, यही एक बात झूठ मुँह से निकल गई। अब कोई बात झूठ न कहूँगा, माफ कीजिये।

कोतवाल बेचारा ताज्जुब में आकर सोचने लगा कि उस औरत की मुझमें क्योंकर मुहब्बत हो गई जिसकी खूबसूरती की ये लोग इतनी तारीफ कर रहे हैं? थोड़ी देर बाद फिर पूछा—

कोतवाल—हाँ, तो आगे क्या हुआ?

पहला—(अपने भाई की तरफ इशारा करके) बस, यह उस पर आशिक हो गया और उसे तंग करने लगा।

दूसरा—यह भी उस पर आशिक होकर उसे छेड़ने लगा।

पहला—जी नहीं, उसने मुझे कबूल कर लिया और मुझसे शादी करने पर भी राजी हो गई, बल्कि उसने यह भी कहा कि मैं दो दिन तक यहाँ रह कर तुम्हारा आसरा देखूँगी, अगर तुम पालकी लेकर आओगे तो तुम्हारे साथ चली चलूँगी।

दूसरा—जी नहीं, यह बड़ा भारी झूठा है, जब यह उसकी खुशामद करने लगा तब उसने कहा कि मैं उसी के लिए जान देने को तैयार हूँ, जिसकी तस्वीर मेरे सामने है। जब इसने उसकी बात न सुनी तो उसने अपनी तलवार से इसे जखमी किया और मुझसे बोली कि तुम जाकर मेरे दोस्त को जहाँ भी हो ढूंढ़ निकालो और कह दो कि मैं तुम्हारे लिए बर्बाद हो गई, अब भी तो सुध लो, जब मैंने इसे मना किया तो यह मुझसे झगड़ पड़ा। असल में यही लड़ाई का सबब हुआ।

पहला—जी नहीं, यह सन्देशा उसने मुझे दिया क्योंकि यही उसे दुःख दे रहा था।

दूसरा—नहीं, यह झूठ बोलता है।

पहला—नहीं, यह झूठा है, मैं ठीक-ठीक कहता हूँ।

कोतवाल—अच्छा मुझे उस औरत के पास ले चलो, मैं खुद उससे पूछ लूँगा कि कौन झूठा है, और कौन सच्चा है।

पहला—क्या अभी तक वह उसी जगह होगी?

दूसरा—जरूर वहाँ होगी, यह बहाना करता है क्योंकि वहाँ जाने से यह झूठा साबित हो जाएगा।

पहला—(अपने भाई की तरफ देखकर) झूठा तू साबित होगा। अफसोस तो इतना ही है कि अब मुझे वहाँ का रास्ता भी याद नहीं।

दूसरा—(पहले की तरफ देखकर) तू रास्ता भूल गया तो क्या हुआ, मुझे तो याद है। (कोतवाल साहब की तरफ देखकर) मैं जरूर आपको वहाँ ले चलकर इसे झूठा साबित करूँगा! चलिए, मैं आपको वहाँ ले चलता हूँ।

कोतवाल—चलो।

कोतवाल साहब तो खुद बेचैन हो रहे थे, और चाहते थे कि जहाँ तक हो, वहाँ जल्द पहुँच कर देखना चाहिए कि वह औरत कैसी है जो मुझ पर आशिक हो तस्वीर सामने रख याद किया करती है। एक पिस्तौल भरी-भराई कमर में रख उन दोनों

भाइयों को साथ ले मकान से नीचे उतरे। उनको बाहर जाने के लिए मुस्तैद देख कई सिपाही साथ चलने को तैयार हुए। उन्होंने अपनी सवारी का घोड़ा मँगवाया और उस पर सवार हो सिर्फ अर्दली के दो सिपाही साथ ले उन दोनों भाइयों के पीछे-पीछे रवाना हुए। दो घण्टे तक बराबर चलने के बाद एक छोटी-सी पहाड़ी के नीचे पहुँच वे दोनों भाई रुके और कोतवाल साहब को घोड़े से उतरने के लिए कहा।

कोतवाल—क्या घोड़ा आगे नहीं जा सकता?

पहला—घोड़ा आगे जा सकता है, मगर मैं एक दूसरी ही बात सोचकर आपको उतरने के लिए कहता हूँ।

कोतवाल—वह क्या?

पहला—जिस औरत के पास आप आये हैं, वह इसी जगह है; दो ही कदम आगे बढ़ने से आप उसे बखूबी देख सकते हैं, मगर मैं चाहता हूँ कि सिवाय आपके ये दोनों प्यादे उसे देखने न पाएँ। इसके लिए मैं किसी तरह जोर नहीं दे सकता, मगर इतना जरूर कहूँगा कि आप आगे बढ़ झाँक कर उसे देख लें, फिर अगर जी चाहे तो इन दोनों को भी साथ ले जायें, क्योंकि वह अपने को गया को रानी बताती है।

कोतवाल—(ताज्जुब से) अपने को गया की रानी बताती है?

दूसरा—जी हाँ।

अब तो कोतवाल साहब के दिल में कोई दूसरा ही शक पैदा हुआ। वह तरह-तरह की बातें सोचने लगे। "गया की रानी तो हमारी माधवी है, यह दूसरी कहाँ से पैदा हुई? क्या वह माधवी तो नहीं है? नहीं-नहीं, वह भला यहाँ क्यों आने लगी! उससे मुझसे क्या सम्बन्ध? वह तो दीवान साहब की हो रही है। मगर वह आई भी हो तो कोई ताज्जुब नहीं, क्योंकि एक दिन हम तीनों दोस्त एक साथ महल में बैठे थे और रानी माधवी वहाँ पहुँच गई थी, मुझे खूब याद है, उस दिन उसने मेरी तरफ बेढब तरह से देखा था और दीवान साहब की आँखें बचा घड़ी-घड़ी देखती थी, शायद उसी दिन से मुझ पर आशिक हो गई हो! हाय, वह अनोखी चितवन कभी न भूलेगी। अहा, अगर यह वही हो, और मुझे विश्वास हो कि मुझसे प्रेम रखती है तो क्या बात है! मैं ही राजा हो जाऊँगा और दीवान साहब को तो बात-की-बात में खपा डालूँगा! मगर ऐसी किस्मत कहाँ? खैर जो हो, इनकी बात मान जरा झाँक कर देखना तो जरूर चाहिए, शायद ईश्वर ने दिन फेरा ही हो!" ऐसी-ऐसी बहुत-सी बातें सोचते-विचारते कोतवाल साहब घोड़े से उतर पड़े और उन दोनों भाइयों के कहे मुताबिक आगे बढ़े।

यहाँ से पहाड़ियों का सिलसिला बहुत दूर तक चला गया था। जिस जगह कोतवाल साहब खड़े थे, वहाँ दो पहाड़ियाँ इस तरह आपस में मिली हुई थीं कि बीच में कोसों तक लम्बी दरार मालूम पड़ती थी, जिसके बीच मे बहता हुआ पानी का चश्मा और दोनों तरफ छोटे-छोटे दरख्त बहुत भले मालूम पड़ते थे। इधर-उधर बहुत-सी कन्दराओं पर निगाह पड़ने से यही विश्वास होता था कि ऋषियों और तपस्वियों के प्रेमी अगर यहाँ आवें तो अवश्य उनके दर्शन से अपना जन्म कृतार्थ कर सकेंगे।

दरार के कोने पर पहुँच कर दोनों भाइयों ने कोतवाल साहब को बाईं तरफ

झांकने के लिए कहा। कोतवाल साहब ने झाँककर देखा, साथ ही वे एकदम चौंक पड़े और मारे खुशी के भरे हुए गले से चिल्ला कर बोले, "अहा हा, मेरी किस्मत जागी ! बेशक वह रानी माधवी ही तो है !"

5

कमला को विश्वास हो गया कि किशोरी को कोई धोखा देकर ले भागा। वह उस बाग में बहुत देर तक न ठहरी, ऐयारी के सामान से दुरुस्त थी ही, एक लालटेन हाथ में लेकर वहाँ से चल पड़ी और बाग से बाहर हो चारों तरफ घूम-घूमकर किसी ऐसे निशान को ढूँढ़ने लगी जिससे यह मालूम हो कि किशोरी किस सवारी पर यहाँ से गई है, मगर जब तक वह उस आम की बारी में न पहुँची तब तक सिवाय पैरों के चिह्न के और किसी तरह का कोई निशान जमीन पर दिखाई न पड़ा।

बरसात का दिन था और जमीन अच्छी तरह पर नम हो गई थी, इसीलिए आम की बारी में घूम-घूमकर कमला ने मालूम कर लिया कि किशोरी यहाँ से रथ पर सवार होकर गई है और उसके साथ में कई सवार भी हैं क्योंकि रथ के पहियों का दोहरा निशान और बैलों के खुर जमीन पर साफ मालूम पड़ते थे, इसी तरह घोड़ों की टापों के निशान भी अच्छी तरह दिखाई देते थे।

कमला कई कदम उस निशान की तरफ चली गयी जिधर रथ गया था और बहुत जल्द मालूम कर लिया कि किशोरी को ले जाने वाले किस तरफ गये हैं। इसके बाद वह पीछे लौटी और सीधे अस्तबल में पहुँच एक तेज घोड़े पर बहुत जल्द चारजामा कसने का हुक्म दिया।

कमला का हुक्म ऐसा न था कि कोई उससे इन्कार करता। घोड़ा बहुत जल्द कस कर तैयार किया गया और कमला उस पर सवार हो तेजी के साथ उस तरफ रवाना हुई जिधर रथ पर सवार होकर किशोरी के जाने का उसे विश्वास हो गया था।

पाँच कोस बराबर चले जाने के बाद कमला एक चौराहे पर पहुँची, जहाँ से बाईं तरफ का रास्ता चुनार को गया था, दाईं तरफ की सड़क रीवाँ होते हुए गयाजी तक पहुंची थी, तथा सामने का रास्ता एक भयानक जंगल से होता हुआ कई तरफ को फूट गया था।

इस चौमुहानी पर पहुँच कर कमला रुकी और सोचने लगी कि किधर जाऊँ? अगर चुनार वाले किशोरी को ले गये होंगे, तो इसी बाईं तरफ से गये होंगे, और किशोरी की दुश्मन माधवी ने उसे फँसाया होगा तो रथ दाहिनी तरफ से गयाजी को गया होगा, सामने की सड़क से रथ ले जाने वाला तो कोई खयाल में नहीं आता क्योंकि यह जंगल का रास्ता बहुत ही खराब और पथरीला है।

चन्द्रमा निकल आया था और रोशनी अच्छी तरह फैल चुकी थी। कमला घोड़े से नीचे उतर गयी और दाहिनी तरफ जमीन पर रथ के पहिये का दाग ढूंढ़ने लगी मगर

कुछ मालूम न हुआ, लाचार घोड़े पर सवार हो सोचने लगी कि किधर जाऊँ, क्या करूँ।

हम पहले लिख आये हैं कि रथ पर जाते-जाते जब किशोरी ने जान लिया कि वह धोखे में डाली गयी है तब उसके मुँह से कई शब्द ऐसे निकले जिन्हें सुन नकली कमला होशियार हो गयी और रथ के नीचे कूद एक घोड़े पर सवार हो पीछे की तरफ लौट गयी।

लौटी हुई नकली कमला ठीक उसी समय घोड़ा दौड़ाती हुई उस चौराहे पर पहुँची जिस समय असली कमला वहाँ पहुँचकर सोच रही थी कि किधर जाऊँ क्या करूँ? असली कमला ने सामने से तेजी के साथ आते हुए एक सवार को देख घोड़ा रोकने के लिए ललकारा, मगर वह क्यों रुकने लगी थी, हाँ, उसे असली कमला के दाहिनी तरफ वाली राह पर जाने के लिए घूमना था, इसलिए अपने घोड़े की तेजी उसे कम करनी ही पड़ी।

जब असली कमला ने देखा कि सामने से आया हुआ सवार उसके ललकारने से भी किसी तरह नहीं रुकता और दाहिनी सड़क से निकल जाना चाहता है तो झट कमर से दुनाली पिस्तौल निकाल उसने घोड़े पर वार किया। गोली लगते ही घोड़ा नकली कमला को लिये जमीन पर गिरा, मगर घोड़े के गिरते ही वह बहुत ही जल्द सम्हलकर उठ खड़ी हुई और उसने भी कमर से दुनाली पिस्तौल निकाल असली कमला पर गोली चलाई।

असली कमला तो पहले ही सम्हली हुई थी, गोली की मार से बच गयी, फिर दूसरी गोली आयी पर वह भी न लगी। लाचार नकली कमला ने अपनी पिस्तौल फिर भरने का इरादा किया मगर असली कमला ने उसे यह मौका न दिया। दोनों गोली बेकार जाते देख वह समझ गयी कि उसकी पिस्तौल खाली हो गयी है, हाथ में पिस्तौल लिये हुए झट उसके कल्ले पर पहुँच गयी और ललकार कर बोली, "खबरदार, जो पिस्तौल भरने का इरादा किया? देख, मेरी पिस्तौल में दूसरी गोली अभी मौजूद है!" नकली कमला भी यह सोचकर चुपचाप खड़ी रह गयी कि अब वह अपने दुश्मन का कुछ नहीं बिगाड़ सकती क्योंकि पिस्तौल की दोनों गोलियाँ बर्बाद हो चुकी थीं और घोड़ा उसका मर चुका था।

पिस्तौल के अलावे दोनों की कमर में खंजर भी था मगर उसकी जरूरत न पड़ी। असली कमला ने ललकार कर पूछा, "सच बता, तू कौन है?"

नकली कमला को जान दे देना कबूल था मगर अपने मुँह से यह बताना मंजूर न था कि वह कौन है। असली कमला ने यह देख अपने कोड़े का ऐसा चपेटा दिया कि वह किसी तरह सम्हल न सकी और जमीन पर गिर पड़ी। जब तक वह होशियार होकर उठना चाहे, तब तक असली कमला झट घोड़े से कूद उसकी छाती पर सवार दिखाई देने लगी।

असली कमला ने जबर्दस्ती उसकी नाक में बेहोशी की दवा ठूँस दी और जब वह बेहोश हो गयी तो उसकी छाती पर से उतरकर अलग खड़ी हो गयी।

असली कमला जब उसकी छाती पर सवार हुई तो उसे अपनी ही सूरत का

पाया, इसलिए समझ गयी कि यह कोई ऐयार या ऐयारा है, सिवाय इसके किशोरी की सखियों की जुबानी उसने यह मालूम कर ही लिया था कि कोई उसी की सूरत बना किशोरी को ले गया है। अब उसे विश्वास हो गया कि किशोरी को इसी ने धोखा दिया है।

थोड़ी देर बाद कमला ने अपने बटुए में से पानी-भरी छोटी-सी बोतल निकाली और नकली कमला का मुंह धोकर साफ किया। इसके बाद चकमक से आग निकाल बत्ती जलाकर पहचानना चाहा कि वह कौन है मगर बिना ऐसा किये वह केवल चन्द्रमा की ही मदद से पहचान ली गयी कि माधवी की सखी ललिता है। क्योंकि कमला उसे अच्छी तरह जानती थी, और वर्षों साथ रहने के अलावा मिला-जुला भी करती थी।

कमला को विश्वास तो हो ही गया कि किशोरी को धोखा देकर ले जाने वाली यही ललिता है मगर इस बात का ताज्जुब बना ही रहा कि वह सामने से लौटकर आती हुई क्यों दिखाई पड़ी! कमला यह भी जानती थी कि चाहे जान चली जाय, मगर ललिता असल भेद कभी न बतावेगी, इसलिए उसकी जुबानी पता लगाने का उद्योग करना उसने व्यर्थ समझा और अपने साथ ललिता को घोड़े पर लादकर घर की तरफ पलट पड़ी।

रात बिलकुल बीत चुकी थी, बल्कि कुछ दिन निकल आया था जब ललिता को लादे हुए कमला घर पहुँची। यहाँ किशोरी के गायब होने से बड़ा ही हाहाकार मचा हुआ था। उसकी खोज में कई आदमी चारों तरफ जा चुके थे। किशोरी का नाना रणधीरसिंह भारी जमींदार होने के सिवाय बड़ा ही दिमागदार और जबर्दस्त आदमी था। उसने यही समझ रखा था कि शिवदत्त के दुश्मन वीरेन्द्रसिंह की तरफ से यह कार्रवाई की गयी है। मगर जब ललिता को लिये हुए कमला पहुँची और उसकी जुबानी सब हाल मालूम हुआ तब माधवी की बदमाशी पर बहुत बिगड़ा। वह माधवी की चाल-चलन पर पहले से ही रंज था मगर कुछ जोर न चलने से लाचार था। आज गुस्से के मारे इस बात का बिलकुल ध्यान न रहा कि माधवी एक भारी राज्य की मालिक है और ज़बर्दस्त फौज रखती है, उसने कमला के मुँह से सब हाल सुनते ही तलवार हाथ में ले कसम खा ली कि, "जिस तरह हो सकेगा, अपने हाथ से माधवी का सिर काट कलेजा ठंडा करूँगा।"

ललिता एक अँधेरी कोठरी में कैद की गयी और रणधीरसिंह की आज्ञा पा कमला अपने बड़े भाई हरनामसिंह को साथ ले किशोरी की मदद को पैदल ही चल दी।

कमला आज भी उसी कल वाले रास्ते पर रवाना हुई और दोपहर होते-होते उसी चौराहे पर पहुँची जहाँ कल ललिता मिली थी। वे दोनों बेधड़क सामने वाली सड़क पर चले।

चौराहे के आगे लगभग तीन कोस चले जाने बाद खराब और पथरीली राह मिली जिसे देख हरनामसिंह ने कहा, "इस राह से रथ ले जाने में जरूर तकलीफ हुई होगी।"

कमला—बेशक ऐसा ही हुआ होगा, और मुझे तो अभी तक निश्चय ही नहीं

हुआ कि किशोरी इसी राह से गयी है।

हरनामसिंह—मगर मैं तो यही समझता हूँ कि रथ इसी राह से गया है और किशोरी का साथ छोड़ कोई दूसरी कार्रवाई करने के लिए ललिता लौटी थी।

कमला—शायद ऐसा ही हो।

और थोड़ी दूर जाने के बाद पैर की एक पाजेब जमीन पर पड़ी हुई दिखाई दी। हरनामसिंह ने उसे देखते ही उठा लिया और कहा, "बेशक किशोरी इसी राह से गयी है, इस पाजेब को मैं खूब पहचानता हूँ।"

कमला—अब तो मुझे भी निश्चय हो गया कि किशोरी इधर ही से गयी है।

हरनामसिंह—हाँ, जब उसे मालूम हो गया कि उसने धोखा खाया और दुश्मनों के फंदे में पड़ गयी तब उसने यह पाजेब चुपके से जमीन पर फेंक दी।

कमला—इसलिए कि वह जानती थी कि उसकी खोज में बहुत से आदमी निकलेंगे और इधर आकर इस पाजेब को देखेंगे तो जान जायेंगे कि किशोरी इधर ही गयी है।

हरनामसिंह—मैं खयाल करता हूँ कि आगे चलकर किशोरी की फेंकी हुई और भी कोई चीज हम लोग जरूर देखेंगे।

कमला—बेशक ऐसा ही होगा।

कुछ आगे जाकर दूसरी पाजेब और उससे थोड़ी दूरी पर किशोरी के और कुछ गहने इन लोगों ने पाये। अब कमला को किशोरी के इसी राह से जाने का पूरा विश्वास हो गया और वे दोनों बेधड़क कदम बढ़ाते हुए राजगृह की तरफ रवाना हुए।

6

कुँअर इन्द्रजीतसिंह अभी तक उस रमणीक स्थान में विराज रहे हैं। जी कितना ही बेचैन क्यों न हो मगर उन्हें लाचार माधवी के साथ दिन काटना ही पड़ता है। खैर, जो होगा देखा जायेगा, मगर इस समय दो पहर दिन बाकी रहने पर भी कुँअर इन्द्रजीतसिंह कमरे के अन्दर सुनहरे पायों की चारपाई पर आराम कर रहे हैं और एक लौंडी धीरे-धीरे पंखा झल रही है। हम ठीक नहीं कह सकते कि उन्हें नींद दबाये हुए है या जानबूझकर बहठियाये पड़े हैं और अपनी बदकिस्मती के जाल को सुलझाने की तरकीब सोच रहे हैं। खैर, इन्हें इसी तरह पड़े रहने दीजिए और आप जरा तिलोत्तमा के कमरे में चलकर देखिए कि वह माधवी के साथ किस तरह की बातचीत कर रही है। माधवी का हँसता हुआ चेहरा कहे देता है कि बनिस्बत और दिनों के आज वह खुश है, मगर तिलोत्तमा के चेहरे से किसी तरह की खुशी नहीं मालूम होती।"

माधवी ने तिलोत्तमा का हाथ पकड़कर कहा, "सखी, आज तुझे उतना खुश नहीं पाती हूँ जितनी मैं खुद हूँ।"

तिलोत्तमा—तुम्हारा खुश होना बहुत ठीक है!

माधवी—तो क्या तुम्हें इस बात की खुशी नहीं है कि किशोरी मेरे फन्दे में फँस गयी और एक कैदी की तरह मेरे यहाँ तहखाने में बन्द है ?

तिलोत्तमा—इस बात की तो मुझे भी खुशी है।

माधवी—तो रंज किस बात का है ? हाँ समझ गयी, अभी तक ललिता के लौटकर न आने का बेशक तुम्हें दुःख होगा।

तिलोत्तमा—ठीक है, मैं ललिता के बारे में भी बहुत-कुछ सोच रही हूँ। मुझे तो विश्वास हो गया है कि उसे कमला ने पकड़ लिया।

माधवी—तो उसे छुड़ाने की फिक्र करनी चाहिए।

तिलोत्तमा—मुझे इतनी फुरसत नहीं है कि उसे छुड़ाने के लिए जाऊँ क्योंकि मेरे हाथ-पैर किसी दूसरे ही तरद्दुद ने बेकार कर दिये हैं जिनकी तुम्हें जरा-भी खबर नहीं, अगर खबर होती तो आज तुम्हें भी अपनी ही तरह उदास पाती।

तिलोत्तमा की इस बात ने माधवी को चौंका दिया और वह घबराकर तिलोत्तमा का मुँह देखने लगी।

तिलोत्तमा—मुँह क्या देखती है, मैं झूठ नहीं कहती। तू तो अपने ऐश-आराम में ऐसी मस्त हो रही है कि दीन-दुनिया की खबर नहीं। तू जानती ही नहीं कि दो-चार दिन में ही तुझ पर कैसी आफत आने वाली है। क्या तुझे विश्वास हो गया कि किशोरी तेरी कैद में रह जाएगी ? कुछ बाहर की भी खबर है कि क्या हो रहा है ? क्या बदनामी ही उठाने के लिए तू गया का राज्य कर रही है ? मैं पचास दफे तुझे समझा चुकी कि अपने चाल-चलन को दुरुस्त कर, मगर तूने एक न सुनी, लाचार तुझे तेरी मर्जी पर छोड़ दिया। और प्रेम के सबब मैं तेरा हुक्म मानती आयी, मगर अब मेरे सम्हाले नहीं सम्हलता !

माधवी – तिलोत्तमा, आज तुझे क्या हो गया है जो इतना कूद रही है ? ऐसी कौन-सी आफत आ गयी है जिसने तुझे बदहवास कर दिया है ? क्या तू नहीं जानती कि दीवान साहब इस राज्य का इन्तजाम कैसी अच्छी तरह कर रहे हैं और सेनापति तथा कोतवाल अपने काम में कितने होशियार हैं ? क्या इन लोगों के रहते हमारे राज्य में कोई विघ्न डाल सकता है ?

तिलोत्तमा—यह जरूर ठीक है कि इन तीनों के रहते कोई इस राज्य में विघ्न नहीं डाल सकता, लेकिन तुझे तो इन्हीं तीनों की खबर नहीं ! कोतवाल साहब जहन्नुम में चले ही गये, दीवान साहब और सेनापति साहब भी आजकल में जाया चाहते हैं बल्कि चले भी गये हों तो ताज्जुब नहीं।

माधवी—यह तू क्या कह रही है ?

तिलोत्तमा—जी हाँ, मैं बहुत ठीक कहती हूँ। बिना परिश्रम ही यह राज्य वीरेन्द्रसिंह का हुआ चाहता है। इसीलिए कहती थी कि इन्द्रजीतसिंह को अपने यहाँ मत फँसा, उनका एक-एक ऐयार आफत का परकाला है। मैं कई दिनों से उन लोगों की कारंवाई देख रही हूँ। उन लोगों को छेड़ना ऐसा है जैसा आतिशबाजी की चरखी में आग लगा देना।

माधवी—क्या वीरेन्द्रसिंह को पता लग गया कि उनका लड़का यहाँ कैद है

तिलोत्तमा—पता नहीं लगा है तो यों ही उनके सब ऐयार यहाँ पहुँच कर ऊधम मचा रहे हैं ?

माधवी—तो तूने मुझे पहले खबर क्यों न की ?

तिलोत्तमा—क्या खबर करती, तुझे इस खबर को सुनने की छुट्टी भी है !

माधवी—तिलोत्तमा, ऐसी जली-कटी बातों का कहना छोड़ दे और मुझे ठीक-ठीक बता कि क्या हुआ और क्या हो रहा है ? सच पूछे तो मैं तेरे ही भरोसे कूद रही हूँ। मैं खूब जानती हूँ कि सिवाय तेरे मेरी रक्षा करने वाला कोई नहीं। मुझे विश्वास था कि इन चार पहाड़ियों के बीच जब तक मैं हूँ, मुझ पर किसी तरह की आफत न आवेगी, मगर अब तेरी बातों से यह उम्मीद बिलकुल जाती रही।

तिलोत्तमा—ठीक है, तुझे अब ऐसा भरोसा न रखना चाहिए। इसमें कोई शक नहीं कि मैं तेरे लिए जान देने को तैयार हूँ, मगर तू ही बता कि वीरेन्द्रसिंह के ऐयारों के सामने मैं क्या कर सकती हूँ, बेचारी ललिता मेरी मददगार थी, सो वह भी किशोरी को फँसाने में आप पकड़ी गयी, अब अकेली मैं क्या-क्या करूँ ?

माधवी—तू सब-कुछ कर सकती है, हिम्मत मत हार, हाँ, पहले यह बता कि वीरेन्द्रसिंह के ऐयार यहाँ क्योंकर आये और अब क्या कर रहे हैं ?

तिलोत्तमा—अच्छा सुन, मैं सब-कुछ कहती हूँ। यह तो मैं नहीं जानती कि पहले-पहल यहाँ कौन आया, हाँ, जब से चपला आयी है तब से मैं थोड़ा-बहुत हाल जानती हूँ।

माधवी (चीखकर) क्या चपला यहाँ पहुँच गयी ?

तिलोत्तमा—हाँ पहुँच गयी, उसने यहाँ पहुँचकर उस सुरंग की दूसरी ताली भी तैयार कर ली जिस राह से तू आती-जाती है और जिसमें मैंने किशोरी को कैद कर रखा है। एक दिन रात को जब तू इन्द्रजीतसिंह को सोता छोड़ दीवान साहब से मिलने के लिए गयी तो वह चपला भी इन्द्रजीतसिंह को साथ ले अपनी ताली से सुरंग का ताला खोल तेरे पीछे-पीछे चली गयी और छिपकर तेरी और दीवान साहब की कैफियत इन दोनों ने देख ली। यह न समझ कि इन्द्रजीतसिंह बेचारे सीधे-सादे हैं और तेरा हाल नहीं जानते, वे सब-कुछ जान गये।

माधवी—(कुछ देर तक सोच में डूबी रहने के बाद) तूने चपला को कैसे देखा ?

तिलोत्तमा—मेरा बल्कि ललिता का भी कायदा है कि रात को तीन-चार दफे उठ कर इधर-उधर घूमा करती हैं। उस समय मैं अपने दालान के खम्भे की आड़ में खड़ी इधर-उधर देख रही थी जब चपला और इन्द्रजीतसिंह तेरा हाल देख कर सुरंग से लौटे थे। इसके बाद वे दोनों बहुत देर तक नहर के किनारे खड़े बात-चीत करते रहे। बस, उसी समय से मैं होशियार हो गई और अपनी कार्रवाई करने लगी।

माधवी—इसके बाद भी कुछ हुआ ?

तिलोत्तमा—हाँ, बहुत-कुछ हुआ, सुनो मैं कहती हूँ। दूसरे दिन मैं ललिता को साथ ले उस तालाब पर पहुँची, देखा कि वीरेन्द्रसिंह के कई ऐयार वहाँ बैठे बातचीत

कर रहे हैं। मैंने छिप कर उनकी बातचीत सुनी। तब मालूम हुआ कि वे लोग दीवान साहब, सेनापति और कोतवाल को भी गिरफ्तार करना चाहते हैं। मुझे उस समय एक दिल्लगी सूझी। जब वे लोग राय पक्की करके वहाँ से जाने लगे, मैंने वहाँ से कुछ दूर हट कर एक छींक मारी और दूर भाग गई।

माधवी—(मुस्करा कर) वे लोग घबरा गये होंगे !

तिलोत्तमा—बेशक घबराये होंगे, उसी समय गाली-गुफ्तार करने लगे, मगर हम दोनों ने वहाँ ठहरना पसन्द नहीं किया।

माधवी—फिर क्या हुआ ?

तिलोत्तमा—मैंने तो सोचा था कि वे लोग मेरी छींक से डर कर अपनी कार्रवाई रोकेंगे, मगर ऐसा नहीं हुआ। कुल दो ही दिन की मेहनत में उन लोगों ने कोतवाल को गिरफ्तार कर लिया, भैरोंसिंह और तारासिंह ने उन्हें बुरा धोखा दिया।

इसके बाद तिलोत्तमा ने कोतवाल साहब के गिरफ्तार होने का पूरा हाल, जैसा हम ऊपर लिख आए हैं माधवी से कहा, तभी साथ ही उसने यह भी कह दिया कि दीवान साहब को भी शक हो गया है कि तूने किसी मर्द को यहाँ लाकर रक्खा है और उसके साथ आनन्द कर रही है।

तिलोत्तमा की जुबानी यह सब हाल सुनकर माधवी सोच-सागर में गोते लगाने लगी और आधे घण्टे तक उसे तन-बदन की सुध न रही। इसके बाद उसने अपने को सँभाला और फिर तिलोत्तमा से बातचीत करना आरम्भ किया।

माधवी—खैर, जो हुआ सो हुआ, यह बता कि अब क्या करना चाहिए ?

तिलोत्तमा—मुनासिब तो यही है कि इन्द्रजीतसिंह और किशोरी को छोड़ दो, तब फिर तुम्हारा कोई कुछ न बिगाड़ेगा।

माधवी—(तिलोत्तमा के पैरों पर गिर कर और रो कर) ऐसा न कह ! अगर मुझ पर तेरा सच्चा प्रेम है, तो ऐसा करने के लिए जिद न कर ! अगर मेरा सिर चाहे तो काट ले, मगर इन्द्रजीतसिंह को छोड़ने के लिए मत कह।

तिलोत्तमा—अफसोस कि इन बातों की खबर दीवान साहब को भी नहीं कर सकती, बड़ी मुश्किल है। अच्छा, मैं उद्योग करती हूँ, मगर निश्चय नहीं कह सकती कि क्या होगा ?

माधवी—तुम चाहोगी तो सब काम हो जायगा।

तिलोत्तमा—पहले तो मुझे ललिता को छुड़ाना मुनासिब है।

माधवी—अवश्य।

तिलोत्तमा—हाँ, एक काम इसके भी पहले करना चाहिए, नहीं तो किशोरी दो ही दिन में यहाँ से गायब हो जायगी और ताज्जुब नहीं कि धड़धड़ाते हुए वीरेन्द्रसिंह के कई ऐयार यहाँ पहुँच जायँ और मनमानी धूम मचावें।

माधवी—शायद तुम्हारा मतलब उस पानी वाली सुरंग को बन्द कर देने से हो ?

तिलोत्तमा—हाँ।

माधवी—मैं भी अब यही मुनासिब समझती हूँ। मैं सोचती हूँ कि जरूर कोई ऐयार उस रोज उसी पानी वाली सुरंग की राह से यहाँ तक आया था जिसकी देखा-देखी इन्द्रजीतसिंह उस सुरंग में घुसे थे, मगर बेचारे पानी में आगे नहीं जा सके और लौट आये। तुम जरूर उस सुरंग को अच्छी तरह बन्द कर दो जिसमें कोई ऐयार उस राह से आने-जाने न पावे। तुम लोगों के लिए वह रास्ता है ही, जिधर से मैं आती हूँ। हाँ, एक बात और है, तू अपने पिता को मेरी मदद के लिए क्यों नहीं ले आती? उनसे और मेरे से बड़ी दोस्ती थी मगर अफसोस, आजकल वे मुझसे बहुत रंज हैं!

तिलोत्तमा—मैं कल उनके पास गई थी पर वे किसी तरह नहीं मानते। तुमसे बहुत ही ज्यादे रंज हैं, मुझ पर बहुत बिगड़ते थे, अगर मैं तुरंत न चली आती तो बेइज्जती के साथ निकलवा देते, अब मैं उनके पास कभी न जाऊँगी।

माधवी—खैर, जो कुछ मेरी किस्मत में है, उसे भोगूँगी। अच्छा, अब तो सब की आमद-रफ्त इसी सुरंग से होगी, तो अब किशोरी को वहाँ से निकाल कर भी किसी दूसरी जगह रखना चाहिए।

तिलोत्तमा—उस सुरंग से बढ़कर कौन-सी ऐसी जगह है जहाँ उसे रक्खोगी? दीवान साहब का भी तो डर है!

थोड़ी देर तक इन दोनों में बातचीत होती रही। इसके बाद इन्द्रजीतसिंह के सो कर उठने की खबर आई। शाम भी हो चुकी थी, माधवी उठ कर उनके पास गई और तिलोत्तमा पानी वाली सुरंग को बन्द करने की फिक्र में लगी।

पाठक, इस जगह मामला बड़ा ही गोलमाल हो गया। तिलोत्तमा ने चालाकी से वीरेन्द्रसिंह के ऐयारों की कार्रवाई देख ली। माधवी और तिलोत्तमा की बातचीत से आप यह भी जान गये होंगे कि बेचारी किशोरी उसी सुरंग में कैद की गई है जिसकी ताली चपला ने बनाई थी या जिस सुरंग की राह चपला और कुँअर इन्द्रजीतसिंह ने माधवी के पीछे जाकर यह मालूम कर लिया था कि वह कहाँ जाती है। उस सुरंग की दूसरी ताली तो मौजूद ही थी, किशोरी को छुड़ाना चपला के लिए कोई बड़ी बात न थी, अगर तिलोत्तमा होशियार होकर उस आने-जाने वाली राह, अर्थात् पानी वाली सुरंग, को जिसमें इन्द्रजीतसिंह गये थे और आगे जलमय देख कर लौट आये थे, पत्थर के ढोंकों से मजबूती के साथ बन्द न कर देती। कुँअर इन्द्रजीतसिंह को मालूम हो ही गया था कि हमारे ऐयार लोग इसी राह से आया-जाया करते हैं, अब उन्होंने अपनी आँखों से यह भी देख लिया कि यह सुरंग बखूबी बन्द कर दी गई है। उनकी नाउम्मीदी हर तरह से बढ़ने लगी, उन्होंने समझ लिया कि अब कमला से मुलाकात न होगी और बाहर हमारे छुड़ाने के लिए क्या-क्या तरकीब हो रही है, इसका पता भी बिल्कुल न लगेगा। सुरंग की नई ताली जो चपला ने बनाई थी वह उसी के पास थी, तो भी इन्द्रजीतसिंह ने हिम्मत न हारी। उन्होंने जी में ठान लिया कि अब जबर्दस्ती से काम लिया जाएगा, जितनी औरतें यहाँ मौजूद हैं सब की मुश्कें बाँध नहर के किनारे डाल देंगे और सुरंग की असली ताली माधवी के पास से लेकर सुरंग की राह माधवी के महल में पहुँच कर खून-खराबी मचावेंगे। आखिर क्षत्रियों को इससे बढ़कर लड़ने-भिड़ने और जान देने का कौन-सा

समय हाथ लगेगा। मगर ऐसा करने के लिए सबसे पहले सुरंग की ताली अपने कब्जे में कर लेना मुनासिब है, नहीं तो मुझे बिगड़ा हुआ देख जब तक मैं दो-चार औरतों की मुश्कें बाँधूँगा, तब तक सब सुरंग की राह भाग जायँगी। फिर मेरा मतलब, जैसा मैं चाहता हूँ, सिद्ध न होगा।

इन्द्रजीतसिंह ने सुरंग की ताली लेने के लिए बहुत कोशिश की, मगर न ले सके क्योंकि अब वह ताली उस जगह से जहाँ पहले रहती थी, हटा कर किसी दूसरी जगह रख दी गई थी।

7

आपस में लड़ने वाले दोनों भाइयों के साथ जाकर सुबह की सुफेदी निकलने के साथ ही कोतवाल ने माधवी की सूरत देखी और यह समझ कर कि दीवान साहब को छोड़ महारानी अब मुझसे प्रेम रखना चाहती हैं, बहुत खुश हुआ। कोतवाल साहब के गुमान में भी न था कि वे ऐयारों के फेर में पड़े हैं। उनको इन्द्रजीतसिंह के कैद होने और वीरेन्द्रसिंह के ऐयारों के यहाँ पहुँचने की खबर ही न थी। वह तो जिस तरह हमेशा रिआया लोगों के घर अकेले पहुँच कर तहकीकात किया करते थे, उसी तरह आज भी सिर्फ दो अर्दली के सिपाहियों को साथ ले इन दोनों ऐयारों के फेर में पड़ घर से निकल पड़े थे।

कोतवाल साहब ने जब माधवी को पहचाना, तो अपने सिपाहियों को उसके सामने ले जाना मुनासिब न समझा और अकेले ही माधवी के पास पहुँचे। देखा कि हकीकत में उन्हीं की तस्वीर सामने रक्खे माधवी उदास बैठी है।

कोतवाल साहब को देखते ही माधवी उठ खड़ी हुई और मुहब्बत-भरी निगाहों से उनकी तरफ देख कर बोली—

"देखो, मैं तुम्हारे लिए कितनी बेचैन हूँ, पर तुम्हें मेरी जरा भी खबर नहीं!"

कोतवाल—अगर मुझे यकायक इस तरह अपनी किस्मत के जागने की खबर होती तो क्या मैं लापरवाह बैठा रहता? कभी नहीं, मैं तो आप ही दिन-रात आपसे मिलने की उम्मीद में अपना खून सुखा रहा था।

माधवी—(हाथ का इशारा करके) देखो, ये दोनों आदमी बड़े ही बदमाश हैं, इनको यहाँ से चले जाने के लिए कहो तो फिर हमसे-तुमसे बातें होंगी।

इतना सुनते ही कोतवाल साहब ने उन दोनों भाइयों की तरफ, जो हकीकत में भैरोंसिंह और तारासिंह थे, कड़ी निगाह से देखा और कहा, "तुम दोनों अभी-अभी यहाँ से भाग जाओ, नहीं तो बोटी-बोटी काट कर रख दूँगा।"

भैरोंसिंह और तारासिंह वहाँ से चलते बने। इधर चपला, जो माधवी की सूरत बनी हुई थी, कोतवाल को बातों में फँसाये हुए वहाँ से दूर एक गुफा के मुहाने पर ले गई

और बैठ कर बातचीत करने लगो।

चपला माधवी की सूरत तो बनी मगर उसकी और माधवी की उम्र में बहुत-कुछ फर्क था। कोतवाल बड़ा धूर्त और चालाक था। सूरज की चमक में जब उसने माधवी की सूरत अच्छी तरह देखी और बातों में भी कुछ फर्क पाया तो फौरन उसे खटका पैदा हुआ और वह बड़े गौर से उसे सिर से पैर तक देख अपनी निगाहों की तराजू पर तौलने और जाँचने लगा। चपला समझ गई कि अब कोतवाल को शक पैदा हो गया, देर करना मुनासिब न जान उसने जफील (सीटी) बजाई। उसी समय गुफा के अन्दर से देवीसिंह निकल आये और कोतवाल साहब से तलवार रख देने के लिए कहा।

कोतवाल ने भी जो सिपाही और शेरदिल आदमी था बिना लड़े-भिड़े अपने को कैदी बना देना पसन्द न किया और म्यान से तलवार निकाल देवीसिंह पर हमला किया। थोड़ी ही देर में देवीसिंह ने उसे अपने खंजर से जख्मी किया और जमीन पर पटक उसकी मुश्कें बाँध डालीं।

कोतवाल साहब का हुक्म पा भैरोंसिंह और तारासिंह जब उनके सामने से चले गये तो वहाँ पहुँचे जहाँ कोतवाल के साथी दोनों सिपाही खड़े अपने मालिक के लौट आने की राह देख रहे थे। इन दोनों ऐयारों ने उन सिपाहियों को अपनी मुश्कें बँधवाने के लिए कहा मगर उन्होंने इन दोनों को साधारण समझ मंजूर न किया और लड़ने-भिड़ने को तैयार हो गये। उन दोनों की मौत आ चुकी थी, आखिर भैरोंसिंह और तारासिंह के हाथ से मारे गये, मगर उसी समय बारीक आवाज में किसी ने इन दोनों ऐयारों को पुकार कर कहा, "भैरोंसिंह और तारासिंह, अगर मेरी जिन्दगी है, तो बिना इसका बदला लिये न छोड़ूँगी!"

भैरोंसिंह ने उस तरफ देखा जिधर से आवाज आई थी। एक लड़का भागता हुआ दिखाई पड़ा। ये दोनों उसके पीछे दौड़े, मगर पकड़ न सके क्योंकि उस पहाड़ी की छोटी-छोटी कन्दराओं और खोहों में न मालूम कहाँ छिपकर उसने इन दोनों के हाथ से अपने को बचा लिया।

पाठक समझ गये होंगे कि इन दोनों ऐयारों को पुकार कर चिताने वाली वही तिलोत्तमा है जिसने बात करते-करते माधवी से इन दोनों ऐयारों के हाथ कोतवाल के फँस जाने का समाचार कहा था।

8

इस जगह हम उस तालाब का हाल लिखते हैं जिसका जिक्र कई दफे ऊपर आ चुका है, जिसमें एक औरत को गिरफ्तार करने के लिए योगिनी और वनचरी कूदी थीं, या जिसके किनारे बैठ हमारे ऐयारों ने माधवी के दीवान, कोतवाल और सेनापति को पकड़ने के लिए राय पक्की की थी।

यही तालाब उस रमणीक स्थान में पहुँचने का रास्ता था जिसमें कुँअर इन्द्रजीतसिंह कैद हैं। इसका दूसरा मुहाना वही पानी वाली सुरंग थी जिसमें कुँअर इन्द्रजीतसिंह घुसे थे और कुछ दूर जाकर जल से भरी देख लौट आए थे या जिसको तिलोत्तमा ने अब पत्थर के ढोंकों से बन्द करा दिया है।

जिस पहाड़ी के नीचे यह तालाब था उसी पहाड़ी के दूसरी तरफ वह गुप्त स्थान था जिसमें इन्द्रजीतसिंह कैद थे। इस राह से हरएक का आना मुश्किल था, हाँ, ऐयार लोग अलबत्ता जा सकते थे जिनका दम खूब सधा हुआ था और तैरना बखूबी जानते थे, पर इस तालाब की राह से वहाँ तक पहुँचने के लिए कारीगरों ने एक सुभीता भी किया था। उस सुरंग से इस तालाब की जाट (लाट) तक भीतर-भीतर एक मजबूत जंजीर लगी हुई थी जिसे थाम कर यहाँ तक पहुँचने में बड़ा ही सुभीता होता था।

कोतवाल साहब को गिरफ्तार करने के बाद कई दफे चपला ने चाहा कि इस तालाब की राह इन्द्रजीतसिंह के पास पहुँच कर इधर के हाल-चाल की खबर करे, मगर ऐसा न कर सकी, क्योंकि तिलोत्तमा ने सुरंग का मुँह बन्द करा दिया था। अब हमारे ऐयारों को निश्चय हो गया कि दुश्मन सँभल बैठा और उसको हम लोगों की खबर हो गई। इधर कोतवाल साहब के गिरफ्तार होने से और उनके सिपाहियों की लाश मिलने पर शहर में हलचल मच रही थी। दीवान साहब वगैरह इस खोज में परेशान हो रहे थे कि हम लोगों का दुश्मन ऐसा कौन आ पहुँचा जिसने कोतवाल साहब को गायब कर दिया।

कई रोज के बाद एक दिन आधी रात के समय भैरोंसिंह, तारासिंह, पण्डित बद्रीनाथ, देवीसिंह और चपला इस तालाब पर बैठे आपस में सलाह कर रहे थे और सोच रहे थे कि अब कुँअर इन्द्रजीतसिंह के पास किस तरह पहुँचना चाहिए और उनके छुड़ाने की क्या तरकीब करनी चाहिए।

कमला—अफसोस, मैंने जो ताली तैयार की थी वह अपने साथ लेती आई, नहीं, तो इन्द्रजीतसिंह उस ताली से जरूर कुछ-न-कुछ काम निकालते। अब हम लोगों का वहाँ तक पहुँचना बहुत मुश्किल हो गया।

बद्रीनाथ—इस पहाड़ी के उस पार ही तो इन्द्रजीतसिंह हैं! चाहे यह पहाड़ी कैसी ही बेढब क्यों न हो, मगर हम लोग उस पार पहुँचने के लिए चढ़ने-उतरने की जगह बना ही सकते हैं।

भैरोंसिंह—मगर यह काम कई दिनों का है।

तारा—सब से पहले इस बात की निगरानी करनी चाहिए कि माधवी ने जहाँ इन्द्रजीतसिंह को कैद कर रखा है वहाँ कोई ऐसा मर्द न पहुँचने पावे जो उन्हें सता सके, औरतें यदि पाँच सौ भी होंगी तो कुछ कर न सकेंगी।

देवीसिंह—कुँअर इन्द्रजीतसिंह ऐसे बोदे नहीं हैं कि यकायक किसी के फंदे में आ जावें, मगर फिर भी हम लोगों को होशियार रहना चाहिए। आज-कल में उन तक पहुँचने का मौका नहीं मिलेगा, तो हम इस घर को उजाड़ डालेंगे और दीवान साहब वगैरह को जहन्नुम में पहुँचा देंगे।

भैरोंसिह—अगर कुमार को यह मालूम हो गया कि हम लोगों के आने-जाने का रास्ता बन्द कर दिया गया तो वे चुप न बैठे रहेंगे, कुछ-न-कुछ फसाद जरूर मचावेंगे।

तारा—बेशक।

इसी तरह की बहुत-सी बातें वे लोग कर रहे थे कि तालाब के उस पार जल में उतरता हुआ एक आदमी दिखाई पड़ा। ये लोग टकटकी बाँध उसी तरफ देखने लगे। वह आदमी जल में कूदा और जाट के पास पहुँच कर गोता मार गया, जिसे देख भैरोंसिह ने कहा, "बेशक यह कोई ऐयार है जो माधवी के पास जाना चाहता है।"

चपला—मगर यह माधवी का ऐयार नहीं है, अगर माधवी की तरफ का होता तो रास्ता बन्द होने का हाल इसे मालूम होता।

भैरोंसिह—ठीक है।

तारासिंह—अगर माधवी की तरफ का नहीं तो हमारे कुमार का पक्षपाती होगा।

देवीसिंह—वह लौटे तो अपने पास बुलाना चाहिए।

थोड़ी ही देर बाद वह आदमी जाट के पास जाकर निकला और जाट थाम जरा सुस्ताने लगा, कुछ देर बाद किनारे पर चला आया और तालाब के ऊपर वाले चौतरे पर बैठ कुछ सोचने लगा।

भैरोंसिह अपने ठिकाने से उठे और धीरे-धीरे उस आदमी की तरफ चले। जब उसने अपने पास किसी को आते देखा तो उठ खड़ा हुआ, साथ ही भैरोंसिह ने आवाज दी, "डरो मत, जहाँ तक मैं समझता हूँ तुम भी उसी की मदद किया चाहते हो जिसके छुड़ाने की फिक्र में हम लोग हैं।"

भैरोंसिह के इतना कहते ही उस आदमी ने खुशी-भरी आवाज से कहा, "वाह-वाह-वाह, आप भी यहाँ पहुँच गये! सच पूछो तो यह सब फसाद तुम्हारा ही खड़ा किया हुआ है।"

भैरोंसिह—जिस तरह मेरी आवाज तूने पहचान ली उसी तरह तेरी मुहब्बत ने मुझे भी कह दिया कि तू कमला है।

कमला—बस-बस, रहने दीजिये, आप लोग कितने बड़े मुहब्बती हैं इसे मैं खूब जानती हूँ।

भैरोंसिह—जानती हो तो ज्यादा क्या कहूँ?

कमला—कहने का मुँह भी तो हो!

भैरोंसिह—कमला, मैं तो यही चाहता हूँ कि तुम्हारे पास बैठा बातें ही करता रहूँ मगर इस समय मौका नहीं है क्योंकि (हाथ का इशारा करके) पण्डित बद्रीनाथ, देवीसिंह, तारासिंह, तारासिह और माँ वहीं बैठी हुई हैं। तुमको तालाब में जाते और नाकाम लौटते हम लोगों ने देख लिया और इसी से हम लोगों ने मालूम कर लिया कि तुम माधवी की तरफदार नहीं हो, अगर होतीं तो सुरंग के बन्द किये जाने का हाल तुम्हें जरूर मालूम होता।

कमला—क्या तुम्हें सुरंग बन्द करने का हाल मालूम है?

भैरोंसिंह—हाँ, हम जानते हैं।

कमला—फिर, अब क्या करना चाहिए ?

भैरोंसिंह—तुम वहाँ चली चलो जहाँ हम लोगों के संगी-साथी हैं, उसी जगह मिल-जुल कर सलाह करेंगे।

भैरोंसिंह कमला को लिए अपनी माँ चपला के पास पहुँचे और पुकार कर कहा, "माँ, यह कमला है, इसका नाम तो तुमने सुना ही होगा।"

"हाँ-हाँ, मैं इसे बखूबी जानती हूँ।" यह कह चपला ने उठ कर कमला को गले लगा लिया और कहा, "बेटी तू अच्छी तरह तो है ? मैं तेरी बड़ाई बहुत दिनों से सुन रही हूँ, भैरोंसिंह ने तेरी बड़ी तारीफ की थी, मेरे पास बैठ और कह किशोरी कैसी है ?"

कमला—(बैठ कर) किशोरी का हाल क्या पूछती हैं ? वह बेचारी तो माधवी की जेल में पड़ी है, ललिता कुँअर इन्द्रजीतसिंह के नाम का धोखा देकर उसे ले आई।

भैरोंसिंह—(चौंक कर) क्या यहाँ तक नौबत पहुँच गई ?

कमला—जी हाँ, मैं वहाँ मौजूद न थी, नहीं तो ऐसा न होने पाता !

भैरोंसिंह—खुलासा हाल कहो, क्या हुआ ?

कमला ने सब हाल हाल किशोरी के धोखा खाने और ललिता के पकड़ लेने का सुना कर कहा, "यह बखेड़ा (भैरोंसिंह की तरफ इशारा करके) इन्हीं का मचाया हुआ है, न ये इन्द्रजीतसिंह बन कर शिवदत्तगढ़ जाते न बेचारी किशोरी की यह दशा होती।"

चपला—हाँ, मैं सुन सकी हुँ। इसी कसूर पर बेचारी को शिवदत्त ने अपने यहाँ से निकाल दिया। खैर, तूने यह बड़ा काम किया कि ललिता को पकड़ लिया, अब हम लोग अपना काम सिद्ध कर लेंगे।

कमला—आप लोगों ने क्या किया और अब यहाँ क्या करने का इरादा है ?

चपला ने भी अपना और इन्द्रजीतसिंह का सब हाल कह सुनाया। थोड़ी देर तक बातचीत होती रही। सुबह की सफेदी निकलना ही चाहती थी कि ये लोग वहाँ से उठ खड़े हुए और एक पहाड़ी की तरफ चले गए।

9

कुँअर इन्द्रजीतसिंह अब जबर्दस्ती करने को उतारू हुए और इस ताक में लगे कि माधवी सुरंग का ताला खोल दीवान से मिलने के लिए महल में जाय तो मैं अपना रंग दिखाऊँ। तिलोत्तमा के होशियार कर देने से माधवी भी चेत गई थी और दीवान साहब के पास आना-जाना उसने बिल्कुल बन्द कर दिया था, मगर जब से पानी वाली सुरंग बन्द की गई तब से तिलोत्तमा इसी दूसरी सुरंग की राह आने-जाने लगी और इस सुरंग की ताली जो माधवी के पास रहती थी अपने पास रखने लगी। पानी वाली सुरंग के बन्द होते ही इन्द्रजीतसिंह जान गये कि अब इन औरतों की आमद-रफ्त इसी सुरंग

से होगी, मगर माधवी ही की ताक में लगे रहने से कई दिनों तक उनका मतलब सिद्ध नहीं हुआ।

अब कुँअर इन्द्रजीतसिंह उस दालान में ज्यादा टहलने लगे जिसमें सुरंग के दरवाजे वाली कोठरी थी। एक दिन आधी रात के समय माधवी का पलंग खाली देख इन्द्रजीतसिंह ने जाना कि वह बेशक दीवान से मिलने गई है। वह भी पलंग से उठ खड़े हुए और खूँटी से लटकती हुई एक तलवार उतारने के बाद जलते शमादान को बुझा उसी दालान में पहुँचे जहाँ इस समय बिल्कुल अँधेरा था और उसी सुरंग वाले दरवाजे के बगल में छिप कर बैठ रहे। जब पहर भर रात बाकी रही उसी सुरंग का दरवाजा भीतर से खुला और एक औरत ने इस तरफ निकल कर फिर ताला बन्द करना चाहा, मगर इन्द्रजीतसिंह ने फुर्ती से उसकी कलाई पकड़ कर ताली छीन ली और कोठरी के अन्दर जा भीतर से ताला बन्द कर लिया।

वह औरत माधवी थी जिसके हाथ से इन्द्रजीतसिंह ने ताली छीनी थी। वह अँधेरे में इन्द्रजीतसिंह को पहचान न सकी। हाँ, उसके चिल्लाने से कुमार जान गए कि यह माधवी है।

इन्द्रजीतसिंह एक दफे उस सुरंग में जा ही चुके थे, उसके रास्ते और सीढ़ियों को वे बखूबी जानते थे, इसलिए अँधेरे में उनको बहुत तकलीफ न हुई और वे अन्दाज से टटोलते हुए तहखाने की सीढ़ियाँ उतर गए। नीचे पहुँच कर जब उन्होंने दूसरा दरवाजा खोला, तो उन्हें सुरंग के अन्दर कुछ दूर पर रोशनी मालूम हुई जिसे देख उन्हें ताज्जुब हुआ और बहुत धीरे-धीरे आगे बढ़ने लगे, जब उस रोशनी के पास पहुँचे एक औरत पर नजर पड़ी जो हथकड़ी और बेड़ी के सबब उठने-बैठने से बिल्कुल लाचार थी। चिराग की रोशनी में इन्द्रजीतसिंह ने उसको और उसने इनको अच्छी तरह देखा और दोनों ही चौंक पड़े।

ऊपर जिक्र पूरा आ जाने से पाठक समझ ही गये होंगे कि यह किशोरी है जो तकलीफ के सबब बहुत ही कमजोर और सुस्त हो रही थी। इन्द्रजीतसिंह के दिल में उसकी तस्वीर मौजूद थी और इन्द्रजीतसिंह उसकी आँखों में पुतली की तरह डेरा जमाये हुए थे। एक ने दूसरे को बखूबी पहचान लिया और ताज्जुब मिली हुई खुशी के सबब देर तक एक-दूसरे की सूरत देखते रहे, इसके बाद इन्द्रजीतसिंह ने उसकी हथकड़ी और बेड़ी खोल डाली और प्रेम से हाथ पकड़ कर कहा, "किशोरी! तू यहाँ कैसे आ गई?"

किशोरी—(इन्द्रजीतसिंह के पैरों पर गिर कर) अभी तक तो मैं यही सोचती थी कि मेरी बदकिस्मती मुझे यहाँ ले आई मगर नहीं, अब मुझे कहना पड़ा कि मेरी खुशकिस्मती ने मुझे यहाँ पहुँचाया और ललिता ने मेरे साथ बड़ी नेकी की जो मुझे लेकर आई, नहीं तो न मालूम कब तक तुम्हारी सूरत···

इससे ज्यादा बेचारी किशोरी कुछ कह न सकी और जार-जार रोने लगी। इन्द्रजीतसिंह भी बराबर रो रहे थे। आखिर उन्होंने किशोरी को उठाया और दोनों हाथों से उसकी कलाई पकड़े हुए बोले—

"हाय, मुझे कब उम्मीद थी कि मैं तुम्हें यहाँ देखूँगा। मेरी जिन्दगी में आज की खुशी याद रखने लायक होगी। अफसोस, दुश्मन ने तुम्हें बड़ा ही कष्ट दिया!"

किशोरी—बस, अब मुझे किसी तरह की आरज़ू नहीं है। मैं ईश्वर से यही माँगती थी कि एक दिन तुम्हें अपने पास देख लूँ सो मुराद आज पूरी हो गई। अब चाहे माधवी मुझे मार भी डाले तो मैं खुशी से करने को तैयार हूँ।

इन्द्रजीतसिंह—जब तक मेरे दम में दम है किसकी मजाल है जो तुम्हें दुःख दे! अब तो किसी तरह इस सुरंग की ताली मेरे हाथ में लग गई है जिससे हम दोनों को निश्चय समझना चाहिए कि इस कैद से छुट्टी मिल गई। अगर जिन्दगी है तो मैं माधवी से समझ लूँगा, वह जाती कहाँ है?

इन दोनों को यकायक इस तरह के मिलाप से कितनी खुशी हुई, यह ये ही जानते होंगे। दीन-दुनिया की सुध भूल गये। यह याद ही नहीं रहा कि हम कहाँ जाने वाले थे, कहाँ हैं, क्या कर रहे हैं और क्या करना चाहिए। मगर यह खुशी बहुत ही थोड़ी देर के लिए थी, क्योंकि इसी समय हाथ में मोमबत्ती लिए एक औरत उसी तरफ से आती हुई दिखाई दी जिधर इन्द्रजीतसिंह जाने वाले थे और जिसको देख ये दोनों ही चौंक पड़े।

वह औरत इन्द्रजीतसिंह के पास पहुँची और बदन का दाग दिखला बहुत जल्द जाहिर कर दिया कि वह चपला है।

चपला—इन्द्रजीतसिंह! हैं, तुम यहाँ कैसे आए! (चारों तरफ देख कर) मालूम होता है बेचारी किशोरी को तुमने इसी जगह पाया है।

इन्द्रजीतसिंह—हाँ, यह इसी जगह कैद थी, मगर मैं नहीं जानता था। मैं तो माधवी के हाथ से जबर्दस्ती ताली छीन इस सुरंग में चला आया और उसे चिल्लाता ही छोड़ आया।

चपला—माधवी तो अभी इसी सुरंग की राह से वहाँ गई थी।

इन्द्रजीतसिंह—हाँ, और मैं दरवाजे के पास छिपा खड़ा था। जैसे ही वह ताला खोल अन्दर पहुँची वैसे ही मैंने पकड़ लिया और ताली छीन इधर आ भीतर से ताला बन्द कर दिया।

चपला—तुमने बहुत बुरा किया, इतनी जल्दी कर जाना मुनासिब न था। अब तुम दो रोज भी माधवी के पास नहीं गुजार सकते, क्योंकि वह बड़ी ही बदकार और चाण्डालिन की तरह बेदर्द है, अब वह तुम्हें पावे तो किसी-न-किसी तरह धोखा दे बिना जान लिए कभी न छोड़े।

इन्द्रजीतसिंह—आखिर मैं ऐसा न करता तो क्या करता? उधर जिस राह से तुम आयी थीं अर्थात् पानी वाली सुरंग का मुहाना मेरे देखते-देखते बिल्कुल बन्द कर दिया गया जिससे मुझे मालूम हो गया कि तुम्हारे आने-जाने की खबर उस शैतान की बच्ची को लग गई और तुम्हारे मिलने या किसी तरह की मदद पहुँचने की उम्मीद बिल्कुल जाती रही, पर नामर्दों की तरह मैं अपने को कब तक बनाये रहता, और अब मुझे माधवी के पास लौट जाने की जरूरत ही क्या है?

चपला—बेशक हम लोगों की खबर माधवी को लग गई, मगर तुम बिल्कुल नहीं जानते कि तिलोत्तमा ने कितना फसाद मचा रखा है और इधर महल की तरफ कितनी मजबूती कर रखी है। तुम किसी तरह इधर से नहीं निकल सकते। अफसोस, अब हम लोग भारी खतरे में पड़ गये।

इन्द्रजीतसिंह—रात का तो समय है, लड़-भिड़ कर निकल जायँगे।

चपला—तुम दिलावर हो, तुम्हारा ऐसा खयाल करना बहुत मुनासिब है मगर (किशोरी की तरफ इशारा करके) इस बेचारी की क्या दशा होगी? इसके सिवाय अब सवेरा हुआ ही चाहता है।

इन्द्रजीतसिंह—फिर क्या किया जाये?

चपला—(कुछ सोच कर) क्या तुम जानते हो इस समय तिलोत्तमा कहाँ है?

इन्द्रजीतसिंह—जहाँ तक मैं खयाल करता हूँ, इस खोह के बाहर है।

चपला—यह और मुश्किल है, वह बड़ी ही चालाक है, इस समय भी जरूर किसी धुन में लगी होगी, वह हम लोगों का ध्यान दम भर के लिए भी नहीं भुलाती।

इन्द्रजीतसिंह—इस समय हमारी मदद के लिए इस महल में और भी कोई मौजूद है या अकेली तुम ही हो?

चपला—देवीसिंह, भैरोंसिंह और पण्डित बद्रीनाथ तो महल के बाहर इधर-उधर लुके-छिपे मौजूद हैं, मगर सूरत बदले हुए कमला इस सुरंग के मुहाने पर, अर्थात् बाहर वाले कमरे में खड़ी है, मैं उसे अपनी हिफाजत के लिए वहाँ छोड़ आई हूँ।

किशोरी—(चौंक कर) कमला कौन?

चपला—तुम्हारी सखी!

किशोरी—वह यहाँ कैसे आई?

चपला—इसका हाल तो बहुत लम्बा-चौड़ा है इस समय कहने का मौका नहीं, मुख्तसिर यह है कि तुमको धोखा देनेवाली ललिता को उसने पकड़ लिया और खुद तुमको छुड़ाने के लिए आई है, यहाँ हम लोगों से भी मुलाकात हो गई। (इन्द्रजीतसिंह की तरफ देख कर) बस अब यहाँ ठहर कर अपने को इस सुरंग के अन्दर ही फँसा कर मार डालना मुनासिब नहीं।

इन्द्रजीतसिंह—बेशक यहाँ ठहरना ठीक न होगा। चलो चलें, जो होगा देखा जायगा।

तीनों वहाँ से चल पड़े, और सुरंग के दूसरे मुहाने अर्थात् उस कमरे में पहुँचे, जिसमें माधवी को दीवान साहब के साथ बैठे हुए इन्द्रजीतसिंह ने देखा था। वहाँ इस समय सूरत बदले हुए कमला भी मौजूद थी, और रोशनी बखूबी हो रही थी। इन तीनों को देखते ही कमला चौंक पड़ी और किशोरी को गले लगा लिया, मगर तुरन्त ही अलग होकर चपला से बोली, "सुबह की सुफेदी निकल आई है, यह बहुत ही बुरा हुआ।"

चपला—जो हो, अब कर ही क्या सकते हैं!

कमला—खैर, जो होगा देखा जायगा, जल्दी नीचे उतरो।

इस खुशनुमा और आलीशान मकान के चारों तरफ एक बाग था जिसके चारों तरफ चहारदीवारियाँ बनी हुई थीं। बाग के पूरब तरफ एक बहुत बड़ा फाटक था, जहाँ बारी-बारी से बीस आदमी नंगी तलवार लिए घूम-घूम कर पहरा देते थे। चपला और कमला कमन्द के सहारे बाग की पिछली दीवार लाँघ कर यहाँ पहुँची थीं और इस समय भी ये चारों उसी तरह निकल जाना चाहते थे।

हम यह कहना भूल गये कि बाग के चारों कोनों में चार गुमटियाँ बनी हुई थीं, जिनमें सौ सिपाहियों का डेरा था और आजकल तिलोत्तमा के हुक्म से वे सभी हरदम तैयार रहते थे। तिलोत्तमा ने उन लोगों को यह भी कह रखा था कि जिस समय मैं अपने बनाये हुए बम के गोले को जमीन पर पटकूँ और उसकी भारी आवाज तुम लोग सुनो, फौरन हाथ में नंगी तलवारें लिए बाग के चारों तरफ फैल जाओ, जिस आदमी को आते-जाते देखो, तुरन्त गिरफ्तार कर लो।

चारों आदमी सुरंग का दरवाजा खुला छोड़ नीचे उतरे, और कमरे के बाहर हो बाग के पिछली दीवार की तरफ जैसे ही चले कि तिलोत्तमा पर नजर पड़ी। चपला यह खयाल करके कि अब बहुत ही बुरा हुआ, तिलोतमा की तरफ लपकी और उसे पकड़ना चाहा, मगर वह शैतान लोमड़ी की तरह चक्कर मार निकल ही गई और एक किनारे पहुँच मसाले से भरा हुआ गेंद जमीन पर पटककर, जिसकी भारी आवाज चारों तरफ गूँज गई और उसके कहे मुताबिक सिपाहियों ने होशियार होकर बाग को चारों तरफ से घेर लिया।

तिलोत्तमा के भाग कर निकल जाते ही चारों आदमी, जिनके आगे-आगे हाथ में नंगी तलवार लिए इन्द्रजीतसिंह थे, बाग की पिछली दीवार की तरफ न जाकर सदर फाटक की तरफ लपके, मगर वहाँ पहुँचते ही पहरे वाले सिपाहियों से रोके गये और मार-काट शुरू हो गई। इन्द्रजीतसिंह ने तलवार तथा चपला और कमला ने खंजर चलाने में अच्छी बहादुरी दिखाई।

हमारे ऐयार लोग भी बाग के बाहर चारों तरफ लुके-छिपे खड़े थे, तिलोत्तमा के चलाये हुए गोले की आवाज सुनकर और किसी भारी फसाद होने का खयाल कर फाटक पर आ जुटे और खंजर निकाल माधवी के सिपाहियों पर टूट पड़े। बात की बात में माधवी के बहुत से सिपाहियों की लाशें जमीन पर दिखाई देने लगीं, और बहुत बहादुरी के साथ लड़ते-भिड़ते हमारे बहादुर लोग किशोरी को लिए निकल ही गए।

ऐयार लोग तो दौड़ने-भागने में तेज होते ही हैं, इन लोगों का भाग जाना कोई आश्चर्य न था, मगर गोद में किशोरी को उठाये इन्द्रजीतसिंह उन लोगों के बराबर में कब दौड़ सकते थे और ऐयार लोग भी ऐसी अवस्था में उनका साथ कैसे छोड़ सकते थे। लाचार जैसे बना, उन दोनों को भी साथ लिए हुए मैदान का रास्ता लिया। इस समय पूरब की तरफ सूर्य की लालिमा अच्छी तरह फैल चुकी थी।

माधवी के दीवान अग्निदत्त का मकान इस बाग से बहुत दूर न था, और वह बड़े सवेरे उठा करता था। तिलोत्तमा के चलाये हुए गोले की आवाज उसके कानों में पहुँच ही चुकी थी, बाग के दरवाजे पर लड़ाई होने की खबर भी उसे उसी समय मिल

गई। वह शैतान का बच्चा बहुत ही दिलेर और लड़ाका था, फौरन ढाल-तलवार ले मकान के नीचे उतर आया, और अपने यहाँ रहने वाले कई सिपाहियों को साथ ले बाग के दरवाजे पर पहुँचा। देखा कि बहुत से सिपाहियों की लाशें जमीन पर पड़ी हुई हैं और दुश्मन का पता नहीं है।

बाग के चारों तरफ फैले हुए सिपाही भी फाटक पर आ जुटे थे और गिनती में एक सौ से ज्यादा थे। अग्निदत्त ने सभी को ललकारा और साथ ले इन्द्रजीतसिंह का पीछा किया। थोड़ी ही दूर पर उन लोगों को पा लिया, और चारों तरफ से घेर, मार-काट शुरू कर दी।

अग्निदत्त की निगाह किशोरी पर जा पड़ी। अब क्या पूछना था? सब तरफ का खयाल छोड़ इन्द्रजीतसिंह के ऊपर टूट पड़ा। बहुत से आदमियों से लड़ते हुए इन्द्रजीतसिंह किशोरी को सँभाल न सके, और उसे छोड तलवार चलाने लगे, अग्निदत्त को मौका मिला, इन्द्रजीतसिंह के हाथ जख्मी होने पर भी उसने दम न लिया और किशोरी को गोद में उठा ले भागा। यह देखकर इन्द्रजीतसिंह की आँखों में खून उतर आया। इतनी भीड़ को काटकर उसका पीछा तो न कर सके, मगर अपने ऐयारों को ललकार कर इस तरह की लड़ाई की, कि उन सौ में से आधे बेदम होकर जमीन पर गिर पड़े, और बाकी अपने सरदार को चला गया देख जान बचा भाग गये। इन्द्रजीतसिंह भी बहुत से जख्मों के लगने से बेहोश होकर जमीन पर गिर पड़े। चपला और भैरोंसिंह वगैरह बहुत ही बेदम हो रहे थे, तो भी वे लोग बेहोश इन्द्रजीतसिंह को उठा वहाँ से निकल गये, और फिर किसी की निगाह पर न चढ़े।

10

जख्मी इन्द्रजीतसिंह को लिए हुए उनके ऐयार लोग वहाँ से दूर निकल गए और बेचारी किशोरी को दुष्ट अग्निदत्त उठाकर अपने घर ले गया। यह सब हाल देख तिलोत्तमा वहाँ से चलती बनी और बाग के अन्दर कमरे में पहुँची। देखा कि सुरंग का दरवाजा खुला हुआ है और ताली भी उसी जगह जमीन पर पड़ी है। उसने ताली उठा ली और सुरंग के अन्दर जा किवाड़ बन्द करती हुई माधवी के पास पहुँची। माधवी की अवस्था इस समय बहुत ही खराब हो रही थी। दीवान साहब पर बिल्कुल भेद खुल गया होगा, यह समझ मारे डर के वह घबरा गई और उसे निश्चय हो गया कि अब किसी तरह कुशल नहीं है, क्योंकि बहुत दिनों की लापरवाही में दीवान साहब ने तमाम रिआया और फौज को अपने कब्जे में कर लिया था। तिलोत्तमा ने वहाँ पहुँचते ही माधवी से कहा—

तिलोत्तमा—अब क्या सोच रही है और क्यों रोती है? मैंने पहले ही कहा था कि इन बखेड़ों में मत फँस, इसका नतीजा अच्छा न होगा! वीरेन्द्रसिंह के ऐयार लोग

जिसके पीछे पड़ते हैं बला की तरह उसका सत्यानाश कर डालते हैं, पर तूने मेरी बात न मानी, अब यह दिन देखने की नौबत पहुँची ।

माधवी—वीरेन्द्रसिंह का कोई ऐयार नहीं आया । इन्द्रजीतसिंह जबरदस्ती मेरे हाथ से ताली छीनकर चले गये, मैं कुछ न कर सकी ।

तिलोत्तमा—आखिर तू उनका कर ही क्या सकती थी ?

माधवी—अब उन लोगों का क्या हाल है ?

तिलोत्तमा—वे लोग लड़ते-भिड़ते और तुम्हारे सैकड़ों आदमियों को यमलोक पहुँचाते निकल गये । किशोरी को आपके दीवान साहब उठा ले गये । जब उनके हाथ किशोरी लग गई, तब उन्हें लड़ने-भिड़ने की जरूरत ही क्या थी ? किशोरी की सूरत देखकर तो आसमान की चिड़ियाएँ भी नीचे उतर आती हैं, फिर दीवान साहब क्या चीज हैं ? अब तो वह दुष्ट इस धुन में होगा कि तुम्हें मार पूरी तरह से राजा बन जाय और किशोरी को रानी बनाये, तुम उसका कर ही क्या सकती हो !

माधवी—हाय, मेरे बुरे कर्मों ने मुझे मिट्टी में मिला दिया । अब मेरी किस्मत में राज्य नहीं है । अब तो मालूम होता है कि मैं भिखमंगिनों की तरह दर-दर मारी-मारी फिरूँगी ।

तिलोत्तमा—हाँ, अगर किसी तरह तुम यहाँ से जान बचा कर निकल जाओगी तो भीख माँग कर भी जान बचा लोगी, नहीं तो बस यह भी उम्मीद नहीं है ।

माधवी—क्या दीवान साहब मुझसे इस तरह की बेमुरौवती करेंगे ?

तिलोत्तमा—अगर तुझे उस पर भरोसा है तो रह और देख कि क्या होता है, पर मैं तो अब एक पल भी टिकने वाली नहीं !

माधवी—अगर किशोरी उसके हाथ न पड़ गई होती, तो मुझे किसी तरह की उम्मीद होती, और कोई बहाना भी कर सकती थी, मगर अब तो ··

इतना कह माधवी बेतरह रोने लगी, यहाँ तक कि हिचकी बँध गई और वह तिलोत्तमा के पैरों पर गिर कर बोली—

"तिलोत्तमा, मैं कसम खाती हूँ कि आज से तेरे हुक्म के खिलाफ कोई काम न करूँगी ।"

तिलोत्तमा—अगर ऐसा है तो मैं भी कसम खाकर कहती हूँ कि तुझे फिर इसी दर्जे पर पहुँचाऊँगी और वीरेन्द्रसिंह के ऐयारों और दीवान साहब से भी ऐसा बदला लूँगी कि वे भी याद करेंगे ।

माधवी—बेशक मैं तुम्हारा हुक्म मानूँगी और जो कहोगी सो करूँगी ।

तिलोत्तमा—अच्छा तो आज रात को यहाँ से निकल चलना और जहाँ तक जमा-पूँजी अपने साथ ले चलते बने ले लेना चाहिए !

माधवी—बहुत अच्छा ! मैं तैयार हूँ, जब चाहे चलो, मगर यह तो कहो कि मेरी इन सखी-सहेलियों की क्या दशा होगी ?

तिलोत्तमा—बुरों की संगत करने का जो फल सब भोगते हैं, सो ये भी भोगेंगी । मैं इनका कहाँ तक खयाल करूँगी ?

किसी की खबर नहीं लेता।

दीवान अग्निदत्त किशोरी को लेकर भागे तो सीधे अपने घर में आ घुसे। वे किशोरी की सूरत पर ऐसे मोहित हुए कि तन-बदन की सुध जाती रही। सिपाहियों ने इन्द्रजीतसिंह और उनके ऐयारों को गिरफ्तार किया या नहीं, अथवा उनकी बदौलत सभी की क्या दशा हुई, इसकी परवाह तो उन्हें जरा न रही, असल बात तो यह है कि इन्द्रजीतसिंह को वे पहचानते भी न थे।

बेचारी किशोरी की क्या दशा थी और वह किस तरह रो-रोकर अपने सिर के बाल नोंच रही थी इसके बारे में इतना ही कहना बहुत है कि अगर दो दिन तक उसकी यही दशा रही तो किसी तरह जीती न बचेगी और 'हा इन्द्रजीतसिंह, हा इन्द्रजीतसिंह' कहते-कहते प्राण छोड़ देगी।

दीवान साहब के घर में उनकी जोरू और किशोरी ही के बराबर उम्र की एक कुँआरी लड़की थी जिसका नाम कामिनी था और वह जितनी खूबसूरत थी, उतनी ही स्वभाव की भी अच्छी थी। दीवान साहब की स्त्री का भी स्वभाव और चाल-चलन अच्छा था, मगर वह बेचारी अपने पति के दुष्ट स्वभाव और बुरे व्यवहारों से बराबर दुःखी रहा करती थी और डर के मारे कभी किसी बात में कुछ रोक-टोक न करती, तिस पर भी आठ-दस दिन पीछे वह अग्निदत्त के हाथ से जरूर मार खाया करती।

बेचारी किशोरी को अपनी जोरू और लड़की के हवाले करके हिफाजत करने के अतिरिक्त समझाने-बुझाने की भी ताकीद कर दीवान साहब बाहर चले आये और अपने दीवानखाने में बैठ सोचने लगे कि किशोरी को किस तरह राजी करना चाहिए। यह औरत कौन और किसकी लड़की है, जिन लोगों के साथ यह थी वे लोग कौन हैं? और यहाँ आकर धूम-फसाद मचाने की उन्हें क्या जरूरत थी? चाल-ढाल और पोशाक से तो वे लोग ऐयार मालूम पड़ते थे मगर यहाँ उन लोगों के आने का क्या सबब था? इसी सब सोच-विचार में अग्निदत्त को आज स्नान तक करने की नौबत न आई। दिन भर इधर-उधर घूमते तथा लाशों को ठिकाने पहुँचाते और तहकीकात करते बीत गया, मगर किसी तरह इस बखेड़े का ठीक पता न लगा, हाँ, महल के पहरे वालों ने इतना कहा—"दो-तीन दिन से तिलोत्तमा हम लोगों पर सख्त ताकीद रखती थी और हुक्म दे गई थी कि जब मेरे चलाये बम के गोले की आवाज तुम लोग सुनो तो फौरन मुस्तैद हो जाओ और जिसको आते देखो गिरफ्तार कर लो।"

अब दीवान साहब का शक माधवी और तिलोत्तमा के ऊपर हुआ और देर तक सोचने-विचारने के बाद उन्होंने निश्चय कर लिया कि इस बखेड़े का हाल बेशक ये दोनों पहले ही से जानती थीं मगर यह भेद मुझसे छिपाये रखने का कोई विशेष कारण अवश्य है।

चिराग जलने के बाद अग्निदत्त अपने घर पहुँचा। किशोरी के पास न जाकर निराले में अपनी स्त्री को बुला कर उसने पूछा, "उस औरत की जुबानी उसका कुछ हाल-चाल तुम्हें मालूम हुआ या नहीं?"

अग्निदत्त की स्त्री ने कहा, "हाँ, उसका हाल मालूम हो गया। वह महाराज

शिवदत्त की लड़की है और उसका नाम किशोरी है। राजा वीरन्द्रसिंह के लड़के इन्द्रजीतसिंह पर रानी माधवी मोहित हो गई थी और उनको अपने यहाँ किसी तरह से फँसा लाकर खोह में रख छोड़ा था। इन्द्रजीतसिंह का प्रेम इस किशोरी पर था इसलिए उसने ललिता को भेज कर धोखा दे किशोरी को भी अपने फंदे में फँसा लिया था। वह भी कई दिनों से यहाँ कैद थी और वीरेन्द्रसिंह के ऐयार लोग भी कई दिनों से इसी शहर में टिके हुए थे। किसी तरह मौका मिलने पर इन्द्रजीतसिंह किशोरी को ले खोह से बाहर निकल आए और यहाँ तक नौबत आ पहुँची।"

राजा वीरेन्द्रसिंह और उनके ऐयारों का नाम सुन मारे डर के अग्निदत्त काँप उठा, बदन के रोंगटे खड़े हो गए, घबराया हुआ बाहर निकल आया और अपने दीवान-खाने में पहुँच मसनद के ऊपर गिर भूखा-प्यासा आधी रात तक यही सोचता रह गया कि अब क्या करना चाहिए।

अग्निदत्त समझ गया कि कोतवाल साहब को जरूर वीरेन्द्रसिंह के ऐयारों ने पकड़ लिया है और अब किशोरी को अपने यहाँ रखने से किसी तरह जान न बचेगी, फिर भी वह किशोरी को छोड़ना नहीं चाहता था और सोचते-विचारते जब उसका जी ठिकाने आता तब यही कहता कि "चाहे जो हो, किशोरी को कभी न छोड़ूँगा!"

किशोरी को अपने यहाँ रखकर सलामत रहने की सिवाय इसके उसे कोई तरकीब न सूझी कि वह माधवी को मार डाले और स्वयं राजा हो बैठे। आखिर इसी सलाह को उसने ठीक समझा और अपने घर से निकल माधवी से मिलने के लिए महल की तरफ रवाना हुआ, मगर वहाँ पहुँच कर सारी बातें मामूल के खिलाफ देख और भी ताज्जुब में हो गया। उसे उम्मीद थी कि खोह का दरवाजा बन्द होगा मगर नहीं, खोह का दरवाजा खुला हुआ था और माधवी की सब सखियाँ जो खोह के अन्दर रहती थीं, महल में ऊपर नीचे चारों तरफ फैली हुई थीं और रोती हुई इधर से उधर माधवी को खोज रही थीं।

रात आधी से ज्यादा जा चुकी थी, बाकी रात भी दीवान साहब ने माधवी की सखियों का इजहार लेने में बिता दी और दिन-रात का पूरा अखण्ड उपवास किये रहे। देखना चाहिए, इसका फल उन्हें क्या मिलता है।

शुरू से लेकर माधवी के भाग जाने तक का हाल उसकी सखियों ने दीवान साहब को कह सुनाया। आखिर में कहा, "सुरंग की ताली माधवी अपने पास रखती थी। इसलिए हम लोग लाचार थीं, यह सब हाल आपसे कह न सकीं।"

अग्निदत्त दाँत पीस कर रह गया। आखिर यह निश्चय किया कि कल दशहरा (विजयदशमी) है, गद्दी पर खुद बैठ राजा बन और किशोरी को रानी बना नजरें लूँगा, फिर जो होगा देखा जायगा। सुबह को वह जब अपने घर पहुँचा और पलंग पर जाकर लेटना चाहा, वैसे ही तकिए के पास एक तह किये हुए कागज पर उसकी नजर पड़ी। खोल कर देखा तो उसी की तस्वीर मालूम पड़ी, छाती पर चढ़ा हुआ एक भयानक सूरत का आदमी उसके गले पर खंजर फेर रहा था! इसे देखते ही वह चौंक पड़ा। डर और चिन्ता ने उसे ऐसा पटका कि बुखार चढ़ आया, मगर थोड़ी ही देर में चंगा हो घर के बाहर निकल फिर तहकीकात करने लगा।

11

हम ऊपर के बयान में सुबह का दृश्य लिख कर कह आये हैं कि राजा बीरेन्द्रसिंह कुंअर आनन्दसिंह और तेजसिंह सेना सहित किसी तरफ को जा रहे हैं। पाठक तो समझ ही गये होंगे कि उन्होंने जरूर किसी तरफ चढ़ाई की है और वेशक ऐसा ही है भी। राजा बीरेन्द्रसिंह ने यकायक माधवी के गयाजी पर धावा कर दिया जिसका लेना इस समय उन्होंने बहुत ही सहज समझ रक्खा था, क्योंकि माधवी के चाल-चलन की खबर उन्हें वखूबी लग गयी थी। वे जानते थे कि राज-काज पर ध्यान न दे दिन-रात ऐश में डूबे रहने वाले राजा का राज्य कितना कमजोर हो जाता है। रैयत को ऐसे राजा से कितनी नफरत हो जाती है और किसी दूसरे नेक धर्मात्मा के आ पहुँचने के लिए वे लोग कितनी मिन्नतें मानते रहते हैं।

वीरेन्द्रसिंह का खयाल बहुत ही ठीक था। गया दखल करने में उनको जरा भी तकलीफ नहीं हुई, किसी ने उनका मुकाबला न किया। एक तो उनका चढ़ा-बढ़ा प्रताप ही ऐसा था कि कोई मुकाबला करने का साहस भी नहीं कर सकता था, दूसरे बेदिल रियाया और फौज तो चाहती ही थी कि वीरेन्द्रसिंह के ऐसा कोई यहाँ का भी राजा हो। चाहे दिन-रात ऐश में डूबे और शराब के नशे में चूर रहने वाले मालिकों को कुछ भी खबर न हो, पर बड़े-बड़े जमींदारों और राजकर्मचारियों को माधवी और कुँअर इन्द्रजीत के बीच खिचाखिची की खबर लग चुकी थी और उन्हें मालूम हो चुका था कि आजकल वीरेन्द्रसिंह के ऐयार लोग राजगृह में विराज रहे हैं।

राजा वीरेन्द्रसिंह ने बेरोक-टोक शहर में पहुँच कर अपना दखल जमा लिया और अपने नाम की मुनादी करवा दी। वहाँ के दो-एक राजकर्मचारी, जो दीवान अग्निदत्त के दोस्त और खैरख्वाह थे, रंग कुरंग देख कर भाग गये; बाकी फौजी अफसरों और रैयतों ने उनकी अमलदारी खुशी से कबूल कर ली, जिसका हाल राजा वीरेन्द्रसिंह को इसी से मालूम हो गया कि उन लोगों ने दरबार में बेखौफ और हँसते हुए पहुँच कर मुबारकबाद के साथ नजरें गुजारीं।

विजयादशमी के एक दिन पहले गया का राज्य राजा वीरेन्द्रसिंह के कब्जे में आ गया और विजयादशमी को अर्थात् दूसरे दिन प्रातःकाल उनके लड़के आनन्दसिंह को यहाँ की गद्दी पर बैठे हुए लोगों ने देखा तथा नजरें दीं। अपने छोटे लड़के कुँअर आनन्द-सिंह को गया की गद्दी दे दूसरे ही दिन राजा वीरेन्द्रसिंह चुनार लौट जाने वाले थे, मगर उनके रवाना होने के पहले ही ऐयार लोग जख्मी और बेहोश कुँअर इन्द्रजीतसिंह को लिए हुए गयाजी पहुँच गये जिन्हें देख राजा वीरेन्द्रसिंह को अपना इरादा छोड़ देना पड़ा और बहुत दिन से बिछुड़े हुए प्यारे लड़के को आज इस अवस्था में पाकर उन्हें अपने तन-बदन की सुध भुला देनी पड़ी।

राजा वीरेन्द्रसिंह के मौजूद होने पर भी गयाजी का बड़ा भारी राजभवन सूना हो रहा था क्योंकि उसमें रहने वाले माधवी और दीवान अग्निदत्त के रिश्तेदार लोग

भाग गये थे और हुक्म के मुताबिक किसी ने भी उनको भागते समय नहीं रोका था। इस समय राजा वीरेन्द्रसिंह, उनके दोनों लड़कों और ऐयारों के सिवाय सिर्फ थोड़े से फौजी अफसरों का डेरा इस महल में पड़ा हुआ है। ऐयारों में सिर्फ भैरोंसिंह और तारासिंह यहाँ मौजूद हैं, बाकी के कुल ऐयार चुनार लौटा दिये गये थे। शहर के इन्तजाम में सब से पहले यह किया गया कि चिट्ठी या अरजी डालने के लिए एक बगल छेद करके दो बड़े-बड़े सन्दूक राजभवन के फाटक के दोनों तरफ लटका दिये गये और मुनादी करवा दी गई कि जिसको अपना सुख-दुःख अर्ज करना हो दरबार में हाजिर होकर अर्ज किया करे और जो किसी कारण से हाजिर न हो सके वह अर्जी लिख कर इन्हीं सन्दूकों में डाल दिया करे। हुक्म था कि बारी-बारी से ये सन्दूक दिन-रात में छः मर्तबा कुंअर आनन्दसिंह के सामने खोले जाया करें। इस इन्तजाम से गयाजी की रिआया बहुत प्रसन्न थी।

रात पहर भर से ज्यादा जा चुकी है। एक सजे हुए कमरे में, जिसमें रोशनी अच्छी तरह हो रही है, छोटी सी खूबसूरत मसहरी पर जख्मी कुँअर इन्द्रजीतसिंह लेटे हुए हल्की दुलाई गर्दन तक ओढ़े हैं। आज कई दिनों बाद उन्हें होश आई है, इससे अचम्भे में आकर इस नये कमरे में चारों तरह निगाह दौड़ा कर अच्छी तरह देख रहे हैं। बगल में बायें हाथ का ढासना पलँगड़ी पर दिये हुए उनके पिता राजा वीरेन्द्रसिंह बैठे उनका मुँह देख रहे हैं, और कुछ पायताने की तरफ हट कर पाटी पकड़े कुँअर आनन्दसिंह बैठे बड़े भाई की तरफ देख रहे हैं। पायताने की तरफ पलँगड़ी के नीचे भैरोंसिंह और तारासिंह धीरे-धीरे तलवा झँस रहे हैं। कुँअर आनन्दसिंह के बगल में देवीसिंह बैठे हैं। उनके अलावे वैद्य जर्राह और बहुत से सिपाही नंगी तलवारें लिए पहरा दे रहे हैं।

थोड़ी देर तक कमरे में सन्नाटा रहा इसके बाद कुँअर इन्द्रजीत ने अपने पिता की तरफ देख कर पूछा—

इन्द्रजीतसिंह—यह कौन सी जगह है? यह किसका मकान है?

वीरेन्द्रसिंह—यह चन्द्रदत्त की राजधानी गयाजी है। ईश्वर की कृपा से आज यह हमारे कब्जे में आ गई है। मकान भी चन्द्रदत्त ही के रहने का है। हम लोग इस शहर में अपना दखल जमा चुके थे जब तुम यहाँ पहुँचाये गये।

यह सुन इन्द्रजीतसिंह चुप हो रहे और कुछ सोचने लगे, साथ ही इसके राजगृह में दीवान अग्निदत्त के साथ होने वाली लड़ाई का समाँ उनकी आँखों के आगे घूम गया और वे किशोरी को याद कर अफसोस करने लगे। इनके बेहोश होने के बाद क्या हुआ और किशोरी पर क्या बीती इसके जानने के लिए दिल बैचेन था मगर पिता का लिहाज कर भैरोंसिंह से कुछ पूछ न सके सिर्फ ऊँची साँस लेकर रह गये मगर देवीसिंह उनके जी का भाव समझ गये और बिना पूछे ही कुछ कहने मौका समझ कर बोले, "राजगृह में लड़ाई के समय जितने आदमी आपके साथ थे ईश्वर की कृपा से सब बच गये और अपने ठिकाने पर हैं, केवल आप ही को इतना कष्ट भोगना पड़ा।"

देवीसिंह के इतना कहने से इन्द्रजीतसिंह की बेचैनी बिल्कुल ही जाती तो नहीं

रही मगर कुछ कम जरूर हो गई। इतने में दिल बहलाने का कुछ ठिकाना समझ कर देवीसिंह पुनः बोल उठे।

देवीसिंह—अर्जियों वाला सन्दूक हाजिर है, उसके देखने का समय भी हो गया है।

इन्द्रजीत—कैसा सन्दूक ?

आनन्दसिंह—यहाँ महल के फाटक पर दो सन्दूक इसलिए रख दिए गए हैं कि जो लोग दरबार में हाजिर होकर अपना दुख-सुख न कह सकें, वे लोग अरजी लिख कर इस सन्दूक में डाल दिया करें।

इन्द्रजीतसिंह—बहुत मुनासिब है, इससे रैयतों के दिल का हाल अच्छी तरह मालूम हो सकता है। इस तरह के कई सन्दूक शहर में इधर-उधर भी रखवा देने चाहिए क्योंकि बहुत से आदमी खौफ से फाटक तक आते भी हिचकेंगे।

आनन्दसिंह—बहुत खूब, कल इसका इन्तजाम हो जायगा।

वीरेन्द्रसिंह—हमने यहाँ की गद्दी पर आनन्दसिंह को बैठा दिया है।

इन्द्रजीतसिंह—बड़ी खुशी की बात है, यहाँ का इन्तजाम ये बहुत ही अच्छी तरह कर सकेंगे क्योंकि यह तीर्थ का मुकाम है और इनका पुराणों से बड़ा प्रेम है और उन्हें अच्छी तरह समझते भी हैं। (देवीसिंह की तरफ देख कर) हाँ साहब, वह सन्दूक मँगवाइये जरा दिल तो बहले।

हाथ भर का चौखूँटा सन्दूक हाजिर किया गया और उसे खोलकर उसमें भरी अर्जियाँ जिनसे वह सन्दूक भरा था बाहर निकाली गईं। पढ़ने से मालूम हुआ कि यहाँ की रिआया नये राजा की अमलदारी से बहुत प्रसन्न है और मुबारकबाद दे रही है, हाँ, एक अर्जी उसमें ऐसी भी निकली जिसके पढ़ने से सभी को तरद्दुद ने आ घेरा और सोचने लगे कि अब क्या करना चाहिए। पाठकों की दिलचस्पी के लिए हम उस अर्जी की नकल नीचे लिखे देते हैं—

"हम लोग मुद्दत से मनाते थे कि यहाँ की गद्दी पर हुजूर को या हुजूर के खानदान में से किसी को बैठा देखें। ईश्वर ने आज हम लोगों की आरजू पूरी की और कम्बख्त माधवी और अग्निदत्त का बुरा साया हम लोगों के सिर से हटाया। चाहे उन दोनों दुष्टों का खौफ अभी हम लोगों को बना हो, मगर फिर भी हुजूर के भरोसे पर हम लोग बिना मुबारकबाद दिए और खुशी मनाये नहीं रह सकते। वह डर इस बात का नहीं है कि यहाँ फिर उन दुष्टों की अमलदारी होगी तो कष्ट भोगना पड़ेगा। राम-राम, ऐसा तो कभी तो ही नहीं सकता, हम लोगों को यह गुमान तो स्वप्न में भी नहीं हो सकता, वह डर बिल्कुल दूसरा ही है जो हम लोग नीचे अर्ज करते हैं। आशा है कि बहुत जल्द उससे हम लोगों की रिहाई होगी, नहीं तो महीने भर में यहाँ की चौथाई रिआया यमलोक में पहुँच जायेगी। मगर नहीं, हुजूर के नामी और अपनी आप नजीर रखने वाले ऐयारों के हाथ से वे बेईमान हरामजादे कब तक बच सकते हैं जिनके डर से हम लोगों को पूरी नींद सोना नसीब नहीं होता।

"कुछ दिनों से दीवान अग्निदत्त की तरफ से थोड़े बदमाश लोग इस काम के

लिए मुकर्रर कर दिये हैं कि अगर कोई आदमी अग्निदत्त के खिलाफ नजर आवे तो बेधड़क उसका सिर चोरी से रात के समय काट डालें, या दीवान साहब को जब रुपये की जरूरत हो, तो जिस अमीर या जमींदार के घर में चाहे डाका डाल दें या चोरी करके कंगाल बना दें। क्योंकि इसकी फरियाद कहीं सुनी नहीं जाती, इस वजह से और भी बाहरी चोरों को अपना घर भरने और हम लोगों को सताने का मौका मिलता है। हम लोगों ने अभी उन दुष्टों की सूरत तो नहीं देखी और यह भी नहीं जानते कि वे लोग कौन हैं या कहाँ रहते हैं जिनके खौफ से दिन-रात हम लोग काँपा करते हैं।"

इस अर्जी के नीचे कई मशहूर और नामी रईसों और जमींदारों के दस्तखत थे। यह अर्जी उसी समय देवीसिंह के हवाले कर दी गयी और देवीसिंह ने वादा किया कि एक महीने के अन्दर इन दुष्टों को जिन्दा या मरे हुए हुजूर में हाजिर करूँगा।

इसके बाद जर्राहों ने कुँअर इन्द्रजीतसिंह के जख्मों को खोला और दूसरी पट्टी बदली, कविराज ने दवा खिलाई और हुक्म पाकर सब अपने-अपने ठिकाने चले गये। देवीसिंह उसी समय बिदा हो न मालूम कहाँ चले गये और राजा वीरेन्द्रसिंह भी वहाँ से हटकर अपने कमरे में चले गए।

इस कमरे के दोनों तरफ छोटी-छोटी दो कोठरियाँ थीं। एक में संध्या-पूजा का सामान दुरुस्त था और दूसरी में खाली फर्श पर एक मसहरी बिछी हुए थी जो उस मसहरी से कुछ छोटी थी जिस पर कुँअर इन्द्रजीतसिंह आराम कर रहे थे। कोठरी से वह मसहरी बाहर निकाली गई और कुँअर आनन्दसिंह के सोने के लिए कुँअर इन्द्रजीत-सिंह की मसहरी के पास बिछाई गयी। भैरोंसिंह और तारासिंह ने भी दो मसहरियों के नीचे अपना बिस्तर जमाया। सिवाय इन चारों के उस कमरे में और कोई न रहा। इन लोगों ने रात भर आराम से काटी और सवेरा होने पर आँख खुलते ही विचित्र तमाशा देखा।

सुबह के पहले ही दोनों ऐयारों की आँखें खुलीं और हैरत-भरी निगाहों से चारों तरफ देखने लगे, इसके बाद कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह भी जागे और फूलों की खुशबू, जो इस कमरे में बहुत देर पहले से ही भर रही थी, लेने तथा दोनों ऐयारों की तरह ताज्जुब से चारों तरफ देखने लगे।

आनन्दसिंह—खुशबूदार फूलों के गजरे और गुलदस्ते इस कमरे में किसने सजाये हैं?

इन्द्रजीतसिंह—ताज्जुब है, हमारे आदमी बिना हुक्म पाये ऐसा कब कर सकते हैं?

भैरोंसिंह—हम दोनों आदमी घण्टे भर के पहले से उठकर इस पर गौर कर रहे हैं, मगर कुछ समझ नहीं आता कि क्या मामला है।

आनन्दसिंह—गुलदस्ते भी बहुत खूबसूरत और बेशकीमत मालूम पड़ते हैं।

तारासिंह—(एक गुलदस्ता उठाकर और पास लाकर) देखिए, इस सोने के गुलदस्ते पर क्या उम्दा मीने का काम किया हुआ है! बेशक किसी बहुत बड़े शौकीन का बनवाया हुआ है, इसी ढंग के सब गुलदस्ते हैं।

भैरोंसिह—हाँ, एक बात ताज्जुब की और भी है जो मैंने अभी तक आपसे नहीं कही।

इन्द्रजीतसिंह—वह क्या ?

भैरोंसिह—(हाथ का इशारा करके) ये दोनों दरबाजे सिर्फ घुमाकर मैंने खुले छोड़ दिये थे; मगर सुबह को और दरवाजों की तरह इन्हें भी बन्द पाया।

तारासिंह—(आनन्दसिंह की तरफ देखकर) शायद रात को आप उठे हों ?

आनन्दसिंह—नहीं।

इसी तरह देर तक ये लोग ताज्जुब भरी बातें करते रहे, मगर अक्ल ने कुछ गवाही न दी कि क्या मामला है। राजा वीरेन्द्रसिंह भी आ पहुँचे, उनके साथ और भी कई मुसाहिब लोग आ जमे। सभी इस आश्चर्य की बात को सुन कर सोचने और गौर करने लगे। कई बुजदिलों को भूत-प्रेत और पिशाच का ध्यान आया, मगर महाराज और दोनों कुमारों के खौफ से कुछ बोल न सके, क्योंकि ये लोग ऐसे डरपोक और इस खयाल के आदमी न थे और न ऐसे आदमियों को अपने साथ रखना ही पसन्द करते थे।

उन फूलों के गजरों और गुलदस्तों को किसी ने न छेड़ा और ज्यों के त्यों जहाँ के तहाँ लगे रह गये। रईसों की हाजिरी और शहर के इन्तजाम में दिन बीत गया और रात को फिर कल ही की तरह दोनों भाई मसहरी पर सो रहे। दोनों ऐयार भी मसहरी के बगल में जमीन पर लेट गये, मगर आपस में मिल-जुलकर बारी-बारी से जागते रहने का विचार दोनों ने ही कर लिया था और अपने बीच में एक लम्बी छड़ी इसलिए रख ली थी कि अगर रात को किसी समय कोई ऐयार कुछ देखे तो बिना मुँह से बोले छड़ी के इशारे से दूसरे को जगा दे। इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह ने भी कह रखा था कि अगर घर में किसी को देखना तो चुपके से हमें जगा देना, जिससे हम लोग भी देख लें कि कौन है और कहाँ से आता है।

आधी रात से कुछ ज्यादा जा चुकी है। कुँवर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह गहरी नींद में बेसुध पड़े थे। पहरे के मुताबिक लेटे-लेटे तारासिंह दरवाजे की तरफ देख रहे हैं। यकायक पूरब की तरफ वाली कोठरी में कुछ खटका हुआ। तारासिंह जरा-सा घूम गये और पड़े-पड़े ही उस कोठरी की तरफ देखने लगे। बारीक चादर पहले ही से दोनों ऐयारों के मुंह पर पड़ी हुई थी और रोशनी अच्छी तरह हो रही थी।

कोठरी का दरवाजा धीरे-धीरे खुलने लगा। तारासिंह ने छड़ी के इशारे से भैरोंसिह को उठा दिया जो बड़ी होशियारी से घूमकर कोठरी की तरफ देखने लगे। कोठरी के दरवाजे का एक पल्ला अब अच्छी तरह खुल गया और एक निहायत हसीन और कमसिन औरत किवाड़ पर हाथ रखे खड़ी दोनों मसहरियों की तरफ देखती नजर पड़ी। भैरोंसिह और तारासिंह ने मसहरी के पाये पर हाथ का इशारा देकर दोनों भाइयों को भी जगा दिया।

इन्द्रजीतसिंह का रुख तो पहले ही उस कोठरी की तरफ था, मगर आनन्दसिंह उस तरफ पीठ किये सो रहे थे। जब उनकी आँखें खुलीं तो अपने सामने की तरफ जहाँ

तक देख सकते थे कुछ भी न देखा, लाचार धीरे से उनको करवट बदलनी पड़ी और तब मालूम हुआ कि इस कमरे में क्या आश्चर्य की बात दिखाई दे रही है।

अब कोठरी के दोनों पल्ले खुल गये और वह हसीन औरत सिर से पैर तक अच्छी तरह इन चारों को दिखाई देने लगी क्योंकि उसके तमाम बदन पर बखूबी रोशनी पड़ रही थी। वह औरत नखशिख से ऐसी दुरुस्त थी कि उसकी तरफ चारों की टकटकी बँध गयी। बेशकीमत सफेद साड़ी और जड़ाऊ जेवरों से वह बहुत ही भली मालूम हो रही थी, जेवरों में सिर्फ खुशरंग मानिक जड़ा हुआ था जिसकी सुर्खी उसके गोरे रंग पर पड़कर उसके हुस्न को हद से ज्यादा रौनक दे रही थी। उसकी पेशानी (माथे) पर एक दाग था जिसके देखने से विश्वास होता था कि बेशक इसने कभी तलवार या किसी हर्बे की चोट खायी है। यह दो अंगुल का दाग भी उसकी खूबसूरती को बढ़ाने के लिए जेवर ही हो रहा था। उसे देख ये चारों आदमी यही सोचते होंगे कि इससे बढ़कर खूबसूरत रम्भा और उर्वशी अप्सरा भी न होंगी। कुँअर इन्द्रजीतसिंह तो किशोरी पर मोहित हो रहे थे, उसकी तस्वीर इनके दिल में खिंच रही थी, उन पर चाहे इसके हुस्न ने ज्यादा असर न किया हो, मगर आनन्दसिंह की क्या हालत हो गयी यह वे ही जानते होंगे। बहुत बचाते रहने पर भी ठण्डी साँसें उनसे न रुक सकीं जिससे हम भी कह सकते हैं कि उनके दिल ने उनकी ठण्डी साँसों के साथ ही बाहर, निकलकर कह दिया कि अब हम तुम्हारे कब्जे में नहीं हैं।

कुँअर आनन्दसिंह अपने को सँभाल न सके, उठ बैठे और उधर ही देखने लगे जिधर वह औरत किवाड़ का पल्ला थामे खड़ी थी। उनकी यह हालत देख तीनों आदमियों को विश्वास हो गया कि वह भाग जायेगी, मगर नहीं, वह इनको उठकर बैठते देख जरा भी न हिचकी, ज्यों की त्यों खड़ी रही, बल्कि इनकी तरफ देख उसने जरा-सा हँस दिया, जिससे ये और भी बेचैन हो गये।

कुँअर आनन्दसिंह यह सोचकर कि उस कोठरी में किसी दूसरी तरफ निकल जाने के लिए दूसरा दरवाजा नहीं है मसहरी पर से उठ खड़े हुए और उस औरत की तरफ चले। इनको अपनी तरफ आते देख वह औरत कोठरी में चली गयी और फुर्ती से उसका दरवाजा भीतर से बन्द कर लिया।

कुँअर इन्द्रजीतसिंह की तबीयत चाहे दुरुस्त हो गयी हो मगर कमजोरी अभी तक मौजूद है, बल्कि सब जख्म भी अभी तक कुछ गीले हैं, इसलिए अभी घूमने-फिरने लायक नहीं हुए। उस परीजमाल को भीतर से किवाड़ बन्द कर लेते देख सब उठ खड़े हुए, कुँअर इन्द्रजीतसिंह भी तकिए का सहारा लेकर बैठ गये और बोले, "इस कोठरी में किसी तरफ निकल जाने का रास्ता तो नहीं है?"

भैरोंसिंह—जी नहीं।

आनन्दसिंह—(किवाड़ में धक्का देकर) इसे खोलना चाहिए।

तारासिंह—मुश्किल तो कुछ नहीं, (इन्द्रजीतसिंह की तरफ देखकर) क्या हुक्म होता है?

इन्द्रजीतसिंह—जब इस कोठरी में दूसरी तरफ निकल जाने का रास्ता ही नहीं है तो जल्दी क्यों करते हो ?

इन्द्रजीतसिंह के इतना कहते ही आनन्दसिंह वहाँ से हटे और अपने भाई के पास आकर बैठ गये। भैरोंसिंह और तारासिंह भी पास आकर बैठ गये और यों बात-चीत होने लगी—

इन्द्रजीतसिंह—(भैरोंसिंह और तारासिंह की तरफ देखकर) तुममें से कोई जागता भी रहा या दोनों सो गए थे ?

भैरोंसिंह—नहीं सो क्यों जायेंगे ? हम लोग बारी-बारी से बराबर जागते और महीन चादर से मुँह ढाँके दरवाजे की तरफ देखते रहे।

इन्द्रजीतसिंह—तो क्या इसी दरवाजे में से इस औरत को आते देखा था ?

आनन्दसिंह—बेशक इसी तरफ से आयी होगी !

तारासिंह— जी नहीं, यही तो ताज्जुब है कि कमरे के दरवाजे ज्यों के त्यों भिड़े रह गये और यकायक कोठरी का दरवाजा खुला और वह नजर आयी।

इन्द्रजीतसिंह—यह तो अच्छी तरह मालूम है न कि उस कोठरी में और कोई दरवाजा नहीं है ?

भैरोंसिंह—जी हाँ, अच्छी तरह जानते हैं, भीतर कोई दरवाजा नहीं है।

तारासिंह— क्या कहें, कोई सुने तो यही कहे कि चुड़ैल थी।

आनन्दसिंह—राम-राम, यह भी कोई बात है !

इन्द्रजीतसिंह—खैर, जो हो, मेरी राय यही है कि पिताजी के आने तक कोठरी का दरवाजा न खोला जाय।

आनन्दसिंह—जो हुक्म, मगर मैं तो यह चाहता था कि पिताजी के आने तक दरवाजा खोलकर सब-कुछ दरियाफ्त कर लिया जाता।

इन्द्रजीतसिंह—खैर खोलो।

हुक्म पाते ही कुँअर आनन्दसिंह उठ खड़े हुए, खूँटी से लटकती हुई एक भुजाली उतार ली और उस दरवाजे के पास जा एक-एक हाथ दोनों कुलाबों पर मारा जिससे कुलाबे कट गये। तारासिंह ने दोनों पल्ले उतारकर अलग रख दिए। भैरोंसिंह ने एक बलता हुआ शमादान उठा लिया और चारों आदमी उस कोठरी के अन्दर गए मगर वहाँ एक चूहे का बच्चा भी नजर न आया।

इस कोठरी में तीन तरफ मजबूत दीवारें थीं और एक तरफ वही दरवाजा था जिसका कुलाबा काट ये लोग अन्दर आए थे, हाँ, सामने की तरफ वाली अर्थात् बिचली दीवार में काठ की एक आलमारी जड़ी हुई थी। इन लोगों का ध्यान उस आलमारी पर गया और सोचने लगे कि शायद यह आलमारी इस ढंग की हो जो दरवाजे का काम देती हो और इसी राह से वह औरत आयी हो, मगर उन लोगों का यह खयाल भी तुरन्त ही जाता रहा और विश्वास हो गया कि यह आलमारी किसी तरह दरवाजा नहीं हो सकती और न इस राह से वह औरत आई ही होगी, क्योंकि उस आलमारी में भैरोंसिंह ने अपने हाथ से कुछ जरूरी असबाब रखकर ताला लगा दिया था जो अभी

तक ज्यों का त्यों बन्द था। यह कब हो सकता है कि कोई ताला खोलकर इस अलमारी के अन्दर घुस गया हो और बाहर का ताला जैसा का तैसा दुरुस्त कर दिया हो ! लेकिन तब फिर क्या हुआ ? यह औरत क्योंकर आयी और किस राह से चली गयी ? उन लोगों ने लाख सिर धुना और गौर किया, मगर कुछ समझ में न आया।

ताज्जुब भरी बातों ही में रात बीत गयी। सुबह को जब राजा वीरेन्द्रसिंह अपने लड़के को देखने के लिए उस कमरे में आए तो जर्राह वैद्य तथा और मुसाहिब लोग भी उनके साथ थे। वीरेन्द्रसिंह ने इन्द्रजीतसिंह से तबीयत का हाल पूछा। उन्होंने कहा, "अब तबीयत अच्छी है मगर एक जरूरी बात अर्ज करना चाहता हूँ जिसके लिए तखलिया (एकान्त) हो जाना बेहतर होगा।"

वीरेन्द्रसिंह ने भैरोंसिंह की तरफ देखा। उसने तखलिया हो जाने में महाराज की रजामन्दी जानकर सभी को हट जाने का इशारा किया। बात की बात में सन्नाटा हो गया और सिर्फ वही पाँच आदमी उस कमरे में रह गए।

वीरेन्द्रसिंह—कहो, क्या बात है ?

इन्द्रजीतसिंह—आज रात एक अजीब बात देखने में आयी।

वीरेन्द्रसिंह—वह क्या है ?

इन्द्रजीतसिंह—(तारासिंह की तरफ देखकर) तारासिंह, तुम्हीं सब हाल कह जाओ क्योंकि उस समय तुम्हीं जागते थे, हम लोग तो पीछे जगाए गए हैं।

तारासिंह—बहुत खूब।

तारासिंह ने रात का पूरा-पूरा हाल राजा वीरेन्द्रसिंह से कह सुनाया जिसे सुनकर उन्होंने बहुत ताज्जुब किया और घण्टों तक गौर में डूबे रहने के बाद बोले, "खैर, यह बात किसी और को न मालूम हो, नहीं तो मुसाहिबों और अहलकारों में खलबली पैदा हो जायेगी और सैकड़ों तरह की गप्पें उड़ने लगेंगी। देखो तो क्या होता है और कब तक पता नहीं लगता, आज हम भी इसी कमरे में सोयेंगे।"

एक दिन क्या, कई दिनों तक राजा वीरेन्द्रसिंह उस कमरे में सोए मगर कुछ मालूम न हुआ और न फिर कोई बात ही देखने में आयी, आखिर उन्होंने हुक्म दिया कि उस कोठरी का दरवाजा नया कुलाबा लगाकर फिर उसी तरह बन्द कर दिया जाय।

12

आज पाँच दिन के बाद देवीसिंह लौटकर आये हैं। जिस कमरे का हाल हम ऊपर लिख आए हैं उसी में राजा वीरेन्द्रसिंह, उनके दोनों लड़के, भैरोंसिंह, तारासिंह और कई सरदार लोग बैठे हैं। इन्द्रजीतसिंह की तबीयत अब बहुत अच्छी है और वे चलने फिरने लायक हो गये हैं। देवीसिंह को बहुत जल्द लौट आते देखकर सभी को विश्वास हो गया कि जिस काम पर मुस्तैद किए गये थे उसे कर चुके, मगर ताज्जुब इस बात का था कि वे अकेले क्यों आये।

वीरेन्द्रसिंह—कहो देवीसिंह, खुश तो हो ?

देवीसिंह—खुशी तो मेरी खरीदी हुई है ! (और लोगों की तरफ देख कर) अच्छा, अब आप लोग जाइये । बहुत विलम्ब हो गया ।

दरबारियों और खुशामदियों के चले जाने के बाद वीरेन्द्रसिंह ने देवीसिंह से पूछा—

वीरेन्द्रसिंह—कहो, उस अर्जी में जो कुछ लिखा था, सच था या झूठ ?

देवीसिंह—उसमें जो कुछ लिखा था, वह बहुत ठीक था । ईश्वर की कृपा से शीघ्र ही उन दुष्टों का पता लग गया, मगर क्या कहें कुछ ऐसी ताज्जुब की बातें देखने में आईं कि अभी तक बुद्धि चकरा रही है ।

वीरेन्द्रसिंह—(हँस कर) उधर तुम ताज्जुब की बातें देखो, इधर हम लोग अद्‌भुत बातें देखें ।

देवीसिंह—सो क्या ?

वीरेन्द्रसिंह—पहले तुम अपना हाल कह लो तो यहाँ का सुनो !

देवीसिंह—बहुत अच्छा । फिर सुनिए । रामशिला पहाड़ी के नीचे मैंने एक कागज अपने हाथ से लिख कर चिपका दिया जिसमें यह लिखा था—

"हम खूब जानते हैं कि जो अग्निदत्त के विरुद्ध होता है उसका तुम लोग सिर काट लेते हो, जिसका घर चाहते हो लूट लेते हो । मैं डंके की चोट से कहता हूँ कि अग्निदत्त का दुश्मन मुझसे बढ़ के कोई न होगा और गयाजी में मुझसे बढ़ कर मालदार भी कोई नहीं है, जिस पर मजा यह है कि मैं अकेला हूँ, अब देखना चाहिए कि तुम लोग मेरा क्या कर लेते हो ?"

आनन्दसिंह—अच्छा, तब क्या हुआ ?"

देवीसिंह—उन दुष्टों का पता लगाने के उपाय तो मैंने और भी कई किए थे, मगर काम इसी से चला । उस राह से आने-जाने वाले सभी उस कागज को पढ़ते थे और चले जाते थे । मैं उस पहाड़ी के कुछ ऊपर जाकर पत्थर की चट्टान की आड़ में छिपा हुआ हर दम उसकी तरफ देखा करता था । एक दफे दो आदमी एक साथ वहाँ आये और उसे पढ़ मूँछों पर ताव देते शहर की तरफ चले गये । शाम को वे दोनों लौटे और फिर उस कागज को पढ़ सिर हिलाते बराबर की पहाड़ी की ओर चले गये । मैंने सोचा कि इनका पीछा जरूर करना चाहिये क्योंकि कागज के पढ़ने का असर सबसे ज्यादा इन्हीं दोनों पर हुआ है । आखिर मैंने उनका पीछा किया और जो सोचा था वही ठीक निकला । वे लोग पन्द्रह-बीस आदमी हैं और खूब हट्टे-कट्टे और मुस्टंडे हैं । उसी झुण्ड में मैंने एक औरत को भी देखा । अहा, ऐसी खूबसूरत औरत तो मैंने आज तक नहीं देखी । पहले मैंने सोचा कि वह इन लोगों में से किसी की लड़की होगी, क्योंकि उसकी अवस्था बहुत कम थी, मगर नहीं, उसके हाव-भाव और उसकी हुकूमत-भरी बातचीत से मालूम हुआ कि वह उन सब की मालिक है, पर सच तो यह है कि मेरा जी इस बात पर भी नहीं जमता । उसकी चाल-ढाल, उसकी बढ़िया पोशाक और उसके जड़ाऊ कीमती गहनों पर, जिनमें सिर्फ खुशरंग कीमती मानिक ही जड़े हुए थे, ध्यान देने से दिल की कुछ

विचित्र हालत हो जाती है।

मानिक के जड़ाऊ जेवरों का नाम सुनते ही मानो कुँअर आनन्दसिंह चौंक पड़े, इन्द्रजीतसिंह और तारासिंह का भी चेहरा बदल गया और उस औरत का विशेष हाल जानने के लिए घबराने लगे, क्योंकि उस रात को इन चारों ने इस कमरे में या यों कहिए कोठरी में जिस औरत की झलक देखी थी वह भी मानिक के जड़ाऊ ज़ेवरों से ही अपने को सजाये हुए थी। आखिर आनन्दसिंह से न रहा गया, देवीसिंह को बात कहते-कहते रोक कर पूछा—

आनन्दसिंह—उस औरत का नख-शिख जरा अच्छी तरह कह जाइए।

देवीसिंह—सो क्यों ?

वीरेन्द्रसिंह—(लड़कों की तरफ देख कर) तुम लोगों को ताज्जुब किस बात का है, तुम लोगों के चेहरे पर हैरानी क्यों छा गई है ?

भैरोंसिह—जी, वह औरत जिसे हम लोगों ने देखा था, ऐसे ही गहने पहने हुए थी जैसे चाचाजी कह रहे हैं।[1]

वीरेन्द्रसिंह—हाँ !

भैरोंसिह—जी हाँ।

देवीसिंह—तुम लोगों ने कैसी औरत देखी थी ?

वीरेन्द्रसिंह—सो पीछे सुनना, पहले जो ये पूछते हैं उसका जवाब दे लो।

देवीसिंह—नखशिख सुन के क्या कीजिएगा ? सबसे ज्यादा पक्का निशान तो यह है कि उसके ललाट में दो-ढाई अंगुल का एक आड़ा दाग है। मालूम होता है शायद उसने कभी तलवार की चोट खाई है !

आनन्दसिंह—बस-बस-बस !

इन्द्रजीतसिंह—बेशक वही औरत है।

तारासिंह—कोई शक नहीं कि वही है।

भैरोंसिह—अवश्य वही है !

वीरेन्द्रसिंह—मगर आश्चर्य है, कहाँ उन दुष्टों का संग और कहाँ हम लोगों के साथ आपस का बर्ताव।

भैरोंसिह—हम लोग तो उसे दुश्मन नहीं समझते।

देवीसिंह—अब हम न बोलेंगे, जब तक यहाँ का खुलासा हाल न सुन लेंगे। न मालूम आप लोग क्या कह रहे हैं ?

वीरेन्द्रसिंह—खैर, यही सही, अपने लड़के से पूछिए कि यहाँ क्या हुआ।

तारासिंह—जी हाँ, सुनिए, मैं अर्ज करता हूँ।

तारासिंह ने यहाँ का सारा हाल खूब अच्छी तरह कहा। फूल तो फेंक दिए गए थे मगर गुलदस्ते अभी तक मौजूद थे, वे भी दिखाये। देवीसिंह हैरान थे कि यह क्या मामला है, देर तक सोचने के बाद बोले, "मुझे तो विश्वास ही नहीं होता कि यहाँ वही

---

1. भैरोंसिह और देवीसिंह का रिश्ता तो मामा-भांजे का था, मगर भैरोंसिह उन्हें चाचाजी कहा करते थे।

औरत आई होगी जिसे मैंने वहाँ देखा है !"

वीरेन्द्रसिंह—यह शक भी मिटा ही डालना चाहिए।

देवीसिंह—उन लोगों का जमाव वहाँ रोज ही होता है जहाँ मैं देख आया हूँ, आज तारा या भैरों को अपने साथ ले चलूँगा। ये खुद ही देख लें कि वही औरत है या दूसरी।

वीरेन्द्रसिंह—ठीक है। आज ऐसा ही करना। हाँ, अब तुम अपना हाल और आगे कहो।

देवीसिंह—मुझे वहाँ यह भी मालूम हुआ कि उन दुष्टों ने हमेशा के लिए अपना डेरा उसी पहाड़ी में कायम किया है और बातचीत से यह भी जाना गया कि लूट और चोरी का माल भी वे लोग उसी ठिकाने कहीं रखते हैं। मैंने अभी बहुत खोज उन लोगों की नहीं की, जो कुछ मालूम हुआ था आपसे कहने के लिए चला आया। अब उन लोगों को गिरफ्तार करना कुछ मुश्किल नहीं है। हुक्म हो तो थोड़े से आदमी अपने साथ ले जाऊँ और आज ही उन लोगों को उस औरत के सहित गिरफ्तार कर लाऊँ।

वीरेन्द्रसिंह—आज तो तुम भैरों या तारा को अपने साथ ले जाओ। फिर कल उन लोगों की गिरफ्तारी की फिक्र की जायगी।

आखिर भैरोंसिंह को अपने साथ लेकर देवीसिंह बराबर के उस पहाड़ पर गए जो गयाजी से तीन-चार कोस की दूरी पर होगा। घूमघुमौवा और पेचीली पगडण्डियों को तय करते हुए पहर रात जाते-जाते ये दोनों उस खोह के पास पहुँच गए जिसमें वे बदमाश डाकू लोग रहते थे। उस खोह के पास ही एक और छोटी-सी गुफा थी जिसमें मुश्किल से दो आदमी बैठ सकते थे। इस गुफा में एक बारीक दरार ऐसी पड़ी हुई थी जिसमें ये दोनों ऐयार उस लम्बी-चौड़ी गुफा का हाल बखूबी देख सकते थे जिसमें वे डाकू लोग रहते थे। इस समय वे सब-के-सब वहाँ मौजूद भी थे, बल्कि वह औरत भी सरदार के तौर पर छोटी-सी गद्दी लगाए वहाँ मौजूद थी। ये दोनों ऐयार उस दरार से उन लोगों की बातचीत तो नहीं सुन सकते थे, मगर सूरत-शक्ल, भाव और इशारे अच्छी तरह देख सकते थे।

इन लोगों ने इस समय वहाँ पन्द्रह डाकुओं को बैठे हुए पाया और उस औरत को देख कर भैरोंसिंह ने पहचान लिया कि यह यह वही है जो कुँअर इन्द्रजीतसिंह के कमरे में आई थी। आज वह वैसी पोशाक या उन जेवरों को पहने हुए तो न थी, तो भी सूरत-शक्ल में किसी तरह का फर्क न था।

इन दोनों ऐयारों के पहुँचने के बाद दो घण्टे तक वे डाकू लोग आपस में कुछ बातचीत करते रहे। इस बीच में कई डाकुओं ने दो-तीन दफे हाथ जोड़ कर उस औरत से कुछ कहा जिसके जवाब में उसने सिर हिला दिया, जिससे मालूम हुआ कि मंजूर नहीं किया। इतने ही में एक-दूसरी हसीन कमसिन और फुर्तीली औरत लपकती हुई वहाँ आ मौजूद हुई। उसके हाँफने और दम फूलने से मालूम होता था कि वह बहुत दूर से दौड़ती हुई आ रही है।

उस नई आई औरत ने न मालूम उस सरदार औरत के कान में झुक कर क्या

कहा जिसके सुनते ही उसकी हालत बदल गई। बड़ी-बड़ी आँखें सुर्ख हो गईं, खूबसूरत चेहरा तमतमा उठा और तुरत उस नई औरत को साथ लेकर उस खोह के बाहर चली गई। वे डाकू उन दोनों औरतों का मुँह देखते ही रह गये, मगर कुछ कहने की हिम्मत न पड़ी।

जब दो घण्टे तक दोनों औरतों में से कोई न लौटी, तो डाकू लोग भी उठ खड़े हुए और खोह के बाहर निकल गये। उन लोगों के इशारे और आकृति से मालूम होता था कि वे दोनों औरतों के यकायक इस तरह पर चले जाने से ताज्जुब कर रहे हैं। यह हालत देख कर देवीसिंह भी वहाँ से तुरन्त चल पड़े और सुबह होते-होते राजमहल में आ पहुँचे।

13

कुँअर इन्द्रजीतसिंह तो किशोरी पर जी-जान से आशिक हो ही चुके थे। इस बीमारी की हालत में भी उसकी याद इन्हें सता रही थी और यह जानने के लिए बेचैन हो रहे थे कि उस पर क्या बीती, वह किस अवस्था में कहाँ है और अब उसकी सूरत कब किस तरह देखनी नसीब होगी। जब तक वे अच्छी तरह दुरुस्त नहीं हो जाते, न तो खुद कहीं जाने के लिए हुक्म ले सकते थे और न किसी बहाने से अपने प्रेमी साथी ऐयार भैरोंसिह को ही कहीं भेज सकते थे। इस बीमारी की हालत में समय पाकर उन्होंने भैरोंसिह से सब हाल मालूम कर लिया था। वे यह सुन कर कि किशोरी को दीवान अग्निदत्त उठा ले गया बहुत ही परेशान थे, मगर यह खबर उन्हें कुछ-कुछ ढाढ़स देती थी कि चपला, चम्पा और पण्डित बद्रीनाथ उसके छुड़ाने की फिक्र में लगे हुए हैं और राजा वीरेन्द्रसिंह को भी यह धुन जी से लगी हुई है कि जिस तरह बने, शिवदत्त की लड़की किशोरी की शादी अपने लड़के के साथ करके शिवदत्त को नीचा दिखावें और शर्मिन्दा करें।

कुँअर आनन्दसिंह ने भी अब इश्क के मैदान में पैर रख दिया, मगर इनकी हालत अजब गोमगो में पड़ी हुई है। जब उस औरत का ध्यान आता, जी बेचैन हो जाता था, मगर जब देवीसिंह की बात को याद करते कि वह डाकुओं के एक गिरोह की सरदार है तो कलेजे में अजीब तरह का दर्द पैदा होता था और थोड़ी देर के लिए चित्त का भाव बदल जाता था, लेकिन साथ ही इसके सोचने लगते थे कि कहीं अगर वह हम लोगों की दुश्मन होती तो मेरी तरफ देख कर प्रेम-भाव से कभी न हँसती और फूलों के गुलदस्ते और गजरे सजाने के लिए जब उस कमरे में आई थी तो हम लोगों को नींद में गाफिल पाकर जरूर मार डालती। पर, फिर हम लोगों की दुश्मन अगर नहीं है तो उन डाकुओं का साथ कैसा!

ऐसे-ऐसे सोच-विचार ने उनकी अवस्था खराब कर रक्खी थी। कुँअर इन्द्रजीत-

सिंह, भैरोंसिंह और तारासिंह को उनके जी का पता कुछ-कुछ लग चुका था मगर जब तक उसकी इज्जत-आबरू और जात-पात की खबर के साथ-साथ यह भी मालूम न हो जाय कि वह दोस्त है या दुश्मन, तब तक कुछ कहना-सुनना या समझाना मुनासिब नहीं समझते थे।

राजा वीरेन्द्रसिंह को अब यह चिन्ता हुई कि जिस तरह वह औरत इस घर में आ पहुँची, कहीं डाकू लोग भी आकर लड़कों को दुख न दें और फसाद न मचावें। उन्होंने पहरे वगैरह का अच्छी तरह इन्तजाम किया और यह सोच कि कुँअर इन्द्रजीतसिंह अभी तन्दुरुस्त नहीं हुए हैं कमजोरी बनी हुई है और किसी तरह लड़-भिड़ नहीं सकते, इनको अकेले छोड़ना मुनासिब नहीं, अपने सोने का इन्तजाम भी उसी कमरे में किया और साथ ही एक नया तथा विचित्र तमाशा देखा।

हम ऊपर लिख आये हैं कि इस कमरे के दोनों तरफ दो कोठरियाँ हैं, एक में सन्ध्यापूजन का सामान है और दूसरी वही विचित्र कोठरी है जिसमें से वह औरत पैदा हुई थी। सन्ध्या-पूजा वाली कोठरी में बाहर से ताला बन्द कर दिया गया और दूसरी कोठरी का कुलाबा वगैरह दुरुस्त करके बिना बाहर ताला लगाये उसी तरह छोड़ दिया गया जैसे पहले था, बल्कि राजा वीरेन्द्रसिंह ने उसी दरवाजे पर अपना पलंग बिछवाया और सारी रात जागते रह गए।

आधी रात बीत गई मगर कुछ देखने में न आया, तब वीरेन्द्रसिंह अपने बिस्तरे पर से उठे और कमरे में इधर-उधर घूमने लगे। घण्टे भर बाद उस कोठरी में से कुछ खटके की आवाज आई, वीरेन्द्रसिंह ने फौरन तलवार उठा ली और तारासिंह को उठाने के लिए चले मगर खटके की आवाज पा तारासिंह पहले ही से सचेत हो गये थे, अब हाथ में खंजर ले वीरेन्द्रसिंह के साथ टहलने लगे।

आधी घड़ी के बाद जंजीर खटकने की आवाज इस जगह पर हुई, जिससे साफ मालूम हो गया कि किसी ने इस कोठरी का दरवाजा भीतर से बन्द कर लिया। थोड़ी ही देर बाद पैरों के धमाधम की आवाज भीतर से आने लगी, मानो चार-पाँच आदमी भीतर उछल-कूद रहे हैं। वीरेन्द्रसिंह कोठरी के दरवाजे के पास गये और हाथ का एक धक्का देकर किवाड़ खोलना चाहा मगर भीतर से बन्द रहने के कारण दरवाजा न खुला, लाचार उसी जगह खड़े हो भीतर की आहट पर गौर करने लगे।

अब पैरों की धमाधम की आवाज बढ़ने लगी और धीरे-धीरे इतनी ज्यादा हुई कि कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह भी उठे और कोठरी के पास जा कर खड़े हो गये। फिर दरवाजा खोलने की कोशिश की गई मगर न खुला। भीतर जल्द-जल्द पैर उठाने और पटकने की आवाज से सब को निश्चय हो गया कि अन्दर लड़ाई हो रही है। थोड़ी ही देर बाद तलवारों की झनझनाहट भी सुनाई देने लगी। अब भीतर लड़ाई होने में किसी तरह का शक न रहा। आनन्दसिंह ने चाहा कि दरवाजे का कुलाबा तोड़ा जाय, मगर वीरेन्द्रसिंह की मरजी न पा कर सब चुपचाप खड़े आहट सुनते रहे।

यकायक धमधमाहट की आवाज बढ़ी और तब सन्नाटा हो गया। घड़ी भर तक ये लोग बाहर खड़े रहे मगर कुछ मालूम न हुआ और न फिर किसी तरह की आहट

या आवाज ही सुनाई दी। रात सिर्फ दो घंटे बल्कि इससे भी कम बाकी रह गई थी। पहरे वाले टहल कर अच्छी तरह से पहरा दे रहे हैं या नहीं यह देखने के लिए तारासिंह बाहर गए और सभी को अपने काम पर मुस्तैद पाकर लौट आए। इतने ही में कमरे का दरवाजा खुला, और भैरोंसिंह को साथ लिए देवीसिंह आते दिखाई पड़े।

दोनों ऐयार सलाम करने के बाद वीरेन्द्रसिंह के पास बैठ गये मगर यह देखकर कि यहाँ अभी तक ये लोग जाग रहे हैं ताज्जुब करने लगे।

देवीसिंह—आप लोग इस समय तक जाग रहे हैं!

वीरेन्द्रसिंह—हाँ, यहाँ कुछ ऐसा ही मामला हुआ जिससे निश्चिन्त हो सो न सके।

देवीसिंह—सो क्या?

वीरेन्द्रसिंह—खैर तुम्हें भी वह मालूम हो जायेगा, पहले अपना हाल तो कहो। (भैरोंसिंह की तरफ देख कर) तुमने उस औरत को पहचाना?

भैरोंसिंह—जी हाँ, बेशक वही औरत है, जो यहाँ आई थी, बल्कि वहाँ एक औरत और दिखाई दी।

वीरेन्द्रसिंह—यहाँ से जाकर तुमने क्या किया और क्या-क्या देखा, सो खुलासा कह जाओ।

भैरोंसिंह ने जो कुछ देखा था, कहने के बाद यहाँ का हाल पूछा। वीरेन्द्रसिंह ने भी यहाँ की कुल कैफियत कह सुनाई और बोले, "हम यही राह देख रहे थे कि सवेरा हो जाये और तुम लोग भी आ जाओ, तो इस कोठरी को खोलें, और देखें कि क्या है, कहीं से किसी के आने-जाने का पता लगता है या नहीं।"

कोठरी खोली गई। एक हाथ में रोशनी, दूसरे में नंगी तलवार लेकर पहले देवीसिंह कोठरी के अन्दर घुसे और तुरन्त ही बोल उठे—"वाह-वाह, यहाँ तो खून-खराबा मच चुका है!" अब राजा वीरेन्द्रसिंह, दोनों कुमार और उनके दोनों ऐयार भी कोठरी के अन्दर गये, और ताज्जुब भरी निगाहों से चारों तरफ देखने लगे।

इस कोठरी में जो फर्श बिछा हुआ था वह इस तरह से सिमट गया था जैसे कई आदमियों के बेअख्तियार उछल-कूद करने या लड़ने से इकट्ठा हो गया हो, ऊपर से वह खून से तर भी हो रहा था। चारों तरफ दीवारों पर भी खून के छींटे और लड़ते समय हाथ बहक कर बैठ जाने वाली तलवारों के निशान दिखाई दे रहे थे। बीच में एक लाश पड़ी हुई थी, मगर बेसिर की, कुछ समझ में नहीं आता था कि यह लाश किसकी है। कपड़ों में सिर्फ एक लँगोटा उसकी कमर में था। तमाम बदन नंगा, जिसमें अन्दाज से ज्यादा तेल लगा हुआ था। दाहिने हाथ में तलवार थी मगर वह हाथ भी कटा हुआ, सिर्फ जरा-सा चमड़ा लगा हुआ था, वह भी इतना कम कि अगर कोई खींचे तो अलग हो जाये। सबसे ज्यादा परेशान और बेचैन करने वाली एक चीज और दिखाई दी।

दाहिने हाथ की कटी हुई एक कलाई जिसमें फौलादी कटार अभी तक मौजूद थी, दिखाई पड़ी। आनन्दसिंह ने फौरन उस हाथ को उठा लिया और सभी लोगों की निगाह भी गौर के साथ उस पर पड़ने लगी। यह कलाई किसी नाजुक हसीन और-

कमसिन औरत की थी। हाथ में हीरे का जड़ाऊ कड़ा और जमीन पर मानिक की दो तीन बारीक जड़ाऊ चूड़ियाँ भी मौजूद थीं, शायद कलाई कट कर गिरते समय ये चूड़ियाँ हाथ से अलग हो जमीन पर फैल गई हों।

इस कलाई के देखने से सभी को रंज हुआ और झट उस औरत की तरफ खयाल दौड़ गया, जिसे इस कोठरी में से निककते सभी ने देखा था। चाहे उस औरत के सबब से ये कैसे ही हैरान क्यों न हों मगर उसकी सूरत ने सभी को अपने ऊपर मेहरबान बना लिया था, खास करके कुँअर आनन्दसिंह के दिल में तो वह उनके जान और माल की मालिक ही होकर बैठ गई थी, इसलिए सबसे ज्यादा दुःख छोटे कुँअर साहब को हुआ। यह सोचकर कि बेशक यह उसी औरत की कलाई है कुँअर आनन्दसिंह की आँखों में जल भर आया और कलेजे में एक किस्म का दर्द पैदा हुआ, मगर इस समय कुछ कहने या अपने दिल का हाल जाहिर करने का मौका न समझ उन्होंने बड़ी कोशिश से अपने को सम्हाला और चुपचाप सभी का मुँह देखने लगे।

पाठक, अभी इस औरत के बारे में बहुत-कुछ लिखना है इसलिए जब तक यह मालूम न हो जाये कि यह औरत कौन है तब तक अपने और आपके सुभीते के लिए हम इसका नाम 'किन्नरी' रख देते हैं।

राजा वीरेन्द्रसिंह और उनके ऐयारों ने इन सब अद्भुत बातों को जो इधर कई दिनों में हो चुकी थीं, छिपाने की बहुत कोशिश की, मगर हो न सका। कई तरह पर रंग बदल कर यह बात तमाम शहर में फैल गई। कोई कहता था, 'महाराज के मकान में देव और परियों ने डेरा डाला है !' कोई कहता था, 'गयाजी के भूत-प्रेम इन्हें सता रहे हैं !' कोई कहता था, 'दीवान अग्निदत्त के तरफदार बदमाश और डाकुओं ने यह फसाद मचाया है !' इत्यादि बहुत तरह की बातें शहर वाले आपस में कहने लगे, मगर उस समय उन बातों का ढंग ही बिल्कुल बदल गया, जब राजा वीरेन्द्रसिंह के हुक्म से देवीसिंह ने उस सिरकटी लाश को जो कोठरी में से निकली थी, उठवाकर सदर चौक में रखवा दिया और उसके पास एक मुनादी वाले को यह कहकर पुकारने के लिए बैठा दिया कि—"अग्निदत्त के तरफदार डाकू लोग जो शहर के रईसों और अमीरों को सताया करते थे, ऐयारों के हाथ गिरफ्तार होकर मारे जाने लगे। आज एक डाकू मारा गया है जिसकी लाश यह है।"

14

सूर्य भगवान के अस्त होने में अभी घंटे भर की देर है, फिर भी मौसम के मुताबिक बाग में टहलने वाले हमारे कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह को ठंडी हवा सिहरावनदार मालूम हो रही है। रंग-बिरंग के खूबसूरत फूल खिले हुए हैं, जिनके देखने से हरएक की तबीयत उमंग पर आ सकती है मगर इन दोनों के दिल की कली

किसी तरह भी खिलने में नहीं आतीं। बाग में जितनी चीजें दिल खुश करने वाली हैं वे सभी इस समय इन दोनों को बुरी मालूम होती हैं। बहुत देर से ये दोनों भाई बाग में टहल रहे हैं मगर ऐसी नौबत न आई कि एक दूसरे से बात करें या हँसें क्योंकि दोनों के दिल चुटीले हो रहे हैं, दोनों ही अपनी-अपनी धुन में डूबे हुए हैं, दोनों ही को अपने-अपने माशूक की खोज है, दोनों ही सोच रहे हैं, कि 'हाय, क्या ही आनन्द होता अगर इस समय वह भी मौजूद होता जिसे जी प्यार करता है या जिसके बिना दुनिया की सम्पत्ति तुच्छ मालूम होती है!' दिल बहलाने का बहुत-कुछ उद्योग किया, मगर न हो सका, लाचार दोनों भाई उस बारहदरी में पहुँचे जो बाग के दक्खिन तरफ महल के साथ सटी हुई है और जहाँ इस समय राजा वीरेन्द्रसिंह अपने मुसाहिबों के साथ जी बहलाने की बातें कर रहे थे। देवीसिंह भी उनके पास बैठे हुए थे जो कभी-कभी लड़कपन की बातें याद दिलाने के साथ ही गुप्त दिल्लगी भी करते जाते थे और जवाब भी पाते थे। दोनों लड़के भी वहाँ जा पहुँचे मगर इनके बैठते ही मजलिस का रंग बदल गया और बातों ने पलटा खाकर दूसरा ही ढंग पकड़ लिया जैसा अक्सर हँसी-दिल्लगी करते हुए बड़ों के बीच में समझदार लड़कों के पास आ बैठने से हो जाता है।

वीरेन्द्रसिंह—अब तो चुनार जाने का जी चाहता है मगर···

देवीसिंह—यहाँ आपकी जरूरत भी अब क्या है?

वीरेन्द्रसिंह—ठीक है, यहाँ मेरी जरूरत नहीं है, लेकिन यहाँ की अद्‌भुत बातें देख कर यह विचार होता है कि मेरे चले जाने से कोई बखेड़ा न मचे और लड़कों को तकलीफ न हो।

इन्द्रजीतसिंह—(हाथ जोड़ कर) इसकी चिन्ता आप न करें। हम लोग जब इतनी छोटी-छोटी बातों से अपने को सम्हाल न सकेंगे तो आगे क्या करेंगे!

वीरेन्द्र—तो क्या तुम्हारा इरादा भी यहाँ रहने का है?

इन्द्रजीतसिंह—यदि आज्ञा हो!

वीरेन्द्रसिंह—(कुछ सोच कर) क्यों देवीसिंह?

देवीसिंह—क्या हर्ज है, रहने दीजिए।

वीरेन्द्रसिंह—और तुम?

देवीसिंह—मैं आपके साथ चलूंगा, यहाँ भैरों और तारा रहेंगे, वे दोनों होशियार हैं, कुछ हर्ज नहीं है!

भैरोंसिंह—(हाथ जोड़ कर) यहाँ की अद्‌भुत बातें हम लोगों का कुछ बिगाड़ नहीं सकतीं!

तारासिंह—(हाथ जोड़ कर) सरकार की मर्जी नहीं पाई, नहीं तो ऐसी-ऐसी लीलाओं की तो मैं एक ही दिन में काया पलट कर देने की हिम्मत रखता हूँ।

भैरोंसिंह—अगर मरजी हो तो इन अद्‌भुत बातों का आज ही निपटारा कर दिया जाये।

वीरेन्द्रसिंह—(मुस्कुरा कर) नहीं, ऐसी कोई जरूरत नहीं, हमें तुम लोगों के

हौसले पर पूरा भरोसा है। (देवीसिंह की तरफ देखकर) खैर, तो आज दिन भी अच्छा है।

देवीसिंह—बहुत खूब! (एक मुसाहिब की तरफ देखकर) आप जरा तकलीफ करें।

मुसाहिब—बहुत अच्छा, मैं जाता हूँ।

कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह यही चाहते थे कि किसी तरह वीरेन्द्रसिंह चुनार जायें क्योंकि उनके रहते ये दोनों अपने मतलब की कार्रवाई नहीं कर सकते थे। इस बात को वीरेन्द्रसिंह भी समझते थे मगर इसके सिवाय भी न मालूम क्या सोच कर वे इस समय चुनार जा रहे हैं या गयाजी की सरहद छोड़कर क्या मतलब निकाला चाहते हैं!

राजा वीरेन्द्रसिंह का विचार कोई जान नहीं सकता था। वे किसी से यह नहीं कह सकते थे कि हम दो घण्टे के बाद क्या करेंगे। कोई यह नहीं कह सकता था कि महाराज आज तो यहाँ हैं मगर कल कहाँ रहेंगे, या महाराज फलाँ काम को क्यों और किस इरादे से कर रहे हैं। पहले दिल-ही-दिल में अपना इरादा मजबूत कर लेते थे, जिसे कोई बदल नहीं सकता था, मगर अपने बाप की बहुत इज्जत करते थे और उनके मुकाबले में अपने दृढ़ विचार को भी हुक्म के मुताबिक बदल देने में बुरा नहीं समझते थे, बल्कि उसे कर्तव्य और धर्म मानते थे।

दो घड़ी रात जाते-जाते वीरेन्द्रसिंह ने चुनार की तरफ कूच कर दिया और देवीसिंह को साथ लेते गए। अब कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह खुदमुख्तार हो गये, मगर साथ ही इसके राजा हो गए तो क्या, अपनी खुदमुख्तारी के सामने आनन्दसिंह अपने बड़े भाई के हुक्म की नाकदरी नहीं कर सकते थे। और यहाँ दोनों ही के इरादे दूसरे हैं, जिसमें एक-दूसरे का बाधक नहीं हो सकता था।

कुँअर इन्द्रजीतसिंह बीमार थे, इसलिए दोनों भाई एक ही कमरे में रहा करते थे, मगर अब दोनों ने अपने-अपने लिए अलग-अलग दो कमरे मुकर्रर किए। जिस कमरे में विचित्र कोठरी थी, और जिसका हाल ऊपर लिखा गया है, उसे आनन्दसिंह ने अपने लिए रखा। उससे कुछ दूर पर इन्द्रजीतसिंह का दूसरा कमरा था।

15

रात आधी से ज्यादा जा चुकी है। गयाजी में हर मुहल्ले के चौकीदार 'जागते रहियो, होशियार रहियो' कह-कह कर इधर से उधर घूम रहे हैं। रात अँधेरी है, चारों तरफ अँधेरा छाया हुआ है। यहाँ का मुख्य स्थान विष्णु-पादुका है, उसके चारों तरफ की आबादी बहुत घनी है, मगर इस समय हम गुंजान आबादी में न जाकर उस मुख्तसिर आबादी की तरफ चलते हैं, जो शहर के उत्तर रामशिला पहाड़ी के नीचे आबाद है और

जहाँ के कुल मकान कच्चे और खपड़े की छावनी के हैं। इसी आबादी में से दो आदमी स्याह कम्बल ओढ़े बाहर निकले और फलगू नदी की तरफ रवाना हुए।

रामशिला पहाड़ी से पूरब फलगू नदी के बीचोंबीच में एक बड़ा भयानक ऊँचा टीला है। उस टीले पर किसी महात्मा की समाधि है और उसी जगह पत्थर की मजबूत बनी हुई कुटी में एक साधु भी रहते हैं। उस समाधि और कुटी के चारों तरफ बेर, मकोइचे, धौ इत्यादि जंगली पेड़ों से बड़ा ही गुंजान हो रहा है, और वहाँ जमीन पर पड़ी हुई हड्डियों की यह कैफियत है कि बिना उन पर पैर रखे कोई आदमी समाधि या उस कुटी तक जा ही नहीं सकता। छोटी-बड़ी, साबुत और टूटी सैकड़ों तरह की खोपड़ियाँ इधर से उधर लुढ़क रही हैं। न मालूम कब और क्यों कर इतनी हड्डियाँ चारों तरफ जमा हो गईं। उस आबादी से निकले हुए दोनों आदमी इसी टीले की तरफ जा रहे हैं।

कोई साधारण आदमी ऐसी अँधेरी रात में उस टीले की तरफ जाने का साहस कभी नहीं कर सकता, मगर ये दोनों बिना किसी तरह की रोशनी साथ लिए अँधेरे में ही हड्डियों पर पैर रखते और कँटीली झाड़ियों में घुसते चले जा रहे हैं। आखिर ये दोनों कुटी के पास जा पहुँचे, और दरवाजे पर खड़े होकर एक ने ताली बजाई।

भीतर से—कौन है ?

एक—किवाड़ खोलो।

भीतर से—क्यों किवाड़ खोलें ?

एक—काम है।

भीतर से—तुम लोग हमें व्यर्थ तंग करते हो।

साधु ने उठकर किवाड़ खोला और वे दोनों अन्दर जाकर एक तरफ बैठ गये। भीतर धूनी के जलने से कुटी अच्छी तरह गर्म हो रही थी, इसलिए उन दोनों ने कम्बल उतारकर रख दिया। अब मालूम हुआ कि ये दोनों औरतें हैं और साथ ही इसके यह भी देखने में आया कि एक औरत की दाहिनी कलाई कटी है, जिस पर वह कपड़ा लपेटे हुए है। एक औरत तो चुपचाप बैठी रही मगर वह दूसरी औरत, जिसकी कलाई कटी हुई थी, बाबाजी से यों बातचीत करने लगी—

औरत—कहिये, आपने कुछ सोचा ?

बाबाजी—जो काम मेरे किए हो ही नहीं सकता, उसके लिए मैं क्या सोचूँ ?

औरत—बेशक आपके किए वह काम हो सकता है क्योंकि वह आपको गुरु के समान मानती है।

साधु—गुरु के समान मानती है तो क्या मेरे कहने से वह अपनी जान दे देगी ? तुम लोग भी क्या अंधेर करती हो !

औरत—इसमें जान देने की क्या जरूरत है ?

साधु—तो तुम क्या चाहती हो ?

औरत—बस, इतना ही कि वह उस मकान को छोड़ दे।

साधु—उस बेचारी ने किसी को कुछ दुःख तो दिया नहीं, फिर उसके पीछे क्यों पड़ी हो ?

औरत—क्या उसने मुझे और मेरे आदमियों को धोखा नहीं दिया ?

साधु—तुम अपना राज्य दूसरे को देकर आप भाग गईं, अब तो वही मालिक है, इसलिए वे लोग उसी के नौकर गिने जायँगे ।

औरत—मैं अपना राज्य फिर अपने कब्जे करना चाहती हूँ ।

साधु—जो तुमसे हो सके करो, पर मैं किसी तरह की मदद नहीं दे सकता । तुम लड़कपन से मुझे जानती हो, तुम्हारे पिता तुमको गोद में लेकर यहाँ आया करते थे, मैं कभी किसी के भले-बुरे का साथी नहीं हुआ ।

औरत—जो भी हो, आपको वह काम करना ही पड़ेगा जो मैं कहती हूँ और याद रखिये कि अगर आप इन्कार करेंगे, तो इसका नतीजा अच्छा न होगा । मैं साधु और महात्मा समझ कर छोड़ न दूँगी ।

साधु—(कुछ देर सोचने के बाद) अच्छा, आज भर तुम मुझे और मोहलत दो, कल इसी समय यहाँ आना ।

औरत—खैर, एक दिन और सही ।

ये दोनों औरतें वहाँ से उठकर रवाना हुईं । न मालूम कब से एक आदमी कुटी के पीछे छिपा हुआ था, जो इस समय नजर बचाकर उन दोनों के पीछे-पीछे तब तक चलता ही गया, जब तक वे दोनों आबादी में पहुँचकर अपने मकान के अन्दर न घुस गईं । जब उन दोनों औरतों ने मकान के अन्दर जाकर दरवाजा बन्द कर लिया, जिसे खुला छोड़ गई थीं, तब वह आदमी वहाँ से लौटा, और फिर उसी कुटी में पहुँचा, जिस का हाल ऊपर लिख चुके हैं । कुटी का दरवाजा खुला हुआ था, और साधु बेचारे उसी तरह बैठे कुछ सोच रहे थे । वह आदमी कुटी के अन्दर बेधड़क चला गया, और दंडवत करके एक तरफ बैठ गया ।

साधु—कहिए देवीसिंहजी, आप आ गए ?

देवीसिंह—(हाथ जोड़कर) जी महाराज, मैं तभी से यहाँ हूँ, जब वे दोनों यहाँ आई भी न थीं, अब उन दोनों को उनके घर पहुँचा कर लौटा आ रहा हूँ ।

साधु—हाँ !

देवीसिंह—जी हाँ, आपने बड़ी कृपा की जो उनका हाल मुझे बता दिया, कई दिनों से हम हैरान हो रहे थे । क्या कहूँ, आपकी आज्ञा न हुई, नहीं तो मैं इसी जगह से इन दोनों को अपने कब्जे में कर लेता ।

साधु—नहीं भैया, ऐसा करने से यह हमारे गुरु की कुटिया बदनाम होती, अब तुमने उसका घर देख ही लिया है, सब काम बना लोगे । वीरेन्द्रसिंह बड़े प्रतापी और धर्मात्मा राजा हैं, ऐसे को कभी कोई सता नहीं सकता । देखो, इस दुष्टा माधवी ने अपने चाल-चलन को कैसा खराब किया और प्रजा को कितना दुःख दिया है ! आखिर उसी की सजा भोग रही है । अच्छा, अब ईश्वर तुम्हारा कल्याण करे । वीरेन्द्रसिंह

से मेरा आशीर्वाद कहना। अहा, वह कैसा धर्मात्मा और नीति पर चलनेवाला भक्त राजा है।

देवीसिंह—अच्छा, तो मुझे आज्ञा है न?

साधु—हाँ, जाओ, मगर देखो, मैं तुम्हें पहले भी कह चुका हूँ और अब भी कहता हूँ कि माधवी को जान से मत मारना, और बेचारी कामिनी पर दया रखना। मैं उसे अपनी पुत्री ही मानता हूँ। वीरेन्द्रसिंह से कह देना कि वे कामिनी को अपनी लड़की समझें और आनन्दसिंह के साथ उसका सम्बन्ध करने में कुछ सोच-विचार न करें, क्या हुआ, अगर उसका बाप आपके सामने खड़ा होने लायक नहीं है।

देवीसिंह—(हाथ जोड़कर) बहुत अच्छा, कह दूँगा। राजा वीरेन्द्रसिंह कदापि आपकी आज्ञा न टालेंगे; मगर फिर एक दफे मैं आपकी सेवा में आऊँगा।

साधु—नहीं, अब मुझसे मुलाकात न होगी। मैं आज ही इस कुटी को छोड़ दूँगा। हाँ, ईश्वर चाहेगा तो मैं एक दिन स्वयं तुम लोगों से मिलूँगा।

देवीसिंह—जैसी आज्ञा।

साधु—हाँ बस, अब जाओ, यहाँ मत अटको।

पाठक सोचते होंगे कि देवीसिंह तो वीरेन्द्रसिंह के साथ चुनार चले गये थे, यहाँ कैसे आ पहुँचे! मगर नहीं, लोगों के जानने में वीरेन्द्रसिंह देवीसिंह को अपने साथ ले गये थे, परन्तु वास्तव में ऐसा नहीं हुआ था। राजा वीरेन्द्रसिंह की गुप्त नीति साधारण नहीं होती।

16

राजा वीरेन्द्रसिंह के चुनार चले जाने के बाद दोनों भाइयों को अपनी-अपनी फिक्र पैदा हुई। कुँअर आनन्दसिंह किन्नरी की फिक्र में पड़े और कुँअर इन्द्रजीतसिंह को राजगृह की फिक्र पैदा हुई। राजगृह को फतह कर लेना उनके लिए एक अदना काम था, मगर इस विचार से कि किशोरी वहाँ फँसी हुई है, हमें सताने के लिए अग्निदत्त उसे तकलीफ न दे, धावा करने का जल्दी साहस नहीं कर सकते थे। जिस समय वह आजाद हुए, अर्थात् वीरेन्द्रसिंह के मौजूद रहने का खयाल जाता रहा, उसी समय से किशोरी की मुहब्बत ने जोर बाँधा और तरद्दुद के साथ मिली हुई बेचैनी बढ़ने लगी। आखिर अपने मित्र भैरोंसिंह से बोले, "अब मैं बिना राजगृह गए नहीं रह सकता। जिस जगह हमारे देखते-देखते बेचारी किशोरी हम लोगों से छीन ली गई, उस जगह अर्थात् उस अमलदारी को बिना तहस-नहस किये और किशोरी को पाये मेरा जी ठिकाने न होगा और न मुझे दुनिया की कोई चीज भली मालूम होगी।

भैरोंसिंह—आपका कहना ठीक है, मगर आप अकेले वहाँ क्या करेंगे?

इन्द्रजीतसिंह—दुष्ट अग्निदत्त के लिए मैं अकेला ही बहुत हूँ।

भैरोंसिंह—दुष्ट अग्निदत्त के लिए तो आप अकेले बहुत हैं, मगर शहर भर के लिए नहीं।

इन्द्रजीतसिंह—शहर भर से मुझे कोई मतलब नहीं।

भैरोंसिंह—आखिर शहर वाले उसकी तरफदारी करेंगे या नहीं ?

इन्द्रजीतसिंह—इसका अन्दाजा तो गयाजी पर कब्जा करने से ही तुम्हें मालूम हो गया होगा।

भैरोंसिंह—ठीक है, मगर अपनी तरफ से मजबूती रखना मुनासिब है।

इन्द्रजीतसिंह—अच्छा, तो मैं आनन्द को समझा दूँगा कि फलाँ दिन एक सरदार को थोड़ी फौज देकर हमारी मदद के लिए भेज देना।

भैरोंसिंह—यह हो सकता है, मगर उत्तम तो यही था कि दो-चार दिन और ठहर जाते, तब तक मैं राजगृह से घूम आता।

इन्द्रजीतसिंह—नहीं, अब इस किस्म की नसीहत सुनने लायक मैं नहीं रहा।

भैरोंसिंह—(कुछ देर सोचकर) खैर, जैसी आपकी मर्जी।

शाम के वक्त दोनों भाई घोड़ों पर सवार हो अपने दोनों ऐयारों और बहुत से मुसाहिबों और सरदारों को साथ ले घूमने और हवा खाने के लिए महल के बाहर निकले। कायदे के मुताबिक सरदार और मुसाहिब लोग अपने-अपने घोड़ों पर उन दोनों भाइयों के घोड़ों से लगभग पच्चीस कदम पीछे जाते थे। जब इन्द्रजीतसिंह या आनन्दसिंह घूमकर उनकी तरफ देखते, तब ये लोग झट आगे बढ़ जाते और बात सुनकर फिर पीछे हट जाते। हाँ दोनों ऐयार घोड़ों की रकाब थामे पैदल साथ जा रहे थे। जब ये दोनों भाई घूमने के लिए बाहर निकलते, तब शहर के मर्द-औरत बल्कि छोटे-छोटे बच्चे भी इनको देखकर खुश होते थे। जिसके मुँह से सुनिये, यही आवाज निकलती थी, "ईश्वर ने हम लोगों की सुन ली, जो ऐसे राजकुमारों के चरण यहाँ आये, और उस खुदगर्ज नमकहराम बेईमान का साया हमारे सिर से हटा।"

जब घूमते हुए ये दोनों भाई शहर से बाहर हुए, इन्द्रजीतसिंह ने आनन्दसिंह से कहा, "मैं किसी काम के लिए भैरोंसिंह को साथ लेकर राजगृह जाता हूँ। आज से ठीक आठवें दिन, अर्थात् रविवार को, किसी सरदार के साथ थोड़ी-सी फौज हमारी मदद को भेज देना।"

आनन्दसिंह—(थोड़ी देर चुप रहने के बाद) जो हुक्म; मगर…

इन्द्रजीतसिंह—तुम किसी तरह की चिन्ता मत करो। मैं अपने को हर तरह से सँभाले रहूँगा।

आनन्दसिंह—ठीक है, लेकिन…

इन्द्रजीतसिंह—गयाजी पहुँचने से ही तुम्हें मालूम हो गया होगा कि माधवी की रिआया हमारे खिलाफ न होगी।

आनन्दसिंह—ईश्वर करे ऐसा ही हो, परन्तु…

इन्द्रजीतसिंह—जब तक तुम्हारी फौज वहाँ न पहुँच जायगी, हम लोगों को जो कुछ करना होगा, छिप कर करेंगे।

आनन्दसिंह—ऐसा करने पर भी···

इन्द्रजीतसिंह—खैर, जो कुछ तुम्हें कहना हो, साफ-साफ कहो !

आनन्दसिंह—आपका अकेले जाना मुनासिब नहीं, दुश्मन के घर में जाकर अपने को सँभाले रहना भी कठिन है, राजा की मौजूदगी में रिआया को हर तरह उसका डर बना ही रहता है, आप दुश्मन के घर किसी तरह निश्चिन्त नहीं रह सकते और आपके इस तरह चले जाने बाद मेरा जी यहाँ कभी नहीं लग सकता।

राजगृह जाने पर कुँअर इन्द्रजीतसिंह कैसे ही मुस्तैद क्यों न हों, लेकिन छोटे भाई की आखिरी बात ने उन्हें हर तरह से मजबूर कर दिया। कुँअर इन्द्रजीतसिंह बड़े ही समझदार और बुद्धिमान थे, मगर मुहब्बत का भूत जब किसी के सिर पर सवार होता है तो वह पहले उसकी बुद्धि की ही मिट्टी पलीत करता है।

छोटे भाई की बात सुन इन्द्रजीतसिंह ने भैरोंसिंह की तरफ देखा।

भैरोंसिंह—मैं भी यही चाहता था कि आप दो-चार रोज यहीं और सब्र करें, और तब तक मुझे राजगृह से घूम आने दें।

आनन्दसिंह—(भैरोंसिंह की तरफ देखकर) वादा करके जाओ कि तुम कब लौटोगे ?

भैरोंसिंह—चार दिन के अन्दर ही मैं यहाँ पहुँच जाऊँगा।

आनन्दसिंह—(भैरोंसिंह की तरफ देखकर इन्द्रजीतसिंह से) यदि आज्ञा हो जाय तो ये इधर ही से चले जायें, घर जाने की जरूरत ही क्या ?

भैरोंसिंह—मैं तैयार हूँ।

इन्द्रजीतसिंह—घर जाकर अपना सामान तो इन्हें दुरुस्त करना ही होगा, हाँ मुझसे चाहे इसी समय बिदा हो जायँ।

17

भैरोंसिंह को राजगृह गये आज तीसरा दिन है। वहाँ का हाल-चाल अभी तक कुछ मालूम नहीं हुआ, इसी सोच में आधी रात के समय अपने कमरे में पलंग पर लेटे हुए कुँअर इन्द्रजीतसिंह को नींद नहीं आ रही है। किशोरी की खयाली तस्वीर उनकी आँखों के सामने आ-आ कर गायब हो जाती है। इससे उन्हें और भी दुःख होता है, घबरा कर लम्बी साँस ले उठ बैठते हैं। कभी-कभी जब बेचैनी बहुत बढ़ जाती है तो पलंग को छोड़ कमरे में टहलने लगते हैं।

इसी हालत में इन्द्रजीतसिंह कमरे के अन्दर टहल रहे थे, इतने में पहरे के एक सिपाही ने अन्दर की तरफ झाँक कर देखा और इनको टहलते देख हट गया, थोड़ी देर बाद वह दरवाजे के पास इस उम्मीद में आकर खड़ा हो गया कि कुमार उसकी तरफ देखकर पूछें तो वह कुछ कहे, मगर कुमार तो अपने ध्यान में डूबे हुए हैं, उन्हें खबर ही

क्या है कि कोई उनकी तरफ झाँक रहा या इस उम्मीद में खड़ा है कि वे उसकी तरफ देखें और कुछ पूछें। आखिर उस सिपाही ने जान-बूझ कर किवाड़ का एक पल्ला इस ढंग से खोला कि कुछ आवाज हुई, साथ ही कुमार ने घूम कर उसकी तरफ देखा और इशारे से पूछा कि क्या है।

राजा सुरेन्द्रसिंह, वीरेन्द्रसिंह, इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह का बराबर के लिए हुक्म था कि मौका न होने पर चाहे किसी की इत्तिला न की जाय मगर जब कोई ऐयार आवे और कहे कि मैं ऐयार हूँ और इसी समय मिलना चाहता हूँ तो चाहे कैसा ही बेमौका क्यों न हो हम तक उसकी इत्तिला जरूर पहुँचनी चाहिए। अपने घर के ऐयारों के लिए तो कोई रोक-टोक थी नहीं, चाहे वह कुसमय में भी महल में घुस जायँ या जहाँ चाहे वहाँ पहुँचें, महल में उनकी खातिर और उनका लिहाज ठीक उतना ही किया जाता था जितना पन्द्रह वर्ष के लड़के का किया जाता और इसी का ठीक नमूना ऐयार लोग दिखलाते थे।

सिपाही ने हाथ जोड़ कर कहा, "एक ऐयार हाजिर हुआ है और इसी समय कुछ अर्ज करना चाहता है!" कुमार ने कहा, "रोशनी को तेज कर दो और उसे अभी यहाँ लाओ।" थोड़ी देर के बाद स्याह मखमल की चुस्त पोशाक पहने, कमर से खंजर लटकाये, हाथ में कमन्द लिए एक खूबसूरत लड़का कमरे में आ मौजूद हुआ।

इन्द्रजीतसिंह ने गौर से उसकी ओर देखा, साथ ही उनके चेहरे की रंगत बदल गई। जो अभी उदास मालूम होता था, खुशी से दमकता हुआ दिखाई देने लगा।

इन्द्रजीतसिंह—मैं तुम्हें पहचान गया।

लड़का—क्यों न पहचानेंगे जब कि आपके यहाँ एक-से-एक बढ़ कर ऐयार हैं और दिन-रात उनका संग है, मगर इस समय मैंने भी अपनी सूरत अच्छी तरह नहीं बदली है।

इन्द्रजीतसिंह—कमला, पहले यह कहो कि किशोरी कहाँ और किस हालत में हैं, और उन्हें अग्निदत्त के हाथ से छुट्टी मिली या नहीं?

कमला—अग्निदत्त को अब उनकी कोई खबर नहीं है।

इन्द्रजीतसिंह—इधर आओ और हमारे पास बैठो। खुलासा कहो कि क्या-क्या हुआ, मैं तो इस लायक नहीं कि अपना मुंह उन्हें दिखाऊँ, क्योंकि मेरे किए कुछ भी न हो सका।

कमला—(बैठ कर) आप ऐसा खयाल न करें, आपने बहुत-कुछ किया, अपनी जान देने को तैयार हो गए और महीनों दुःख भी झेला। आपके ऐयार लोग अभी तक राजगृह में इस मुस्तैदी से काम कर रहे हैं कि अगर उन्हें यह मालूम हो जाता कि किशोरी वहाँ नहीं हैं तो उस राज्य का नाम-निशान मिटा देते।

इन्द्रजीतसिंह—मैंने भी यही सोच के उस तरफ ज्यादा जोर नहीं दिया कि कहीं अग्निदत्त के हाथ पड़ी हुई बेचारी किशोरी पर कुछ आफत न आवे। हाँ तो अब किशोरी वहाँ नहीं हैं?

कमला—नहीं।

इन्द्रजीतसिंह—कहाँ हैं और किसके कब्जे में हैं ?

कमला—इस समय वह खुदमुख्तार हैं, सिवाय लज्जा के उन्हें और किसी का डर नहीं।

इन्द्रजीतसिंह—जल्द बताओ, वह कहाँ हैं ? मेरा जी घबरा रहा है।

कमला—वह इसी शहर में हैं मगर अभी आपसे मिलना नहीं चाहतीं।

इन्द्रजीतसिंह—(आँखों में आँसू भर कर) बस तो मुझे मालूम हो गया कि उन्हें मेरी तरफ से रंज है, मेरे किए कुछ न हो सका, इसका उन्हें दुःख है।

कमला—नहीं-नहीं, ऐसा भूल के भी न सोचिए।

इन्द्रजीतसिंह—तो फिर मैं उनसे क्यों नहीं मिल सकता ?

कमला—(कुछ सोच कर) मिल क्यों नहीं सकते, मगर इस समय—

इन्द्रजीतसिंह—क्या तुमको मुझ पर दया नहीं आती ! अफसोस, तुम बिल्कुल नहीं जानतीं कि तुम्हारी बातें सुन कर इस समय मेरी दशा कैसी हो रही है। जब तुम खुद कह रही हो कि वह स्वतन्त्र हैं, किसी के दबाव में नहीं हैं और इसी शहर में हैं तो मुझसे न मिलने का कारण ही क्या है ? बस, यही न कि मैं उसके लायक नहीं समझा जाता !

कमला—फिर भी आप उसी खयाल को मजबूत करते हैं ! खैर, तो फिर चलिए मैं आपको ले चलती हूँ, जो होगा देखा जायगा, मगर अपने साथ किसी ऐयार को लेते चलिए। भैरोंसिंह तो यहाँ हैं नहीं, आपने उन्हें राजगृह भेज दिया है।

इन्द्रजीतसिंह—क्या हर्ज है तारासिंह को साथ लिये चलता हूँ, मगर भैरोंसिंह के जाने की खबर तुम्हें क्योंकर मिली ?

कमला—मैं बखूबी जानती हूँ, बल्कि उनसे मिलकर मैंने कह भी दिया है कि किशोरी राजगृह में नहीं हैं, तुम बेखौफ अपना काम करना।

इन्द्रजीतसिंह—अगर तुमने उससे ऐसा कह दिया है तो राजगृह में वह बड़ा ही बखेड़ा मचावेगा !

कमला—मचाना ही चाहिए।

कुँअर इन्द्रजीतसिंह ने उसी समय तारासिंह को बुलाया और उन्हें साथ ले कपड़े पहनकर कमला के साथ किशोरी से मिलने की खुशी में लम्बे-लम्बे कदम बढ़ाते रवाना हुए।

शहर-ही-शहर बहुत-सी गलियों में घुमाती हुई इन दोनों को साथ लिए कमला बहुत दूर चली गई और विष्णुपादुका मन्दिर के पास ही एक मकान के मोड़ पर पहुँच कर खड़ी हो गई।

इन्द्रजीतसिंह—क्यों, क्या हुआ ? रुक क्यों गई ?

कमला—बस, हम लोगों को इसी मकान में चलना है।

इन्द्रजीतसिंह—तो चलो।

कमला—इस मकान के दरवाजे के सामने ही एक भारी जमींदार की बैठक है। वहाँ दिन-रात पहरा लगता है। इधर से आप लोगों का जाना और यह ज़ाहिर

करना कि आज इस मकान में दो नये आदमी घुसे हैं, मुनासिब नहीं ।

तारासिंह—तो फिर क्या करना चाहिए ?

कमला—मैं दरवाजे की राह से जाती हूँ । आप लोग पीछे की तरफ जाइये और कमन्द लगा कर मकान के अन्दर पहुँचिये ।

इन्द्रजीतसिंह—क्या हर्ज है, ऐसा ही होगा, तुम दरवाजे की राह से जाओ ।

कमला—मगर एक बात और सुन लीजिये । जब मैं इस मकान में पहुँच कर छत पर से झाँकूँ तभी आप कमन्द फेंकिये, क्योंकि बिना मेरी मदद के कमन्द अड़ न सकेगी ।

18

मकान के अन्दर कमला, इन्द्रजीतसिंह और तारासिंह के पहुँचने के पहले ही हम अपने पाठकों को इस मकान में ले चलकर यहाँ की कैफियत दिखाते हैं ।

इस मकान के अन्दर छोटी-छोटी न मालूम कितनी कोठरियाँ हैं पर हमें उनसे कोई मतलब नहीं, हम तो उस दालान के पास जा कर खड़े होते हैं जिसके दोनों तरफ दो कोठरियाँ और सामने लम्बा-चौड़ा सहन है । इस दालान में किसी तरह की सजावट नहीं, सिर्फ एक दरी बिछी हुई है और खूंटियों पर कुछ कपड़े लटक रहे हैं । आधी रात का समय होने पर भी इस दालान में चिराग की रोशनी नहीं है । यह दालान ऊपर के दर्जे में है, इसके ऊपर कोई इमारत नहीं, सामने का सहन बिलकुल खुला हुआ है । चन्द्रमा की फैली हुई सुफेद चाँदनी सहन से घुसती हुई धीरे-धीरे दालान में आ रही है जिसकी रोशनी उस दालान की हर एक चीज को दिखलाने के लिए काफी है । एक तरफ की कोठरी तो बन्द है मगर दूसरी बगल वाली कोठरी का दरवाजा खुला हुआ है । यह कोठरी बहुत बड़ी नहीं है और इसके भीतर सफेद फर्श पर दो औरतें बैठी हुई धीरे-धीरे कुछ बातें कर रही हैं ।

हमारे पाठक इन दोनों औरतों को बखूबी पहचानते हैं इनमें से एक तो किशोरी और दूसरी वही किन्नरी है जिस पर कुँअर आनन्दसिंह रीझे हुए हैं, जो कई दफे आनन्दसिंह के कमरे में कोठरी के अन्दर से निकल अपनी चितवनों से उन्हें घायल कर चुकी है और साथ-साथ आप भी आशिक हो चुकी है ।

किशोरी—बहिन, तुमने जो कुछ नेकी मेरे साथ की है उसे मैं किसी तरह भूल नहीं सकती । मुझसे यह कभी न होगा कि तुम्हें ऐसी हालत में छोड़ इन्द्रजीतसिंह के पास चली जाऊँ ।

किन्नरी—फिर क्या किया जाय, किस तरह उम्मीद हो कि मुझे कोई पूछेगा

किशोरी—कमला ने मुझसे कसम खाकर कहा है कि आनन्दसिंह किन्नरी की चाह में डूबे हैं । इसे भी जाने दो, आखिर तुम्हारा भी कुछ अहसान उनके ऊपर है ?

नहीं ? इतने बदमाशों को, जो यहाँ फसाद मचा रहे थे, सिवाय तुम्हारे और कौन मार सकता था !

किन्नरी—खैर, जो होगा देखा जायगा, अब तो यह सोचना चाहिए कि हम लोग कहाँ जायँ और क्या करें ?

किशोरी कमला यहाँ आ जाय तो उससे राय मिला कर जो मुनासिब मालूम हो किया जाय। ओफ, यहाँ बैठे-बैठे जी घबरा गया, चलो, बाहर चलें, चाँदनी खूब निकली हुई है।

दोनों औरतें उस कोठरी के बाहर निकलीं और सहन में आकर टहलने लगीं। मौसम के मुताबिक कुछ सर्दी पड़ रही थी इसलिए दोनों ज्यादा देर तक सहन में टहल न सकीं, दालान में आकर दरी पर बैठ गईं और बातचीत करने लगीं।

इस मकान के बगल में एक छोटा-सा नजरबाग था, मगर उसकी हालत ऐसी खराब हो रही थी कि उसे नजरबाग की जगह खँडहर या जंगल ही कहना मुनासिब है। नजरबाग में जाने के लिए इस मकान से एक रास्ता था, बाकी चारों तरफ उसके ऊँची-ऊँची दीवारें थीं। इस मकान में बिना भीतर वाले की मदद के कोई कमन्द लगा कर चढ़ नहीं सकता था, क्योंकि इसकी ऊपर की दीवारें इस खूबी से बनी हुई थीं कि किसी तरह कमन्द अड़ नहीं सकती थी। हाँ, अगर कोई चाहे तो कमन्द के जरिए उस नजरबाग में जरूर जा सकता था, मगर इस मकान में आने के लिए वहाँ से भी वही दिक्कत होती।

थोड़ी देर किन्नरी और किशोरी बातें करती रहीं, इसके बाद नीचे से किवाड़ खटखटाने की आवाज आई। किशोरी ने कहा, "लो बहिन, कमला भी आ पहुँची।"

किन्नरी—खटखटाने की आवाज से तो मालूम होता है कि कमला ही है, मगर तो भी खिड़की से झाँक के मामूली सवाल कर लेना मुनासिब है।

किशोरी—ऐसा जरूर करना चाहिए, क्योंकि हम लोगों को धोखा देने के लिए दुश्मन लोग पचासों रंग लाया करते हैं।

"तुम ठहरो, मैं कुछ पूछती हूँ !" इतना कह कर किशोरी ने दरवाजे की तरफ वाली खिड़की में से झांक कर पूछा, "गिनती पूरी हुई ?" इसके जवाब में किसी ने कहा, "हाँ, पचासी तक।"

किशोरी—अच्छा, मैं नीचे आकर दरवाजा खोलती हूँ।

दरवाजा खोलने के लिए खुशी-खुशी किशोरी नीचे उतरी, मगर चौखट के पास पहुँचने के पहले ही नीचे के अँधेरे दालान में एक मोटे और कद्दावर आदमी को खड़ा देख डर के मारे चिल्ला उठी तथा उसी समय वह एक चीख मारकर बिल्कुल ही बेहोश हो गई, जब वह शैतान इस बेचारी की तरफ झपटा और हाथ तथा कमर से पकड़कर बेदर्दी के साथ एक तरफ खींच ले चला।

किशोरी के चिल्लाने की आवाज सुनते ही हाथ में नंगी तकवार लिए किन्नरी धड़धड़ाती हुई नीचे पहुँची मगर चारों तरफ घूम-घूम कर देखने पर भी उसने किसी को न पाया, बल्कि किशोरी का भी पता न लगा।

किन्नरी दरवाजा खोलना तो भूल गई, और किशोरी को न पाने से घबरा कर इधर-उधर ढूंढ़ने लगी। उस भयानक अँधेरे में दालान और कोठरियों में घूमती हुई किन्नरी को इस बात का जरा भी खौफ न मालूम हुआ कि किशोरी की तरह कहीं मुझ पर आफत न आ जाय।

बेचारी किशोरी चीख मार कर बेहोश हो गई मगर जब वह होश में आई तो उसने अपने को मौत के पंजे में गिरफ्तार पाया। उसने देखा कि झाड़ियों के बीच में जबर्दस्ती वह जमीन पर गिराई हुई है, एक आदमी नकाब से अपनी सूरत छिपाये उसकी छाती पर सवार है और खंजर उसके कलेजे के पार करना ही चाहता है।

चन्द्रकान्ता सन्तति

तीसरा भाग

1

पाठक समझ ही गये होंगे कि रामशिला के सामने फलगू नदी में बीच में भयानक टीले के ऊपर रहने वाले बाबाजी के पास जो दोनों औरतें गई थीं वे माधवी और उसकी सखी तिलोत्तमा थीं। बाबाजी ने उन दोनों से वादा किया था कि तुम्हारी बात का जवाब कल देंगे, इसलिए दूसरे दिन वे दोनों आधी रात के समय फिर बाबाजी के पास गईं। किवाड़ खटखटाते ही अन्दर से बाबाजी ने दरवाजा खोल दिया और उन दोनों को बुला कर अपने पास बैठाया।

बाबा—कहो माधवी अच्छी हो ?

माधवी—अच्छी क्या रहूँगी, अपने किये को पछताती हूँ !

बाबा—अब भी अपने को सम्हालो तो मैं वादा करता हूँ कि राजा वीरेन्द्रसिंह से कहकर तुम्हारा राज्य तुम्हें दिलवा दूँगा।

माधवी—अजी, अब भीख माँगने की इच्छा नहीं होती, अब तो जहाँ तक बन पड़ेगा अपने दुश्मनों को मार के ही कलेजा ठंडा करूँगी, चाहे इसके लिए मेरी जान भी जाय तो कोई परवाह नहीं !

बाबा—अगर यही खयाल है तो तुम्हें अपने दीवान अग्निदत्त से बदला लेना चाहिए, वीरेन्द्रसिंह के लड़कों ने तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ा !

माधवी—आपका कहना ठीक है मगर मैंने जो कुछ सोच रक्खा है वही करूँगी। मैं अपना इरादा किसी तरह बदल नहीं सकती और इसमें आपको हर तरह से मेरी मदद करनी होगी।

बाबा—खैर, जिस तरह बनेगा मैं तुम्हारी मदद करूँगा, मगर यह तो बताओ, सिवाय मेरे इस समय और भी कोई तुम्हारा मददगार है या नहीं ?

माधवी—कल तक तो मेरा मददगार कोई भी न था, मगर आज मेरे कई मददगार पहुँच गये हैं और अब मेरा काम जरूर हो जायेगा इसमें शक नहीं।

बाबा—कौन मददगार पहुँच गया है ?

माधवी—मेरा भाई भीमसेन !

बाबा—शिवदत्त का लड़का भीमसेन ?

माधवी—जी हाँ ।

बाबा—तब तो तुम्हारा काम ज़रूर हो जायेगा।

माधवी—तो भी आपको मेरी मदद करनी ही होगी।

बाबा—मैं जरूर मदद करूँगा, जो कुछ कहो मैं करने को तैयार हूँ !

माधवी—कल भीमसेन उस मकान में जाने का उद्योग करेगा जिसमें किशोरी रहती है। उसने मौका पाते ही अपनी बहिन किशोरी को मार डालने की कसम खाई है। अगर कल वह उस मकान के अन्दर किसी तरह जा सका तो जरूर ही किशोरी को मार डालेगा। फिर मुझे किसी तरह का तरद्दुद न रहेगा और न आपसे मदद लेने की ही जरूरत पड़ेगी, लेकिन वह उस मकान के अन्दर न जा सका तो जिस तरह हो आपको ऐसी कोई तरकीब करनी पड़ेगी जिसमें किशोरी उस मकान को छोड़ दे।

बाबा—भरसक तो मेरी मदद की जरूरत ही न पड़ेगी।

माधवी—ऐसा न कहिए ! अगर उस मकान में कमन्द लगाने की जगह होती तब तो कोई बात ही न थी, अब तक मैं अपना काम निकाल लिए होती।

बाबा—हाँ, यह तो मैं भी जानता हूँ कि तुम्हारे पिता ने उस मकान के बनवाने में बड़ी कारीगरी खर्च की है, मगर तो भी भीमसेन ने उसके अन्दर जाने की कोई तरकीब सोची ही होगी।

माधवी—जी हाँ, देखा चाहिए, कल क्या होता है।

बाबा—अच्छा, अब तुम परसों मुझसे जरूर मिलना। अगर तुम्हारा काम हो गया तो ठीक ही है, नहीं तो चौथे दिन मैं सहज ही में तुम्हारा काम कर दूंगा।

'बहुत अच्छा' कह कर माधवी वहाँ से उठी और अपनी सखी तिलोत्तमा को साथ लिये अपने डेरे पर चली आई।

माधवी के चले जाने पर थोड़ी देर तक बाबाजी कुछ सोचते रहे, इसके बाद वे कुटी के बाहर निकले और दो-चार दफे जोर से ताली बजाई। यकायक इधर-उधर पेड़ों की आड़ में से चार-पाँच आदमी निकल कर बाबाजी के पास आये और एक ने बढ़ कर पूछा, "कहिये, क्या हाल है ?"

बाबाजी ने कहा, "आज अब तुम लोगों की कोई जरूरत नहीं है, जहाँ चाहो चले जाओ, मगर कल एक घण्टे रात जाते-जाते तुम लोग जहाँ जरूर जुट जाओ !"

एक—क्यों, खैर तो है ? मैं बिना कुछ हाल सुने जाने वाला नहीं !

बाबा—अच्छा, तो फिर यह भी सुन लो कि कल क्या होगा और हम लोग क्या करेंगे।

सभी को लेकर बाबाजी कुटी के अन्दर गये और किवाड़ बन्द कर न मालूम क्या बातचीत करने लगे।

अब हम उसी मकान में पहुँचते हैं जिसमें किशोरी और किन्नरी का डेरा है या जहाँ इन्द्रजीतसिंह को लेकर कमला गई है।

किशोरी के चिल्लाने की आवाज सुन कर किन्नरी हाथ में तलवार लिए बहुत जल्द नीचे उतर गई। कमला ने किवाड़ खटखटाया है, दरवाजा खोलना चाहिए, इसका खयाल तो जाता रहा और इधर-उधर किशोरी को ढूँढ़ने लगी मगर इसे ढूँढ़ने में उसने ज्यादा देर न लगाई, दो ही चार दफे दालान और कोठरियों में घूम कर वह लौटी और सदर दरवाजा खोल कर कमला को मकान के अन्दर कर लिया।

दरवाजा खुलने में देर हुई इसी से कमला समझ गई कि भीतर कुछ गोलमाल हुआ है। अन्दर आते ही उसने पूछा, "क्यों, क्या हुआ?" जिसके जवाब में बदहवास किन्नरी केवल इतना ही कह सकी, "दरवाजा खोलने के लिए किशोरी नीचे उतरी थी, मगर न मालूम चिल्ला कर कहाँ गायब हो गई!"

कमला ने इस बात का कुछ जवाब न दिया। उसने सबसे पहले छत पर जाकर कुंअर इन्द्रजीतसिंह को कमन्द लगाने में मदद दी। जब वे और तारासिंह ऊपर चढ़ आये तो उन दोनों को भी साथ ले वह नीचे आँगन में उतर आई और किन्नरी की ही तरह संक्षेप में किशोरी के गायब हो जाने का हाल कहकर इधर-उधर ढूँढ़ने लगी।

ये सब बातें थोड़ी ही देर में हो गईं और अँधेरा होने पर भी बात की बात में कमला ने नीचे की कुल कोठरियों में किशोरी को ढूँढ़ डाला, परेशान और बदहवास इन्द्रजीतसिंह उसके साथ-साथ घूमते रहे।

ढूँढ़ते-ढूँढ़ते कमला जब उस कोठरी में पहुँची जिसकी पीठ खँडहर की तरफ पड़ती थी तो यकायक चाँदना मालूम पड़ा। भीतर घुसी, और तुरत ही निश्चय हो गया कि खँडहर की तरफ से कोई दीवार में सेंध लगा कर इस मकान के अन्दर घुसा और यह आफत मचा गया। उस खुलासा सेंध की राह से ये चारों आदमी भी बाहर खँडहर में निकल गये और वहाँ एक विचित्र तमाशा देखा!

2

शिवदत्तगढ़ में महाराज शिवदत्त बैठा हुआ बेफिक्री का हलुआ नहीं उड़ाता। सच पूछिये तो तमाम जमाने की फिक्र ने उसको आ घेरा है। वह दिन और रात सोचा ही करता है और उसके ऐयारों और जासूसों का दिन दौड़ते ही बीतता है। चुनार, गयाजी और राजगृह का हाल तो उसे रत्ती-रत्ती मालूम है क्योंकि इन तीनों जगहों की खबरें पहुँचाने के लिए उसने पूरा बन्दोबस्त किया हुआ है। आज यह खबर पाकर कि गयाजी का राज्य राजा वीरेन्द्रसिंह के कब्जे में आ गया, माधवी राज ही छोड़ कर भाग गई, और किशोरी दीवान अग्निदत्त के हाथ फँसी हुई है, शिवदत्त घवड़ा उठा और तरह-तरह की बातें सोचने में इतना लीन हो गया कि तन-बदन की सुध जाती रही। किशोरी के ऊपर उसे इतना गुस्सा आया कि अगर वह यहाँ मौजूद होती तो अपने हाथ से उसके टुकड़े-टुकड़े कर डालता। इस समय भी वह यह प्रण करके उठ खड़ा हुआ कि 'जब तक

किशोरी के मरने की खबर न पाऊँगा अन्न न खाऊँगा' और सीधा महल में चला गया, हुक्म देता गया कि भीमसेन को हमारे पास भेज दो।

राजा शिवदत्त महल में जाकर अपनी रानी कलावती के पास बैठ गया। उसके चेहरे की उदासी और परेशानी का सबब जानने के लिए कलावती ने बहुत-कुछ उद्योग किया मगर जब तक उसका लड़का भीमसेन महल में न आया, उसने कलावती की बात का कुछ भी जवाब न दिया। माँ-बाप के पास पहुँचते ही भीमसेन ने प्रणाम किया और पूछा, "क्या आज्ञा होती है ?"

शिवदत्त—किशोरी के बारे में जो कुछ खबर आज पहुँची तुमने भी सुनी होगी?

भीमसेनी—जी हाँ।

शिवदत्त—अफसोस, फिर भी तुम्हें अपना मुँह दिखाते शर्म नहीं आती ! न मालूम तुम्हारी बहादुरी किस दिन काम आयेगी और तुम किस दिन अपने को इस लायक बनाओगे कि मैं तुम्हें अपना लड़का समझूँ !

भीमसेन—मुझे जो आज्ञा हो, तैयार हूँ।

शिवदत्त—मुझे उम्मीद नहीं कि तुम मेरी बात मानोगे !

भीमसेन—मैं यज्ञोपवीत हाथ में लेकर कसम खाता हूँ कि जब तक जान बाकी है उस काम के करने की पूरी कोशिश करूँगा जिसके लिए आप आज्ञा देंगे !

शिवदत्त—मेरा पहला हुक्म यह है कि किशोरी का सिर काट कर मेरे पास लाओ।

भीमसेन—(कुछ सोच और ऊँची साँस लेकर) बहुत अच्छा, ऐसा ही होगा। और क्या हुक्म होता है?

शिवदत्त—इसके बाद वीरेन्द्रसिंह या उनके लड़कों में से जब तक किसी को मार न लो यहाँ मत आओ। यह न समझना कि यह काम मैं तुम्हारे ही सुपुर्द करता हूँ। नहीं, मैं खुद आज इस शिवदत्तगढ़ को छोड़ूँगा और अपना कलेजा ठंडा करने के लिए पूरा उद्योग करूँगा। वीरेन्द्रसिंह का चढ़ता प्रताप देख कर मुझे निश्चय हो गया कि लड़ कर उन्हें किसी प्रकार नहीं जीत सकता इसलिए आज से मैं उनके साथ लड़ने का खयाल छोड़ देता हूँ और उस ढंग पर चलता हूँ जिसे ठग, चोर या डाकू लोग पसन्द करते हैं।

भीमसेन—अख्तियार आपको है, जो चाहें करें। मुझे आज्ञा हो तो इसी समय चला जाऊँ और जो कुछ हुक्म हुआ है उसे पूरा करने का उद्योग करूँ !

शिवदत्त—अच्छा जाओ मगर यह कहो कि अपने साथ किस-किस को ले जाते हो ?

भीमसेन—किसी को नहीं।

शिवदत्त—तब तुम कुछ न कर सकोगे। दो-तीन ऐयार और दस-बीस लड़ाकों को अपने साथ जरूर लेते जाओ।

भीमसेन—आपके यहाँ ऐसा कौन ऐयार है जो वीरेन्द्रसिंह के ऐयारों का मुकाबला करे और ऐसा कौन बहादुर है जो उन लोगों के सामने तलवार उठा सके ?

शिवदत्त—तुम्हारा कहना ठीक है मगर तुम्हारे साथ गए हुए ऐयारों की कार्रवाई तब तक बहुत अच्छी होगी जब तक दुश्मनों को यह न मालूम हो जाय कि शिवदत्तगढ़ का कोई आया है! सिवाय इसके मैं बहादुर नाहरसिंह को तुम्हारे साथ भेजता हूँ जिसका मुकाबला करने वाला वीरेन्द्रसिंह की तरफ कोई नहीं है।

भीमसेन—बेशक नाहरसिंह ऐसा ही है मगर मुश्किल तो यह है कि नाहरसिंह जितना बहादुर है उससे ज्यादा इस बात को देखता है कि अपने कौल का सच्चा रहे। उसका कहना है कि जिस दिन कोई बहादुर द्वन्द्व-युद्ध में मुझे जीत लेगा, उसी दिन मैं उसका हो जाऊँगा।' ईश्वर न करे, कहीं ऐसी नौबत आ पहुँची तो वह उसी दिन से हम लोगों का दुश्मन हो जायगा।

शिवदत्त—यह सब तुम्हारा खयाल है, द्वन्द्व-युद्ध में उसे जीतने वाला वहाँ कोई नहीं है।

भीमसेन—अच्छा जो आज्ञा।

शिवदत्त—(खड़े होकर) चलो, मैं इसी वक्त चल कर तुम्हारे जाने का बन्दोबस्त कर देता हूँ।

शिवदत्त और भीमसेन के बाहर चले जाने के बाद रानी कलावती ने, जो बहुत देर से इन लोगों की बातें सुन-सुनकर गरम-गरम आँसू गिरा रही थी सिर उठाया और लम्बी साँस लेकर कहा, "हाय, अब तो जमाने का उलट-फेर ही दूसरा हुआ चाहता है। बेचारी किशोरी का क्या कसूर? वह आप से आप तो चली ही नहीं गई? उसने अपने आप तो कोई ऐसा काम किया ही नहीं जिससे उसकी इज्जत में फर्क आवे! हाय, किस कलेजे से भीमसेन अपनी बहिन को मारने का इरादा करेगा! मेरी जिन्दगी अब व्यर्थ है क्योंकि बेचारी लड़की तो अब मारी ही जायगी, भीमसेन भी वीरेन्द्रसिंह से दुश्मनी करके अपनी जान नहीं बचा सकता, दूसरे उस लड़के का भरोसा ही क्या जो अपने हाथ से अपनी बहिन का सिर काटे। अगर इन सब बातों को भी भूल जाऊँ और यही सोच कर बैठ रहूँ कि मेरे सर्वस्व तो पति हैं मुझे लड़के-लड़कियों से क्या मतलब, तो भी नहीं बनता, क्योंकि वे भी डाकू-वृत्ति लिया चाहते हैं। इस अवस्था में वे किसी प्रकार का सुख नहीं पा सकते। फिर जीते-जी अपने पति को दुःख भोगते मैं कैसे देखूंगी? हाय! वीरेन्द्रसिंह वही वीरेन्द्रसिंह है जिसकी बदौलत मेरी जान बची थी, न मालूम बुर्दाफरोशों की बदौलत मेरी क्या दुर्दशा होती! वही वीरेन्द्रसिंह है जिसने कृपा कर मुझे अपने पति के पास खोह में भिजवा दिया था! वही वीरेन्द्रसिंह है जिसने हम लोगों का कसूर एकदम माफ कर दिया था और चुनार गढ़ की गद्दी लौटा देने को भी तैयार था! किस-किस बात की तरफ देखूँ? वीरेन्द्रसिंह के बराबर धर्मात्मा तो कोई दुनिया में न होगा! फिर किसको दोष दूँ, अपने पति को? नहीं, कभी नहीं, यह मेरे किए न होगा! यह सब दोष तो मेरे कर्मों का ही है। फिर जब भाग्य ही बुरे हैं तो ऐसे भाग्य को लेकर दुनिया में क्यों रहूँ? मैं अपनी छुट्टी तो आप ही कर लेती हूँ फिर मेरे पीछे क्या जाने क्या होगा, इसकी खबर ही किसे है!"

रानी कलावती पागलों की तरह बहुत देर तक न जाने क्या-क्या सोचती रही, आखिर उठ खड़ी हुई और तालियों का गुच्छा उठाकर अपना एक सन्दूक खोला । न मालूम उसमें से क्या निकालकर उसने अपने मुँह में रख लिया और पास ही पड़ी हुई सोने की सुराही में से जल निकालकर पीने के बाद कलम-दवात और कागज लेकर कुछ लिखने बैठ गयी । लेख समाप्त होते-होते तक उसकी सखियाँ भी आ पहुँचीं । कलावती ने लिखे हुए कागज को लपेट कर अपनी एक सखी के हाथ में दिया और कहा, "जब महाराज मुझे पूछें तो यह कागज उनके हाथ में दे देना । बस, तुम लोग जाओ, अपना काम करो । मैं इस समय सोना चाहती हूँ । जब तक मैं खुद न उठूं; खबरदार, मुझको कोई मत उठाना !"

हुक्म पाते ही उसकी लौंडियाँ वहाँ से हट गयीं और रानी कलावती ने पलंग पर लेटकर आँचल से मुह ढाँप लिया ।

दो ही पहर के बाद मालूम हो गया कि रानी कलावती सो गयी, आज के लिए नहीं, बल्कि वह हमेशा के लिए सो गयी, अब वह किसी के जगाये नहीं जाग सकती ।

शाम के वक्त जब महाराज शिवदत्त फिर महल में आये तो महारानी का लिखा कागज उनके हाथ में दिया गया । पढ़ते ही शिवदत्त दौड़ा हुआ उस कमरे में गया जिसमें कलावती सोई हुई थी । मुँह पर से कपड़ा हटाया, नब्ज देखी, और तुरन्त लौटकर बाहर चला गया ।

अब तो उसकी सब सखियों और लौंडियों को भी मालूम हो गया कि रानी कलावती हमेशा के लिए सो गयी । न मालूम बेचारी ने किन-किन बातों को सोचकर जान दे देना ही मुनासिब समझा । उसकी प्यारी सखियाँ, जिन्हें वह जान से ज्यादा मानती थी, पलंग के चारों तरफ जमा हो गयीं और उसकी आखिरी सूरत देखने लगीं । भीमसेन चार घण्टे पहले ही मुहिम पर रवाना हो चुका था । उसे अपनी प्यारी माँ के मरने की कुछ खबर ही नहीं और यह सोचकर कि वह उदास और सुस्त होकर अपना काम न कर सकेगा, शिवदत्त ने भी कलावती के मरने की खबर उसके कान तक पहुँचने न दी ।

ऐयारों और थोड़े से लड़ाकों के सिवाय नाहरसिंह को साथ लिए हुए भीमसेन राजगृह की तरफ रवाना हुआ । उसका साथी नाहरसिंह बेशक लड़ाई के फन में बहुत ही जबर्दस्त था । उसे विश्वास था कि कोई अकेला आदमी लड़कर कभी मुझसे जीत नहीं सकता । भीमसेन भी अपने को ताकतवर और होशियार लगाता था, मगर जब से लोभवश नाहरसिंह ने उसकी नौकरी कर ली और आजमाइश के तौर पर दो-चार दफे नाहरसिंह और भीमसेन में नकली लड़ाई हुई, तब से भीमसेन को मालूम हो गया कि नाहरसिंह के सामने वह एक बच्चे के बराबर है । नाहरसिंह लड़ाई के फन में जितना होशियार और ताकतवर था उतना ही नेक और ईमानदार भी था और उसका यह प्रण करना बहुत ही मुनासिब था कि उसे जिस दिन जो कोई जीतेगा, वह उसी दिन से उसकी तावेदारी कबूल कर लेगा ।

ये लोग पहले राजगृह में पहुँचे और एक गुप्त खोह में डेरा डालने के बाद

भीमसेन ने ऐयारों को वहाँ का हाल मालूम करने के लिए मुस्तैद किया। दो ही दिन की कोशिश में ऐयारों ने वहाँ का कुल हाल मालूम कर लिया और भीमसेन ने जब यह सुना कि माधवी वहाँ मौजूद नहीं है, तब बिना छेड़छाड़ मचाये गयाजी की तरफ कूच किया।

इस समय राजगृह को अपने कब्जे में कर लेना भीमसेन के लिए कोई बड़ी बात न थी, मगर इस खयाल से कि गयाजी में राजा वीरेन्द्रसिंह की अमलदारी हो गयी है, राजगृह दखल़ करने से कोई फायदा न होगा और वीरेन्द्रसिंह के मुकाबले में लड़कर भी जीतना बहुत ही मुश्किल है उसने राजगृह का खयाल छोड़ दिया। सिवाय इसके जाहिर होकर वह किसी तरह किशोरी को अपने कब्जे में कर भी नहीं सकता था, उसे लुक-छिपकर पहले किशोरी पर ही सफाई का हाथ दिखाना मंजूर था।

गयाजी के पास पहुँचते ही एक गुप्त और भयानक पहाड़ी में उन लोगों ने डेरा डाला और खबर लेने के लिए ऐयारों को रवाना किया। जिस तरह भीमसेन के ऐयार लोग घूम-घूमकर टोह लिया करते थे उसी तरह माधवी की सखी तिलोत्तमा भी अपना काम साधने के लिए भेष बदलकर चारों तरफ घूमा करती थी। इत्तिफाक से भीमसेन के ऐयारों की मुलाकात तिलोत्तमा से हो गयी और बहुत जल्द माधवी की खबर भीमसेन को तथा भीमसेन की खबर माधवी को लग गयी।

भीमसेन के साथ जितने लड़ाके थे उन सभी को खोह में ही छोड़ सिर्फ भीमसेन और नाहरसिंह को माधवी ने उस मकान में बुला लिया जिसका हाल हम ऊपर लिख चुके हैं।

आज किशोरी के घर में घुसकर आफत मचाने वाले ये ही भीमसेन और नाहर-सिंह हैं। अपने ऐयारों की मदद से उस मकान के बगल वाले खँडहर में घुसकर भीमसेन ने उस मकान में सेंध लगाई और उस सेंध की राह नाहरसिंह ने अन्दर जाकर जो कुछ किया, वह पाठकों को मालूम ही है।

नाहरसिंह मकान के अन्दर घुसकर उसी सेंध की राह किशोरी को लेकर बाहर निकल आया और उस बेचारी को जमीन पर गिराकर मालिक के हुक्म के मुताबिक उसे मार डालने पर मुस्तैद हुआ। मगर एक बेकसूर औरत पर इस तरह जुल्म करने का इरादा करते ही उस जवाँमर्द का कलेजा दहल गया। वह किशोरी को जमीन पर रख दूर जा खड़ा हुआ और भीमसेन से, जो मुँह पर नकाब डाले उसी जगह मौजूद था, बोला, "लीजिए, इसके आगे अब जो कुछ करना है आप ही कीजिये। मेरी हिम्मत नहीं पड़ती! मगर मैं आपको भी···!"

हाथ में खंजर लेकर भीमसेन फौरन बेचारी किशोरी की छाती पर, जो उस समय डर के मारे बेहोश थी, जा चढ़ा। साथ ही इसके किशोरी की बेहोशी भी जाती रही और उसने अपने को मौत के पंजे में फँसा हुआ पाया, जैसा कि हम ऊपर लिख आये हैं।

भीमसेन ने खंजर उठाकर ज्यों ही किशोरी को मारना चाहा, पीछे से किसी ने उसकी कलाई थाम ली और खंजर लिए उसके मजबूत हाथ को बेबस कर दिया। भीम-

सेन ने फिरकर देखा तो एक साधु की सूरत नजर पड़ी। वह किशोरी को छोड़ उठ खड़ा हुआ और उसी खंजर से उसने साधु पर वार किया।

यह साधु वही है जो रामशिला पहाड़ी के सामने फलगू नदी के बीच में भयानक टीले पर रहता था और जिसके पास मदद के लिए माधवी और तिलोत्तमा का जाना और उन्हीं के पास देवीसिंह का पहुँचना भी हम लिख आये हैं। इस समय यह साधु इस बात पर मुस्तैद दिखाई देता है कि जिस तरह बने, इन दुष्टों के हाथ से बेचारी किशोरी को बचावे।

चाँदनी रात में दूर खड़ा नाहरसिंह यह तमाशा देखता रहा मगर भीमसेन को साधु से जबर्दस्त समझकर मदद के लिए पास न आया। भीमसेन के चलाए हुए खंजर ने साधु का कुछ भी नुकसान न किया और उसके खंजर का वार बचाकर फुर्ती से भीमसेन के पीछे जा उसकी टाँग पकड़कर इस ढंग से खींची कि भीमसेन किसी तरह सँभल न सका और धम्म से जमीन पर गिर पड़ा। उसके गिरते ही वह साधु हट गया, और बोला, "उठ खड़ा हो और फिर आकर लड़!"

गुस्से में भरा हुआ भीमसेन उठ खड़ा हुआ और खंजर जमीन पर फेंक साधु से लिपट गया क्योंकि वह कुश्ती के फन में अपने को बहुत होशियार समझता था। मगर साधु से कुछ पेश न गयी। थोड़ी ही देर में साधु ने भीमसेन को सुस्त कर दिया और कहा, "जा तुझे मैं छोड़ देता हूँ। अगर अपनी जिन्दगी चाहता है तो अभी यहाँ से भाग जा।"

भीमसेन हैरान होकर साधु का मुँह देखता रह गया, कुछ जवाब न दे सका। जमीन पर पड़ी हुई बेचारी किशोरी यह कैफियत देख रही थी, मगर डर के मारे न तो उससे उठा जाता था और न वह चिल्ला ही सकती थी।

भीमसेन को इस तरह बेदम देखकर नाहरसिंह से न रहा गया। वह झपट कर साधु के पास आया और ललकार कर बोला, "अगर बहादुरी का दावा रखता है तो इधर आ। मैं समझ गया कि तू साधु नहीं, बल्कि कोई मक्कार है।"

साधु महाशय नाहरसिंह से भी उलझने को तैयार हो गये मगर ऐसी नौबत न आयी क्योंकि उसी समय ढूँढ़ते हुए सेंध की राह से कुँअर इन्द्रजीतसिंह और तारासिंह भी खँडहर में आ पहुँचे और उनके पीछे-पीछे किन्नरी और कमला भी आ मौजूद हुईं। कुँअर इन्द्रजीतसिंह को देखते ही वे साधूराम तो हट गये और खँडहर की दीवार फाँद न मालूम कहाँ चले गये। उधर एक पेड़ के पास खड़े हुए अपने नेजे को नाहरसिंह ने उखाड़ लिया और उसी से इन्द्रजीतसिंह का मुकाबला किया। तारासिंह ने उछलकर एक लात भीमसेन को ऐसी लगाई कि वह किसी तरह सम्हल न सका, तुरंत जमीन पर लोट गया। भीमसेन एक लात खाकर जमीन पर लोट जाने वाला न था मगर साधु के साथ लड़कर वह बदहवास और सुस्त हो रहा था इसलिए तारासिंह की लात से सम्हल न सका। तारासिंह ने भीमसेन की मुश्कें बाँध लीं और उसे एक किनारे रख के नाहरसिंह की लड़ाई का तमाशा देखने लगा।

आधे घंटे तक नाहरसिंह और इन्द्रजीतसिंह के बीच लड़ाई होती रही। इन्द्र-

जीतसिंह की तलवार ने नाहरसिंह के नेजे को दो टुकड़े कर दिये और नाहरसिंह की ढाल पर बैठकर कुँअर इन्द्रजीतसिंह की तलवार कब्जे से अलग हो गयी। थोड़ी देर के लिए दोनों बहादुर ठहर गये। कुँअर इन्द्रजीतसिंह की बहादुरी देखकर नाहरसिंह बहुत खुश हुआ और बोला—

नाहरसिंह—शाबाश! तुम्हारे ऐसा बहादुर मैंने आज तक नहीं देखा।

इन्द्रजीतसिंह—ईश्वर की सृष्टि में एक से एक बढ़ के पड़े हैं, तुम्हारे या हमारे ऐसों की बात ही क्या है!

नाहरसिंह—आपका कहना बहुत ठीक है, मेरा प्रण क्या है, आप जानते हैं?

इन्द्रजीतसिंह—कह जाइए, अगर नहीं जानता हूँ तो अब मालूम हो जायेगा।

नाहरसिंह—मैंने प्रण किया है कि जो कोई लड़कर मुझे जीतेगा, मैं उसी की ताबेदारी कबूल करूँगा।

इन्द्रजीतसिंह—तुम्हारे ऐसे बहादुर का यह प्रण बेमुनासिब नहीं है। फिर आइए, कुश्ती से निपटारा कर लिया जाय।

नाहरसिंह—बहुत अच्छा, आइए!

दोनों में कुश्ती होने लगी। थोड़ी ही देर में कुँअर इन्द्रजीतसिंह ने नाहरसिंह को जमीन पर दे मारा और पूछा, "कहो, अब क्या इरादा है?"

नाहरसिंह—मैं ताबेदारी कबूल करता हूँ।

इन्द्रजीतसिंह उसकी छाती पर से उठ खड़े हुए और इधर-उधर देखने लगे। चारों तरफ सन्नाटा था। किशोरी, किन्नरी या कमला का कहीं पता नहीं। भीमसेन और उसके साथियों का भी (अगर कोई वहाँ हो) नाम-निशान नहीं, यहाँ तक कि अपने ऐयार तारासिंह की सूरत भी उन्हें दिखाई न दी।

इन्द्रजीतसिंह—यह क्या! चारों तरफ सन्नाटा क्यों छा गया?

नाहरसिंह—ताज्जुब है! इसके पहले तो यहाँ कई आदमी थे, न मालूम वे सब कहाँ चले गये?

इन्द्रजीतसिंह—तुम कौन हो और तुम्हारे साथ कौन था?

नाहरसिंह—मैं आपका ताबेदार हूँ, मेरे साथ शिवदत्तसिंह का लड़का भीमसेन था और उसके पहलू में उसका नौकर था। आशा है कि आप भी अपना परिचय मुझे देंगे।

इन्द्रजीतसिंह—मेरा नाम इन्द्रजीतसिंह है।

नाहरसिंह—हाँ!

नाम सुनते ही नाहरसिंह उनके पैरों पर गिर पड़ा और बोला, "मैं ईश्वर को धन्यवाद देता हूँ कि उसने मुझे आपकी ताबेदारी में सौंपा! यदि किसी दूसरे की ताबेदारी कबूल करनी पड़ती तो मुझे बड़ा दुःख होता!

नाहरसिंह ने सच्चे दिल से कुमार की ताबेदारी कबूल की। इसके बाद बड़ी देर तक दोनों बहादुर चारों तरफ घूम-घूमकर लोगों को ढूँढ़ते रहे, मगर किसी का पता न लगा। हाँ, एक पेड़ के नीचे भीमसेन दिखाई पड़ा जिसके हाथ-पैर कमन्द से

मजबूत बँधे हुए थे। भीमसेन ने पुकारकर कहा, "क्यों नाहरसिंह ! क्या मेरी मदद न करोगे ?"

नाहरसिंह—अब मैं तुम्हारा ताबेदार नहीं हूँ।

इन्द्रजीतसिंह—(भीमसेन से) तुम्हें किसने बाँधा ?

भीमसेन—मैं पहचानता तो नहीं, मगर इतना कह सकता हूँ कि आपके एक साथी ने।

इन्द्रजीतसिंह—और वह बाबाजी कहाँ चले गये ?

भीमसेन—क्या मालूम ?

इतने ही में खँडहर की दीवार फाँदकर आते हुए तारासिंह भी दिखाई पड़े। इन्द्रजीतसिंह घबराए हुए उसकी तरफ बढ़े और पूछा, "तुम कहाँ चले गये थे ?"

तारासिंह—जिस समय हम लोग यहाँ आये थे, एक बाबाजी भी इस जगह मौजूद थे मगर न मालूम कहाँ चले गये ! मैं एक आदमी की मुश्कें बाँध रहा था कि उसी समय (हाथ का इशारा करके) उस झाड़ी में छिपे कई आदमी बाहर निकले और किशोरी को जबर्दस्ती उठाकर उसी तरफ ले चले। उन लोगों को जाते देख किन्नरी और कमला भी उसी तरफ लपकीं। मैंने यह सोचकर कि कहीं ऐसा न हो कि आपको लड़ाई के समय धोखा देकर यह आदमी पीछे से आप पर वार करे झटपट उसकी मुश्कें बाँधीं और फिर मैं भी उसी तरफ लपका जिधर वे लोग गये थे। वहाँ कोने में एक खुली हुई खिड़की नजर आयी। मैं यह सोच उस खिड़की के बाहर गया कि बेशक इसी राह से वे लोग निकल गये होंगे।

इन्द्रजीतसिंह—फिर कुछ पता लगा ?

तारासिंह—कुछ भी नहीं, न मालूम वे लोग किधर गायब हो गये ! मैं आपको लड़ते हुए छोड़ गया था, इसलिए तुरन्त लौट आया। अब आप घर चलिए, आपको पहुँचाकर मैं उन लोगों की खोज में निकलूँगा। (नाहरसिंह की तरफ इशारा करके) इनसे क्या निपटारा हुआ ?

इन्द्रजीतसिंह—इन्होंने मेरी ताबेदारी कबूल कर ली।

तारासिंह—सो तो ठीक है, मगर दुश्मन का···

नाहरसिंह—आप इन सब बातों को न सोचिये। ईश्वर चाहेगा तो आप मुझे बेईमान कभी न पावेंगे !

तारासिंह—ईश्वर ऐसा ही करे !

रात की अँधेरी बिलकुल जाती रही और अच्छी तरह सवेरा हो गया। मुहल्ले के कई आदमी उस खिड़की की राह खँडहर में चले आये और अपने राजा को वहाँ पा हैरान हो देखने लगे। कुँअर इन्द्रजीतसिंह, तारासिंह और नाहरसिंह अपने साथ भीमसेन को लिए हुए महल में पहुँचे और इन्द्रजीतसिंह ने सब हाल अपने छोटे भाई आनन्दसिंह से कहा।

आज रात की वारदात ने दोनों कुमारों को हद से ज्यादा तरदुद्द में डाल दिया। किन्नरी और किशोरी के इस तरह मिल कर भी पुनः गायब हो जाने से दोनों ही पहले

से ज्यादा उदास हुए और सोचने लगे कि अब क्या करना चाहिए।

आधी रात का समय है और सन्नाटे की हवा चल रही है। बिल्लौर की तरह खूबी पैदा करने वाली चाँदनी आशिकमिजाजों को सदा ही भली मालूम होती है, लेकिन आज की सर्दी ने उन्हें भी पस्त कर दिया है, यह हिम्मत नहीं पड़ती कि जरा मैदान में निकलें और इस चाँदनी की बहार लें, मगर घर में बैठे दरवाजे की तरफ देखा करने और उसाँसें लेने से होता ही क्या है। मर्दानगी कोई और ही चीज है, इश्क किसी दूसरी ही वस्तु का नाम है, तो भी इश्क के मारे हुए माशूक की नागिन सी जुल्फों से अपने को डँसाना ही जवाँमर्दी समझते हैं और दिलबर की तिरछी निगाहों से अपने कलेजे को छलनी बनाने में ही बहादुरी मानते हैं। मगर वे लोग जो सच्चे बहादुर हैं, घर बैठे 'ओफ' करना पसन्द नहीं करते और समय पड़ने पर तलवार ही को अपना माशूक मानते हैं। देखिये, इस सर्दी और ऐसे भयानक स्थान में भी एक सच्चे बहादुर को किसी पेड़ की आड़ में बैठ जाना भी बुरा मालूम होता है।

अब रात पहर भर से भी कम बाकी है। एक पहाड़ी के ऊपर, जिसकी ऊँचाई बहुत ज्यादा नहीं तो इतनी कम भी नहीं है कि बिना दम लिए एक ही दौड़ में कोई ऊपर चढ़ जाय, एक आदमी मुँह पर नकाब डाले काले कपड़े से तमाम बदन को छिपाये इधर-उधर टहल रहा है। चारों तरफ सन्नाटा है, कोई उसे पहचानने वाला यहाँ मौजूद नहीं, शायद इसी खयाल से उसने नकाब उलट दी और कुछ देर के लिए खड़े होकर मैदान की तरफ देखने लगा।

इस पहाड़ी की बगल में एक दूसरी पहाड़ी है जिसकी जड़ इस पहाड़ी से मिली हुई है। मालूम होता है कि एक पहाड़ी के दो टुकड़े हो गए हैं। बीच में डाकुओं और लुटेरों के आने-जाने लायक रास्ता है जिसे भयानक दरार कहना मुनासिब जान पड़ता है। इस आदमी की निगाह घड़ी-घड़ी उसी दर्रे की तरफ दौड़ती है और सन्नाटा पाकर मैदान की तरफ घूम जाती है जिससे मालूम होता है कि उसकी आँखें किसी ऐसे को ढूंढ़ रही हैं जिसके आने की इस समय पूरी उम्मीद है।

टहलते-टहलते उसे बहुत देर हो गई, पूरब तरफ आसमान पर कुछ-कुछ सुफेदी फैलने लगी जिसे देख यह कुछ घबराया सा हो गया और दस कदम आगे बढ़ कर मैदान की तरफ देखने लगा, साथ ही इसके चौंका और धीरे से बोल उठा, "आ पहुँचे।"

उस आदमी ने धीरे से सीटी बजाई। इधर-उधर चट्टानों की आड़ में छिपे हुए दस-बारह आदमी निकल आये जिन्हें देख वह हुकूमत के तौर पर बोला, "देखो वे लोग आ पहुँचे, अब बहुत जल्द नीचे उतर चलना चाहिए।"

बात के अन्दाज से मालूम हो गया कि वह आदमी, जो बहुत देर से पहाड़ी के ऊपर टहल रहा था उन सभी का सरदार है। अब उसने अपने चेहरे पर नकाब डाल ली और अपने-अपने साथियों को साथ लेकर तेजी के साथ पहाड़ी के नीचे उतर आने वालों का मुहाना रोक लिया।

कपड़े में लपेटी हुई एक लाश उठाए और उसे चारों तरफ से घेरे कई आदमी उस दर्रे में घुसे। वे लोग तेज कदम बढ़ाये जा रहे थे। उन्हें स्वप्न में भी यह गुमान,

न था कि हम लोगों के काम में बाधा डालने वाला इस पहाड़ के बीच में से कोई निकल आएगा।

जब लाश उठाए हुए वे लोग उस दर्रे के बीच में घुसे बल्कि उन लोगों ने जब आधी दरार को तै कर लिया, तब यकायक चारों तरफ से छिपे कई आदमी उन लोगों पर टूट पड़े और हर तरह से उन्हें लाचार कर दिया। वे लोग किसी तरह भी लाश को न ले जा सके और तीन-चार आदमियों के घायल होने तथा एक के मर जाने पर उसी जगह उस लाश को छोड़ आखिर सभी को भाग ही जाना पड़ा।

दुश्मनों के भाग जाने पर उस सरदार ने जो पहले ही से उस पहाड़ी पर मौजूद था जिसका जिक्र हम कर आये हैं, अपने साथियों को पुकार कर कहा, "पीछा करने की कोई जरूरत नहीं, हमारा मतलब निकल गया। मगर यह देख लेना चाहिए कि यह किशोरी ही है या नहीं!"

एक ने बटुए में से मोमबत्ती निकाल कर जलाई और उस लाश के मुँह पर से कपड़ा हटा कर देखने के बाद कहा, "किशोरी ही तो है।" सरदार ने किशोरी की नब्ज पर हाथ रक्खा और कहा—

सरदार—ओफ! इसे बहुत तेज बेहोशी दी गई है, देखो, तुम भी देख लो!

एक—(नब्ज देख कर) बेशक बहुत ज्यादा बेहोशी दी गई है। ऐसी हालत में अक्सर जान निकल जाती है!

दूसरा—इसे कुछ कम करना चाहिए।

सरदार ने अपने बटुए में से एक डिबिया निकाली तथा खोल कर किशोरी को सुँघाने के बाद फिर नब्ज पर हाथ रक्खा और कहा, "बस इससे ज्यादा बेहोशी कम करने पर यह होश में आ जायगी, चलो उठाओ, अब यहाँ ठहरना मुनासिब नहीं है।"

किशोरी को उठा कर वे लोग उसी दर्रे की राह घूमते हुए पहाड़ी के पार हो गये और न मालूम किस तरफ चले गये। इनके जाने के बाद उसी जगह जहाँ पर लड़ाई हुई थी, छिपा हुआ एक आदमी बाहर निकला और चारों तरफ देखने लगा। जब वहाँ किसी को मौजूद न पाया तो धीरे से बोल उठा—

"मेरा पहले ही से यहाँ आ पहुँचना कैसा मुनासिब हुआ! मैं उन लोगों को खूब पहचानता हूँ जो लड़-भिड़ कर बेचारी किशोरी को ले गये। खैर, क्या मुजायका है, मुझसे भाग कर ये लोग कहाँ जायेंगे। मेरे लिए तो दोनों ही बराबर हैं, वे ले जाते तब भी उतनी ही मेहनत करनी पड़ती, और ये लोग ले गये हैं तब भी उतनी ही मेहनत करनी पड़ेगी। खैर, हरि इच्छा, अब बाबाजी को ढूँढ़ना चाहिए। उन्होंने भी इसी जगह मिलने का वादा किया था।"

इतना कह वह आदमी चारों तरफ घूमने और बाबाजी को ढूंढ़ने लगा। इस समय इस आदमी को यदि माधवी देखती तो तुरत पहचान लेती क्योंकि यह वही साधु है जो रामशिला पहाड़ी के सामने टीले पर रहता था, जिसके पास माधवी गयी थी, या जिसने भीमसेन के हाथ से उस समय किशोरी की जान बचाई थी जब खँडहर

के बीच में वह उसकी छाती पर सवार हो खंजर उसके कलेजे के पार किया ही चाहता था।

साफ सवेरा हो चुका था बल्कि पूरब तरफ सूर्य की लालिमा ने चौथाई आसमान पर अपना दखल जमा लिया था। वह साधु इधर-उधर घूमता-फिरता एक जगह अटक गया और सोचने लगा कि किधर जाय या क्या करे, इतने ही में सामने से इसी की सूरत-शक्ल के एक दूसरे बाबाजी आते हुए दिखाई पड़े। देखते ही यह उनकी तरफ बढ़ा और बोला, "मैं बड़ी देर से आपको ढूँढ़ता रहा हूँ, क्योंकि इसी जगह मिलने का वादा किया था!"

अभी आए हुए बाबाजी ने कहा, "मैं भी वादा पूरा करने के लिए आ पहुँचा (हँस कर) बहुत खासे! यदि इस समय कोई देखे तो अवश्य बावला हो जाय और कहे कि एक ही रंग और सूरत-शक्ल के दो बाबाजी कहाँ से पैदा हो गये? अच्छा, हमारे पीछे-पीछे चले आओ।"

दोनों बाबाओं ने एक तरफ का रास्ता लिया और देखते-देखते न मालूम किधर गायब हो गये या किस खोह में जा छिपे।

किशोरी की जब आँख खुली तो उसने अपने को एक सुन्दर मसहरी पर लेटे हुए पाया और उम्दा कपड़ों और जेवरों से सजी हुई कई औरतें भी उसे दिखाई पड़ीं। पहले तो किशोरी ने यही समझा कि वे सब अच्छे अमीरों और सरदारों की लड़कियाँ हैं, मगर थोड़ी ही देर बाद उनकी बातचीत और कायदे से मालूम हो गया कि लौंडियाँ हैं। अपनी बेवसी और बदकिस्मती पर रोती हुई भी किशोरी को यह जानने की बड़ी उत्कण्ठा हुई कि किस महाराजाधिराज के मकान में आ फँसी हूँ जिसकी लौंडियाँ इस शान और शौकत की दिखाई पड़ती हैं।

किशोरी को होश में आते देख उनमें की दो-तीन लौंडियाँ न मालूम कहाँ चली गईं, मगर किशोरी ने बखूबी समझ लिया कि मेरे होश में आने की किसी को खबर करने गई हैं।

ताज्जुब-भरी निगाहों से किशोरी चारों तरफ देखने लगी। वाह-वाह, क्या सुन्दर कमरा बना हुआ है! चारों तरफ दीवारों पर मीनाकारी का काम किया हुआ है छत में सुनहरी वेल और बीच-बीच में जड़ाऊ फूलों को देखकर अक्ल दंग होती है। न मालूम इसकी तैयारी में कितने रुपये खर्च हो गये होंगे! छत से लटकती हुई बिल्लौरी हाँडियों की परइयों में मानिक की लोलकें लटक रही हैं, जड़ाऊ डारों पर बेशकीमत दीवारगीरें अपनी बहार दिखा रही हैं, दरवाजों की महराबों पर अंगूर की बेलें और उस पर बैठी हुई छोटी-छोटी खूबसूरत चिड़ियों के बनाने में कारीगर ने जो कुछ मेहनत की होगी, उसका जानना बहुत ही मुश्किल है। उन अंगूरों में कहीं पक्के अंगूर की जगह मानिक और कच्चे की जगह पन्ना काम में लाया गया था। अलावा इन सब बातों के उस कमरे की कुल सजावट का हाल अगर लिखा जाय तो हमारा असल मतलब बिल्कुल छूट जायेगा और मुख्तसिर लिखावट के वादे में फर्क पड़ जायगा। अस्तु, इस बारे में हम कुछ नहीं लिखते।

इस मकान को देख किशोरी दंग हो गई। उसकी हालत का लिखना बहुत ही मुश्किल है। जिधर को भी उसकी निगाह जाती उधर ही की हो रहती थी, पर उस जगह की सजावट किशोरी अच्छी तरह देखने भी न पाई थी कि पहले की सी और कई लौंडियाँ वहाँ आ मौजूद हुईं और बोलीं, "महाराज को साथ लिए रानी साहिबा आ रही हैं !"

तभी महाराज को साथ लिये रानी साहिबा उस कमरे में आ पहुँचीं। बेचारी किशोरी को भला क्या मालूम कि ये दोनों कौन हैं या कहाँ के राजा हैं। तो भी इन दोनों की सूरत-शक्ल देखते ही किशोरी रुआब में आ गई। महाराजा की उम्र लगभग पचास वर्ष की होगी। लम्बा कद, गोल चेहरा, बड़ी-बड़ी आँखें, चौड़ी पेशानी, ऊपर को उठी हुई मूँछें, बहादुरी चेहरे पर बरस रही थी। रानी साहिबा की उम्र भी लगभग पैंतीस वर्ष के होगी फिर भी उनके बदन की बनावट और खूबसूरती नौजवान परीजमालों की आँखें नीची करती थी। उनकी बड़ी-बड़ी रतनार आँखों में अब भी वही बात थी जो उनकी जवानी में रही होगी। उनके अंगों की लुनाई में किसी तरह का फर्क नहीं आया था। इस समय एक कीमती धानी पोशाक उनकी खूबसूरती को बढ़ा रही थी और जड़ाऊ जेवरों से उनका बदन भरा हुआ था मगर देखने वाला यही कहेगा कि इन्हें जेवरों की कोई जरूरत ही नहीं, यह तो अपने हुस्न ही के बोझ से दबी जाती हैं।

उन दोनों के रुआब ने किशोरी को पलंग पर पड़े रहने न दिया। वह उठ खड़ी हुई और उनकी तरफ देखने लगी। रानी साहिबा चाहे कैसी ही खूबसूरत क्यों न हों और उन्हें अपनी खूबसूरती पर चाहे कितना ही घमण्ड क्यों न रहा हो, मगर किशोरी की सूरत देखते ही वे दंग हो गईं और उनकी शेखी हवा हो गई। इस समय वह हर तरह से सुस्त और उदास थी, किसी तरह की सजावट उसके बदन पर न थी, तो भी महारानी के जी ने गवाही दे दी कि इससे बढ़ कर खूबसूरत दुनिया में कोई न होगी। किशोरी उनकी खूबसूरती के रुआब में आकर पलंग के नीचे नहीं उतरी थी, बल्कि इज्जत के लिहाज से और यह सोचकर कि जब इस मामूली कमरे की इतनी बड़ी सजावट है तो उनके खास कमरे की क्या नौबत होगी और वह कितने बड़े राज्य और दौलत की मालिक होंगी।

राजा और रानी दोनों ने प्यार की निगाह से किशोरी की तरफ देखा और राजा ने आगे बढ़ कर किशोरी की पीठ पर हाथ फेर कर कहा, "बेशक यह मेरी ही पतोहू होने के लायक है।"

इस आखिरी शब्द ने किशोरी के साथ वह काम किया जो नमक जखम के साथ, आग फूस की झोंपड़ी के साथ, तीर कलेजे के साथ, शराब धर्म के साथ, लालच ईमान के साथ और बिजली गिर कर तन-बदन के साथ करती है।

5

कुँअर इन्द्रजीतसिंह नाहरसिंह और तारासिंह को साथ लिए घर आये और अपने छोटे भाई से सब हाल कहा। वे भी सुनकर बहुत उदास हुए और सोचने लगे कि अब क्या करना चाहिए। दोनों कुमार बड़े ही तरद्दुद में पड़े। अगर तारासिंह को पता लगाने के लिए भेजें तो गया में कोई ऐयार न रह जायगा और यह बात अगर उनके पिता सुनें तो बहुत रंज हों, जिसका खयाल उन्हें सब से ज्यादा था। दोपहर दिन चढ़े तक दोनों भाई बड़े ही तरद्दुद में पड़े रहे, दोपहर के बाद उनका तरद्दुद कुछ कम हुआ जब पण्डित बद्रीनाथ, भैरोंसिंह और जगन्नाथ ज्योतिषी वहाँ आ मौजूद हुए। तीनों के पहुँचने से दोनों कुमार बहुत खुश हुए और समझे कि अब हमारा काम अटका न रहेगा।

कुँअर इन्द्रजीतसिंह, आनन्दसिंह, तारासिंह, पण्डित बद्रीनाथ, भैरोंसिंह और ज्योतिषी जी ये सब बाग की बाहरदरी में एकान्त समझ कर चले गये और बातचीत करने लगे।

आनन्दसिंह—लीजिए साहब, अब तो दुश्मन लोग यहाँ भी बहुत से हो गये।

ज्योतिषी—कोई हर्ज नहीं।

इन्द्रजीतसिंह—भैरोंसिंह, पहले तुम अपना हाल कहो, यहाँ से जाने के बाद क्या हुआ?

भैरोंसिंह—मुझे तो रास्ते ही में मालूम हो गया था कि किशोरी वहाँ नहीं है।

इन्द्रजीतसिंह—यह हाल मुझे भी मालूम हुआ था।

भैरोंसिंह—ठीक है, वह आदमी आपके पास भी आया होगा जिसने मुझे खबर दी थी।

इन्द्रजीतसिंह—खैर, तब क्या हुआ?

भैरोंसिंह—फिर भी मैं वहाँ चला गया (बद्रीनाथ और ज्योतिषीजी की तरफ इशारा करके) और इन लोगों के साथ मिल कर काम करने लगा। ये लोग दो सौ बहादुरों के साथ वहाँ पहले से मौजूद थे। आखिर नतीजा यह हुआ कि दीवान अग्निदत्त और दो-तीन उसके साथी गिरफ्तार करके चुनार भेज दिये गये। माधवी का पता नहीं कि वह कहाँ गई। वहाँ की सब रिआया अग्निदत्त से रंज थी इसलिए राजगृह अपने कब्जे में कर लेना हम लोगों को बहुत ही सहज हुआ। अब उन्हीं दो सौ आदमियों के साथ पन्नालाल को वहाँ छोड़ आया हूँ।

बद्रीनाथ—आप यहाँ का हाल तो कहिये। सुना है यहाँ बड़े-बड़े बेढब मामले हो गये हैं!

इन्द्रजीतसिंह—यहाँ का हाल भैरोंसिंह की जुबानी आपने सुना ही होगा, इसके बाद आज रात को एक अजीब बात हो गई है।

तारासिंह ने रात भर का कुल हाल उन लोगों से कहा जिसे सुन वे लोग बहुत

ही तरद्दुद में पड़ गये।

इन लोगों की बातचीत हो ही रही थी कि एक चोबदार ने आकर अर्ज किया कि 'अखण्डनाथ बाबाजी बाहर खड़े हैं और यहाँ आना चाहते है।' अखण्डनाथ नाम सुन ये लोग सोचने लगे कि कौन हैं और कहाँ से आये हैं। आखिर इन्द्रजीतसिंह ने उन्हें अपने पास बुलाया और सूरत देखते ही पहचान लिया।

पाठक, ये अखण्डनाथ बाबाजी वही हैं, जो रामशिला के सामने फलगू के बीच भयानक टीले पर रहते थे, जिनके पास माधवी जाती थी, तथा जिन्होंने उस समय किशोरी की जान बचाई थी, जब खँडहर में उसकी छाती पर सवार हो भीमसेन खंजर उसके कलेजे में भोंका ही चाहता था, और जिनका हाल ऊपर के तीसरे बयान में हम लिख आये हैं। इन बाबाजी को तारासिंह भी पहचानते थे, क्योंकि कल रात को यह भी इन्द्रजीतसिंह के साथ ही थे।

इन्द्रजीतसिंह ने उठ कर बाबाजी को प्रणाम किया। इनको उठते देख और सब लोग भी उठ खड़े हुए। कुमार ने अपने पास बाबाजी को बैठाया और ऐयारों की तरफ देख के कहा, "इन्हीं का हाल मैं कह चुका हुँ, इन्होंने ही उस खँडहर में किशोरी की जान बचाई थी।"

बाबा—जान बचाने वाला तो ईश्वर है, मैं क्या कर सकता हूँ। खैर, यह तो कहिये, उस मामले के बाद की भी आपको खबर है कि क्या हुआ ?

इन्द्रजीतसिंह—कुछ भी नहीं, हम लोग इस समय इसी सोच-विचार में पड़े हैं।

बबा—अच्छा तो फिर मुझसे सुनिये। दो औरतें और जो उस मकान में थीं, उनका हाल तो मुझे मालूम नहीं कि किशोरी की खोज में कहाँ गईं, मगर किशोरी का हाल मैं खूब जानता हूँ।

बाबाजी की बातों ने सभी का दिल अपनी तरफ खींच लिया और सब लोग एकाग्र होकर उनकी बातें सुनने लगे। बाबाजी ने यों कहना शुरू किया—

"नाहरसिंह से जब कुमार लड़ रहे थे, उस समय भीमसेन के साथियों को, जो उसी जगह छिपे हुए थे मौका मिला और वे लोग किशोरी को लेकर शिवदत्तगढ़ की तरफ भागे, मगर ले न जा सके, क्योंकि रास्ते ही में रोहतासगढ़[1] के राजा के ऐयार लोग छिपे हुए थे जिन लोगों ने लड़कर किशोरी को छीन लिया और रोहतासगढ़ को ले गये। किशोरी की खूबसूरती का हाल सुनकर रोहतासगढ़ के राजा ने इरादा कर लिया था कि अपने लड़के के साथ उसे ब्याहेगा और बहुत दिन से उसके ऐयार लोग किशोरी की धुन में लगे हुए भी थे। अब मौका पाकर वे लोग अपना काम कर गये। अगर आप लोग जल्द उसके छुड़ाने की फिक्र न करेंगे तो बेचारी के बचने की उम्मीद जाती रहेगी।

---

1. रोहतासगढ़ बिहार के इलाके में मशहूर मुकाम है। यह पहाड़ के ऊपर एक किला है। उस जमाने में इस किले की लम्बाई-चौड़ाई लगभग दस कोस की होगी। बड़े-बड़े राजा लोग भी इसको फतह करने का हौसला नहीं कर सकते थे। आज-कल यह इमारत बिल्कुल टूट-फूट गई है तो भी देखने योग्य है।

लड़-भिड़ कर रोहतासगढ़ के किले को फतह करना बहुत मुश्किल है, चाहे फौज और दौलत में आप लोग बढ़ के क्यों न हों मगर पहाड़ के ऊपर के उस आलीशान किले के अन्दर घुसना बड़ा ही कठिन है मगर फिर भी चाहे जो हो आप लोग हिम्मत न हारें। किशोरी का खयाल चाहे न भी हो, मगर यह सोचकर कि आपके समीप का यह मजबूत किला आप ही के योग्य है, जरूर मेहनत करनी चाहिए। ईश्वर आपको विजय देगा और जहाँ तक हो सकेगा, मैं भी आपकी मदद करूँगा।"

बाबाजी की जबानी सब हाल सुनकर कुँअर इन्द्रजीतसिंह बहुत प्रसन्न हुए। एक तो किशोरी का पता लगने की खुशी, दूसरे रोहतासगढ़ के राजा से बड़ी भारी लड़ाई लड़कर जवानी का हौसला निकालने और मशहूर किले पर अपना दखल जमाने की खुशी से वे गद्गद हो गये और जोश-भरी आवाज में बाबाजी से बोले—

इन्द्रजीतसिंह—बड़े-बड़े वीरों की आत्माएँ स्वर्ग से झाँक-झाँक कर देखेंगी कि रोहतासगढ़ की लड़ाई कैसी होती है, और किस तरह से हम लोग उस किले को फतह करते हैं। रोहतासगढ़ का हाल हम बखूबी जानते हैं, मगर बिना कोई सबब हाथ लगे ऐसा इरादा नहीं कर सकते थे।

बाबा—अच्छा, एक लोटा जल मँगाइये।

तुरन्त जल आया। बाबाजी ने अपनी दाढ़ी नोंचकर फेंक दी, और मुँह धो डाला। अब तो सभी ने पहचान लिया कि ये देवीसिंह हैं।

पाठक, रामशिला पहाड़ी के सामने भयानक टीले पर रहने वाले बाबाजी से देवीसिंह का मिलना आप भूले न होंगे और आपको यह बात भी अब तक याद होगी, कि देवीसिंह से बाबाजी ने कहा था कि 'कल इस स्थान को हम छोड़ देंगे।' बस, बाबाजी के जाने के बाद देवीसिंह ही उनकी सूरत में उस गद्दी पर जा विराजे और जो कुछ काम किया, आप जानते ही हैं। उस दिन बाबाजी की सूरत में देवीसिंह ही थे, जिस दिन माधवी ने मिलकर कहा था कि 'हमारी मदद के लिए भीमसेन आ गया है।' असली बाबाजी भी उस पहाड़ी पर देवीसिंह से मिल चुके हैं जहाँ हमने लिखा है कि एक ही सूरत के दो बाबाजी इकट्ठे हुए हैं, और उन्होंने बाबाजी की जबानी रोहतासगढ़ का मामला देवीसिंह ने सुना था।

देवीसिंह ने अपना सारा हाल दोनों कुमारों से कहा, और आखिर में बोले, "अब रोहतासगढ़ पर हम जरूर चढ़ाई करेंगे।"

इन्द्रजीतसिंह—बहुत अच्छी बात है, हम लोगों का हौसला भी तभी दिखाई देगा! हाँ, यह तो कहिए, नाहरसिंह से कैसा बर्ताव किया जाये?

देवीसिंह—कौन नाहरसिंह?

इन्द्रजीतसिंह—उस खँडहर में जो मुझसे लड़ा था! बड़ा ही बहादुर है। उसने प्रण कर रखा था कि जो मुझे जीतेगा, उसी का मैं ताबेदार हो जाऊँगा। अब उसने भीमसेन का साथ छोड़ दिया, और हम लोगों के साथ रहने को तैयार है।

देवीसिंह—ऐसे बहादुर पर जरूर मेहरबानी करनी चाहिए, मगर आज हम

उसे आजमावेंगे । आप उसके लिए एक अच्छा-सा मकान दे दें, और हर तरह के आराम का बन्दोबस्त कर दें ।

इन्द्रजीतसिंह—बहुत अच्छा ।

कुँअर इन्द्रजीतसिंह ने उसी समय नाहरसिंह को अपने पास बुलाया और बड़ी मेहरबानी के साथ पेश आये । एक मकान देकर अपने सेनापति की पदवी उसे दी और भीमसेन को कैद में रखने का हुक्म दिया ।

अपने ऊपर कुमार की इतनी मेहरबानी देखकर नाहरसिंह बहुत प्रसन्न हुआ । कुछ देर तक बातें करता रहा, तब सलाम करके अपने ठिकाने चला गया, और सेनापति के काम को ईमानदारी के साथ पूरा करने का उद्योग करने लगा ।

आधी रात जा चुकी है । चारों तरफ सन्नाटा छाया हुआ है । गलियों और सड़कों पर चौकीदारों के "जागते रहियो, होशियार रहियो" पुकारने की आवाज आ रही है । नाहरसिंह अपने मकान में पलंग पर लेटा हुआ कोई किताब देख रहा है और सिरहाने शमादान जल रहा है ।

नाहरसिंह के हाथ में श्रुति-स्मृति या पुराण की कोई पुस्तक नहीं है, उसके हाथ में तस्वीरों की एक किताब है जिसके पन्ने वह उलटता है और एक-एक तस्वीर को देर तक बड़े गौर से देखता है । इन तस्वीरों में बड़े-बड़े राजाओं और बहादुरों की मशहूर लड़ाइयों का नक्शा दिखाया गया है और पहलवानों की बहादुरी और दिलावरों की दिलावरी का खाका उतारा हुआ है जिसे देख-देखकर बहादुर नाहरसिंह की रगें जोश मारती हैं, और वह चाहता है कि ऐसी लड़ाइयों में हमें भी कभी हौसला निकालने का मौका मिले ।

तस्वीरें देखते-देखते बहुत देर हो गई, और नाहरसिंह की नींद-भरी आँखें भी बन्द होने लगीं । आखिर उसने किताब बन्द करके एक तरफ रख दी और थोड़ी ही देर बाद गहरी नींद में सो गया ।

इस मकान के किसी कोने में एक आदमी न मालूम कबका छिपा हुआ था, जो नाहरसिंह को सोता जानकर उस कमरे में चला आया और पलंग के पास खड़ा हो उसे गौर से देखने लगा । इस आदमी को हम नहीं पहचानते क्योंकि यह मुँह पर नकाब डाले हुए है । थोड़ी देर बाद अपनी जेब से उसने एक पुड़िया निकाली और एक चुटकी बुकनी की नाहरसिंह की नाक के पास ले गया । साँस के साथ धूरा दिमाग में पहुँचा और वह छींक मार कर बेहोश हो गया ।

उस आदमी ने अपनी कमर से एक रस्सी खोली और नाहरसिंह के हाथ-पैर मजबूती से बाँध कर उसे होशियार करने के बाद तलवार खींच मुँह पर से नकाब हटा सामने खड़ा हो गया । होश में आते ही नाहरसिंह ने अपने को बेबस और हाथ में नंगी तलवार लिए महाराज शिवदत्त को सामने मौजूद पाया ।

शिवदत्त—क्यों नाहरसिंह, एक नाजुक समय में हमारे लड़के का साथ छोड़ देना और उसे दुश्मनों के हाथ में फँसा देना क्या तुम्हें मुनासिब था ?

नाहरसिंह—जब तक बहादुर इन्द्रजीतसिंह ने मुझ पर फतह नहीं पाई, तब तक

मैं बराबर तुम्हारे लड़के का साथी रहा, जब कुमार ने मुझे जीत लिया तो अपने कौल के मुताबिक मैंने उनकी ताबेदारी कबूल कर ली। मेरे कौल को तो तुम पहले से जानते ही थे !

शिवदत्त—जो कुछ तुमने किया है, उसकी सजा देने के लिए इस समय मैं मौजूद हूँ।

नाहरसिंह—खैर, ईश्वर की मर्जी।

शिवदत्त—अब भी अगर तुम हमारा साथ देना मंजूर करो, तो छोड़ सकता हूँ।

नाहरसिंह—यह नहीं हो सकता, ऐसे बहादुर का साथ छोड़ तुम्हारे ऐसे बेईमान का संग करना मुझे मंजूर नहीं !

शिवदत्त—(डपट कर और तलवार उठा कर) क्या तुम्हें अपनी जान देना मंजूर है ?

नाहरसिंह—खुशी से मंजूर है मगर मालिक का संग छोड़ना कबूल नहीं है !

शिवदत्त—देखो, मैं फिर तुम्हें समझाता हूँ, सोचो और मेरा साथ दो।

नाहरसिंह—बस बहुत बकवाद करने की जरूरत नहीं, जो कुछ तुम कर सको कर लो। मैं ऐसी बातें नहीं सुनना चाहता।

शिवदत्त ने बहुत-कुछ समझाया और डराया-धमकाया मगर बहादुर नाहरसिंह की नीयत न बदली। आखिर लाचार होकर शिवदत्त ने अपने हाथ से तलवार दूर फेंक दी और नाहरसिंह की पीठ ठोंक कर बोला—

"शाबाश बहादुर ! तुम्हारे ऐसे जवाँमर्द का दिल अगर ऐसा न होगा तो किसका होगा ? मैं शिवदत्त नहीं हूँ, कुमार का ऐयार देवीसिंह हूँ, तुम्हें आजमाने के लिए आया था !"

इतना कहकर उन्होंने नाहरसिंह की मुश्कें खोल दीं, और वहाँ से फौरन चले गये। देवीसिंह ने यह हाल दोनों कुमारों से कहकर नाहरसिंह की तारीफ की, मगर बहादुर नाहरसिंह ने अपनी जिन्दगी भर इस आजमाने का हाल किसी से न कहा।

दूसरे दिन देवीसिंह चुनार चले गये और कह गये कि रोहतासगढ़ की चढ़ाई का बन्दोबस्त करके मैं बहुत जल्द आऊँगा।

यह जानकर कि किशोरी को रोहतासगढ़ वाले ले गये हैं, कुँअर इन्द्रजीतसिंह की बेचैनी हद से ज्यादा बढ़ गई। दम भर के लिए भी आराम करना मुश्किल हो गया, दो ही पहर में सूरत बदल गई। किसी का बुलाना या कुछ पूछना उन्हें जहर-सा मालूम पड़ने लगा। इनकी ऐसी हालत देख भैरोंसिंह से न रहा गया, निराले में बैठ उन्हें समझाने लगा।

इन्द्रजीतसिंह—तुम्हारे समझाने से मेरी हालत किसी तरह बदल नहीं सकती और किशोरी की जान का खतरा जो मुझे लगा हुआ है किसी तरह कम नहीं हो सकता।

भैरोंसिंह—किशोरी को अगर शिवदत्तगढ़ वाले ले जाते तो बेशक उसकी जान का खतरा था, क्योंकि शिवदत्त रंज के मारे बिना उसकी जान लिए न रहता, मगर अब तो वह रोहतासगढ़ के राजा के कब्जे में है और वह अपने लड़के से उसकी शादी किया

चाहता है, ऐसी हालत में किशोरी की जान का दुश्मन वह क्योंकर हो सकेगा?

इन्द्रजीतसिंह—अगर जबर्दस्ती किशोरी की शादी कर दी गई तब क्या होगा?

भैरोंसिंह—हाँ, अगर ऐसा हो तो जरूर रंज होगा, खैर आप चिन्ता न करिये, ईश्वर चाहेगा तो पाँच ही सात दिन में कुल बखेड़ा तय करे देता हूँ।

इन्द्रजीतसिंह—क्या किशोरी को वहाँ से ले आओगे?

भैरोंसिंह—रोहतासगढ़ के किले में घुस कर किशोरी को निकाल लाना तो दो तीन दिन का काम नहीं, इसके अतिरिक्त क्या रोहतासगढ़ का किला ऐयारों से खाली होगा?

इन्द्रजीतसिंह—फिर तुम पाँच-सात दिन में क्या करोगे?

भैरोंसिंह—कोई काम ऐसा जरूर करूँगा, जिससे किशोरी की शादी रुक जाये।

इन्द्रजीतसिंह—वह क्या?

भैरोंसिंह—जिस तरह बनेगा वहाँ के राजकुमार कल्याणसिंह को पकड़ लाऊँगा, जब हम लोगों का फैसला हो जायेगा तब छोड़ दूँगा।

इन्द्रजीतसिंह—हाँ, अगर ऐसा करो तो क्या बात है!

भैरोंसिंह—आप चिन्ता न कीजिये। मैं अभी यहाँ से रवाना होता हूँ, मगर आप किसी से मेरे जाने का हाल न कहियेगा।

इन्द्रजीतसिंह—क्या अकेले जाओगे?

भैरोंसिंह—जी हाँ।

इन्द्रजीतसिंह—वाह! कहीं फँस जाओ तो मैं तुम्हारी राह ही देखता रह जाऊँ, कोई खबर देने वाला भी नहीं!

भैरोंसिंह—ऐसी उम्मीद न रखिये।

कुँअर इन्द्रजीतसिंह से वादा करके भैरोंसिंह रोहतासगढ़ की तरफ रवाना हुए, मगर भैरोंसिंह का अकेले रोहतासगढ़ जाना इन्द्रजीतसिंह को न भाया। उस समय तो भैरोंसिंह की जिद से चुप हो रहे, मगर उसके जाने के बाद कुमार ने सब हाल पण्डित बद्रीनाथ से कहकर दोस्त की मदद के लिए जाने का हुक्म दिया। हुक्म पाते ही पण्डित बद्रीनाथ भी रोहतासगढ़ रवाना हुए और रास्ते ही में भैरोंसिंह से जा मिले।

दो रोज चलकर ये दोनों आदमी रोहतासगढ़ पहुँचे[1] और पहाड़ के ऊपर चढ़

1. राजा शिवप्रसाद सितारे-हिन्द ने अपनी किताब 'जान जहाँनुमा' में लिखा है—"आरे से करीब पचहत्तर मील के दक्खिन-पश्चिम को झुकता हुआ हजार फीट ऊँचे पहाड़ के ऊपर का एक बड़ा ही मजबूत किला 'रोहतासगढ़', जिसका असल नाम 'रोहिताश्म' है, दस मील मुरब्बा की वसअत में सोन नदी के बाएँ किनारे पर उजाड पड़ा हुआ है। उसमें जाने के वास्ते सिर्फ एक ही रास्ता दो कोस की चढ़ाई का तंग सा बना है, बाकी सब तरफ वह पहाड़, जंगल और नदियों से ऐसा घिरा हुआ है कि किसी तौर से वहाँ आदमी का गुजर नहीं हो सकता। उस किले के अन्दर दो मन्दिर अगले जमाने के अभी मौजूद हैं बाकी सब इमारतें, महल, बाग, तालाब वगैरह, जिनका अब सिर्फ निशान भर रह गया है, मुसलमान बादशाहों के बनाये हुए हैं।"

(ग्रन्थकर्ता)—मगर अकबर के जमाने में जो 'बिहार' का हाल लिखा गया है उससे मालूम होता है कि यह मुकाम मुसलमानों की अमलदारी के पहले से बना हुआ है।

किले में दाखिल हुए। यह बहुत बड़ा किला पहाड़ पर निहायत खूबी का बना हुआ था और इसी के अन्दर शहर भी बसा था जो बड़े-बड़े सौदागरों, महाजनों, व्यापारियों और जौहरियों के कारबार से अपनी चमक-दमक दिखा रहा था। इस शहर की खूबी और सजावट का हाल इस जगह लिखने की कोई जरूरत नहीं मालूम होती और इतना समय भी नहीं है, हाँ, मौके पर दो-चार दफे पढ़कर इसकी खूबी का हाल पाठक मालूम कर लेंगे। इस किले के अन्दर एक छोटा किला और भी था। जिसमें महाराजा और उनके आपस वाले रहा करते थे और लोगों में वह महल के नाम से मशहूर था।

इस पहाड़ पर छोटे झरने और तालाब बहुत हैं। ऊपर जाने के लिए केवल एक ही राह है और वह भी बहुत बारीक। उसके चारों तरफ घना जंगल इस ढंग का है कि जरा भी आदमी चूका और राह भूल कर कई दिन तक भटकने की नौबत आई। दुश्मनों का और किसी तरह से इस पहाड़ पर चढ़ना बहुत ही मुश्किल है और वह बारीक राह भी इस लायक नहीं कि पाँच-सात आदमी से ज्यादा एक साथ चढ़ सकें। भेष बदले हुए हमारे दोनों ऐयार रोहतासगढ़ पहुँचे और वहाँ की रंगत देख कर समझ गये कि इस किले को फतह करने में बहुत मुश्किल पड़ेगी।

भैरोंसिंह और पण्डित बद्रीनाथ मथुरिया चौबे बने हुए रोहतासगढ़ में घूमने और एक-एक चीज को अच्छी तरह देखने लगे। दोपहर के समय एक शिवालय पर पहुँचे जो बहुत ही खूबसूरत और बड़ा बना हुआ था, सभामंडप इतना बड़ा था कि सौ-डेढ़-सौ आदमी अच्छी तरह उसमें बैठ सकते थे। उसके चारों तरफ खुलासा सहन था जिस पर कई ब्राह्मण और पुजारी बैठे धूप सेंक रहे थे। उन्हीं लोगों के पास जाकर हमारे दोनों ऐयार खड़े हो गये और गरज कर बोले—"जय जमुना मैया की !"

पुजारियों ने हमारे दोनों चौबों को खातिरदारी से बैठाया और बातचीत करने लगे।

एक पुजारी—कहिए चौबे जी, कब आना हुआ ?

बद्रीनाथ—बस अभी चले ही तो आते हैं महाराज ! पहाड़ पर चढ़ते-चढ़ते थक गये, गला सूख गया, कृपा कर सिल-लुढ़िया दो तो भंग छने और चित्त ठिकाने हो।

पुजारी—लीजिए, सिल-लुढ़िया लीजिए, मसाला लीजिए, चीनी लीजिए, खूब भंग छानिए।

भैरोंसिंह—भंग-मसाला तो हमारे साथ ही है, आप ब्राह्मणों का क्यों नुकसान करें।

पुजारी—नहीं-नहीं, हमारा कुछ नहीं है, यहाँ सब चीजें महाराज के हुक्म से मौजूद रहती हैं, ब्राह्मण परदेशी जो कोई आवे सभी को देने का हुक्म है।

बद्रीनाथ—वाह-वाह, तब क्या बात है ! लाइये फिर महाराज की जयजयकार मनावें !

पुजारी ने इन दोनों को सब सामान दिया और इन दोनों ने भंग बनाई, आप भी पी और पुजारियों को भी पिलाई। दोनों ऐयारों ने बातचीत और मसखरेपन से वहाँ के पुजारियों को अपने बस में कर लिया बड़े पुजारी बहुत प्रसन्न हुए और बोले,

"चौबेजी महाराज, बड़े भाग्य से आप लोगों के दर्शन हुए हैं। आप लोग दो-चार रोज यहाँ जरूर रहिये ! इसी जगह आपको महाराज कुमार से भी मिलावेंगे और आप लोगों को बहुत-कुछ दिलावेंगे। हमारे महाराज कुमार बहुत हँसमुख, नेक और बुद्धिमान हैं। आप उन्हें देख बहुत प्रसन्न होंगे !"

बद्रीनाथ—बहुत खूब महाराज, आप लोगों की इतनी कृपा है तो जरूर रहेंगे और आपके महाराज कुमार से भी मिलेंगे। वे यहाँ कब आते हैं ?

पुजारी—प्रातः और सायंकाल दोनों समय यहाँ आते हैं और इसी मंदिर में सन्ध्या-पूजा करते हैं !

भैरोंसिंह—तो आज भी उनके दर्शन होंगे ?

पुजारी - अवश्य।

यह मन्दिर किले की दीवार के पास ही था। इसके पीछे की तरफ एक छोटी सी लोहे की खिड़की थी जिसकी राह से लोग किले के बाहर जंगल में जा सकते थे। पुजारी के हुक्म से भंग पीने के बाद दोनों ऐयार उसी राह से जंगल में गए और मैदान होकर लौट आये, पुजारी लोग भी उसी राह से जंगल-मैदान गये।

संध्या समय महाराज कुमार भी वहाँ आये और मन्दिर के अन्दर दरवाजा बन्द करके घण्टे भर से ज्यादा देर तक सन्ध्या-पूजा करते रहे। उस समय केवल एक बड़ा पुजारी उस मन्दिर में तब तक मौजूद रहा जब तक महाराज कुमार नित्य-नेम करते रहे। दोनों ऐयारों ने भी महाराजकुमार को अच्छी तरह देखा, मगर पुजारी को कह दिया था कि आज महाराज कुमार को यह मत कहना कि यहाँ दो चौबे आये हैं, कल सायंकाल को हम लोगों का सामना कराना।

दोनों ऐयारों ने रात भर उसी मन्दिर में गुजारा किया और अपने मसखरेपन से पुजारी महाशय को बहुत ही प्रसन्न किया, साथ ही इसके उन्हें इस बात का भी विश्वास दिलाया कि इस पहाड़ के नीचे एक बड़े भारी महात्मा आए हुए हैं, आपको उनसे जरूर मिलावेंगे, हम लोगों पर उनकी बड़ी ही कृपा रहती है।

सवेरे उठ कर इन दोनों ने फिर भंग घोंट कर पी और सभी को पिलाने के बाद उसी खिड़की की राह मैदान गये। दोनों ऐयार तो अपनी धुन में थे, महाराजकुमार को यहाँ से उड़ाने की फिक्र सोच रहे थे तथा उसी खिड़की की राह निकल जाने का उन्होंने मौका तजबीजा था, इसलिए मैदान जाते समय इस जंगल को दोनों आदमी अच्छी तरह देखने लगे कि इधर से सीधी सड़क पर निकल जाने का क्योंकर हम लोगों को मौका मिल सकता है। इस काम में उन्होंने दिन भर बिता दिया और और रास्ता अच्छी तरह समझ-बूझ कर शाम होते-होते मन्दिर में लौट आये।

पुजारी—कहिये चौबे महाराज ! आप लोग कहाँ चले गये थे ?

बद्रीनाथ—अजी महाराज, कुछ न पूछो ! जरा आगे क्या बढ़ गये बस जहन्नुम पहुँच गये। ऐसा रास्ता भूले कि बस हमारा ही जी जानता है।

भैरोंसिंह—ईश्वर की ही कृपा से इस समय लौट आये, नहीं तो कोई उम्मीद यहाँ पहुँचने की न थी।

पुजारी—राम-राम ! यह जंगल बड़ा ही भयानक है । कई दफे तो हम लोग इसमें भूल गये हैं और दो-दो दिन तक भटकते ही रह गए हैं, आप बेचारे तो नये ठहरे, आइये, बैठिये, कुछ जलपान कीजिए ।

भैरोंसिंह—अजी, कहाँ का खाना कैसा पीना ! होश तो ठिकाने ही नहीं हैं, बस भंग पीकर खूब सोवेंगे । घूमते-घूमते ऐसे थके कि तमाम बदन चूर-चूर हो गया । कृपा-निधान, आज भी हम लोगों की इत्तिला कुमार से न कीजिएगा, हम लोग मिलाने लायक नहीं हैं, इस समय तो खूब गहरी छनेगी !

पुजारी—खैर, ऐसा ही सही ! (हँस कर) आइये, बैठिए तो ।

दोनों ऐयारों ने भंग पी और बाकी लोगों को भी पिलाई । इसके बाद कुछ देर आराम करके बाजार में घूमने-फिरने के लिए गये और अच्छी तरह देख-भाल कर लौट आये । सोते समय फिर उन्हीं महात्मा का जिक्र पुजारी से करने लगे जिनसे मिलाने का वायदा कर चुके थे और यहाँ तक उनकी तारीफ की कि पुजारीजी उनसे मिलने के लिए जल्दी करने लगे और बोले, "यह तो कहिए, कल आप उनके दर्शन करावेंगे या नहीं ?"

बद्रीनाथ—जरूर, बस कुमार यहाँ से सन्ध्या-पूजा करके लौट जायें तो चले चलिए, मगर अकेले आप ही चलिए, नहीं तो महात्मा बड़ा बिगड़ेंगे कि इतने आदमियों को क्यों ले आए । वह जल्दी किसी से मिलने-मिलाने वाले नहीं हैं ।

पुजारी—हमें क्या गरज पड़ी है, जो किसी को साथ ले जायँ, अकेले आपके साथ चलेंगे ।

भैरोंसिंह—बस, तभी तो ठीक होगा ।

दूसरे दिन जब महाराजकुमार सन्ध्या-पूजा करके लौट गए, तो बद्रीनाथ और भैरोंसिंह पुजारी को साथ ले वहाँ से रवाना हुए और पहाड़ के नीचे उतरने के बाद बोले, "बस, अब यहीं बूटी छान लें, इसीलिए लुटिया लेता आया हूँ ।"

पुजारी—क्या हर्ज है, बूटी छान लीजिए ।

बद्रीनाथ—आपके हिस्से की भी बनाऊँ न ?

पुजारी—इस दोपहर के समय क्या बूटी पिलाइयेगा । हमें तो अपनी आदत न थी, आप ही लोगों के सबब दो दिन से खूब पीने में आती है ।

बद्रीनाथ—क्या हर्ज है, थोड़ी-सी पी लीजिएगा ।

पुजारी—जैसी आपकी मर्जी ।

हमारे बहादुर ऐयारों ने एक पत्थर की चट्टान पर भंग घोंट कर पी और नजर बचा थोड़ी-सी बेहोशी की दवा मिला पुजारी को भी पिलाई । थोड़ी ही देर में पुजारी जी महाराज तो चीं बोल गए और गहरी बेहोशी में मस्त हो गए । दोनों ऐयार उन्हें उठाकर ले गए और एक झाड़ी में छिपा आये ।

बद्रीनाथ—अब क्या करना चाहिए ?

भैरोंसिंह—आप यहाँ रहिए, मैं उसी तरकीब से कुमार को उठा लाता हूँ ।

बद्रीनाथ—अच्छी बात है, मैं अपने हाथ से पुजारी की सूरत तुम्हें बनाता हूँ ।

नरोंसिंह—बनाइए।

पुजारी की सूरत बना बद्रीनाथ को उसी जगह छोड़ भैरोंसिंह लौटे। सन्ध्या होने के पहले ही मन्दिर में जा पहुँचे। लोगों ने पूछा, "कहिए पुजारीजी, महात्मा से मुलाकात हुई या नहीं? और अकेले क्यों लौटे, चौबेजी कहाँ रह गये?"

नकली पुजारी ने कहा—महात्मा से मुलाकात हुई। वाह क्या बात है, महात्मा क्या वह तो पूरे सिद्ध हैं! दोनों चौबों को बहुत मानते हैं। उन्हें तो आने न दिया मगर मैं चला आया। अब चौबेजी कल आवेंगे।"

समय पर महाराजकुमार भी आ पहुँचे और सन्ध्या करने के लिए मन्दिर के अन्दर घुसे। मामूली तौर पर पुजारी के बदले में नकली पुजारी अर्थात् भैरोंसिंह मन्दिर के अन्दर रहे और कुमार के आने पर भीतर से किवाड़ बन्द कर लिया। सन्ध्या करने के समय महाराजकुमार के साथ मन्दिर के अन्दर घुस कर पुजारी क्या-क्या करते थे, यह दोनों ऐयारों ने उनसे बातों-बातों में पहले ही मालूम कर लिया था। पुजारीजी मन्दिर के अन्दर बैठे कुछ विशेष काम नहीं करते थे, केवल पूजा का सामान कुमार के आगे जमा कर देते और एक किनारे बैठे रहते थे। चलते समय प्रसादी में माला कुमार को देते थे और वे उसे सूँघ आँखों से लगा कर उसी जगह रख चले जाते थे। आज इन सब कामों को हमारे ऐयार पुजारीजी ने ही पूरा किया।

इस मन्दिर में चारों तरफ चार दरवाजे थे। आगे की तरफ तो कई आदमी और पहरे वाले बैठे रहते थे, बाईं तरफ के दरवाजे पर होम करने का कुण्ड बना हुआ था, दाहिने दरवाजे पर फूलों के कई गमले रखे हुए थे, और पिछले दरवाजे बिल्कुल सन्नाटा पड़ता था।

मन्दिर के अन्दर दरवाजा बन्द करके कुमार सन्ध्या करने लगे। प्राणायाम के समय मौका जान कर नकली पुजारी ने आशीर्वाद में देने वाली फूलों की माला में बेहोशी का धूरा मिलाया। जब कुमार चलने लगे, पुजारी ने माला गले में डाली, कुमार ने उसे गले से निकाल सूँघा और माथे से लगाकर उसी जगह रख दिया।

माला सूँघने के साथ ही कुमार का सिर घूमा और वे बेहोश होकर जमीन पर गिर पड़े। भैरोंसिंह ने झटपट उनकी गठरी बाँधी और पिछले दरवाजे की राह बाहर निकल आये, इसके बाद उसी छोटी खिड़की की राह किले के बाहर ही जंगल का रास्ता लिया और दो ही घण्टे में उस जगह जा पहुँचे जहाँ पण्डित बद्रीनाथ को छोड़ गए थे। ये दोनों ऐयार कुमार कल्याणसिंह को ले गयाजी की तरफ रवाना हुए।

6

इश्क भी क्या बुरी बला है? हाय, इस दुष्ट ने जिसका पीछा किया उसे खराब करके छोड़ दिया और उसके लिए दुनिया-भर के अच्छे पदार्थ बेकाम और बुरे बना दिये।

छिटकी हुई चाँदनी उसके बदन में चिनगारियाँ पैदा करती है, शाम की ठंडी हवा उसे लू सी लगती है, खुशनुमा फूलों को देखने से उसके कलेजे में काँटे चुभते हैं, बाग की रविशों पर टहलने से पैरों में छाले पड़ते हैं, नरम बिछावन पर पड़े रहने से हड्डियाँ टूटती हैं, और वह करवटें बदल कर भी किसी तरह आराम नहीं ले सकता।

खाना-पीना हराम हो जाता है, मिसरी की डली जहर मालूम होती है, गम खाते-खाते पेट भर जाता है, प्यास बुझाने के लिए आँसू की बूँदें बहुत हो जाती हैं, हजार दुःख भोगने पर भी किसी की जुल्फ में उलझी हुई जान को निकल भागने का मौका हाथ नहीं लगता। दोस्तों की नसीहतें जिगर के टुकड़े-टुकड़े करती हैं, जुदाई की आग में कलेजा भुन जाता है, बदन का खून पानी हो जाता है और इसी से उसकी भूख-प्यास दोनों ही जाती रहती हैं। जिसकी सूरत उसकी आँखों में छुपी रहती है, दरो-दीवार में वही दिखाई देता है, स्वप्न में भी इठलाता हुआ वही नजर आता है। उसकी सुनी हुई बातें रात-दिन कानों में गूँजा करती हैं, हँसी के समय दिखाई दिये हुए मोतियों से दाँत गले का हार बन बैठते हैं, भुलाये नहीं भूलते, जादू-भरी चितवनों की याद दिल को उचाट कर देती है, गले में हाथ डाल कर ली हुई अँगड़ाई बदन को दबाये देती है, उसकी याद में एक तरफ झुके हुए, कभी सीधे भी नहीं होने पाते।

वे दिन-रात आँखें बन्द कर हुस्न के बाग में टहला करते हैं। ठंडी साँसें आँधी का काम देती हैं। सूखे पत्ते उड़ाया करते हैं और धीरे-धीरे आप भी ऐसे सूख जाते हैं कि साँस के साथ उड़ जाने की हिम्मत बाँधते हैं, मुहब्बत का गुरु चाबुक लिए हर-दम पीछे मौजूद रहता है, बुदबुदाते हुए अपने चेले को कहीं ठहरने नहीं देता और न माशूक के नाम के सिवाय कोई दूसरा शब्द मुँह से निकालने देता है।

आदमी क्या हवा तक ऐसों से दिल्लगी करती है, किवाड़ खटखटा माशूक के आने की याद दिला चुटकियाँ लेती है, और कभी कान में झुक कर कहती है कि मैं उस गली से आई हूँ जिसमें तेरा प्यारा रहता है।

बाग में टहलने के समय हवा के चपेटों में पड़ी हुई पेड़ों की टहनियाँ हिल-हिल कर अपने पास बुलाती हैं और जब वह पास जाता है तो हँसी के दो फूल गिरा कर चुप हो जाती हैं जिससे उसका दिल और भी बेचैन हो जाता है और वह दोनों हाथों से कलेजा थाम कर बैठ जाता है। उसके प्यारे रिश्तेदार यह हालत देख अफसोस करते हैं और उसकी नर्म अँगुलियों को हाथ में ले कर पूछते हैं कि क्या ये नाखून बढ़ा रखे हैं?

बेचैनी इतनी बढ़ जाती है कि आधे घण्टे तक के लिए भी ध्यान एक तरफ नहीं जमता और न एक जगह थोड़ी देर तक आराम के साथ बैठने की मोहलत मिलती है। आँखों में छिपी रहने वाली नींद भी न मालूम कहाँ चली जाती है और अपनी जगह टकटकी को जो दम-दम में तरह-तरह की तस्वीरें बनाने और बिगाड़ने वाली है छोड़ जाती है।

यही हमारे कुँअर इन्द्रजीतसिंह और उनकी प्यारी किशोरी की हालत है। इस समय दोनों एक-दूसरे से दूर पड़े हैं, मगर मुहब्बत का भूत रंग-बिरंग की सूरत बन दोनो

की आँखों में नाचा करता है और बढ़ती हुई उदासी और बेचैनी को किसी तरह कम नहीं होने देता।

रोहतासगढ़ महल में रहने वाली जितनी भी औरतें हैं, सभी को किशोरी की खातिरदारी का ध्यान रहने पर भी किशोरी की उदासी किसी तरह कम नहीं होती। यद्यपि उसे यहाँ किसी तरह की भी तकलीफ नहीं थी, मगर कलेजे को टुकड़े-टुकड़े करने वाली वह बात एक सायत के लिए भी उसके दिल से नहीं भूलती थी जो उसने यहाँ आने के साथ ही पीठ पर हाथ फेरते हुए महाराज के मुँह से सुनी थी, अर्थात्—"यह तो मेरी पतोहू होने लायक है !"

यों तो ऊँचे दर्जे की औरतों के जिद करने से लाचार होकर जनाने नजरबाग में किशोरी को टहलना ही पड़ता था मगर वहाँ की कोई चीज उस बेचारी के जी को ढाढ़स नहीं दे सकती थी। खिले हुए गुलाब के फूल पर नजर पड़ते ही वह मुरझा जाती, नर्गिस की तरफ देखते ही उसकी शर्मीली आँखें पलकों की चिलमन में छिप जातीं, सरो के पास पहुँचते ही वह गम के बोझ से झुक जाती और खुशनुमा फूलों से लदी हुई पेचीली लताएँ उसके सामने पड़ कर कुँअर इन्द्रजीतसिंह की सुंबली जुल्फों की याद दिलातीं, जिसमें उलझी हुई उसकी जान को जीते-जी छूटने की उम्मीद न थी।

रविशों को वह यार की जुदाई का मैदान समझती, छोटे-छोटे रंगीन फूलों से भरे हुए पेड़ों की क्यारियों को वह घना जंगल जानती और गूँजते हुए भौंरों की आवाज उसके कानों में झिल्ली की झनकार मालूम होती जो जंगल में बिना मौसम पर ध्यान दिये बारहों महीने बोला करती है और इत्तिफाक से आ पड़े हुए नाजुक-बदनों के कलेजों को दहलाया करती है।

नर्म हवा के झोंकों से हिलती हुई रंग-बिरंग की खूबसूरत पत्तियों को देखते ही वह काँप जाती, सुन्दर और साफ मोती-सरीखे जल से भरे और बहते हुए बनावटी झरने के पास पहुँचते ही उसका दिल डूब जाता, छूटते हुए फव्वारे पर नजर पड़ते ही कलेजा मुँह को आता और आँखों से टपाटप आँसू की बूँदें गिरने लगतीं जिन्हें देख तरह-तरह की बोलियों से दिल खुश करने वाली बाग की नाजुक चिड़ियों से चुप न रहा जाता और वे बोल उठतीं—"हाय-हाय ! इस बेचारी का दिल किसी की जुदाई में खून हो गया और वह खून पानी होकर आँखों की राह निकला जाता है।"

उन कुछ जवान, नाजुक और चंचल औरतों को, जो किशोरी के साथ रहने पर मुस्तैद की गई थीं, उसकी हालत पर अफसोस आता मगर लाचार थीं, क्योंकि उन्हें अपनी जान बहुत प्यारी थी।

रात के समय जब किशोरी अपने को अकेली पाती, तरह-तरह की बातें सोचा करती। कभी तो वह निकल भागने की तरकीब सोचती, मगर अनहोनी जान उधर से खयाल को लौटा कर अपने प्यारे इन्द्रजीतसिंह की तरफ ध्यान लगाती और कहती कि क्या वे मेरी मदद न करेंगे और मुझे यहाँ से न छुड़ावेंगे ? नहीं, जरूर छुड़ावेंगे, मगर कब ? जब उन्हें यह खबर होगी कि किशोरी फलाँ जगह कैद है। हाय-हाय ! कहीं ऐसा न हो कि खबर होते-होते तक मुझे यह दुनिया छोड़ देनी पड़े और दिल के अरमान दिल

ही में ले जाने पड़ें। नहीं, अगर मेरे साथ जबर्दस्ती की जायगी तो जरूर ऐसा करूँगी और सिवाय उसके, जिसके ऊपर न्यौछावर हो चुकी हूँ, दूसरे की न कहलाऊँगी। ऐसी नौबत आने के पहले ही शरीर छोड़ उनसे जा मिलूँगी। कोई ताकत ऐसी नहीं जो मुझे ऐसा करने से रोक सके। हे ईश्वर! क्या तू उन आफत के परकाले ऐयारों को यहाँ का रास्ता न बतायेगा जो कुमार के लिए जान तक दे देने को मुस्तैद रहते हैं ?

एक रात वह इसी सोच-विचार में पड़ी थी कि सवेरा हो गया और कमरे के बाहर से एक ऐसी आवाज उसके कानों में आई कि वह चौंक पड़ी। उसके फैले हुए खयाल इकट्ठे हो गये, साथ ही कुछ-कुछ खुशी उसके चेहरे पर झलकने लगी। वह आवाज यह थी—

"यह काम बेशक वीरेन्द्रसिंह के ऐयारों का है।"

किशोरी उठ खड़ी हुई और कमरे के बाहर निकलने पर घण्टे-भर ही में उसे मालूम हो गया कि कुंअर कल्याणसिंह को वीरेन्द्रसिंह के ऐयार लोग ले भागे।

अब किशोरी को अपने छूटने की कुछ-कुछ उम्मीद हुई और वह दिन भर इसी खयाल में डूबी रहने लगी कि देखें, इसके आगे क्या होता है।

7

आधी रात से ज्यादा जा चुकी है। किशोरी अपने कमरे में मसहरी पर लेटी हुई न मालूम क्या-क्या सोच रही है। हाँ, उसकी डबडबाई हुई आँखें जरूर इस बात की खबर देती हैं कि उसके दिल में किसी तरह का द्वन्द्व मचा हुआ है। उसकी आँखों में नींद बिल्कुल नहीं है, वह घड़ी-घड़ी करवटें बदलती और लम्बी साँसें लेकर रह जाती है।

यकायक कमरे के बाहर से कोई तड़पा देने वाली आवाज उसके कान में आई जिसके सुनते ही वह बेचैन हो गई, किसी तरह लेटी रह न सकी। पलंग से नीचे उतर पड़ी और दरवाजा खोल बाहर इधर-उधर देखने लगी। वह आवाज किसी के सिसक-सिसक कर रोने की थी।

कमरे के बाहर आठ दर का दालान था जहाँ एक खम्भे के सहारे खड़ी बिलख-बिलख कर रोती हुई एक कमसिन औरत को किशोरी ने देखा। खम्भे और उस औरत पर चाँदनी अच्छी तरह पड़ रही थी। पास जाने से मालूम हुआ कि सर्दी से वह औरत काँप रही है, क्योंकि कोई भारी कपड़ा उसके बदन पर न था, जिससे सर्दी का बचाव होता।

किशोरी का दिल तो पहले ही से जख्मी हो रहा था। वह इस तरह से बिलख-बिलख कर किसी को रोते कब देख सकती थी! जाते ही उस औरत का हाथ थाम लिया और पूछा—

"तुम पर क्या आफत आई है जो इस तरह बिलख-बिलख कर रो रही हो ?"

औरत—हाय, मेरे ऊपर वह आफत आई जो किसी तरह टहल नहीं सकती !

किशोरी उसे अपने कमरे में ले आई और अपने पास फर्श पर बैठा कर बात-चीत करने लगी। इस औरत की उम्र अठारह वर्ष से ज्यादा न होगी। यह हर तरह से खूबसूरत और नाजुक थी, इसके बदन पर जो कुछ जेवर था, उसके देखने से साफ मालूम होता था कि यह जरूर किसी बड़े खानदान की लड़की है।

किशोरी—मैं उम्मीद करती हूँ कि अपने दिल का हाल मुझसे साफ-साफ कहोगी और मुझे बहिन समझ कर कुछ न छिपाओगी।

औरत—बहिन, मैं जरूर अपना हाल तुमसे कहूँगी, क्योंकि तुम भी उसी बला में फँसी हो, जिसमें मैं।

किशोरी—(चौंक कर) क्या मेरी ही तरह से तुम पर भी जुल्म किया गया है ?

औरत—बेशक।

किशोरी—(लम्बी साँस लेकर) हे ईश्वर ! मैंने तो किसी के साथ बुराई नहीं की थी, फिर क्यों यह दुख भोग रही हूँ।

औरत—मगर मैं अब इस जगह ठहर नहीं सकती !

किशोरी—सो क्यों ? क्या किसी तरह का खौफ मालूम होता है ?

औरत—नहीं-नहीं, डर किसी बात का नहीं है, पर इस समय मुझे किसी की मदद से निकल भागने की उम्मीद है, इसीलिए अपने कमरे से निकल यहाँ तक आई थी।

किशोरी—क्या कोई तरकीब निकाली गई है ?

औरत—हाँ, और अगर चाहो तो तुम भी मेरे साथ यहाँ से भाग सकती हो। इसी राज्य का एक जबर्दस्त आदमी आज हमारी मदद करेगा।

वह सुनकर किशोरी बहुत ही खुश हुई। यह औरत कौन है, उसका नाम क्या है, उस पर क्या दुख पड़ा है ? यह सब पूछना तो बिल्कुल भूल गई और निकल भागने की खुशी में उस औरत का हाथ अपने दोनों हाथों में लेकर प्रेम से उसकी तरफ देख पूछने लगी, "क्या तुम्हारी मदद से मेरा भी छुटकारा यहाँ से हो सकता है ?"

औरत—जरूर हो सकता है मगर अब देर नहीं करनी चाहिए।

इसके जवाब में किशोरी कुछ कहना ही चाहती थी कि सामने का दरवाजा खुला और एक हसीन औरत अन्दर आती हुई दिखाई पड़ी। इसकी अवस्था लगभग बीस वर्ष की होगी, सफेद गेहूँ का सा रंग, कद न लम्बा न नाटा, बदन साफ और सुडौल, नमकीन चेहरा, रस-भरी आँखें, नाक में एक हीरे की कील के अलावा दो-चार मामूली गहने पहने हुए थी, तो भी वह इस लायक थी कि ऊँचे दर्जे के खूबसूरतों की पंक्ति में बैठ सके। इसे देखते ही वह औरत, जो किशोरी के पास बैठी थी, चौंकी और उसकी तरफ देख कर बोली, "लाली, इस समय तुम्हारा यहाँ आना मुझे ताज्जुब में डालता है !"

लाली—लेकिन यह सुनकर तुम्हें और भी ताज्जुब होगा कि मैं तुम्हारे पंजे से बेचारी किशोरी की जान बचाने के लिए आई हूँ।

इतना सुनते ही उस औरत का रंग-ढंग बिल्कुल बदल गया। उसके चेहरे पर

जो अभी तक उदासी छाई हुई थी, बिल्कुल जाती रही और तमतमाहट आ मौजूद हुई। उसकी आँखें भी जो डबडबाई हुई थीं, खुश्क हो गईं और उनमें गुस्से की सुर्खी दिखाई देने लगी। वह इस निगाह से लाली को देखने लगी, जैसे उस पर किसी तरह की हुकूमत रखती हो।

लाली को किशोरी भी पहचानती थी, क्योंकि यह उन हसीनों में से थी जो किशोरी का दिल बहलाने और उसकी हिफाजत करने के लिए तैनात की गई थीं।

हुकूमत-भरी निगाहों से कई सायत तक लाली की तरफ देखने के बाद वह औरत फिर बोली—

"लाली, क्या तू आज पागल हो गई है जो मेरे सामने इस तरह से बेअदब होकर बोलती है?"

लाली—तू कौन है, जो तेरे साथ अदब का बर्ताव करूँ?

औरत—(खड़ी होकर) तू नहीं जानती कि मैं कौन हूँ?

लाली—कुन्दन, मैं तुझे खूब जानती हूँ, मगर तू यह नहीं जानती कि तेरी नकेल मेरे हाथ में है जिससे तू मेरा कुछ नहीं कर सकती और न अपनी बेईमानी का जाल ही बेचारी किशोरी पर फैला सकती है!

इतना सुनते ही वह औरत, जिसका नाम कुन्दन था, लाल हो गई और अपने जोश को किसी तरह भी सम्हाल न सकी। छुरा, जो कमर में छिपाये हुए थी, हाथ में ले लिया और मारने के लिए लाली की तरफ झपटी। मगर लाली ने झट अपनी बगल से एक नारंगी निकालकर उसे दिखाई और पूछा, "क्या तू भूल गई कि इसमें कै फाँकें हैं?"

नारंगी देखने के साथ ही और लाली के मुँह से निकले हुए शब्दों को सुनते ही उसका जोश जाता रहा, खौफ और घबराहट से उसका रंग बिल्कुल उड़ गया और वह एक चीख मार कर जमीन पर गिर पड़ी।

8

रोहतासगढ़ किले के सामने पहाड़ी से कुछ दूर हटकर वीरेन्द्रसिंह का लश्कर पड़ा हुआ है। चारों तरफ फौजी आदमी अपने-अपने काम में लगे हुए दिखाई देते हैं। कुछ फौज आ चुकी है, और बराबर चली ही आती है। बीच में राजा वीरेन्द्रसिंह का कारचोबी खेमा शान-शौकत के साथ खड़ा है, उसके दोनों बगल कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह के खेमे हैं। सामने और पीछे की तरफ दुपट्टी बड़े-बड़े सरदारों और बहादुरों का डेरा पड़ा है। बाजार लगने की तैयारियाँ हो रही हैं, लड़ाई का सामान इतना इकट्ठा हो रहा है कि देखने से दुश्मनों का कलेजा दहल जाय।

डेरा खड़ा होने के दूसरे दिन कुँअर इन्द्रजीतसिंह, आनन्दसिंह, तेजसिंह, देवीसिंह, पण्डित बद्रीनाथ, भैरोंसिंह, तारासिंह, जगन्नाथ ज्योतिषी, फतहसिंह (पुराने

सेनापति जो नौगढ़ में थे) और नाहरसिंह इत्यादि को साथ लिये राजा वीरेन्द्रसिंह भी आ पहुँचे और सब लोग अपने-अपने खेमे में उतरे। पन्नालाल गयाजी में और रामनारायण तथा चुन्नीलाल चुनारगढ़ में रखे गये। इस लड़ाई के लिए सेनापति की पदवी नाहरसिंह को दी गई। तीसरे दिन और भी फौज आ जाने पर पाँच झण्डे (पचास हजार फौज का निशान) खड़े किये गये। बहादुरों के चेहरों पर खुशी मालूम होती थी। सब इसी फिक्र में थे कि जहाँ तक हो लड़ाई जल्दी छिड़ जाय और बेशक एक ही दो दिन में लड़ाई छिड़ जाने की उम्मीद थी, मगर वीरेन्द्रसिंह के लश्कर पर यकायक ऐसी आफत आ पड़ी कि कुछ दिनों तक लड़ाई रुकी रही। इस आफत के आने का किसी को स्वप्न में भी गुमान न था जिसका हाल हम आगे चल कर लिखेंगे।

राजा दिग्विजयसिंह का पत्र लेकर उनका एक ऐयार राजा वीरेन्द्रसिंह के पास आया। वीरेन्द्रसिंह ने पत्र लेकर मुंशी को पढ़ने के लिए दिया। उसमें जो कुछ लिखा था, उसका संक्षेप यह है—

"हमारे-आपके बीच कभी दुश्मनी नहीं रही, तो भी न मालूम, आपस में लड़ने या बिगाड़ पैदा करने का इरादा आपने क्यों किया। खैर, इसका सबब जो कुछ हो हम नहीं कह सकते मगर इतना याद रखना चाहिए कि पचास वर्ष लड़ कर भी यह किला आप हमसे नहीं ले सकते। अगर हम चुपचाप बैठे रहें तो भी आप हमारा कुछ नहीं बिगाड़ सकते, फिर भी हम आपसे लड़ेंगे और मैदान में निकल कर बहादुरी दिखायेंगे। अगर आपको अपनी बहादुरी या जवाँमर्दी का घमंड है तो फौज को जान क्यों लेते हैं। एक पर एक अड़ के फैसला कर लीजिये। बहादुरों की कार्रवाई देखने के बाद हमसे और आपसे द्वन्द्व-युद्ध हो जाय। आप हम पर फतह पायें तो यह राज्य आपका हो जाय, नहीं तो आप हमारे मातहत समझे जायँ। अफसोस, इस समय हमारा लड़का मौजूद नहीं है, अगर होता तो आपके दोनों लड़कों से वह अकेला ही भिड़ जाता।"

इस पत्र के जवाब में जो कुछ राजा वीरेन्द्रसिंह ने लिखा, हम उसका भी संक्षेप नीचे लिख देते हैं—

"आप हमारे राज्य में घुस कर किशोरी को ले गये, क्या यह आपकी जबर्दस्ती नहीं है? क्या इसे लड़ाई की बुनियाद कायम करना नहीं कह सकते? हाँ, अगर आप किशोरी को इज्जत के साथ हमारे पास भेज दें, तो हम बेशक अपने घर लौट जायँगे। नहीं तो याद रहे, हम इस किले की एक-एक ईंट उखाड़ कर फेंक देंगे, जिसकी मजबूती पर आप इतना घमंड करते हैं। हम लोग द्वन्द्व-युद्ध करने के लिए भी तैयार हैं, जिसका जी चाहे एक पर एक लड़ के हौसला निकाल ले, आपका लड़का मेरे यहाँ कैद है। यदि आप किशोरी को हमारे पास भेज दें, तो हम उसे छोड़ने के लिए तैयार हैं।"

इस पत्र के जवाब में रोहतासगढ़ के किले से तोप की एक आवाज आई। अब लड़ाई में किसी तरह का शक न रहा। दोनों तरफ के ऐयार अपनी-अपनी कार्रवाई दिखाने पर मुस्तैद हो गये, और उन लोगों ने जो कुछ किया, उसका हाल आगे चलकर मालूम होगा।

रोहतासगढ़ किले के अन्दर राजमहल की अटारियों पर चढ़ी हुई बहुत-सी

औरतें उस तरफ देख रही हैं जिधर वीरेन्द्रसिंह का लश्कर पड़ा हुआ है। कुँअर कल्याण-सिंह के गिरफ्तार हो जाने से किशोरी को एक तरह की निश्चिन्ती-सी हो गई थी क्योंकि ज्यादा डर उसे अपनी शादी उसके साथ हो जाने का था, अपने मरने की उसे जरा भी परवाह न थी। हाँ, कुँअर इन्द्रजीतसिंह की याद वह एक सायत के लिए भी नहीं भुला सकती थी जिनकी तस्वीर उनके कलेजे में खिंची हुई थी। वीरेन्द्रसिंह की चढ़ाई का हाल सुनकर उसे बड़ी खुशी हुई और वह भी अपनी अटारी पर चढ़कर हसरत-भरी निगाहों से उस तरफ देखने लगी जिधर वीरेन्द्रसिंह की फौज पड़ी हुई थी। चाहे यहाँ से बहुत दूर हो तो भी किशोरी की निगाहें वहाँ तक पहुँच और भीड़ में घुस-घुस कर किसी को ढूँढ़ निकालने की कोशिश कर रही थीं। इस समय किशोरी के साथ ही लाली भी थी जिसने आज से कई दिन पहले किशोरी के कमरे में कुन्दन को नारंगी दिखाकर डरा दिया था।

लाली किशोरी की निगहबानी पर रखी गई थी, तो भी वह किशोरी पर मेहर-बानी रखती थी। किशोरी ने नारंगी वाले भेद को जानने की कई दफे कोशिश की, मगर पता न लगा। उस दिन के बाद कई दफे कुन्दन से भी मुलाकात हुई, मगर पूछने पर उसने ऐसी कोई बात्त न कही जिससे किशोरी का शक दूर हो जाय। नित्य एक घर में रहने पर भी लाली और कुन्दन में फिर किसी तरह की दुश्मनी न दिखाई पड़ी, इस बात ने किशोरी के ताज्जुब को और भी बढ़ा रखा था।

इस समय किशोरी के साथ सिवाय लाली के दूसरी कोई औरत न थी। ये दोनों वीरेन्द्रसिंह के लश्कर की तरफ बड़े गौर से देख रही थीं कि यकायक किशोरी को फिर वही नारंगी वाली बात याद आई और थोड़ी देर तक सोचने के बाद वह लाली से पूछने लगी।

किशोरी—लाली, उस दिन की बात जब मैं याद करती हूँ, या उस पर विचार करती हूँ, तो कुन्दन की दगाबाजी साफ झलक जाती है। कुन्दन अगर सच्ची होती तो तुम्हें मारने के लिए न झपटती, या हकीकत में अगर वह उस समय यहाँ से भाग जाने वाली होती तो उसके काम में विघ्न पड़ जाने से उसे रंज होता, सो उसके बदले में वह खुश दिखाई देती है।

लाली—नहीं, वह एकदम से झूठी भी नहीं है।

किशोरी—क्या उसकी बातों का कोई हिस्सा सच भी था?

लाली—जरूर था।

किशोरी—वह क्या?

लाली—यही कि वह भी इस किले में उसी काम के लिए लाई गई है जिस काम के लिए आप लाई गई हैं।

किशोरी—यानी तुम्हारे राजकुमार के साथ ब्याहने के लिए?

लाली—हाँ।

किशोरी—अच्छा, उसकी और कौन सी बात सच थी?

लाली—इन सब बातों को पूछकर क्या करोगी? इस भेद के खुलने से बहुत

बड़ी बुराई पैदा होगी ।

किशोरी—नहीं-नहीं, मेरी प्यारी लाली, मेरी जुबान से वह बात कोई दूसरा कभी नहीं सुन सकता और मैं उम्मीद करती हूँ कि तुम मुझसे उसका हाल साफ-साफ कह दोगी ! उस दिन से मुझे विश्वास हो गया है कि तुम मेरी दर्दशरीक हो । अस्तु, अगर मेरा खयाल ठीक है तो तुम उसका हाल मुझे जरूर बता दो, जिससे मैं हर दम होशियार रहूँ ।

लाली—अब वह तुम्हारे साथ बुराई कभी नहीं करेगी ।

किशोरी—तो भी मेहरबानी करके…

लाली—खैर, बता देती हूँ । मगर खबरदार, इसका जिक्र किसी दूसरे के सामने कभी मत करना !

किशोरी—ऐसा कदापि नहीं कर सकती और तुम खुद ही जानती हो कि इस महल में सिवाय तुम्हारे कोई भी ऐसा नहीं है कि जिससे मैं दो बातें करती होऊँ ।

लाली—अच्छा, तो सिवाय उस बात के, जो मैं ऊपर कह चुकी हूँ, बाकी कुल बातें उसकी झूठ थीं । वह इस मकान से भागना नहीं चाहती थी; वह तो हमारे कुमार के साथ व्याह होने की उम्मीद में खुश है । मगर जिस दिन से तुम आई हो, उस दिन से वह फिक्र में पड़ गई है, क्योंकि वह खूबसूरती और इज्जत में तुमको अपने से बहुत बढ़के समझती है और हकीकत में ऐसा ही है । उसे यह खयाल सता रहा है कि राजकुमार से पहले किशोरी की शादी हो लेगी, तब मेरी होगी और ऐसी अवस्था में किशोरी बड़ी रानी कहलावेगी और उसी के लड़के गद्दी के मालिक समझे जायेंगे । इसी से वह इस फिक्र में थी कि तुम्हें मार डाले, मगर किसी ऐसे ठिकाने पर ले जाकर, जिसमें उस पर कोई शक न कर सके ।

किशोरी—छिः-छिः !

लाली—मगर अब वह तुम्हारे साथ बुराई नहीं कर सकती ।

किशोरी—और वह नारंगी वाला भेद क्या है ?

लाली—वह मैं नहीं कह सकती । मगर तुम उसी से क्यों नहीं पूछतीं ? अब तो वह हरदम तुम्हारी खुशामद किया करती है ।

किशोरी—मैं उससे पूछ चुकी हूँ ।

लाली—उसने क्या कहा ?

किशोरी—उसने कहा कि लाली ने नारंगी दिखाकर यह नसीहत की कि देखो, इसमें कई फाँकें है, मगर एक साथ रहने और छिलके से ढँके रहने के कारण एक ही गिनी जाती हैं । कोई कह नहीं सकता कि इसमें कै फाँकें हैं, इसी तरह हम लोगों को भी रहना चाहिए ।

लाली—ठीक तो कहा ।

किशोरी—वाह-वाह ! तुमने तो उसी का साथ दिया ! एकदम छोकरी बनाकर भुलावा देने लगीं !

लाली—(हँसकर) खैर, घबराओ मत, धीरे-धीरे सब मालूम हो जायगा ।

इतने में सीढ़ियों पर किसी के चढ़ने की आहट मालूम हुई और दोनों उस तरफ देखने लगीं। कुन्दन ने पहुँचकर दोनों को सलाम किया और हँसी-हँसी में लाली की तरफ देखकर बोली, "एक आदमी तुम्हें खोजता हुआ आया है, वह कहता है कि लाली ने मेरी किताब चुराई है, वह किताब जो किसी के खून से लिखी गई है।"

कुन्दन के इन शब्दों में न मालूम क्या भेद भरा हुआ था कि सुनते ही लाली का रंग उड़ गया। खौफ के मारे उसके तमाम बदन में कँपकँपी पैदा हो गई और मालूम होता था कि किसी ने उसके तमाम बदन का खून खींच लिया है। थोड़ी देर तक वह अपने हवास में न रही, अन्त में हाथ जोड़कर उसने कुन्दन से कहा—

लाली—कुन्दन, मुझसे बड़ी भूल हुई। मुझ पर रहम खा ! मैं तमाम उम्र तेरी लौंडी बनकर रहूँगी !

कुन्दन --क्या गुलामी की दस्तावेज मेरे आँचल पर लिख देगी ?

कुन्दन के इस दूसरे जुमले ने तो लाली को एकदम ही बदहवास कर दिया। अबकी दफे वह अपने को किसी तरह न सँभाल सकी, उसका सिर घूमने लगा और वह चक्कर खाकर जमीन पर गिर पड़ी।

लाली का यह हाल देख कुन्दन चुपचाप वहाँ से चली गई, मगर उसकी सूरत से मालूम होता था कि वह अपनी कार्रवाई पर खुश है या उसने लाली के ऊपर अपनी हुकूमत पैदा कर ली है। उसका मुँह सिकोड़ कर सिर हिलाना कहे देता था कि वह लाली पर कुछ और भी जुल्म किया चाहती है।

बेचारी किशोरी का अजब हाल था। नारंगी वाला भेद जानने के लिए वह पहले ही परेशान थी, अब इस दूसरे भेद ने और भी कलेजा ऐंठ दिया। उसने बड़ी मुश्किल से अपने को सँभाला और लाली को उसी तरह छोड़ छत के नीचे उतर आई तथा अपने कमरे से एक गिलास जल लाकर लाली के मुँह पर छींटा दिया। थोड़ी देर में लाली होश में आई और बिना कुछ बात किये रोती हुई अपने रहने की जगह चली गई और किशोरी भी अपने कमरे की तरफ रवाना हुई।

जिस कमरे में किशोरी रहती थी, वह एक खुशनुमा बाग के बीचोंबीच में था। इस बाग के चारों कोनों में छोटी-छोटी चार इमारतें और भी थीं। एक में वे सब औरतें रहती थीं जो किशोरी की हिफाजत के लिए मुकर्रर की गई थीं। इन औरतों की अफसर लाली थी। दूसरे मकान में दो-तीन लौंडियों के साथ लाली रहती थी। तीसरा मकान अमीराना ठाठ से रहने के लिए कुन्दन को मिला हुआ था, चौथे मकान में जो सबसे छोटा था, ताला बंद था, मगर बारी-बारी से कई औरतें नंगी तलवार लिये उसके दरवाजे पर पहरा दिया करती थीं। यह बाग जनाने महल में था और किसी गैर का यहाँ आना या यहाँ से किसी का निकल भागना बड़ा ही मुश्किल था।

9

आधी रात का समय है। चारों तरफ सन्नाटा छाया हुआ है। राजा वीरेन्द्रसिंह के लश्कर में पहरा देने वालों के सिवाय सभी आराम की नींद सोये हुए हैं। हाँ, थोड़े से फौजी आदमियों का सोना कुछ विचित्र ही ढंग का है जिन्हें न तो जागा ही कह सकते हैं और न सोने वालों में ही गिन सकते हैं, क्योंकि ये लोग, जो गिनती में एक हजार से ज्यादा न होंगे, लड़ाई की पोशाक पहने और उम्दे हर्बे बदन पर लगाये लेटे हुए हैं। जाड़े का मौसम है मगर कोई ऐसा कपड़ा, जो बखूबी सर्दी को दूर कर सके, ओढ़े हुए नहीं हैं, इसलिए तेज हवा के साथ मिली हुई सर्दी उन्हें नींद में मस्त होने नहीं देती।

राजा वीरेन्द्रसिंह के खेमे की चौकसी फतहसिंह कर रहे हैं, खुद तो दरवाजे के आगे एक चौकी पर बैठे हुए हैं, मगर मातहत सिपाही खेमे के चारों तरफ नंगी तलवारें लिए घूम रहे हैं। कुँअर इन्द्रजीतसिंह के खेमे की चौकसी कंचनसिंह और आनन्दसिंह के खेमे की हिफाजत नाहरसिंह सिपाहियों के साथ कर रहे हैं।

जब आधी रात से ज्यादा जा चुकी, एक आदमी कुँअर इन्द्रजीतसिंह के खेमे के दरवाजे पर आया और कंचनसिंह को सलाम करके पास खड़ा हो गया। यह आदमी लम्बे कद का और मजबूत मालूम होता था, सिर पर मुँड़ासा बाँधे और ऊपर से एक काश्मीरी स्याह चोगा डाले हुए था।

कंचनसिंह—तुम कौन हो और क्यों आये हो?

आदमी—मैं रोहतासगढ़ किले का रहने वाला हूँ और किशोरीजी का सन्देशा लेकर आया हूँ।

कंचनसिंह—क्या सन्देशा है?

आदमी—हुक्म है कि कुमार के सिवाय और किसी से न कहूँ।

कंचनसिंह—कुमार तो इस समय सोये हुए हैं!

आदमी—अगर आप मेरा आना जरूरी समझते हों, तो मुझे खेमे के अन्दर ले चलिए या कुमार को उठाकर खबर कर दीजिये।

कंचनसिंह—(कुछ सोचकर) बेशक ऐसी हालत में कुमार को जगाना ही पड़ेगा। कहो, तुम्हारा नाम क्या है?

आदमी—मैं अपना नाम नहीं बता सकता, मगर कुमार मुझे अच्छी तरह जानते हैं। आप अपने साथ मुझे खेमे के अन्दर ले चलिए। आँख खुलते ही मुझे पहचान लेंगे, आपको कुछ कहने की जरूरत न पड़ेगी!

कंचनसिंह उस आदमी को लेकर खेमे के अन्दर घुसा। आगे-आगे कंचनसिंह और पीछे-पीछे वह आदमी। जब दोनों खेमे के मध्य में पहुँचे तो उस आदमी ने अपने कपड़े के अन्दर से एक भुजाली निकालकर धोखे में पड़े हुए बेचारे कंचनसिंह की गरदन पर पीछे से इस जोर से मारी कि खट से सिर कटकर दूर जा गिरा, बेचारे के मुँह से

कोई आवाज तक न निकल पायी। इसके बाद वह भुजाली पोंछकर अपनी कमर में रखी और नींद में मस्त सोये हुए कुँअर इन्द्रजीतसिंह के पास आकर खड़ा हो गया। कमर से एक शीशी निकाली और बहुत सम्हालकर कुमार की नाक से लगाई। इस शीशी में तेज बेहोशी की दवा थी। कुमार के बेहोश हो जाने के बाद उसने अपनी कमर से एक लोई खोली और उसमें उनकी गठरी बाँध दरवाजे पर पर्दे के पास आकर देखने लगा कि आगे की तरफ सन्नाटा है या नहीं।

इस समय पहरे वाले गश्त लगाते हुए खेमे के पीछे की तरफ निकल गये थे। आगे सन्नाटा पाकर उसने कुमार की गठरी उठाई और खेमे के बाहर हो अपने को बचाता हुआ लश्कर से दूर निकल गया। लश्कर से कुछ दूरी पर एक रथ खड़ा था जिसमें दो मजबूत मुश्की रंग के घोड़े जुते हुए थे। कोचवान तैयार बैठा था। गठरी खोलकर कुमार को उसी पर लिटा दिया और खुद भी सवार हो रथ हाँकने का हुक्म दिया।

रथ थोड़ी ही दूर गया था कि सारथी को मालूम हो गया कि पीछे कोई सवार आ रहा है। उसने घबड़ा कर अन्दर बैठे हुए आदमी से कहा कि कोई सवार बराबर रथ के साथ चला आ रहा है।

रथ और तेज किया गया, मगर सवार ने पीछा न छोड़ा। सुबह होते-होते रथ बहुत दूर निकल गया और ऐसी जगह पहुँचा जहाँ सड़क के दोनों तरफ घना जंगल था। तब वह सवार घोड़ा बढ़ाकर रथ के बराबर आया और बोला, "बस, अब रथ रोक लो!"

सारथी—तुम कौन हो जो तुम्हारे कहने से रथ रोका जाय?

सवार—हम तुम्हारे बाप हैं! बस खबरदार, अब रथ आगे न बढ़ने पावे!

इस सवार के हाथ में एक बरछी थी। जब सारथी ने उसकी बात न सुनी तो लाचार उसने बरछी मारी। चोट खाकर सारथी जमीन पर गिर पड़ा। रथ के घोड़े भड़ककर और तेजी के साथ भागे और पहिया सारथी के ऊपर से होकर निकल गया।

सवार ने घोड़े को बरछी मारी। एक घोड़ा जख्मी होकर गिर पड़ा, दूसरा घोड़ा भी रुक गया। वह आदमी जो रथ के अन्दर बैठा हुआ था, कूदकर तलवार खींचकर सवार के सामने आ खड़ा हुआ। बात की बात में सवार ने उसे भी बेजान कर दिया और घोड़े के नीचे उतर पड़ा। यह सवार नकाबपोश था।

बरछी गाड़कर सवार ने घोड़े को उससे बाँध दिया और बड़ी होशियारी से कुँअर इन्द्रजीतसिंह को रथ से नीचे उतारा। सड़क के दोनों तरफ घना जंगल था। कुमार को उठाकर जंगल में ले गया और एक सलई के पेड़ के नीचे रख लौट आया और अपने घोड़े पर सवार हो फिर उसी जगह पहुँचने के बाद कुमार के पास बैठ उनको होश में लाने की फिक्र करने लगा।

सुबह की ठण्डी हवा लगने पर कुमार होश में आये और घबड़ा कर उठ बैठे। सवार तलवार खींच सामने खड़ा हो गया। कुमार भी सँभल कर खड़े हो गये और बोले—

कुमार—क्या तुम हमें यहाँ लाये हो?

सवार—नहीं, कोई दूसरा ही आपको लिए जाता था, मैंने छुड़ाया है।

कुमार—(चारों तरफ देखकर) जब तुमने मुझे किसी दुश्मन के हाथ से छुड़ाया है तो स्वयं तलवार लेकर सामने क्यों खड़े हो गये ?

सवार—आपकी बहादुरी और दिलावरी की बहुत-कुछ तारीफ सुनी है, लड़ने का हौसला रखता हूँ।

ममार—मेरे पास कोई हरबा न होने पर भी लड़ने को तैयार हूँ। वार करो।

सवार—जो आदमी रथ पर सवार करके आपको लिए जाता था, उसकी ढाल-तलवार मैं ले आया हूँ, (हाथ का इशारा करके) वह देखिए, आपकी बगल में मौजूद है, उठा लीजिए और मुकाबला कीजिए। मैं खाली हाथ आपसे लड़ना नहीं चाहता।

कुँअर इन्द्रजीतसिंह ढाल-तलवार उठा पैंतरे के साथ उस नकाबपोश सवार के मुकाबले में खड़े हो गये। थोड़ी देर तक लड़ाई होती रही। कुमार को मालूम हो गया कि यह दुश्मनी के तौर पर नहीं लड़ता। ललकार कर बोले, "तुम लड़ते हो या खिलवाड़ करते हो ?"

सवार—कोई दुश्मनी तो आपसे है नहीं !

कुमार—फिर लड़ने को तैयार क्यों हुए ?

सवार—इसलिए कि आपके बदन में जरा फुर्ती आये। बहुत देर तक बेहोश पड़े रहने से रगों में सुस्ती आ गयी होगी। अगर आपसे दुश्मनी रहती तो आपको दुश्मन के हाथ से ही क्यों बचाते ?

कुमार—तो क्या तुम हमारे दोस्त हो ?

सवार—मैं यह भी नहीं कह सकता।

कुमार—जरूर तुम हमारे दोस्त हो अगर दुश्मन के हाथ से हमें बचाया।

सवार—क्या इस बारे में आपको कोई शक है कि मैंने आपकी जान बचायी ?

कुमार—जरूर शक है। मैं कैसे विश्वास कर सकता हूँ कि तुम मुझे लाये हो या कोई दूसरा ?

सवार—इसके लिए मैं तीन सबूत दूंगा। एक तो, अगर मैं दुश्मन होता तो बेहोशी में आपको मार डालता।

कुमार—बेशक, और दो सबूत कौन से हैं ?

सवार—जरा ठहरिये, मैं अभी आता हूँ तो ये दोनों सबूत भी देता हूँ।

इतना कह वह नकाबपोश सवार झट अपने घोड़े पर सवार हुआ और वहाँ पहुँचा जहाँ वह रथ था, जिस पर कुमार लाये गये थे। एक घोड़ा मरा हुआ पड़ा था, दूसरा बागडोर से बँधा अलग खड़ा था। उस ऐयार की लाश भी उसी जगह पड़ी हुई थी जो कुमार को बेहोश करके उठा लाया था। पीछे की तरफ थोड़ी दूर पर सारथी की लाश थी।

वह नकाबपोश सवार अपने घोड़े से उतर पड़ा और जोर लगाकर किसी तरह उस रथ को उलट दिया जो अभी तक खड़ा था। फिर सोचने लगा कि अब क्या करना चाहिए ? उसकी निगाह सारथी की लाश पर पड़ी, वहाँ गया और उस लाश को घसीट

लाकर रथ के पास रख दिया और कुछ सोचकर धीरे से बोला, "अब कुमार नहीं समझ सकते कि उनका लश्कर किधर है और वे किस तरफ से लाये गये, उन्हें धोखे में डालकर अपनी और उनकी किस्मत का अन्दाजा लेना चाहिए।" इसके बाद वह सवार फिर अपने घोड़े पर चढ़ा और वहाँ पहुँचा जहाँ कुमार उसकी राह देख रहे थे।

कुमार—तुम कहाँ गये थे ?

सवार—एक आदमी की खोज में गया था, मगर वह नहीं मिला।

कुमार—खैर, तुम अपनी सच्चाई के लिए और सबूत देने वाले थे !

सवार घोड़े पर से उतर पड़ा और कुमार से बोला, "आप घोड़े पर सवार हो लीजिए और मेरे साथ चलिए।" मगर कुमार ने मंजूर न किया। सवार ने भी घोड़े की लगाम थामी और पैदल कुमार को लिए हुए उस रथ के पास पहुँचा और सब हाल कहकर बोला, "देखिये, इसी रथ पर आप लाये गये, यही बदमाश आपको लाया है, और यह दूसरा सारथी है। मैं इत्तिफाक से आपके पास मिलने के लिए जा रहा था जो आपके काम आया। अब उस रथ का एक घोड़ा जो बचा हुआ है, उसी पर आप सवार होकर लश्कर में चले जाइये !"

कुमार—बेशक तुमने मेरी जान बचाई, इसका अहसान कभी न भूलूँगा।

सवार—क्या इसका अहसान आप मानते हैं ?

कुमार—जरूर।

सवार—तो आप कुछ देकर इस अहसान का बोझ अपने ऊपर से उतार दीजिये।

कुमार—बड़ी खुशी के साथ मैं ऐसा करने को तैयार हूँ, जो कहो दूँ।

सवार—इस समय तो मैं आपसे कुछ नहीं ले सकता। मगर आप वादा करें तो जरूरत पड़ने पर आपसे कुछ माँगूँ और मदद लूँ !

कुमार—मैं वादा करता हूँ कि जो कुछ माँगोगे दूँगा, जब चाहे ले लो।

सवार—देखिए, फिर बदल न जाइएगा।

कुमार—कभी नहीं, यह क्षत्रियों का धर्म नहीं।

सवार—अच्छा, अब एक सबूत और देता हूँ कि बिना आपको किसी तरह का कष्ट दिये अपने घर चला जाता हूँ।

कुमार—तुम अपने चेहरे पर से नकाब तो हटाओ, जिसमें तुमको पहचान रखूँ।

सवार—यह बात भी जरूरी है।

इतना कहकर सवार ने अपने चेहरे पर से नकाब उलट दी और कुमार को हैरत में डाल दिया, क्योंकि वह एक हसीन और नौजवान औरत थी।

बेशक सिवाय किशोरी के ऐसी हसीन औरत कुमार ने कभी नहीं देखी थी। उसने अपनी तिरछी चितवन से कुमार के दिल का शिकार कर लिया और उनकी बँधी हुई टकटकी की तरफ कुछ खयाल न कर, उन्हें उसी तरह छोड़, सड़क से नीचे उतर, जंगल का रास्ता लिया।

उसके चले जाने के बाद थोड़ी देर तक तो कुमार उसी तरफ देखते रहे, जिधर

वह घोड़े पर सवार हो गयी थी। इसके बाद रथ और सड़क की तरफ देखा, फिर उस घोड़े के पास गये जो रथ के दोनों घोड़ों में से जीता मौजूद था। उसकी पीठ पर जो कुछ असबाब था खोल दिया, सिर्फ लगाम रहने दी और नंगी पीठ पर सवार हो उसी तरफ का रास्ता लिया, जिधर वह नकाबपोश औरत उनके देखते-देखते चली गयी थी।

भूखे-प्यासे दोपहर तक घोड़ा दौड़ाते चले गये, मगर उस औरत का पता न लगा कि किधर गयी और क्या हुई। भूख और प्यास से परेशान हो गये और इस फिक्र में पड़े कि कहीं ठण्डा पानी मिले तो प्यास बुझावें। मगर इस जंगल में कहीं किसी सोते या झरने का पता न लगा। लाचार वह आगे बढ़ते ही गये और शाम होते तक एक ऐसे मैदान में पहुँचे, जिसके चारों तरफ तो घना जंगल था मगर बीच में सुन्दर साफ जल से लहराता हुआ एक अनूठा तालाब था।

कुँअर इन्द्रजीतसिंह उस विचित्र तालाब को देख बड़े ही विस्मित हुए और एकटक उसकी तरफ देखने लगे। इस तालाब के बीचोंबीच एक खूबसूरत छोटा-सा मकान बना हुआ था जिसके चारों तरफ सहन था और चारों कानों में चार औरतें तीर-कमान चढ़ाये मुस्तैद थीं। मालूम होता था कि ये अभी तीर छोड़ना ही चाहती हैं। मकान की छत पर एक छोटे से चबूतरे पर भी एक औरत दिखाई पड़ी, जिसका सिर नीचे और पैर आसमान की तरफ थे। बड़ी देर तक देखने के बाद मालूम हुआ कि ये औरतें जानदार नहीं हैं बल्कि बनावटी हैं, जिन्हें पुतली कहना मुनासिब है। एक छोटी-सी डोंगी भी उसी चबूतरे के साथ रस्सी के सहारे बँधी हुई थी, जिससे मालूम होता था कि इस मकान में जरूर कोई रहता है जिसके आने-जाने के लिए यह डोंगी मौजूद है।

कुमार घोड़े की लगाम एक पत्थर से अटका कर तालाब के नीचे उतरे। हाथ-मुँह धोकर जल पिया और कुछ सुस्ताने के बाद फिर उसी मकान की तरफ देखने लगे, क्योंकि कुमार का इरादा हुआ कि तैर कर उस मकान तक जायें और देखें कि उसमें क्या है।

सूर्य अस्त होते-होते एक औरत उस मकान के अन्दर से निकली और सहन पर खड़ी हो कुमार की तरफ देखने लगी। इसके बाद हाथ के इशारे से कहा कि यहाँ से चले जाओ। कुमार ने उस औरत को साफ पहचान लिया कि यह वही नकाबपोश सवार है जिसने कुमार को रथ पर ले जाते हुए ऐयार के हाथ से बचाया था।

10

कुछ रात जा चुकी है। रोहतासगढ़ किले के अन्दर अपने मकान में बैठी हुई बेचारी किशोरी न मालूम किस ध्यान में डूबी हुई है और क्या सोच रही है। कोई दूसरी औरत उसके पास नहीं है। आखिर किसी के पैर की आहट पा अपने खयाल में डूबी हुई किशोरी ने सिर उठाया और दरवाजे की तरफ देखने लगी। लाली ने पहुँचकर सलाम किया और कहा, "माफ कीजिएगा, मैं बिना हुक्म के इस कमरे में आयी हूँ।"

किशोरी—मैंने लौंडियों को हुक्म दे रखा है कि इस कमरे में कोई न आने पावे, मगर साथ ही इसके यह भी कह दिया था कि लाली आने का इरादा करे तो उसे मत रोकना।

लाली—बेशक आपने मेरे ऊपर बड़ी मेहरबानी की।

किशोरी—मगर न मालूम, तुम मेरे ऊपर दया क्यों नहीं करतीं ! आओ बैठो।

लाली—(बैठ कर) आप ऐसा न कहें। मैं जी-जान से आपके काम आने को तैयार हूँ।

किशोर—ये सब बनावटी बातें करती हो। अगर ऐसा ही होता तो अपना और कुन्दन वाला भेद मुझसे क्यों छिपातीं ? नारंगी वाले भेद से तो मैं पहले ही हैरान हो रही थी, मगर जब से कुन्दन ने अपनी बातों का असर तुम पर डाला है, तब से मेरी घबराहट और भी बढ़ गई है।

लाली—बेशक आपको बहुत-कुछ ताज्जुब हुआ होगा। मैं कसम खा कर कह सकती हूँ कि कुन्दन ने उस समय जो मुझे कहा था या कुन्दन की जिन बातों को सुन कर मैं डर गई थी, वह उसे पहले से मालूम न थीं। अगर मालूम होतीं तो जिस समय मैंने नारंगी दिखाकर उसे धमकाया था, उसी समय वह मुझसे बदला ले लेती। अब मुझे विश्वास हो गया कि इस मकान में कोई बाहर का आदमी जरूर आया है जिसने हमारे भेद से कुन्दन को होशियार कर दिया। अफसोस, अब मेरी जान मुफ्त में जाया चाहती है क्योंकि कुन्दन बड़ी ही बेरहम और बदकार औरत है।

किशोरी—तुम्हारी बातें मेरी घबराहट को और बढ़ा रही हैं। कृपा करके कुछ कहो तो सही, क्या भेद है ?

लाली—मैं सारा हाल आपसे कहूँगी। और आपकी चिन्ता दूर करूँगी, मगर आज रात भर आप मुझे और माफ कीजिये और इस समय एक काम में मेरी मदद कीजिए।

किशोरी—वह क्या ?

लाली—यह तो मुझे विश्वास हो ही गया कि अब मेरी जान किसी तरह नहीं बच सकती, तो भी अपने बचने के लिए मैं कोई न कोई उद्योग जरूर करूँगी। मैं चाहती हूँ कि अपने मरने के पहले ही कुन्दन को इस दुनिया से उठा दूँ, मगर एक ऐसी अंडस में पड़ गई हूँ कि ऐसा करने का इरादा भी नहीं कर सकती, हाँ, कुन्दन का कुछ विशेष हाल जानना चाहती हूँ और इसके बाद बाग के उस कोने वाले मकान में घुसा चाहती हूँ जिसमें हरदम ताला बन्द रहता है और दरवाजे पर नंगी तलवार लिये दो औरतें बारी-बारी से पहरा दिया करती हैं। इन्हीं दोनों कामों में मैं आपसे मदद लिया चाहती हूँ।

किशोरी—उस मकान में क्या है, तुम्हें कुछ मालूम है ?

लायी—हाँ, कुछ मालूम है और बाकी भेद जानना चाहती हूँ। मुझे विश्वास है कि अगर आप भी मेरे साथ उस मकान के अन्दर चलेंगी और हम दोनों आदमी किसी तरह बच कर निकल आवेंगे, तो फिर आपको भी इस कैद से छुट्टी मिल जायेबी। मगर

उसके अन्दर जाना और बच कर निकल आना यही मुश्किल है।

किशोरी—यह और ताज्जुब की बात तुमने कही। खैर, ऐसी जिन्दगी से मैं मरना उत्तम समझती हूँ। जो कुछ तुम्हें करना हो, करो और जिस तरह की मदद मुझसे लिया चाहती हो, लो।

लाली—(एक छोटी-सी तस्वीर कमर से निकाल और किशोरी के हाथ में देकर) थोड़ी देर बाद मामूली तौर पर कुन्दन जरूर आपके पास आवेगी, उस समय यह तस्वीर ऐसे ढंग से उसे दिखाइए जिसमें उसे यह न मालूम हो कि आप जान-बूझ कर दिखा रही हैं। फिर उसके चेहरे की जैसी रंगत हो या जो कुछ वह कहे मुझसे कहिए। इस समय तो यही एक काम है।

किशोरी—यह काम मैं बखूबी कर सकूंगी।

किशोरी ने लाली के हाथ से तस्वीर लेकर पहले खुद देखी। इस तस्वीर में एक खोह की हालत दिखाई गई थी, जिसमें एक आदमी उलटा लटक रहा था और एक औरत हाथ में छुरा लिए उसके बदन में घाव लगा रही थी, पास में एक कमसिन औरत खड़ी थी और कोने की तरफ कब्र खोदी जा रही थी।

पाठक, यह तस्वीर ठीक उस समय की थी, जिसका हाल हम पहले भाग के आठवें बयान में लिख आये हैं। मगर वह हाल किशोरी को अभी तक मालूम नहीं हुआ था। किशोरी उस तस्वीर को देख कर बहुत ही हैरान हुई और उसके बारे में लाली से कुछ पूछना भी चाहा, मगर लाली तस्वीर देने के बाद वहाँ न ठहरी, तुरत बाहर चली गई।

लाली के जाने के थोड़ी ही देर बाद कुन्दन आ पहुँची। मगर उस समय किशोरी उस तस्वीर के देखने में अपने को यहाँ तक भूली हुई थी कि कुन्दन का आना उसे तब मालूम हुआ जब उसने पास आकर कुछ देर तक खड़े रहकर पूछा, "कहो बहिन, क्या देख रही हो?"

किशोरी—(चौंककर) है! तुम यहाँ कब से खड़ी हो?

कुन्दन—कुछ देर से। इस तस्वीर में कौन सी ऐसी बात है जिसे तुम बड़े गौर से देख रही हो?

किशोरी—तुमने इस तस्वीर को देखा है?

कुन्दर—सैकड़ों दफे। मैं समझती हूँ कि यह तस्वीर तुम्हें लाली ने खास मुझे दिखाने के लिए दी है। आप लाली से कह दीजिएगा कि मैं इस तस्वीर को देख कर नहीं डर सकती। मैं बिना बदला लिए कभी न छोड़ूँगी क्योंकि जिस दिन पहले-पहले रात को आपसे मुलाकात हुई थी, उस दिन यहाँ से मेरे निकल जाने का सामान बिल्कुल ठीक था। इसी लाली ने मेरे उद्योग को मिट्टी कर दिया और मेरे मददगारों को भी फँसा दिया। खैर, देखा जायगा। मैं आपके मिलने से प्रसन्न थी मगर अफसोस, उसने झूठी बात गढ़ कर आपका दिल भी मेरी तरफ से फेर दिया। तो भी मैं आपके साथ बुराई न करूँगी और जहाँ तक हो सकेगा, उसकी चालबाजियों से आपको होशियार कर दूंगी, मानने न मानने का आपको अख्तियार है।

किशोरी—मेरी समझ में कुछ नहीं आता कि क्या हो रहा है। हे ईश्वर, मैंने क्या अपराध किया था कि मुझे चारों तरफ से संकटों ने आकर घेर लिया ? हाय, मैं बिल्कुल नहीं जान सकती कि यहाँ कौन मेरा दोस्त है और कौन दुश्मन ?

इतना कह किशोरी रोने लगी। उसने अपने को बहुत सँभालना चाहा मगर न हो सका। हिचकियों ने उसका गला दबा दिया। कुन्दन किशोरी के पास बैठ गई और उसका हाथ अपने दोनों हाथों में दबा कर बोली—

"प्यारी किशोरी, यह समझना तो बहुत मुश्किल है कि यहाँ आपका दोस्त कौन है। बात बना कर दोस्ती साबित करना भूल है तिसमें दुश्मन के घर में, हाँ, यह मैं जरूर साबित कर दूँगी कि लाली आपसे दुश्मनी रखती है। लाली ने आपसे जरूर कहा होगा कि आपकी तरह मैं भी कुमार के साथ ब्याह करने के लिए लाई गई हूँ। मगर नहीं, यह बात बिल्कुल झूठ हैं। सचाई तो यह है कि लाली मुझको बिल्कुल नहीं जानती और न मैं जानती हूँ कि लाली कौन है। मगर आज-कल लाली जिस फिक्र में पड़ी है, उससे मैं समझती हूँ कि वह आपके साथ दुश्मनी कर रही है। ताज्जुब नहीं कि वह आपको एक दिन उस मकान में ले जाय, जिसका ताला बराबर बन्द रहता है और जिसके दरवाजे पर नंगी तलवार का पहरा पड़ा करता है क्योंकि आज कल वह वहाँ पहरा देने वाली औरतों से दोस्ती बढ़ा रही है और ताला खोलने के लिए एक ताली तैयार कर रही है। उसकी दुश्मनी का अन्त उसी दिन होगा जिस दिन वह आपको उस मकान के अन्दर कर देगी, फिर आपकी जान किसी तरह नहीं बच सकती। उसका ऐसा करना केवल आपही के साथ दुश्मनी करना नहीं, बल्कि यहाँ के राजा और इस राज्य के साथ भी दुश्मनी करना है। बेशक वह आपको उस मकान के अन्दर भेजेगी और आप उस चौखट के अन्दर पैर भी न रक्खेंगी।

किशोरी—उस मकान के अन्दर क्या है ?

कुन्दन—सो तो मैं नहीं जानती।

किशोरी—यहाँ का कोई आदमी जानता है ?

कुन्दन—कोई नहीं, बल्कि जहाँ तक मैं खयाल करती हूँ, यहाँ का राजा भी उसके अन्दर का हाल नहीं जानता।

किशोरी—क्या मकान कभी खोला नहीं जाता ?

कुन्दन—मेरे सामने तो कभी खोला नहीं गया।

किशोरी—फिर कैसे कह सकती हो कि उसके अन्दर जाकर कोई बच नहीं सकता ?

कुन्दन—इसका जानना तो कोई मुश्किल नहीं है। पहले तो यही सोचिए कि वहाँ हरदम ताला बन्द रहता है। अगर कोई चोरी से भीतर गया भी तो निकलने का मौका मुश्किल से मिलेगा। फिर हम लोगों को उसके अन्दर जाकर फायदा ही क्या होगा ? आपने देखा होगा, उस दरवाजे के ऊपर लिखा है कि—'इसके अन्दर जो जायगा उसका सिर आपसे आप कट कर गिर पड़ेगा !' जो हो, मगर यह सब होते हुए भी लाली आपको उस मकान के अन्दर जरूर भेजना चाहेगी।

किशोरी—खैर, इस तस्वीर का हाल अगर तुम जानती हो, तो कहो।

कुन्दन—कहती हूँ, सुनो—जब कँअर इन्द्रजीतसिंह को धोखा देकर माधवी ले गई तो उनके छोटे भाई आनन्दसिंह उनकी खोज में निकले। एक मुसलमानी ने उन्हें धोखा देकर गिरफ्तार कर लिया और अपने साथ शादी करनी चाही, मगर उन्होंने मंजूर न किया और तीन दिन भूखे-प्यासे उसके यहाँ कैद रह गये। आखिर उन्हीं के ऐयार देवीसिंह ने उस कैद से उनको छुड़ाया, मगर उन्हें अभी तक मालूम नहीं है कि उन्हें देवीसिंह ने छुड़ाया था।

इसके बाद उस तस्वीर के बारे में जो कुछ आनन्दसिंह ने देखा-सुना था, कुन्दन ने वहाँ तक कह सुनाया, जब आनन्दसिंह बेहोश करके उस खोह के बाहर निकाल दिये गये, बल्कि घर पहुँचा दिये गये।

किशोरी—यह सब हाल तुम्हें कैसे मालूम हुआ?

कुन्दन—मुझसे देवीसिंह ने कहा था।

किशोरी—देवीसिंह से तुमसे क्या सम्बन्ध?

कुन्दन—जान-पहचान है। आपने इस तस्वीर के बारे में लाली से कुछ सुना है या नहीं?

किशोरी—कुछ नहीं।

कुन्दन—पूछिये, देखें, क्या कहती है। अच्छा, अब मैं जाती हूँ, फिर मिलूँगी।

किशोरी—जरा ठहरो तो!

कुन्दन—अब मत रोको, बेमौका हो जायगा। मैं फिर बहुत जल्द मिलूँगी।

कुन्दन चली गई, मगर किशोरी पहले से भी ज्यादा सोच में पड़ गई। कभी तो उसका दिल लाली की तरफ झुकता और उसको अपने दुःख का साथी समझती, कभी सोचते-सोचते लाली की बातों में शक पड़ जाने पर कुन्दन ही को सच्ची समझती। उसका दिल दोनों तरफ के खिंचाव में पड़कर बेबस हो रहा था। वह ठीक निश्चय नहीं कर सकती थी कि अपना हमदर्द लाली को बनावे या कुन्दन को, क्योंकि लाली और कुन्दन दोनों ही अपने असली भेदों को किशोरी से छिपा रही थीं।

उस दिन लाली ने फिर मिल कर किशोरी से पूछा, "उस तस्वीर को देख कर कुन्दन की क्या दशा हुई?" जिसके जवाब में किशोरी ने कहा, "कुन्दन ने उस तस्वीर की तरफ ध्यान भी न दिया और मेरे खुद पूछने पर कहा कि मैं नहीं जानती, यह तस्वीर कैसी है और न इसे कभी मैंने पहले देखा ही था।"

यह सुन कर लाली का चेहरा कुछ उदास हो गया और वह किशोरी के पास से उठ कर चली गई। किशोरी ने कहा, "भला तुम ही बताती जाओ कि यह तस्वीर कैसी है?" मगर लाली ने इसका कुछ जवाब न दिया और चली गई।

इस बात को कई दिन बीत गये। लश्कर से कुँअर इन्द्रजीत के गायब होने का हाल भी चारों तरफ फैल गया, जिसे सुन धीरे-धीरे किशोरी की उदासी और भी ज्यादा बढ़ गई।

एक दिन रात को अपनी पलंगड़ी पर लेटी हुई किशोरी तरह-तरह की बातें

सोच रही थी, लाली आर कुन्दन के बारे में भी गौर कर रही थी। यकायक वह उठ बैठी और धीरे से आप-ही-आप बोली, "अब मुझे खुद कुछ करना चाहिए, इस तरह पड़े रहने से काम नहीं चलता। मगर अफसोस, मेरे पास कोई हरबा भी तो नहीं है।"

किशोरी पलंग के नीचे उतरी और कमरे में इधर-उधर टहलने लगी, आखिर कमरे के बाहर निकली।। देखा कि पहरेदार लौंडियाँ खूब गहरी नींद में सो रही हैं। रात आधी से ज्यादा जा चुकी थी, चारों तरफ अँधेरा छाया हुआ था। धीरे-धीरे कदम बढ़ाती हुई कुन्दन के मकान की तरफ बढ़ी। जब पास पहुँची तो देखा कि एक आदमी काले कपड़े पहने उसी तरफ लपका हुआ जा रहा है, बल्कि उस कमरे के दालान में पहुँच गया जिसमें कुन्दन रहती है। किशोरी एक पेड़ की आड़ में खड़ी हो गई, शायद इसलिए कि वह आदमी लौट कर चला जाय तो आगे बढ़ूँ।

थोड़ी देर बाद कुन्दन भी उसी आदमी के साथ बाहर निकली और धीरे-धीरे बाग के उस तरफ रवाना हुई, जिधर घने दरख्त लगे हुए थे। जब दोनों उस पेड़ के पास पहुँचे जिसकी आड़ में किशोरी छिपी हुई थी, तब वह आदमी रुका और धीरे से बोला-

आदमी—अब तुम जाओ, ज्यादा दूर तक पहुँचाने की कोई जरूरत नहीं।

कुन्दन—फिर भी मैं कहे देती हूँ कि अब पाँच-सात दिन तक 'नारंगी' की कोई जरूरत नहीं।

आदमी—खैर, मगर किशोरी पर दया बनाये रहना!

कुन्दन—इसके कहने की कोई जरूरत नहीं।

वह आदमी पेड़ों के झुण्ड की तरफ चला गया और कुन्दन लौट कर अपने कमरे में चली गई। किशोरी भी फिर वहाँ न ठहरी और अपने कमरे में आकर पलंग पर लेट रही, क्योंकि उन दोनों की बातों ने, जिन्हें किशोरी ने अच्छी तरह सुना था, उसे परेशान कर दिया और वह तरह-तरह की बातें सोचने लगी। मगर अपने दिल का हाल किससे कहे? इस लायक वहाँ कोई भी न था।

पहले तो किशोरी बनिस्बत कुन्दन के लाली को सच्ची और नेक समझती थी, मगर अब वह बात न रही। किशोरी उस आदमी के मुँह से निकली हुई उस बात को फिर याद करने लगी कि "किशोरी पर दया बनाये रहना।"

वह आदमी कौन था? इस बाग में आना और यहाँ से निकल कर जाना तो बड़ा ही मुश्किल है, फिर वह क्यों कर आया! उस आदमी की आवाज पहचानी हुई सी मालूम होती है। बेशक मैं उससे कई दफे बातें कर चुकी हूँ मगर कब और कहाँ सो याद नहीं पड़ता और न उसकी सूरत का ध्यान बँधता है। कुन्दन ने कहा था, "पाँच-सात दिन तक नारंगी की कोई जरूरत नहीं।" इससे मालूम होता है कि नारंगी वाली बात कुछ उस आदमी से सम्बन्ध रखती है और लाली उस भेद को जानती है। इस समय तो यह निश्चय हो गया कि कुन्दन मेरी खैरख्वाह है और लाली मुझसे दुश्मनी किया चाहती है। मगर इसका भी विश्वास नहीं होता। कुछ भेद खुला मगर इससे तो और भी उलझन हो गई। खैर, कोशिश करूँगी तो कुछ औ

भी पता लगेगा, मगर अबकी लाली का हाल मालूम करना चाहिए ।

थोड़ी देर तक इन सब बातों को किशोरी सोचती रही, आखिर फिर अपने पलंग से उठी और कमरे के बाहर आई । उसकी हिफाजत करने वाली लौंडियाँ उसी तरह गहरी नींद में सो रही थीं । जरा रुककर वह बाग के उस कोने की तरफ बढ़ी जिधर लाली का मकान था । पेड़ों की आड़ में अपने को छिपाती और रुक-रुक कर चारों तरफ की आहट लेती हुई चली जाती थी । जब लाली के मकान के पास पहुँची तो धीरे-धीरे किसी की बातचीत की आहट पाकर एक अंगूर की झाड़ी में रुक रही और कान लगा कर सुनने लगी, केवल इतना ही सुना, "आप बेफिक्र रहिए, जब तक मैं जीती हूँ, कुन्दन किशोरी का कुछ भी बिगाड़ नहीं सकती और न ही उसे कोई दूसरा ले जा सकता है । किशोरी इन्द्रजीतसिंह की है और बेशक उन तक पहुँचाई जायगी ।"

किशोरी ने पहचान लिया कि यह लाली की आवाज है ! लाली ने यह बात बहुत धीरे से कही थी, मगर किशोरी बहुत पास पहुँच चुकी थी, इसलिए बखूबी सुनकर पहचान सकी कि लाली की आवाज है, मगर यह न मालूम हुआ कि दूसरा आदमी कौन है । लाली अपने कमरे के पास ही थी, बात कहकर तुरन्त दो-चार सीढ़ियाँ चढ़ अपने कमरे में घुस गई और उसी जगह से एक आदमी निकल कर पेड़ों की आड़ में छिपता हुआ बाग की पिछली तरफ, जिधर दरवाजे में बराबर ताला बन्द रहने वाला मकान था, चला गया, मगर उसी समय जोर-जोर से 'चोर-चोर' की आवाज आई । किशोरी ने इस आवाज को भी पहचान कर मालूम कर लिया कि कुन्दन है जो उस आदमी को फँसाया चाहती है । किशोरी फौरन लपकती हुई अपने कमरे में चली आई और 'चोर-चोर' की आवाज बढ़ती ही गई ।

किशोरी अपने कमरे में आकर पलंग पर लेट रही और उन बातों पर गौर करने लगी जो अभी दो-तीन घण्टे के हेर-फेर में देख-सुन चुकी थी । वह मन-ही-मन कहने लगी, "कुन्दन की तरफ भी गई और लाली की तरफ भी गई, जिससे मालूम हो गया कि वे दोनों ही एक-एक आदमी से जान-पहचान रखती हैं जो बहुत छिपकर इस मकान में आता है । कुन्दन के साथ जो आदमी मिलने आया था, उसकी जबानी जो कुछ मैंने सुना, उससे जाना जाता था कि कुन्दन मुझसे दुश्मनी नहीं रखती, बल्कि मेहरबानी का बर्ताव किया चाहती है । इसके बाद जब लाली की तरफ गई तो वहाँ की बातचीत से मालूम हुआ कि लाली सच्चे दिल से मेरी मददगार है और कुन्दन शायद दुश्मनी की निगाह से मुझे देखती है । हाँ ठीक है, अब समझी, बेशक ऐसा ही होगा । नहीं-नहीं, मुझे कुन्दन की बातों पर विश्वास न करना चाहिए ! अच्छा, देखा जायेगा । कुन्दन ने बेमौके चोर-चोर का शोर मचाया, कहीं ऐसा न हो कि बेचारी लाली पर कोई आफत आवे ।"

इन्हीं सब बातों को सोचती हुई किशोरी ने बची हुई थोड़ी-सी रात जाग कर ही बिता दी और सुबह की सफेदी फैलने के साथ ही अपने कमरे के बाहर निकली क्योंकि रात की बातों का पता लगाने के लिए उसका जी बेचैन हो रहा था ।

किशोरी जैसे ही दालान में पहुँची, सामने से कुन्दन को आते हुए देखा । कुन्दन

ने पास आकर सलाम किया और कहा, "रात का कुछ हाल मालूम है या नहीं ?"

किशोरी—सब-कुछ मालूम है ! तुम्हीं ने तो शोर मचाया था !

कुन्दन—(ताज्जुब से) यह कैसी बात कहती हो ?

किशोरी—तुम्हारी आवाज साफ मालूम होती थी।

कुन्दन—मैं तो चोर-चोर का शोर सुनकर वहाँ पहुँची थी और उन्हीं की तरह खुद भी चिल्लाने लगी थी।

किशोरी—(हँसकर) शायद ऐसा ही हो।

कुन्दन—क्या इसमें आपको कोई शक है ?

किशोरी—बेशक। लो, यह लाली भी तो आ रही है।

कुन्दन—(कुछ घबरा कर) जो कुछ किया, उन्होंने किया।

इतने में लाली भी आकर खड़ी हो गई और कुन्दन की तरफ देखकर बोली, 'आपका वार तो खाली गया।"

कुन्दन—(घबरा कर) मैंने क्या···

लाली—बस, रहने दीजिये, आपने मेरी कार्रवाई कम देखी होगी, मगर दो घंटे पहले मैं आपकी पूरी कार्रवाई मालूम कर चुकी थी।

कुन्दन—(बदहवास होकर) आप तो कसम खा···

लाली—हाँ-हाँ, मुझे खूब याद है, मैं उसे नहीं भूलती।

किशोरी—जो हो, मुझे अब पाँच-सात दिन तक नारंगी की कोई जरूरत नहीं।

किशोरी की इस बात ने लाली और कुन्दन दोनों को चौंका दिया। लाली के चेहरे पर कुछ हँसी थी, मगर कुन्दन के चेहरे का रंग बिल्कुल ही उड़ गया था, क्योंकि उसे विश्वास हो गया कि किशोरी ने भी रात की कुल बातें सुन लीं। कुन्दन की घबराहट और परेशानी यहाँ तक बढ़ गई कि किसी तरह अपने को सम्हाल न सकी और बिना कुछ कहे वहाँ से उठ कर अपने कमरे की तरफ चली गई। अब लाली और किशोरी में बातचीत होने लगी —

लाली—मालूम होता है, तुमने भी रात भर ऐयारी की !

किशोरी—हाँ, मैं कुन्दन की तरफ छिप कर गई थी।

लाली—तब तो तुम्हें मालूम हो गया होगा कि कुन्दन तुम्हें धोखा दिया चाहती है।

किशोरी—पहले तो यह साफ नहीं जान पड़ता था, मगर जब तुम्हारी तरफ गई और तुमको किसी से बातें करते सुना तो विश्वास हो गया कि इस महल में केवल तुम्हीं से मैं कुछ भलाई की उम्मीद कर सकती हूँ।

लाली—ठीक है, कुन्दन की कुल बातें तुमने नहीं सुनीं, क्या मुझसे भी··· (रुक कर) खैर, जाने दीजिए। हाँ, अब वह समय आ गया कि तुम और हम दोनों यहाँ से निकल जायें। क्या तुम मुझ पर विश्वास रखती हो ?

किशोरी—बेशक, तुमसे मुझे नेकी की उम्मीद है, मगर कुन्दन बहुत बिगड़ी हुई मालूम होती है।

लाली—वह मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकती ।

किशोरी—अगर तुम्हारा हाल किसी से कह दे तो ?

लाली—अपनी जबान से वह नहीं कह सकती, क्योंकि वह मेरे पंजे में उतनी ही फँसी हुई है जितनी मैं उसके पंजे में ।

किशोरी—अफसोस ! इतनी मेहरबान रहने पर भी तुम वह भेद मुझसे नहीं कहतीं !

लाली—घबराओ मत ! धीरे-धीरे सब-कुछ मालूम हो जायेगा ।

इसके बाद लाली ने दबी जबान से किशोरी को कुछ समझाया और दो घण्टे में फिर मिलने का वादा करके वहाँ से चली गई ।

11

हम ऊपर कई दफे लिख आये हैं कि उस बाग में, जिसमें किशोरी रहती थी, एक तरफ एक ऐसी इमारत है जिसके दरवाजे पर बराबर ताला बन्द रहता है और नंगी तलवार का पहरा पड़ा करता है ।

आधी रात का समय है । चारों तरफ अँधेरा छाया हुआ है । तेज हवा चलने के कारण बड़े-बड़े पेड़ों के पत्ते खड़खड़ा कर सन्नाटे को तोड़ रहे हैं । इसी समय हाथ में कमन्द लिए हुए लाली अपने को हर तरफ से बचाती और चारों तरफ गौर से देखती हुए उसी मकान के पिछवाड़े की तरफ जा रही है । वह दीवार के पास पहुँची और कमन्द लगाकर छत के ऊपर चढ़ गई । छत के ऊपर चारों तरफ तीन-तीन हाथ ऊँची दीवार थी । लाली ने बड़ी होशियारी से छत फोड़ कर एक इतना बड़ा सूराख किया जिसमें से आदमी बखूबी नीचे उतर जा सके और खुद कमन्द के सहारे उसके अन्दर उतर गई ।

दो घण्टे के बाद एक छोटी-सी सन्दूकड़ी लिए हुए लाली निकली और कमन्द के सहारे छत के नीचे उतर एक तरफ को रवाना हुई । पूरब तरफ वाली बारहदरी में आई, जहाँ से महल में जाने का रास्ता था, फाटक के अन्दर घुसकर महल में पहुँची । यह महल बहुत बड़ा और आलीशान था, दो सौ लौंडियों और सखियों के साथ महारानी साहिबा इसी में रहा करती थीं । कई दालानों और दरवाजों को पार करती हुई लाली ने एक कोठरी के दरवाजे पर पहुँच कर धीरे से कुण्डा खटखटाया ।

एक बुढ़िया ने उठकर किवाड़ खोला और लाली को अन्दर करके फिर बन्द कर लिया । उस बुढ़िया की उम्र लगभग अस्सी वर्ष के होगी, नेकी और रहमदिली उसके चेहरे पर झलक रही थी । सिर्फ छोटी-सी कोठरी, थोड़े में जरूरी सामान और मामूली चारपाई पर ध्यान देने से मालूम होता था कि बुढ़िया लाचारी में अपनी जिन्दगी बिता रही है । लाली ने दोनों पैर छूकर प्रणाम किया और उस बुढ़िया ने पीठ पर हाथ फेर कर बैठने के लिए कहा ।

लाली—(सन्दूक आगे रखकर) यही है ?

बुढ़िया—क्या ले आई ? हाँ ठीक है, बेशक यही है। अब आगे जो कुछ करना, बहुत सम्हाल कर ! ऐसा न हो कि इस आखिरी समय में मुझे कलंक लगे।

लाली—जहाँ तक हो सकेगा बड़ी होशियारी से काम करूँगी। आप आशीर्वाद दीजिए कि मेरा उद्योग सफल हो।

बुढ़िया—ईश्वर तुझे इस नेकी बदला दे। वहाँ कुछ डर तो नहीं मालूम हुआ ?

लाली—दिल कड़ा करके इसे ले आई, नहीं तो मैंने जो कुछ देखा, जीते-जी भूलने योग्य नहीं। अभी तो फिर एक दफे देखना नसीब होगा। ओफ, अभी तक कलेजा काँपता है।

बुढ़िया—(मुस्कुरा कर) बेशक वहाँ ताज्जुब के सामान इकट्ठे हैं, मगर डरने की कोई बात नहीं जा। ईश्वर तेरी मदद करेगा।

लाली ने उस सन्दूकड़ी को उठा लिया और अपने खास घर में आ सन्दूकड़ी को हिफाजत से रख पलंग पर जा लेटी। सवेरे उठकर किशोरी के कमरे में गई।

किशोरी—मुझे रात-भर तुम्हारा खयाल बना रहा और घड़ी-घड़ी उठकर बाहर जाती थी कि कहीं से शोरगुल की आवाज तो नहीं आती।

लाली—ईश्वर की दया से मेरे काम में किसी तरह का विघ्न नहीं पड़ा।

किशोरी—आओ, मेरे पास बैठो ! अब तो तुम्हें उम्मीद हो गई होगी कि मेरी जान बच जायेगी और मैं यहाँ से जा सकूँगी।

लाली—बेशक, अब मुझे पूरी उम्मीद हो गई।

किशोरी—सन्दूकड़ी मिली ?

लाली—हाँ, यह सोचकर कि दिन को किसी तरह भी मौका न मिलेगा, उसी समय उसे मैं बूढ़ी दादी को भी दिखा आई। उन्होंने पहचान कर कहा कि बेशक यही सन्दूकड़ी है। उसी रंग की वहाँ कई सन्दूकड़ियाँ थी, मगर वह खास निशान जो बूढ़ी दादी ने बताया था, देखकर मैं उसी एक को ले आई !

किशोरी—मैं भी उस सन्दूकड़ी को देखा चाहती हूँ।

लाली—बेशक मैं तुम्हें अपने यहाँ ले चल कर वह सन्दूकड़ी दिखा सकती हूँ मगर उसके देखने से तुम्हें किसी तरह का फायदा नहीं होगा। बल्कि तुम्हारे वहाँ चलने से कुन्दन को खटका हो जायेगा और वह सोचेगी कि किशोरी लाली के यहाँ क्यों गई। उस सन्दूकड़ी में भी कोई ऐसी बात नहीं है जो देखने लायक हो। उसे मामूली एक छोटा-सा डिब्बा ही समझना चाहिए जिसमें कहीं ताली लगाने की जगह भी नहीं है और मजबूत भी इतनी है कि किसी तरह टूट नहीं सकती।

किशोरी—फिर वह क्यों कर खुल सकेगी और उसके अन्दर से वह चाबी क्यों कर निकलेगी जिसकी हम लोगों को जरूरत है ?

लाली—रेती से रेत कर उसमें सूराख किया जायेगा।

किशोरी—देर लगेगी !

लाली—हाँ, दो दिन में यह काम होगा, क्योंकि सिवाय रात के दिन को मौका

नहीं मिल सकता ।

किशोरी—मुझे तो एक घड़ी सौ-सौ वर्ष के समान बीतती है।

लाली—खैर, जहाँ इतने दिन बीते, वहाँ दो दिन और सही !

थोड़ी देर तक बातचीत होती रही । इसके बाद लाली उठकर अपने मकान में चली गई और मामूली कामों की फिक्र में लगी ।

इसके तीसरे दिन आधी रात के समय लाली अपने मकान से बाहर निकली और किशोरी के मकान में आई। वे लौंडियाँ, जो किशोरी के यहाँ पहरे पर मुकर्रर थीं, गहरी नीद में पड़ी खर्राटे ले रही थीं, मगर किशोरी की आँखों में नींद का नाम-निशान नहीं। वह पलंग पर लेटी दरवाजे की तरफ देख रही थी । उसी समय हाथ में एक छोटी-सी गठरी लिए लाली ने कमरे के अन्दर पैर रखा जिसे देखते ही किशोरी उठ खड़ी हुई, बड़ी मुहब्बत के साथ हाथ पकड़ लाली को अपने पास बैठाया ।

किशोरी—ओफ ! मेरे ये दो दिन बड़ी कठिनता से बीते हैं। दिन-रात डर लगा ही रहता था ।

लाली—क्यों ?

किशोरी—इसलिए कि कोई उस छत पर जाकर देख न ले कि किसी ने सेंध लगाई है।

लाली—उँह, कौन उस पर जाता है और कौन देखता है ! लो, अब देर करना मुनासिब नहीं ।

किशोरी—मैं तैयार हूँ, कुछ लेने की जरूरत तो नहीं है ?

लाली—जरूरत की सब चीजें मेरे पास हैं, तुम बस चली चलो ।

लाली और किशोरी वहाँ से रवाना हुईं और पेड़ों की आड़ में छिपती हुईं उस मकान के पिछवाड़े पहुँचीं जिसकी छत में लाली ने सेंध लगाई थी । कमन्द लगाकर दोनों ऊपर चढ़ी, फिर कमन्द खींच लिया और उसी कमन्द के सहारे सेंध की राह दोनों मकान के अन्दर उतर गईं । वहाँ की अजायबातों को देख किशोरी की अजब हालत हो गई, मगर तुरन्त ही उसका ध्यान दूसरी तरफ जा पड़ा । किशोरी और लाली जैसे ही उस मकान के अन्दर उतरीं, वैसे ही बाहर से किसीके ललकारने की आवाज आई, साथ ही फुर्ती से कई कमन्द लगा दस-पन्द्रह आदमी छत पर चढ़ आये और 'धरो-धरो ! जाने न पावे, जाने न पावे !" की आवाज आने लगी ।

12

कुंअर इन्द्रजीतसिंह तालाब के किनारे खड़े उस विचित्र इमारत और हसीन औरत की तरफ देख रहे हैं। उनका इरादा हुआ कि तैर कर उस मकान में चले जायें जो इस तालाब के बीचोंबीच में बना हुआ है, मगर उस नौजवान औरत ने उन्हें हाथ के

इशारे से मना किया, बल्कि वहाँ से भाग जाने के लिए कहा। उसका इशारा समझ ये रुक गये, मगर जी न माना, फिर तालाब में उतरे।

उस नाजनीन को विश्वास हो गया कि कुमार बिना यहाँ आए न मानेंगे, तब उसने इशारे से ठहरने के लिए कहा और यह भी कहा कि मैं किश्ती लेकर आती हूँ। उस औरत ने किश्ती खोली और उस पर सवार हो अजीब तरह से घुमाती-फिराती तालाब के पिछले कोने की तरफ ले गई और कुमार को भी उसी तरफ आने का इशारा किया। कुमार उस तरफ गये और खुशी-खुशी उस औरत के साथ किश्ती पर सवार हुए। वह किश्ती को उसी तरह घुमाती-फिराती मकान के पास ले गई। दोनों आदमी उतर कर अन्दर गये।

उस छोटे-से मकान की सजावट कुमार ने बहुत पसन्द की। वहाँ सभी चीजें जरूरत की मौजूद थीं। बीच का बड़ा कमरा अच्छी तरह से सजा हुआ था, बेशकीमती शीशे लगे हुए थे, काश्मीरी गलीचे, जिनमें तरह-तरह के फूल-बूटे बने हुए थे, छोटी-छोटी मगर ऊँची संगमरमर की चौकियों पर सजावट के सामान और गुलदस्ते लगाये हुए थे। गाने-बजाने का सामान भी मौजूद था, दीवारों पर की तस्वीरों को बनाने में मुसौवरों ने अच्छी कारीगरी खर्च की थी। उस कमरे की बगल में एक और छोटा-सा कमरा सजा हुआ था, जिसमें सोने के लिए एक मसहरी बिछी हुई थी। उसकी बगल में एक कोठरी नहाने की थी जिसकी जमीन सफेद और स्याह पत्थरों से बनी हुई थी। बीच में एक छोटा-सा हौज बना हुआ था जिसमें एक तरफ से तालाब का जल आता था और दूसरी तरफ से निकल जाता था। इसके अलावा और भी तीन-चार कोठरियाँ जरूरी कामों के लिए मौजूद थीं, मगर उस मकान में सिवाय उस एक औरत के और कोई दूसरी औरत न थी, न कोई नौकर या मजदूरनी ही नजर आती थी।

उस मकान को देख और उसमें सिवाय उस नौजवान नाजनीन के और किसी को न पा कुमार को बड़ा ताज्जुब हुआ। वह मकान इस योग्य था कि बिना चार-पाँच आदमियों के उसकी सफाई या वहाँ के सामान की दुरुस्ती हो नहीं सकती थी।

थके-माँदे और धूप खाये हुए कुँअर इन्द्रजीतसिंह को वह जगह बहुत ही भली मालूम हुई और उस हसीन औरत के अलौकिक रूप की छटा में ऐसे मोहित हुए कि पीछे की सुध बिल्कुल ही जाती रही। बड़े नाज और अन्दाज से उस औरत ने कुमार को कमरे में ले जाकर गद्दी पर बैठाया और आप उनके सामने बैठ गई।

कुमार—तुमने जो कुछ अहसान मुझ पर किया है, मैं किसी तरह उसका बदला नहीं चुका सकता।

औरत—ठीक है, मगर मैं उम्मीद करती हूँ कि आप कोई काम ऐसा भी न करेंगे जो मेरी बदनामी का सबब हो।

कुमार—नहीं-नहीं, मुझसे ऐसी उम्मीद कभी न करना। लेकिन क्या सबब है जो तुमने ऐसा कहा ?

औरत—इस मकान में, जहाँ मैं अकेली रहती हूँ, आपका इस तरह आना और देर तक रहना बेशक मेरी बदनामी का सबब होगा।

कुमार—(कुछ सोच कर) तुम इतनी खूबसूरत क्यों हुई ? अफसोस ! तुम्हारी एक-एक अदा मुझे अपनी तरफ खींचती है। (कुछ अटक कर) जो हो, मुझे अब यहाँ से चले ही जाना चाहिए। अगर ऐसा ही था तो मुझे किश्ती पर चढ़ा कर यहाँ क्यों लाई ?

औरत—मैंने तो पहले ही आपको चले जाने का इशारा किया मगर जब आप जल में तैर कर यहाँ आने लगे तो लाचार मुझे ऐसा करना पड़ा। मैं जान-बूझ कर उस आदमी को किसी तरह आफत में फँसा नहीं सकती हूँ जिसकी जान खुद एक जालिम ऐयार के हाथ से बचाई हो। आप यह न समझें कि कोई आदमी इस तालाब में तैर कर यहाँ तक आ सकता है, क्योंकि इस तालाब में चारों तरफ जाल फेंके हुए हैं। अगर कोई आदमी यहाँ तैर कर आने का इरादा करेगा तो बेशक जाल में फँस कर अपनी जान बर्बाद करेगा। यही सबब था कि मुझे आपके लिए किश्ती ले जानी पड़ी।

कुमार—बेशक, तब इसके लिए भी मैं धन्यवाद दूंगा। माफ करना, मैं यह नहीं जानता था कि मेरे यहाँ आने से तुम्हारा नुकसान होगा। अब मैं जाता हूँ, मगर कृपा करके अपना नाम तो बता दो जिसमें मुझे याद रहे कि फलाँ औरत ने बड़े वक्त पर मेरी मदद की थी।

औरत—(हँस कर) मैं अपना नाम नहीं किया चाहती और न इस धूप में आपको यहाँ से जाने के लिए कहती हूँ, बल्कि मैं उम्मीद करती हूँ कि आप मेरी मेह-मानी कबूल करेंगे।

कुमार—वाह-वाह ! कभी तो आप मुझे मेहमान बनाती हैं और कभी यहाँ से निकल जाने के लिए हुक्म लगाती हैं। आप लोग जो चाहें, करें।

औरत—(हँस कर) खैर, ये सब बातें पीछे होती रहेंगी। अब आप यहाँ से उठें और कुछ भोजन करें, क्योंकि मैं जानती हूँ कि आपने अभी तक कुछ भोजन नहीं किया।

कुमार—अभी तो स्नान-सन्ध्या भी नहीं की है। लेकिन मुझे ताज्जुब है कि यहाँ तुम्हारे पास कोई लौंडी दिखाई नहीं देती।

औरत—आप इसके लिए चिन्ता न करें। आपकी लौंडी मैं मौजूद हूँ। आप जरा बैठें, मैं सब सामान ठीक करके अभी आती हूँ।

इतना कह बिना कुमार की मर्जी पाये वह औरत वहाँ से उठी और बगल के एक कमरे में चली गई। उसके जाने के बाद कुमार कमरे में टहलने और एक-एक चीज को गौर से देखने लगे। यकायक एक गुलदस्ते के नीचे दबे हुए कागज के टुकड़े पर उनकी नजर पड़ी। मुनासिब न था कि उस पुर्जे को उठा कर पढ़ते, मगर लाचार थे। उस पुर्जे के कई अक्षर, जो गुलदस्ते के नीचे दबने से रह गये थे, साफ दिखाई पड़ते थे और उन्हीं अक्षरों ने कुमार को पुर्जा निकाल कर पढ़ने के लिए मजबूर किया। वे अक्षर ये थे—

"किशोरी"

लाचार कुमार ने उस पुरजे को निकाल कर पढ़ा, यह लिखा हुआ था—

"आपके कहे मुताबिक कुल कार्रवाई अच्छी तरह हो रही है। लाली और कुन्दन में खूब घातें चल रही हैं। किशोरी ने भी पूरा धोखा खाया। किशोरी का आशिक

भी यहाँ मौजूद हैं और उसे किशोरी से बहुत-कुछ उम्मीद है। मैंने भी इनाम पाने लायक काम किया है। इस समय लाली कुछ अजब ही रंग लाया चाहती है, खैर, दो-तीन दिन में खुलासा हाल लिखूंगी।

आपकी लौंडी—तारा"

कुमार ने उस पुरजे को झटपट पढ़ कर उसी तरह रख दिया और गद्दी पर आकर बैठ गये। सोच और तरद्दुद ने चारों तरफ से आकर उन्हें घेर लिया। इस पुरजे ने तो उनके दिल का भाव ही बदल दिया। इस समय उनकी सूरत देख कर उनका हाल कोई सच्चा दोस्त भी नहीं मालूम कर सकता था, हाँ, कुछ देर सोचने के बाद इतना तो कुमार ने लम्बी साँस के साथ खुल कर कहा, "खैर, कहाँ जाती है कम्बख्त! मैं बिना कुछ काम किये टलने वाला नहीं।"

इतने ही में वह औरत भी आ गई और बोली, "उठिये, सब सामान दुरुस्त है।" कुमार उसके साथ नहाने वाली कोठरी में गये जिसमें हौज बना हुआ था।

धोती-गमछा और पूजा का सब सामान वहाँ मौजूद था। कुमार ने स्नान और सन्ध्या किया। वह औरत एक चाँदी की रकाबी में कुछ मेवा और खोए की चीजें इनके सामने रख कर चली गई और दूसरी दफे पीने के लिए जल भी लाकर रख गई। उसी समय कुमार ने सुना कि बगल के कमरे में दो औरतें बातें कर रही हैं। उन्हें ताज्जुब हुआ कि ये दूसरी औरतें कहाँ से आईं! कुमार भोजन करके उठे, हाथ-मुँह धोकर कोठरी के बाहर निकला चाहते थे कि सामने का दरवाजा खुला और दो औरतें नजर पड़ीं, जिन्हें देखते ही कुमार चौंक पड़े और बोले—"हैं, ये दोनों यहाँ कहाँ से आ गईं!"

13

आधी रात के समय सुनसान मैदान में दो कमसिन औरतें आपस में कुछ बातें करती चली जा रही हैं। राह में छोटे-छोटे टीले पड़ते हैं जिन्हें तकलीफ के साथ लाँघने और दम फूलने पर कभी ठहर कर फिर चलने से मालूम होता है कि इन दोनों को इसी समय किसी खास जगह पर पहुँचने या किसी से मिलने की सख्त जरूरत है। हमारे पाठक इन दोनों औरतों को बखूबी पहचानते हैं, इस लिए इनकी सूरत-शक्ल के बारे में कुछ लिखने की जरूरत नहीं, क्योंकि इन दोनों में से एक तो किन्नरी है और दूसरी कमला।

किन्नरी—कमला, देखो, किस्मत का हेर-फेर इसे कहते हैं। एक हिसाब से गयाजी में हम लोग अपना काम पूरा कर चुके थे, मगर अफसोस!

कमला—जहाँ तक हो सका, तुमने किशोरी की मदद जी-जान से की। बेशक किशोरी जन्म-भर याद रखेगी और तुम्हें तो अपनी बहिन मानेगी। खैर, कोई चिन्ता नहीं, हम लोगों को हिम्मत न हारनी चाहिए और न किसी समय ईश्वर को भूलना

चाहिए। मुझे घड़ी-घड़ी बेचारे आनन्दसिंह याद आते हैं। तुम पर उनकी सच्ची मुहब्बत है, मगर तुम्हारा कुछ हाल न जानने से, न मालूम, उनके दिल में क्या-क्या बातें पैदा होंगी, हाँ, अगर वे जानते कि जिनको उनका दिल प्यार करता है वह फलाँ है तो बेशक वे खुश होते।

किन्नरी—(ऊँची साँस लेकर) जो ईश्वर की मर्जी!

कमला—देखो, वह उस पुराने मकान की दीवार दिखाई देने लगी।

किन्नरी—हाँ ठीक है, अब आ पहुँचे।

इतने ही में वे दोनों एक ऐसे टूटे-फूटे मकान के पास पहुँचीं जिसकी चौड़ी-चौड़ी दीवारें और बड़े-बड़े फाटक कहे देते थे कि किसी जमाने में यह इज्जत रखता होगा। चाहे इस समय यह इमारत कैसी ही खराब हालत में क्यों न हो, तो भी इसमें छोटी-छोटी कोठरियों के अलावा कई बड़े-बड़े दालान और कमरे अभी तक मौजूद हैं।

ये दोनों उस मकान के अन्दर चली गईं। बीच में चूने-मिट्टी-ईंटों का ढेर लगा हुआ था, जिसके बगल में घूमती हुई दोनों एक दालान में पहुँचीं। इस दालान में एक तरफ एक कोठरी थी जिसमें जाकर कमला ने मोमबत्ती जलाई और चारों तरफ देखने लगी। बगल में एक आलमारी दीवार के साथ जुड़ी हुई थी जिसमें पल्ला खींचने के लिए दो मुट्ठे लगे थे। कमला ने बत्ती किन्नरी के हाथ में देकर दोनों हाथों से दोनों मुट्ठों को तीन-चार दफे घुमाया, तुरन्त ही पल्ला खुल गया और भीतर एक छोटी-सी कोठरी नजर आई। दोनों उस कोठरी के अन्दर चली गईं और उन पल्लों को फिर बन्द कर लिया। उन पल्लों में भीतर की तरफ भी उसी तरह खोलने और बन्द करने के लिए मुट्ठे लगे हुए थे।

इस कोठरी में तहखाना था जिसमें उतर जाने के लिए छोटी-छोटी सीढ़ियाँ बनी हुई थीं। वे दोनों नीचे उतर गईं और वहाँ पर एक आदमी को बैठे देखा जिसके सामने मोमबत्ती जल रही थी और वह कुछ लिख रहा था।

इस आदमी की उम्र लगभग साठ वर्ष की होगी। सिर और मूँछों के बाल आधे से ज्यादा सफेद हो रहे थे, तो भी उसके बदन में किसी तरह की कमजोरी नहीं मालूम होती थी। उसके हाथ-पैर गठीले और मजबूत थे तथा चौड़ी छाती उसकी बहादुरी को जाहिर कर रही थी। चाहे उसका रंग साँवला क्यों न हो, मगर चेहरा खूबसूरत और रोबीला था। बड़ी-बड़ी आँखों में जवानी की चमक मौजूद थी, चुस्त मिर्जई उसके बदन पर बहुत भली मालूम होती थी। सिर नंगा था मगर पास ही जमीन पर एक सफेद मुँड़ासा रखा हुआ था, जिसके देखने से मालूम होता था कि गर्मी मालूम होने पर उसने उतारकर रख दिया है। उसके बायें हाथ में पंखा था, जिसके जरिये वह गर्मी दूर कर रहा था, मगर अभी तक पसीने की नमी बदन में मालूम होती थी।

एक तरफ ठीकरे में थोड़ी-सी आग थी, जिसमें कोई खुशबूदार चीज जल रही थी जिससे वह तहखाना अच्छी तरह सुगन्धित हो रहा था। कमला और किन्नरी के पैर की आहट पा वह पहले ही से सीढ़ियों की तरफ ध्यान लगाये था, और इन दोनों को देखते ही उसने कहा, "तुम दोनों आ गईं?"

कमला—जी हाँ !

आदमी—(किन्नरी की तरफ इशारा करके) इन्हीं का नाम कामिनी है ?

कमला—जी हाँ।

आदमी—कामिनी ! आओ बेटी, तुम मेरे पास बैठो। मैं जिस तरह कमला को समझता हूँ, उसी तरह तुम्हें भी मानता हूँ।

कामिनी—बेशक कमला की तरह मैं भी आपको अपना सगा चाचा मानती हूँ।

आदमी—तुम किसी तरह की चिन्ता मत करो। जहाँ तक होगा, मैं तुम्हारी मदद करूँगा। (कमला की तरफ देखकर) तुझे कुछ रोहतासगढ़ की खबर भी मालूम है ?

कमला—कल मैं वहाँ गई थी, मगर अच्छी तरह मालूम न कर सकी। आपसे यहाँ मिलने का वादा किया था, इसलिए जल्दी लौट आई।

आदमी—अभी पहर-भर हुआ, मैं खुद रोहतासगढ़ से चला आता हूँ।

कमला—तो बेशक आपको बहुत-कुछ हाल वहाँ का मिला होगा।

आदमी—मुझसे ज्यादा वहाँ का हाल कोई नहीं मालूम कर सकता। पच्चीस वर्ष तक ईमानदारी और नेकनामी के साथ वहाँ के राजा की नौकरी कर चुका हूँ। चाहे आज दिग्विजयसिंह हमारे दुश्मन हो गये हैं, फिर भी मैं कोई काम ऐसा न करूँगा जिससे उस राज्य का नुकसान हो। हाँ, तुम्हारे सबब से किशोरी की मदद जरूर करूँगा।

कमला—दिग्विजयसिंह नाहक ही आपसे रंज हो गये।

आदमी—नहीं-नहीं, उन्होंने अनर्थ नहीं किया। जब वे किशोरी को जबर्दस्ती अपने यहाँ रखा चाहते हैं और जानते हैं कि शेरसिंह ऐयार की भतीजी कमला किशोरी के यहाँ नौकर लगी है और ऐयारी के फन में तेज है। वह किशोरी को छुड़ाने के लिए दाँव-घात करेगी, तो उन्हें मुझसे परहेज करना बहुत मुनासिब था, चाहे मैं कैसा ही खैरख्वाह और नेक क्यों न समझा जाऊँ। उन्होंने मुझे कैद करने का इरादा बेजा नहीं किया। हाय ! एक वह जमाना था कि रणधीरसिंह (किशोरी का नाना) और दिग्विजयसिंह में दोस्ती थी, मैं दिग्विजयसिंह के यहाँ नौकर था और मेरा छोटा भाई अर्थात् तुम्हारा बाप (ईश्वर उसे वैकुण्ठ दे) रणधीरसिंह के यहाँ रहता था। आज देखो, कितना उलट-फेर हो गया है। मैं बेकसूर कैद होने के डर से भाग तो आया, मगर लोग जरूर कहेंगे कि शेरसिंह ने धोखा दिया।

कमला—जब आप दिल से रोहतासगढ़ की बुराई नहीं करते, तो लोगों के कहने से क्या होता है, वे लोग आपकी बुराई क्यों कर दिखा सकते हैं ?

शेरसिंह—हाँ ठीक है, खैर, इन बातों को जाने दो, हाँ, कुन्दन बेचारी को लाली ने खूब ही छकाया, अगर मैं लाली का एक भेद न जानता होता और कुन्दन को न कह देता तो लाली कुन्दन को जरूर बर्बाद कर देती। कुन्दन ने भी भूल की, अगर वह अपना सच्चा हाल लाली से कह देती तो बेशक दोनों में दोस्ती हो जाती।

कमला—कुँअर इन्द्रजीतसिंह का भी कुछ हाल मालूम हुआ ?

शेरसिंह—हाँ मालूम है, उन्हें उसी चुड़ैल ने फँसा रक्खा है जो अजायबघर में रहती है।

कमला—कौन-सा अजायबघर ?

शेरसिंह—वही जो तालाब के बीच में वना है और जिसे जड़-बुनियाद से खोद कर फेंक देने का मैंने इरादा किया है, यहाँ से थोड़ी ही दूर तो है।

कमला—जी हाँ, मालूम हुआ, उसके बारे में बड़ी-बड़ी विचित्र बातें सुनने में आती हैं।

शेरसिंह—बेशक वहाँ की सभी बातें ताज्जुब से भरी हुई हैं। अफसोस, न मालूम कितने खूबसूरत नौजवान बेचारे वहाँ बेदर्दी के साथ मारे गये होंगे !

इतने ही में छत के ऊपर किसी के पैरों की आहट मालूम हुई। तीनों का ध्यान सीढ़ियों पर गया।

कमला—कोई आता है।

शेरसिंह—हमें तो यहाँ किसी के आने की उम्मीद न थी, जरा होशियार हो जाओ।

कमला—मैं होशियार हूँ, देखिए, वह आया !

एक लम्बे कद का आदमी सीढ़ी से नीचे उतरा और शेरसिंह के सामने आकर खड़ा हो गया। उसकी उम्र चाहे जो भी हो, मगर बदन की कमजोरी, दुबलेपन और चेहरे की उदासी ने उसे पचास वर्षों से भी ज्यादा उम्र का बना रक्खा था। उसके खूबसूरत चेहरे पर उदासी और रंज के निशान पाये जाते थे, बड़ी-बड़ी आँखों में आँसुओं की तरी साफ मालूम होती थी, उसकी हसरत-भरी निगाहें उसके दिल की हालत दिखा रही थीं और कह रही थीं कि रंज-गम-फिक्र-तरद्दुद और नाउम्मीदी ने उसके बदन में खून और मांस का नाम नहीं छोड़ा, केवल हड्डी ही बच गई है। उसके कपड़े भी बहुत पुराने और फटे हुए थे।

इस आदमी की सूरत से भलमनसी और सीधापन झलकता था, मगर शेरसिंह उसकी सूरत देखते ही काँप गया। खौफ और ताज्जुब ने उसका गला दबा दिया। एकदम ऐसा घबरा गया जैसे कोई खूनी जल्लाद की सूरत देखकर घबरा जाता है। शेरसिंह ने उसकी तरफ देख कर कहा, "अहा हा···आप···हैं ! आई···ए···!" मगर ये शब्द घबराहट के मारे बिल्कुल ही उखड़े-पुखड़े शेरसिंह के मुँह से निकले।

उस आदमी ने कमला की तरफ इशारा करके कहा, "क्या ये लड़की ···"

शेरसिंह—हाँ···आप···(कमला और कामिनी की तरफ देख कर) तुम दोनों जरा ऊपर चली जाओ। ये बड़े नेक आदमी हैं, मुझसे मिलने आये हैं, मैं इनसे कुछ बातें किया चाहता हूँ।

कमला और कामिनी दोनों तहखाने से निकल कर ऊपर चली आईं। उस आदमी के आने और अपने चाचा को विचित्र अवस्था में देखने से कमला घबड़ा गई। जी में तरह-तरह की बातें पैदा होने लगीं। ऐसे कमजोर, लाचार और गरीब आदमी को देख कर उसका ऐयारी के फन में बड़ा ही तेज और शेरदिल चाचा इस तरह क्यों

घबरा गया और इतना क्यों डरा, वह इसी सोच में परेशान थी। बेचारी कामिनी भी हैरान और डरी हुई थी यहाँ तक कि घण्टा-भर बीत जाने पर भी उन दोनों में कोई बातचीत न हुई। घण्टे भर के बाद वह आदमी तहखाने से निकल कर ऊपर चला आया और कामिनी की तरफ देख कर बोला—"अब तुम लोग नीचे जाओ, मैं जाता हूँ।" इतना कहता हुआ उसी तरह किवाड़ खोलकर चला गया, जिस तरह कामिनी को साथ लिये हुए कमला इस मकान में आई थी।

कमला और कामिनी नीचे तहखाने में जा शेरसिंह के सामने बैठ गईं। शेरसिंह के चेहरे से अभी तक घबराहट और परेशानी गई नहीं थी। बड़ी मुश्कल से थोड़ी देर में उसने होश-हवास दुरुस्त किये और कमला की तरफ देख कर कहा—

शेरसिंह—अच्छा; अब हम लोगों को क्या करना चाहिए?

कमला—जो हुक्म हो सो किया जाय। यह आदमी कौन था जिसे देख आप···?

शेरसिंह—था एक आदमी, उसका हाल जानने की कोशिश न करो और न उसका खयाल ही करो, बल्कि उसे बिल्कुल ही भूल जाओ।

उस आदमी के बारे में कमला बहुत-कुछ जानना चाहती थी, मगर अपने चाचा के मुँह से साफ जवाब पाकर दम न मार सकी और दिल की दिल ही में रखने पर लाचार हुई।

शेरसिंह—कमला, तू रोहतासगढ़ जा और दो-तीन दिन में लौटकर वहाँ का जो कुछ हाल हो, मुझसे कह। किशोरी से मिलकर उसे ढाढ़स देना और कहना कि घबराये नहीं। उसी रास्ते से किले के अन्दर बल्कि उस बाग में, जिसमें किशोरी रहती है, चली आना, जिस राह का हाल मैंने तुझसे कहा था। उस राह से आना-जाना कभी किसी को मालूम न होगा।

कमला—बहुत अच्छा, मगर कामिनी के लिए क्या हुक्म होता है?

शेरसिंह—मैं इसे ले जाता हूँ, अपने एक दोस्त के सुपुर्द कर दूँगा। वहाँ यह बड़े आराम से रहेगी। जब सब तरफ से फसाद मिट जायगा, मैं इसे ले आऊँगा, तब यह भी अपनी मुराद को पहुँच जायगी।

कमला—जो मर्जी!

तीनों आदमी तहखाने से बाहर निकले और जैसा ऊपर लिखा जा चुका है उसी तरह कोठरियों और दालानों में से होते हुए मकान के बाहर निकल आये।

शेरसिंह—कमला, अब तू जा और कामिनी की तरफ से बेफिक्र रह। मुझसे मिलने के लिए यही ठिकाना मुनासिब है।

कमला—अच्छा, मैं जाती हूँ, मगर यह तो कह दीजिये कि उस आदमी से मुझे कहाँ तक होशियार रहना चाहिए जो आपसे मिलने आया था?

शेरसिंह—(कड़ी आवाज में) एक दफे कह तो दिया कि उसका ध्यान भुला दे। उससे होशियार रहने की जरूरत नहीं और न वह तुझे कभी दिखाई देगा।

14

रोहतासगढ़ किले के चारों तरफ घना जंगल है जिसमें साखू, शीशम, तेंद, आसन और सलई इत्यादि के बड़े-बड़े पेड़ों की घनी छाया से एक तरह का अंधकार-सा हो रहा है। रात की तो बात ही दूसरी है, वहाँ दिन को भी रास्ते या पगडण्डी का पता लगाना मुश्किल था, क्योंकि सूर्य की सुनहरी किरणों को पत्तों में से छन कर जमीन तक पहुँचने का बहुत कम मौका मिलता था। कहीं-कहीं छोटे-छोटे पेड़ों की बदौलत जंगल इतना घना हो रहा था कि उसमें भूले आदमियों को मुश्किल से ही छुटकारा मिलता था। ऐसे मौके पर उसमें हजारों आदमी इस तरह छिप सकते थे कि हजार सिर पटकने और खोजने पर भी उनका पता लगाना असम्भव था। दिन को तो इस जंगल में अन्धकार रहता ही था मगर हम रात का हाल लिखते हैं जिस समय उसकी अँधेरी और वहाँ के सन्नाटे का आलम भूले-भटके मुसाफिरों को मौत का समाचार देता था और वहाँ की जमीन के लिए अमावस्या और पूर्णिमा की रात एक समान थी।

किले के दाहिनी तरफ वाले जंगल में आधी रात के समय हम तीन आदमियों को, जो स्याह चोगों में और नकाबों में अपने को छिपाये हुए हैं, घूमते देख रहे हैं। न मालूम ये किसकी खोज और किस जमीन की तलाश में हैरान हो रहे हैं! इनमें से एक कुँअर आनन्दसिंह, दूसरे भैरोंसिंह और तीसरे तारासिंह हैं। ये तीनों आदमी देर तक घूमने के बाद छोटी-सी चारदीवारी के पास पहुँचे जिसके चारों तरफ की दीवार पाँच हाथ से ज्यादा ऊँची न थी और वहाँ के पेड़ भी कम घने और गुंजान थे, कहीं-कहीं चन्द्रमा की रोशनी भी जमीन पर पड़ती थी।

आनन्दसिंह—शायद यही चारदीवारी है?

भैरोंसिंह—बेशक यही है, देखिए, फाटक पर हड्डियों का ढेर लगा हुआ है।

तारासिंह—खैर, भीतर चलिए, देखा जायगा।

भैरोंसिंह—जरा ठहरिये! पत्तों की खड़खड़ाहट से मालूम होता है कि कोई आदमी इसी तरफ आ रहा है!

आनन्दसिंह—(कान लगाकर) हाँ, ठीक तो है। हम लोगों को छिपकर देखना चाहिए कि वह कौन है और इधर क्यों आता है।

उस आने वाले की तरफ ध्यान लगाये हुए तीनों आदमी पेड़ों की आड़ में छिप रहे और थोड़ी ही देर में सुफेद कपड़े पहने एक औरत को आते हुए उन लोगों ने देखा। वह औरत पहले तो फाटक पर रुकी, तब कान लगाकर चारों तरफ की आहट लेने के बाद फाटक के अन्दर घुस गई। भैरोंसिंह ने आनन्दसिंह से कहा, "आप दोनों इसी जगह ठहरिये, मैं इस औरत के पीछे जाकर देखता हूँ कि यह कहाँ जाती है।" इस बात को दोनों ने मंजूर किया और भैरोंसिंह छिपते हुए उस औरत के पीछे रवाना हुए।

ऐसे घने जंगल में भी उस चारदीवारी के अन्दर पेड़, झाड़ या जंगल का न

होना ताज्जुब की बात थी। भैरोंसिंह ने वहाँ की जमीन बहुत साफ-सुथरी पाई, हाँ, छोटे जंगली बेर के दस-बीस पेड़ वहाँ जरूर थे जो किसी तरह का नुकसान न पहुँचा सकते थे और न उनकी आड़ में कोई आदमी छिप ही सकता था, मगर मरे हुए जानवरों और उनकी हड्डियों की बहुतायत से वह जगह बड़ी ही भयानक हो रही थी। उस चारदीवारी के अन्दर बहुत-सी कब्रें बनी हुई थीं जिनमें कई कच्ची तथा कई ईंट, चूने और पत्थर की भी थीं और बाग में एक सबसे बड़ी कब्र संगमर्मर की बनी हुई थी।

भैरोंसिंह ने फाटक के अन्दर पैर रखते ही उस औरत को, जिसके पीछे गए थे, बीच वाली संगमर्मर की बड़ी कब्र पर खड़े और चारों तरफ देखते पाया, मगर थोड़ी देर ही में वह देखते-देखते कहीं गायब हो गई। भैरोंसिंह ने उस कब्र के पास जाकर उसे ढूँढ़ा मगर पता न लगा, दूसरी कब्रों के चारों तरफ और इधर-उधर भी खोजा, मगर कोई निशान न मिला। लाचार वे आनन्दसिंह और तारासिंह के पास लौट आये और बोले—

भैरों—वह औरत वहीं चली गई जहाँ हम लोग जाया चाहते हैं।

आनन्द—हाँ!

भैरों—जी हाँ।

आनन्द—फिर अब क्या राय है?

भैरों—उसे जाने दीजिये, चलिये, हम लोग भी वहीं चलें। अगर वह रास्ते में मिल भी जायगी तो क्या हर्ज है? वह एक औरत हम लोगों का कुछ नुकसान नहीं कर सकती।

ये तीनों आदमीं उस चारदीवारी के अन्दर गए और बीच वाली संगमर्मर की बड़ी कब्र पर पहुँच कर खड़े हो गये। भैरोंसिंह ने उस कब्र की जमीन को अच्छी तरह टटोलना शुरू किया। थोड़ी ही देर में एक खटके की आवाज आई और एक छोटा सा पत्थर का टुकड़ा, जो शायद कमानी के जोर पर लगा हुआ था, दरवाजे की तरह खुल-कर अलग हो गया। ये तीनों आदमी उसके अन्दर घुसे और उस पत्थर के टुकड़ें को उसी तरह बन्द कर आगे बढ़े। अब ये तीनों आदमी एक सुरंग में थे जो बहुत ही तंग और लम्बी थी। भैरोंसिंह ने अपने बटुए में से एक मोमबत्ती निकाल कर जलाई और चारों तरफ अच्छी तरह निगाह करने के बाद आगे बढ़े। थोड़ी ही देर में यह सुरंग खत्म हो गई और ये तीनों एक भारी दालान में पहुँचे। इस दालान की छत बहुत ऊँची थी और इसमें कड़ियों के सहारे कई जंजीरें लटक रही थीं। इस दालान के दूसरी तरफ एक और दरवाजा था जिसमें से होकर ये तीनों एक कोठरी में पहुँचे। इस कोठरी के नीचे एक तहखाना था जिसमें उतरने के लिए संगमर्मर की सीढ़ियाँ बनी हुई थीं। ये तीनों नीचे उतर गये। अब एक बड़े भारी घण्टे के बजने की आवाज इन तीनों के कानों में पड़ी जिसे सुन कर ये कुछ देर के लिए रुक गये। मालूम हुआ कि इस तहखाने वाली कोठरी की बगल में कोई और मकान है जिसमें घण्टा बज रहा है। इन तीनों को वहाँ और भी कई आदमियों के मौजूद होने का गुमान हुआ।

इस तहखाने में भी दूसरी तरफ निकल जाने के लिए एक दरवाजा था जिसके पास पहुँच कर भैरोंसिंह ने मोमबत्ती बुझा दी और धीरे से दरवाजा खोल जब उस तरफ झाँका तो एक बड़ी संगीन बारहदरी नजर पड़ी जिसके खम्भे संगमर्मर के थे। इस बारहदरी में दो मशाल जल रहे थे जिनकी रोशनी से वहाँ की हरएक चीज साफ मालूम होती थी और इसी से वहाँ दस-पन्द्रह आदमी भी दिखाई पड़े जिनमें रस्सियों से मुश्कें बँधी हुईं तीन औरतें भी थीं। भैरोंसिंह ने पहचाना कि इन तीनों औरतों में एक किशोरी है जिसके दोनों हाथ पीठ की तरफ कस कर बँधे हुए हैं और वह नीचे सिर किए रो रही है। उसके पास वाली दोनों औरतों की भी वैसी ही दशा थी, मगर उन्हें भैरोंसिंह, आनन्दसिंह या तारासिंह नहीं पहचानते थे। उन तीनों के पीछे नंगी तलवार लिए तीन आदमी भी खड़े थे जिनकी सूरत और पोशाक से मालूम होता था कि वे जल्लाद हैं।

उस बारहदरी के बीचोंबीच चाँदी के सिंहासन पर स्याह पत्थर की एक इतनी बड़ी मूरत बैठी हुई थी कि आदमी पास में खड़ा होकर भी उस बैठी हुई मूरत के सिर पर हाथ नहीं रख सकता था। मूरत की सूरत-शकल के बारे में इतना ही लिखना काफी है कि उसे आप कोई राक्षस समझें, जिसकी तरफ आँख उठा कर देखने से डर मालूम होता था।

भैरोंसिंह, तारासिंह और आनन्दसिंह उसी जगह खड़े होकर देखने लगे कि उस दालान में क्या हो रहा है। अब घंटे की आवाज बड़े जोर से आ रही थी मगर यह नहीं मालूम होता था कि वह कहाँ बज रहा है।

उन तीनों औरतों को, जिनमें किशोरी भी थी, छह आदमियों ने अच्छी तरह मजबूती से पकड़ा और बारी-बारी से उस स्याह मूरत के पास ले गए जहाँ उसके पैरों पर जबर्दस्ती सिर रखवा कर पीछे हटे और फिर उसी के सामने खड़ा कर दिया।

इसके बाद दो आदमी एक औरत को, जिसे हमारे तीनों आदमियों में से कोई भी नहीं पहचानता था, लेकर आगे बढ़े। उस औरत के पीछे जो जल्लाद नंगी तलवार लिऐ खड़ा था, वह भी आगे बढ़ा। दोनों आदमियों ने उस औरत को स्याह मूरत के ऊपर इस जोर से ढकेल दिया कि बेचारी बेतहाशा गिर पड़ी, साथ ही जल्लाद ने एक हाथ तलवार का ऐसा मारा कि सिर कटकर दूर जा पड़ा और तड़पने लगा। इस हाल को देख वे दोनों औरतें, जिनमें बेचारी किशोरी भी थी; बड़े जोर से चिल्लाईं और बेहोश होकर जमीन पर गिर पड़ीं।

इस कैफियत को देख कर हमारे दोनों ऐयारों और कुँअर आनन्दसिंह की अजब हालत हो गई; गुस्से के मारे थर-थर काँपने लगे। थोड़ी देर बाद उन लोगों ने किशोरी को उठाया और उस मूरत के पास ले चले। उसके साथ ही दूसरा जल्लाद भी आगे बढ़ा। अब ये तीनों किसी तरह बर्दाश्त न कर सके। कुँअर आनन्दसिंह ने दोनों ऐयारों को ललकारा—"मारो इन जालिमों को ! ये थोड़े से आदमी हैं क्या चीज !"

तीनों आदमी खंजर निकाल आगे बढ़ना ही चाहते थे कि पीछे से कई आदमियों ने आकर इन लोगों को भी पकड़ लिया। और "यही हैं, यही हैं, पहले इन्हीं को बलि देना चाहिए !" कहकर चिल्लाने लगे।

चन्द्रकान्ता सन्तति

चौथा भाग

1

अब हम अपने किस्से को फिर उस जगह से शुरू करते हैं, जब रोहतासगढ़ किले के अन्दर लाली को साथ लेकर किशोरी सेंध की राह उस अजायबघर में घुसी जिसका ताला हमेशा बन्द रहता था और दरवाजे पर बराबर पहरा पड़ा करता था। हम पहले लिख आये हैं कि जब लाली और किशोरी उस मकान के अन्दर घुसीं, उसी समय कई आदमी उस छत पर चढ़ गये और "धरो, पकड़ो, जाने न पावे !" की आवाज लगाने लगे। लाली और किशोरी ने भी यह आवाज सुनी। किशोरी तो डरी, मगर लाली ने उसी समय उसे धीरज दिया और कहा, "तुम डरो मत, ये लोग हमारा कुछ भी नहीं बिगाड़ सकते।"

लाली और किशोरी छत की राह जब नीचे उतरीं तो एक छोटी-सी कोठरी में पहुँची जो बिल्कुल खाली थी। उसके तीन तरफ दीवार में तीन दरवाजे थे, एक दरवाजा तो सदर का था जिसके आगे बाहर की तरफ पहरा पड़ा करता था, दूसरा दरवाजा खुला हुआ था और मालूम होता था किसी दालान या कमरे में जाने का रास्ता है। लाली ने जल्दी में केवल इतना ही कहा कि ताली लेने के लिए इसी राह से एक मकान में मैं गई थी और तीसरी तरफ एक छोटा-सा दरवाजा था जिसका ताला किवाड़ के पल्ले ही में जड़ा हुआ था। लाली ने वही ताली जो इस अजायबघर में से ले गई थी, लगाकर उस दरवाजे को खोला, दोनों उसके अन्दर घुसीं। लाली ने फिर उसी ताली से मजबूत दरवाजे को अन्दर की तरफ से बन्द कर लिया। ताला इस ढंग से जड़ा हुआ था कि वही ताली बाहर और भीतर दोनों तरफ लग सकती थी।[1] लाली ने यह काम बड़ी फुर्ती से किया, यहाँ तक कि उसके अन्दर चले जाने के बाद तब टूटी हुई छत की राह वे लोग, जो लाली और किशोरी को पकड़ने के लिए आ रहे थे, नीचे इस कोठरी में उतर सके। भीतर से ताला बन्द करके लाली ने कहा, "अब हम लोग निश्चिन्त हुए। डर केवल इतना ही है कि किसी दूसरी राह से कोई आकर हम लोगों को तंग न करे, पर

---

1. इस मकान में जहाँ-जहाँ लाली ने ताला खोला, इसी ताली और इसी ढंग से खोला।

जहाँ तक मैं जानती हूँ और जो कुछ मैंने सुना है, उससे तो विश्वास है कि इस अजायबघर में आने के लिए और कोई राह नहीं है।"

लाली और किशोरी अब एक ऐसे घर में पहुँचीं जिसकी छत ही बहुत नीची थी, यहाँ तक कि हाथ उठाने से छत छूने में आती थी। यह घर बिल्कुल अँधेरा था। लाली ने अपनी गठरी खोली और सामान निकाल कर मोमबत्ती जलाई। मालूम हुआ कि यह एक कोठरी है जिसके चारों तरफ की दीवार पत्थर की बनी हुई तथा बहुत ही चिकनी और मजबूत है। लाली खोजने लगी कि इस मकान से किसी दूसरे मकान में जाने के लिए रास्ता या दरवाजा है या नहीं।

जमीन में एक दरवाजा बना हुआ दिखा जिसे लाली ने खोला और हाथ में मोमबत्ती लिये नीचे उत्तरी। लगभग बीस-पचीस सीढ़ियाँ उतरकर दोनों एक सुरंग में पहुँचीं जो बहुत दूर तक चली गई थी। ये दोनों लगभग तीन सौ कदम ही गई होंगी कि यह आवाज दोनों के कानों में पहुँची—

"हाय, एक ही दफे मार डाल ! क्यों दुख देता है !"

यह आवाज सुनकर किशोरी काँप गई और उसने रुककर लाली से पूछा, "बहिन, यह आवाज कैसी है ? आवाज बारीक है और किसी औरत की मालूम होती है !"

लाली—मुझे मालूम नहीं कि यह आवाज कैसी है और न इसके बारे में बूढ़ी माँजी ने मुझे कुछ कहा ही था।

किशोरी—मालूम पड़ता है कि किसी औरत को कोई दुख दे रहा है। कहीं ऐसा न हो कि वह हम लोगों को भी सतावे। हम दोनों का हाथ खाली है, एक छुरा तक पास में नहीं।

लाली—मैं अपने साथ दो छुरे लाई हूँ, एक अपने वास्ते और एक तेरे वास्ते। (कमर से एक छुरा निकाल कर और किशोरी के हाथ में देकर) ले, एक तू रख। मुझे खूब याद है एक दफे तूने कहा था कि मैं यहाँ रहने की बनिस्बत मौत पसन्द करती हूँ, फिर क्यों डरती है ? देख, मैं तेरे साथ जान देने को तैयार हूँ।

किशोरी—बेशक मैंने ऐसा कहा था और अब भी कहती हूँ। चलो बढ़ो, अब कोई हर्ज नहीं, छुरा हाथ में है और ईश्वर मालिक है।

दोनों फिर आगे बढ़ीं। बीस-पचीस कदम और आगे जाकर सुरंग खत्म हुई और दोनों एक दालान में पहुँचीं। यहाँ एक चिराग जल रहा था, कम-से-कम सेर भर तेल उसमें होगा, रोशनी चारों तरफ फैली हुई थी और यहाँ की हरएक चीज साफ दिखाई दे रही थी। इस दालान के बीचोंबीच एक खम्भा था और उसके साथ एक हसीन नौजवान और खूबसूरत औरत, जिसकी उम्र बीस वर्ष से ज्यादा न होगी, बँधी हुई थी। उसके पास ही छोटी सी पत्थर की चौकी पर साफ और हलकी पोशाक पहने एक बुड्ढा बैठा हुआ छुरे से कोई चीज काट रहा था। इसका मुंह उसी तरफ था जिधर लाली और किशोरी खड़ी-खड़ी वहाँ की कैफियत देख रही थीं। उस बूढ़े के सामने भी एक चिराग जल रहा था जिससे उसकी सूरत साफ-साफ मालूम होती थी। उस बुड्ढे की उम्र लगभग सत्तर वर्ष के होगी, उसकी सफेद दाढ़ी नाभि तक पहुँचती थी और दाढ़ी तथा मूंछों

ने उसके चेहरे का ज्यादा भाग छिपा रक्खा था ।

उस दालान की ऐसी अवस्था देखकर किशोरी और लाली दोनों हिचकीं और उन्होंने चाहा कि पीछे की तरफ मुड़ चलें, मगर पीछे फिरकर कहाँ जाएँ ? इस विचार ने उनके पैर उसी जगह जमा दिये । उन दोनों के पैरों की आहट इस बुड्ढे ने भी पाई, सिर उठाकर उन दोनों की तरफ देखा और कहा—"वाह-वाह, लाली और किशोरी भी आ गईं ! आओ-आओ, मैं बहुत देर से तुम्हारी राह देख रहा था !"

2

कंचनसिंह के मारे जाने और कुँवर इन्द्रजीतसिंह के गायब हो जाने से लश्कर में बड़ी हलचल मच गई । पता लगाने के लिए चारों तरफ जासूस भेजे गये । ऐयार लोग भी इधर-उधर फैल गये और फसाद मिटाने के लिए दिलोजान से कोशिश करने लगे । राजा वीरेन्द्रसिंह से इजाजत लेकर तेजसिंह भी रवाना हुए और भेष बदल कर रोहतास-गढ़ किले के अन्दर चले गये । किले के सदर दरवाजे पर पहरे का पूरा इन्तजाम था, मगर तेजसिंह की फकीरी सूरत पर किसी ने शक न किया ।

साधु की सूरत बने हुए तेजसिंह सात दिन तक रोहतासगढ़ किले के अन्दर घूमते रहे । इस बीच में उन्होंने हरएक मोहल्ला, बाजार, गली, रास्ता, देवालय, धर्मशाला इत्यादि को अच्छी तरह देख और समझ लिया । कई बार दरबार में भी जाकर राजा दिग्विजयसिंह और उनके दीवान तथा ऐयारों की चाल और बातचीत के ढंग पर ध्यान दिया और यह भी मालूम किया कि राजा दिग्विजयसिंह किस-किसको चाहता है, किस-किसकी खातिर करता है, और किस-किसको अपना विश्वासपात्र समझता है । इन सात दिनों के बीच में तेजसिंह को कई बार चोबदार और औरत बनने की भी जरूरत पड़ी और अच्छे-अच्छे घरों में घुसकर वहाँ की कैफियत और हालत को भी देख-सुन आये । एक दफे तेजसिंह उस शिवालय में भी गये जिसमें भैरोंसिंह और बद्रीनाथ ने ऐयारी की थी या जहाँ से कुंअर कल्याणसिंह को पकड़ ले गये थे ।

तेजसिंह ने उस शिवालय के रहने वालों तथा पुजारियों की अजब हालत देखी । जब से कुँअर कल्याणसिंह गिरफ्तार हुए थे, तब से उन लोगों के दिल में ऐसा डर समा गया था कि वे बात-बात में चौंकते और डरते थे । रात में एक पत्ती के खड़कने से भी किसी ऐयार के आने का गुमान होता था, साधु-ब्राह्मण की सूरत से उन्हें घृणा हो गई थी, किसी संन्यासी, ब्राह्मण या साधु को देखा और चट बोल उठे कि ऐयार है । किसी मजदूर को भी अगर मन्दिर के आगे खड़ा पाते तो चट उसे ऐयार समझ लेते और जब तक गर्दन में हाथ दे हाते के बाहर न कर देते, चैन न लेते । इत्तिफाक से आज तेजसिंह भी साधु की सूरत बने शिवालय में जा डटे । पुजारियों ने देखते ही शोर करना शुरू किया कि 'ऐयार है, ऐयार है, धरो, जाने न पाए !' बेचारे तेजसिंह बड़ा घबराये और ताज्जुब

करने लगे कि इन लोगों को कैसे मालूम हो गया कि हम ऐयार हैं क्योंकि तेजसिंह को इस बात का गुमान भी न था कि यहाँ के रहने वाले कुत्ते-बिल्ली को भी ऐयार समझते हैं, मगर यकायक वहाँ से भाग निकलना भी मुनासिब न समझ कर रुके और बोले—

तेजसिंह—तुम कैसे जानते हो कि हम ऐयार हैं ?

एक पुजारी—अजी, हम खूब जानते हैं कि सिवाय ऐयार के कोई दूसरा हमारे सामने आ नहीं सकता है ! अजी, तुम्हीं लोग तो हमारे कुँअर साहब को पकड़ ले गये हो या कोई दूसरा ? बस-बस, यहाँ से चले जाओ, नहीं तो कान पकड़ के खा जायेंगे।

"बस-बस, यहाँ से चले जाओ" इत्यादि सुनते ही तेजसिंह समझ गये कि ये लोग बेवकूफ हैं। अगर हमारे ऐयार होने का इन्हें पूरा विश्वास होता तो ये लोग 'चले जाओ' कभी न कहते, बल्कि हमें गिरफ्तार करने का उद्योग करते। बस, इन्हें भैरोंसिंह और बद्रीनाथ डरा गये हैं और कुछ नहीं।

तेजसिंह खड़े सोच ही रहे थे कि इतने में एक लँगड़ा भिखमंगा हाथ में ठीकरा लिये लाठी टेकता वहाँ आ पहुँचा और पुजारीजी की जय-जयकार मनाने लगा। सूरत देखते ही एक पुजारी चिल्ला उठा और बोला, "लो देखो, एक दूसरा ऐयार भी आ पहुँचा, अबकी शैतान लँगड़ा बनकर आया है। जानता नहीं कि हमलोग बिना पहचाने न रहेंगे। भाग, नहीं तो सिर तोड़ डालूंगा !"

अब तेजसिंह को पूरा विश्वास हो गया कि ये लोग सिड़ी हो गये हैं। जिसे देखते हैं उसे ही ऐयार समझ लेते हैं। तेजसिंह वहाँ से लौटे और सोचते हुए खिड़की की राह[1] दीवार के पार हो जंगल में चले गए कि अब यहाँ के ऐयारों से मिलना चाहिए और देखना चाहिए कि वे कैसे हैं और ऐयारी के फन में कितने तेज हैं।

इस किले के अन्दर गाँजा पिलाने वालों की कई दूकानें थीं जिन्हें यहाँ वाले 'अड्डा' कहा करते थे। चिराग जलने के बाद ही से गँजेड़ी लोग वहाँ जमा होते जिन्हें अड्डे का मालिक गाँजा बनाकर पिलाता और उनसे एवज में पैसे वसूल करता। वहाँ तरह-तरह की गप्पें उड़ा करती थीं जिनसे शहर भर का हाल झूठ-सच मिला-जुला लोगों को मालूम हो जाया करता था।

शाम होने के पहले ही तेजसिंह जंगल से लौटे। लकड़हारों के साथ-साथ वैरागी के भेष में किले के अन्दर दाखिल हुए और सीधे अड्डे पर चले गये जहाँ गँजेड़ी दम पर दम लगाकर धुएँ का गुबार बाँध रहे थे। यहाँ तेजसिंह का बहुत-कुछ काम निकला और उन्हें मालूम हो गया कि महाराज के यहाँ केवल दो ऐयार हैं, एक का नाम रामानन्द, दूसरे का नाम गोविन्दसिंह है। गोविन्दसिंह तो कँवर कल्याणसिंह को छुड़ाने के लिए चुनार गया हुआ है, दूसरा रामानन्द यहीं मौजूद है। दूसरे दिन तेजसिंह ने

---

1. रोहतासगढ़ किले की बड़ी चहारदीवारी में चारों तरफ छोटी-छोटी बहुत-सी खिड़कियाँ थीं जिनमें लोहे के मजबूत दरवाजे लगे रहते थे और दो सिपाही बराबर पहरा दिया करते थे। फकीर, मोहताज और गरीब रिआया अक्सर इन खिड़कियों (छोटे दरवाजों) की राह जंगल में से सूखी लड़कियाँ चुनने या जंगली फल तोड़ने या जरूरी काम के लिए बाहर जाया करते थे, मगर चिराग जलते ही ये खिड़कियाँ बन्द कर दी जाती थीं।

दरबार में जाकर रामानन्द को अच्छी तरह देख लिया लिया और निश्चय कर लिया और कि आज रात को इसी के साथ ऐयारी करेंगे, क्योंकि रामानन्द का ढाँचा तेजसिंह से बहुत-कुछ मिलता था और यह भी जाना गया था कि महाराज सबसे ज्यादा रामानन्द को मानते और अपना विश्वासपात्र समझते हैं।

आधी रात के समय तेजसिंह सन्नाटा देख रामानन्द के मकान में कमन्द लगा कर चढ़ गये। देखा कि धुर ऊपर वाली मंजिल में रामानन्द मसहरी के ऊपर पड़ा खर्राटे ले रहा है, दरवाजे पर पर्दे की जगह पर जाल लटक रहा है जिसमें छोटी-छोटी घंटियाँ बंधी हुई हैं। पहले तो तेजसिंह ने उसे एक मामूली पर्दा समझा, मगर ये तो बड़े ही चालाक और होशियार थे। यकायक पर्दे पर हाथ डालना मुनासिब न समझ कर उसे गौर से देखने लगे। जब मालूम हुआ कि नालायक ने इस जालदार पर्दे में बहुत-सी घंटियाँ लटका रक्खी हैं तो समझ गए कि यह बड़ा ही बेवकूफ है। समझता है कि इन घंटियों के लटकाने से हम बचे रहेंगे, इस घर में जब कोई पर्दा हटाकर आवेगा तो घंटियों की आवाज से हमारी आँख खुल जायेगी, मगर यह मूर्ख नहीं समझता कि ऐयार लोग बुरे होते हैं।

तेजसिंह ने अपने बटुए में से कैंची निकाली और बहुत सम्हाल कर पर्दे में से एक-एक करके घंटी काटने लगे। थोड़ी ही देर में सब घंटियों को काट के किनारे कर दिया और पर्दा हटाकर अन्दर चले गए। रामानन्द अभी तक खर्राटे ले रहा था। तेजसिंह ने बेहोशी की दवा उसकी नाक के आगे की, हलका धूरा साँस लेते ही दिमाग में चढ़ गया। रामानन्द की एक छींक आई जिससे मालूम हुआ कि अब बेहोशी इसे घंटों तक होश में न आने देगी।

तेजसिंह ने बटुए में से एक उस्तरा निकालकर रामानन्द की दाढ़ी और मूँछें मूँड़ लीं और उसके बाल हिफाजत से अपने बटुए में रखकर उसी रंग की दूसरी दाढ़ी और मूँछ उसके लगा दीं जो उन्होंने दिन ही में किले के बाहर जंगल में तैयार की थीं। तेजसिंह इतने ही काम के लिए रामानन्द के मकान पर गए थे और इसे पूरा करके कमन्द के सहारे नीचे उतर आए तथा धर्मशाला की तरफ रवाना हुए।

तेजसिंह जब वैरागी साधु के भेष में रोहतासगढ़ किले के अन्दर आए थे तो उन्होंने धर्मशाला[1] के पास एक बैठक वाले के मकान में छोटी-सी कोठरी किराये पर ले ली थी और उसी में रहकर अपना काम करते थे। उस कोठरी का एक दरवाजा सड़क की तरफ था जिसमें ताला लगाकर उसकी ताली ये अपने पास रखते थे, इसलिए उस कोठरी में जाने-आने के लिए उनको दिन और रात एक समान था।

रामानन्द के मकान से जब तेजसिंह अपना काम करके उतरे, उस वक्त पहर भर रात बाकी थी। धर्मशाला के पास अपनी कोठरी में गए और सवेरा होने के पहले ही अपनी सूरत रामानन्द की सी बना और वही दाढ़ी और मूँछ, जो मूँड़ लाये थे, दुरुस्त करके खुद लगा कोठरी से बाहर निकले और शहर में गश्त लगाने लगे। सवेरा होते

---

1. रोहतासगढ़ में एक ही धर्मशाला थी।

ही वे राजमहल की तरफ रवाना हुए और इत्तिला कराकर महाराज के पास पहुँचे।

हम ऊपर लिख आए हैं कि रोहतासगढ़ में रामानन्द और गोविन्दसिंह केवल दो ही ऐयार थे। इन दोनों के बारे में इतना लिख देना जरूरी है कि इन दोनों में से गोविन्दसिंह तो ऐयारी के फन में बहुत ही तेज और होशियार था और वह दिन-रात वही काम किया करता था। रामानन्द भी ऐयारी का फन अच्छी तरह जानता था, मगर उसे अपनी दाढ़ी और मूँछ बहुत प्यारी थीं, इसलिए वह ऐयारी के वे ही काम करता था जिसमें दाढ़ी और मूँछ मुँड़ाने की जरूरत न पड़े और इसलिए महाराज ने भी उसे दीवान का काम दे रखा था। इसमें भी कोई शक नहीं कि रामानन्द बहुत ही खुशदिल, मसखरा और बुद्धिमान था और उसने अपनी तदबीर से महाराज का दिल अपनी मुट्ठी में कर लिया था।

रामानन्द की सूरत बने हुए तेजसिंह महाराज के पास पहुँचे, मामूल से बहुत पहले रामानन्द को आते देख महाराज ने समझा कि कोई नई खबर लाया है।

महाराज—आज तुम बहुत सवेरे आये! क्या कोई नई खबर है?

रामानन्द—(खासकर) महाराज, हमारे यहाँ कल तीन मेहमान आये हैं।

महाराज—कौन-कौन?

रामानन्द—एक तो खाँसी, जिसने मुझे बहुत ही तंग कर रखा है; दूसरे कुँअर आनन्दसिंह, तीसरे उनके चार ऐयार, जो आज ही कल में किशोरी को यहाँ से निकाल ले जाने का दावा रखते हैं।

महाराज—(हँसकर) मेहमान तो बड़े नाजुक हैं। इनकी खातिर का भी कोई इन्तजाम किया गया है या नहीं?

रामानन्द—इसीलिए तो सरकार में आया हूँ। कल दरबार में उनके ऐयार मौजूद थे। सब के पहले किशोरी का बन्दोबस्त करना चाहिए, उसकी हिफाजत में किसी तरह की कमी न होनी चाहिए।

महाराज—जहाँ तक मैं समझता हूँ, वे लोग किशोरी को तो किसी तरह नहीं ले जा सकते, हाँ, वीरेन्द्रसिंह के ऐयारों को, जिस तरह भी हो सके, गिरफ्तार करना चाहिए।

रामानन्द—वीरेन्द्रसिंह के ऐयार तो अब मेरे पंजे से बच नहीं सकते, वे लोग सूरत बदलकर दरबार में जरूर आयेंगे, और ईश्वर चाहेगा तो आज ही किसी को गिरफ्तार करूँगा, मगर वे लोग बड़े ही धूर्त और चालबाज हैं। प्रायः कैदखाने से भी निकल जाया करते हैं।

महाराज—खैर, हमारे तहखाने से जब वे निकल जायेंगे, तो समझेंगे कि चालाक और धूर्त हैं।

महाराज की इतनी ही बातचीत से तेजसिंह को मालूम हो गया कि यहाँ कोई तहखाना है जिसमें कैदी लोग रखे जाते हैं। अब उन्हें यह फिक्र हुई कि जहाँ तक हो सके, इस तहखाने का ठीक-ठीक हाल मालूम करना चाहिए। यह सोच तेजसिंह ने अपनी लच्छेदार बातचीत में महाराज को ऐसा उलझाया कि मामूली समय से भी आधा घंटे

ज्यादा की देर हो गई। ऐसा करने से तेजसिंह का अभिप्राय यह था कि देर होने से असली रामानन्द अवश्य महाराज के पास आवेगा और मुझे देख चौंकेगा, उसी समय मैं अपना काम निकाल लूंगा जिसके लिए उसकी दाढ़ी-मूँछ लाया हूँ ! और आखिर तेजसिंह का सोचना ठीक ही निकला।

तेजसिंह रामानन्द की सूरत में जिस समय महाराज के पास आये थे, उस समय ड्यौढ़ी पर जितने सिपाही पहरा दे रहे थे, सब बदल गए और दूसरे सिपाही अपनी वारी के अनुसार ड्यौढ़ी के पहरे पर मुस्तैद हुए, जो इस बात से बिल्कुल ही वेखबर थे कि रामानन्द महाराज से मिलने के लिए महल में गये हैं।

ठीक समय पर दरबार लग गया। बड़े-बड़े ओहदेदार, नायब दीवान, तहसीलदार, मुंशी, मुतसद्दी इत्यादि और मुसाहिब लोग दरबार में आकर जमा हो गये। असली रामानन्द अपनी दीवान की गद्दी पर आकर बैठ गया, मगर अपनी दाढ़ी की तरफ से बिल्कुल ही बेखबर था। उसे तेजसिंह का मामला कुछ भी मालूम न था, तो भी यह जानने के लिए वह बड़ी ही उलझन में पड़ा हुआ था कि उस दरवाजे के जालीदार पर्दे में की घंटियाँ किसने काट डाली थीं। घर-भर के आदमियों से उसने पूछा और पता लगाया, मगर पता न लगा। इससे उसके दिल में शक हुआ कि इस मकान में जरूर कोई ऐयार आया था, मगर उसने आकर क्या किया सो नहीं जाना जाता। हाँ, मेरे इस खयाल को उसने जरूर मटियामेट कर दिया कि घंटियाँ लगे हुए जालदार पर्दे के अन्दर मेरे कमरे में चुपके से कोई नहीं आ सकता, उसने बता दिया कि यों आ सकता है। बेशक मेरी भूल थी कि उस पर्दे पर इतना भरोसा रखता था, लेकिन क्या खाली यही बताने के लिए वह ऐयार आया था ?

इन्हीं सब बातों को सोचता हुआ रामानन्द अपने जरूरी कामों से छुट्टी पा दरबारी कपड़े पहन बन-ठन कर दरवार की तरफ रवाना हुआ। बेशक आज उसे कुछ देरी हो गई थी और वह सोच रहा था कि महाराज दरबार में जरूर आ गये होंगे, मगर वहाँ पहुँचकर उसने गद्दी खाली देखी और पूछने से मालूम हुआ कि अभी तक महाराज के आने की कोई खबर नहीं। रामानन्द क्या, सभी दरबारी ताज्जुब कर रहे थे कि आज महाराज को देर क्यों हुई।

रामानन्द को महाराज बहुत मानते थे, वह उनका मुँहलगा था, इसीलिए सभी ने वहाँ आकर हाल मालूम करने के लिए इसको ही कहा। रामानन्द खुद भी घबराया हुआ था और महाराज का हाल मालूम करना चाहता था। अस्तु, थोड़ी देर बैठकर वहाँ से रवाना हुआ और ड्यौढ़ी पर पहुँचकर इत्तिला करवाई।

रामानन्द रूपी तेजसिंह बैठे महाराज से बातें कर रहे थे कि एक खिदमतगार आया और हाथ जोड़कर सामने खड़ा हो गया। उसी सूरत से मालूम होता था कि वह घबराया हुआ है और कुछ कहना चाहता है, मगर आवाज मुँह से नहीं निकलती। तेजसिंह समझ गए कि अब कुछ गुल खिला चाहता है। आखिर खिदमतगार की तरफ देख कर बोले—

तेजसिंह—क्यों, क्या कहना चाहता है ?

खिदमतगार—मैं ताज्जुब के साथ यह इत्तिला करते डरता हूँ कि दीवान साहब (रामानन्द ड्योढ़ी पर हाजिर हैं।

महाराज—रामानन्द !

खिदमतगार—जी हाँ।

महाराज—(तेजसिंह की तरफ देखकर) यह क्या मामला है ?

तेजसिंह—(मुस्कुराकर) महाराज, बस, अब काम निकला ही चाहता है। मैं जो कुछ अर्ज कर चुका, वही बात है। कोई ऐयार मेरी सूरत बनाकर आया है और आपको धोखा देना चाहता है। लीजिये, इस कम्बख्त को तो मैं अभी गिरफ्तार करता हूँ, फिर देखा जायगा। सरकार उसे पहले हाजिर होने का हुक्म दें, फिर देखें, मैं क्या तमाशा करता हूँ। मुझे जरा छिप जाने दें, वह आकर बैठ जाय तो मैं उसका पर्दा खोलूँ।

महाराज—तुम्हारा कहना ठीक है, बेशक कोई ऐयार ही है। अच्छा, तुम छिप जाओ, फिर मैं उसे बुलाता हूँ।

तेजसिंह—बहुत खूब, मैं छिप जाता हूँ। मगर ऐसा है कि सरकार उसकी दाढ़ी-मूँछ पर खूब ध्यान दें, मैं यकायक पर्दे से निकलकर उसकी दाढ़ी उखाड़ लूँगा, क्योंकि नकली दाढ़ी जरा-सा ही झटका चाहती है।

महाराज—(हँसकर) अच्छा-अच्छा ! (खिदमतगार की तरफ देखकर) देखो, उससे और कुछ मत कहना, केवल हाजिर होने का हुक्म सुना दे।

तेजसिंह दूसरे कमरे में जाकर छिप रहे और असली रामानन्द धीरे-धीरे वहाँ पहुँचा जहाँ महाराज विराज रहे थे। रामानन्द को ताज्जुब था कि आज महाराज ने देर क्यों लगाई, इससे उसका चेहरा भी कुछ उदास सा हो रहा था। दाढ़ी तो वही थी जो तेजसिंह ने लगा दी थी। तेजसिंह ने दाढ़ी बनाते समय जानबूझ कर कुछ फर्क डाल दिया था, जिस पर रामानन्द ने तो कुछ ध्यान न दिया, मगर वही फर्क अब महाराज की आँखों में खटकने लगा। जिस निगाह से कोई किसी बहुरूपिये को देखता है उसी निगाह से बिना कुछ बोले-चाले महाराज अपने दीवान साहब को देखने लगे। रामानन्द यह देखकर और भी उदास हुआ कि इस समय महाराज की निगाह में अन्तर क्यों पड़ गया है।

तरद्दुद और ताज्जुब के सबब रामानन्द के चेहरे का रंग जैसे-जैसे बदलता गया, तैसे-तैसे उसके ऐयार होने का शक भी महाराज के दिल में बैठता गया। कई सायत बीतने पर भी न तो रामानन्द ही कुछ पूछ सका और न महाराज ही ने उसे बैठने का हुक्म दिया। तेजसिंह ने अपने लिए यह मौका बहुत अच्छा समझा, झट बाहर निकल आये और हँसते हुए एक फर्शी सलाम उन्होंने रामानन्द को किया। ताज्जुब, तरद्दुद और डर से रामानन्द के चेहरे का रंग उड़ गया और वह एकटक तेजसिंह की तरफ देखने लगा।

ऐयारी भी कठिन काम है। इस फन में सबसे भारी हिस्सा जीवट का है। जो ऐयार जितना डरपोक होगा, उतना ही जल्द फँसेगा। तेजसिंह को देखिये, किस जीवट

का ऐयार है कि दुश्मन के घर में घुसकर भी जरा नहीं डरता और दिन-दोपहर सच्चे को झूठा बना रहा है ! ऐसे समय अगर जरा भी उसके चेहरे पर खौफ या तरद्दुद की निशानी आ जाय तो ताज्जुब नहीं कि वह खुद फँस जाय।

तेजसिंह ने रामानन्द को बात करने की भी मोहलत न दी, हँसकर उसकी तरफ देखा और कहा, "क्यों बे ! क्या महाराज दिग्विजयसिंह के दरबार को तूने ऐसा-वैसा समझ रखा है ! क्या तू यहाँ भी ऐयारी से काम निकालना चाहता है ? यहाँ तेरी कारीगरी न लगेगी, देख, तेरी गदहे की सी मुटाई मैं कैसे पिचकाता हूँ !"

तेजसिंह ने फुर्ती से रामानन्द की दाढ़ी पर हाथ डाल दिया और महाराज को दिखा कर एक झटका दिया। झटका तो जोर से दिया मगर इस ढंग से कि महाराज को बहुत हलका झटका मालूम हो। रामानन्द की नकली दाढ़ी अलग हो गई।

इस तमाशे ने रामानन्द को पागल-सा बना दिया। उसके दिल में तरह-तरह की बातें पैदा होने लगीं। यह समझकर कि यह ऐयार मुझ सच्चे को झूठा किया चाहता है, उसे क्रोध चढ़ आया और वह खंजर निकालकर तेजसिंह पर झपटा, पर तेजसिंह वार बचा गए। महाराज को रामानन्द पर और भी शक बैठ गया। उन्होंने उठकर रामानन्द की कलाई, जिसमें वह खंजर लिये था, मजबूती से पकड़ ली और एक घूँसा उसके मुँह पर दिया। ताकतवर महाराज के हाथ का घूंसा खाते ही रामानन्द का सिर घूम गया और वह जमीन पर बैठ गया। तेजसिंह ने जेब से बेहोशी की दवा निकाली और जबर्दस्ती रामानन्द को सुँघा दी।

महाराज—क्यों, इसे बेहोश क्यों कर दिया ?

तेजसिंह—महाराज, गुस्से में आया हुआ और अपने को फँसा जान यह ऐयार न मालूम कैसी-कैसी बेहूदी बातें बकता, इसलिए इसे बेहोश कर दिया। कैदखाने में ले जाने के बाद फिर देखा जायगा।

महाराज—खैर, यह भी चलो, अच्छा ही किया। अब मुझसे ताली लो और तहखाने में ले जाकर इसे दारोगा के सुपुर्द करो।

महाराज की बात सुन तेजसिंह घबराये और सोचने लगे कि अब बुरी हुई। महाराज से तहखाने की ताली लेकर कहाँ जाऊँ ? मैं क्या जानूं तहखाना कहाँ है और दारोगा कौन है ! बड़ी मुश्किल हुई ! अगर जरा भी ना-नुकुर करता हूँ तो उल्टी आँतें गले पड़ती हैं। आखिर कुछ सोच-विचार कर तेजसिंह ने कहा—

तेजसिंह—महाराज भी साथ चलें तो ठीक है।

महाराज—क्यों ?

तेजसिंह—दारोगा साहब इस ऐयार को और मुझे देखकर घबरायेंगे और उन्हें न जाने क्या-क्या शक पैदा हो। यह पाजी अगर होश में आ जायेगा, तो जरूर कुछ बात बनावेगा, आप रहेंगे तो दारोगा को किसी तरह का शक न होगा।

महाराज—(हँस कर) अच्छा चलो, हम भी चलते हैं।

तेजसिंह—हाँ महाराज, फिर मुझे पीठ पर यह भारी लाश लादे ताला खोलने और बन्द करने में भी मुश्किल होगी।

महाराज ने अपने कलमदान में से ताली निकाली और खिदमतगार से एक लालटेन मँगवा कर साथ ले ली। तेजसिंह ने रामानन्द की गठरी बाँध पीठ पर लादी। तेजसिंह को साथ लिये हुए महाराज अपने सोने वाले कमरे में गये और दीवार में जड़ी हुई एक आलमारी का ताला खोला। तेजसिंह ने देखा कि दीवार पोली है और उस जगह से नीचे उतरने का एक रास्ता है। रामानन्द की गठरी लिये हुए महाराज के पीछे-पीछे तेजसिंह नीचे उतरे, दालान में पहुँचने के बाद छोटी सी कोठरी में जाकर दरवाजा खोला और बहुत बड़ी बारहदरी में पहुँचे। तेजसिंह ने देखा कि बारहदरी के बीचोंबीच में छोटी सी गद्दी लगाए एक बूढ़ा बैठा कुछ लिख रहा है जो महाराज को देखते ही उठ खड़ा हुआ और हाथ जोड़ कर सामने आया।

महाराज—दारोगा साहब, देखिए आज रामानन्द ने दुश्मन के एक ऐयार को फाँसा है, इसे अपनी हिफाजत में रखिये।

तेजसिंह—(पीठ से गठरी उतार और उसे खोल कर) लीजिए, अब इसे सम्हालिए, अब आप जानिए।

दारोगा—(ताज्जुब से) क्या यह दीवान साहब की सूरत बनाकर आया था ?

तेजसिंह—जी हाँ, उसने मुझी को फजूल समझा।

तेजसिंह—(हँसकर) खैर चलो, अब दारोगा साहब इसका बन्दोबस्त कर लेंगे।

तेजसिंह—महाराज, यदि आज्ञा हो तो मैं ठहर जाऊँ और इस नालायक को होश में लाकर अपने मतलब की बातों का कुछ पता लगाऊँ। सरकार को भी अटकने के लिए मैं कहता, परन्तु दरबार का समय बिल्कुल निकल जाने या दरबार न करने से रिआया के दिल में तरह-तरह के शक पैदा होंगे और आजकल ऐसा न होना चाहिए।

महाराज—तुम ठीक कहते हो। अच्छा, मैं जाता हूँ, अपनी ताली साथ लिये जाता हूँ और ताला बन्द करता जाता हूँ। तुम दूसरी राह से दारोगा के साथ अना। (दारोगा की तरफ देखकर) आप भी आइयेगा और अपना रोजनामचा लेते आइयेगा।

तेजसिंह को उसी जगह छोड़ महाराज चले गए। रामानन्द रूपी तेजसिंह को लिये दारोगा साहब अपनी गद्दी पर आये और अपनी जगह तेजसिंह को बैठा कर आप नीचे बैठे। तेजसिंह ने आधे घण्टे तक दारोगा को अपनी बातों में खूब ही उलझाया, इसके बाद यह कहते हुए उठे, "अच्छा, अब इस ऐयार को होश में लाकर मालूम करना चाहिए कि यह कौन है" वे ऐयार के पास आए। अपनी जेब में हाथ डाल लखलखे की डिबिया खोजने लगे, आखिर बोले, "ओफ ओह, लखलखे की डिबिया तो दीवानखाने में ही भूल आये, अब क्या किया जाए ?"

दारोगा—मेरे पास लखलखे की डिबिया है, हुक्म हो तो लाऊँ ?

तेजसिंह—लाइए, मगर आपके लखलखे से यह होश में न आयेगा, क्योंकि जो बेहोशी की दवा इसे दी गई, वह मैंने नये ढंग से बनाई है और उसके लिए लखलखे का नुसखा भी दूसरा है। खैर, लाइये तो सही, शायद काम चल जाए।

"बहुत अच्छा" कहकर दारोगा साहब लखलखा लेने चले गये, इधर निराला पाकर तेजसिंह ने दूसरी डिबिया जेब से निकाली (जिसमें लाल रंग की कोई बुकनी

थी) और एक चुटकी रामानन्द की नाक में साँस के साथ चढ़ा दी। फिर निश्चिन्त होकर बैठे। अब सिवा तेजसिंह के दूसरे का बनाया लखलखा उसे कब होश में ला सकता है (हाँ, दो-एक रोज तक पड़े रहने पर वह आप से आप चाहे भले ही होश में आ जाए।

दम-भर में दारोगा साहब लखलखे की डिबिया लिये आ पहुँचे। तेजसिंह ने कहा, "बस, आप ही सुँघाइये और देखिये कि इस लखलखे से कुछ काम निकलता है या नहीं।"

दारोगा साहब ने लखलखे की डिबिया बेहोश रामानन्द की नाक से लगाई, पर क्या असर होना था। लाचार तेजसिंह का मुँह देखने लगे।

तेजसिंह—क्यों व्यर्थ मेहनत करते हैं, मैं पहले ही कह चुका हूँ कि इस लखलखे से काम नहीं चलेगा। चलिए, महाराज के पास चलें। इसे यों ही रहने दीजिये, अपना लखलखा लेकर फिर लौटेंगे तो काम चलेगा।

दारोगा—जैसी मर्जी, इस लखलखे से तो काम नहीं चलता।

दारोगा साहब ने रोजनामचे की किताब बगल में दाबी और तालियों का झब्बा और लालटेन हाथ में लेकर रवाना हुए। एक कोठरी में घुसकर दारोगा साहब ने दूसरा दरवाजा खोला। ऊपर चढ़ने के लिए सीढ़ियाँ नजर आईं। ये दोनों ऊपर चढ़ गये और दो-तीन कोठरियों से घुसते हुए एक सुरंग में पहुँचे। दूर तक चले जाने के बाद इनका सिर छत से अड़ा। दारोगा ने एक सूराख में ताली लगाई और खटका दबाया। एक पत्थर का टुकड़ा अलग हो गया और ये दोनों बाहर निकले। यहाँ तेजसिंह ने अपने को एक कब्रिस्तान में पाया।

इस सन्तति के तीसरे भाग के चौदहवें ब्यान में हम इस कब्रिस्तान का हाल लिख चुके हैं। इसी राह से कुँअर आनन्दसिंह और तारासिंह उस तहखाने में गये थे। इस समय हम जो हाल लिख रहे हैं, वह कुँअर आनन्दसिंह के तहखाने में जाने से पहले का है। सिलसिला मिलाने के लिए फिर पीछे की तरफ लौटना पड़ा। तहखाने के हर एक दरवाजे में पहले ताला लगा रहता था, मगर जब से तेजसिंह ने इसे अपने कब्जे में कर लिया (जिसका हाल आगे चलकर मालूम होगा) तब से ताला लगाना बन्द हो गया, केवल खटकों पर ही कार्रवाई रह गई।

तेजसिंह ने चारों तरफ निगाह दौड़ाकर देखा और मालूम किया कि इस जंगल में जासूसी करते हुए कई दफे आ चुके हैं और इस कब्रिस्तान में भी पहुँच चुके हैं, मगर जानते नहीं थे कि यह कब्रिस्तान क्या है और किस मतलब से बना हुआ है। अब तेजसिंह ने सोच लिया कि हमारा काम चल गया, दारोगा साहब को इसी जगह फँसाना चाहिए, जाने न पावें।

तेजसिंह—दारोगा साहब, हकीकत में तुम बड़े ही जूतीखोर हो।

दारोगा—(ताज्जुब से तेजसिंह का मुँह देख के) मैंने क्या कसूर किया है जो आप गाली दे रहे हैं? ऐसा तो कभी नहीं हुआ था!

तेजसिंह—फिर मेरे सामने गुर्राता है! कान पकड़ के उखाड़ लूँगा!

दारोगा—आज तक महाराज ने भी मेरी ऐसी बेइज्जती नहीं की !

तेजसिंह ने दारोगा को एक लात ऐसी मारी कि बेचारा धम्म से जमीन पर गिर पड़ा। तेजसिंह उसकी छाती पर चढ़ बैठे और बेहोशी की दवा जबर्दस्ती नाक में ठूँस दी । बेचारा दारोगा बेहोश हो गया। तेजसिंह ने दारोगा की कमर से और अपनी कमर से भी चादर खोली और उसी में दारोगा की गठरी बाँध ताली का गुच्छा और रोजनामचे की किताब भी उसी में रख, पीठ पर लाद, तेजी के साथ अपने लश्कर की तरफ रवाना हुए तथा दो पहर दिन चढ़ते-चढ़ते राजा वीरेन्द्रसिंह के खेमे में जा पहुँचे । पहले तो रामानन्द की सूरत देख वीरेन्द्रसिंह चौंके, मगर जब बँधे हुए इशारे से तेजसिंह ने अपने को जाहिर किया तो वे बहुत ही खुश हुए ।

3

तेजसिंह के लौट आने से राजा वीरेन्द्रसिंह बहुत खुश हुए और उस समय तो उनकी खुशी और भी ज्यादा हो गई जब तेजसिंह ने रोहतासगढ़ आकर अपनी कार्रवाई करने का खुलासा हाल कहा । रामानन्द की गिरफ्तारी का हाल सुनकर हंसते-हँसते लोट गये, मगर साथ ही इसके यह सुनकर कि कुँअर इन्द्रजीतसिंह का पता रोहतासगढ़ में नहीं लगता, बल्कि मालूम होता है कि वे रोहतासगढ़ में नहीं हैं, राजा वीरेन्द्रसिंह उदास हो गये । तेजसिंह ने उन्हें हर तरह से समझाया और दिलासा दिया । थोड़ी देर बाद तेजसिंह ने अपने दिल की वे सब बातें कहीं जो वे किया चाहते थे । वीरेन्द्रसिंह ने उनकी राय बहुत पसन्द की और बोले—

वीरेन्द्र०—तुम्हारी कौन-सी ऐसी तरकीब है जिसे मैं पसन्द नहीं कर सकता ! हाँ, यह कहो कि इस समय अपने साथ किस ऐयार को ले जाओगे !

तेजसिंह—मुझे तो इस समय कई ऐयारों की जरूपत थी मगर यहाँ केवल चार मौजूद हैं और बाकी सब कुँअर इन्द्रजीतसिंह का पता लगाने गये हैं । खैर, कोई हर्ज नहीं ! पण्डित बद्रीनाथ को तो इसी लश्कर में रहने दीजिये, उन्हें किसी दूसरी जगह भेजना मैं मुनासिब नहीं समझता, क्योंकि यहाँ बड़े ही चालाक और पुराने ऐयार का काम है, बाकी ज्योतिषीजी, भैरों और तारा को मैं अपने साथ ले जाऊँगा।

वीरेन्द्र—अच्छी बात है, इन तीनों से तुम्हारा काम बखूबी चलेगा ?

तेजसिंह—जी नहीं, मैं तीनों ऐयारों को अपने साथ नहीं रखना चाहता बल्कि भैरों और तारा को तो वहाँ का रास्ता दिखाकर वापस कर दूँगा, इसके बाद वे दोनों थोड़े से लड़ाकों को मेरे पास पहुँचा कर फिर आपको या कुँअर आनन्दसिंह को लेकर मेरे पास आवेंगे, तब वह सब कार्रवाई की जाएगी जो मैं आपसे कह चुका हूँ ।

वीरेन्द्र०—और यह दारोगा वाली किताब, जो तुम ले आये हो, क्या होगी ?

तेजसिंह—इसे फिर कभी अपने साथ ले जाऊँगा और मौका मिलने पर शुरू से आखिर तक पढ़ जाऊँगा । यही तो एक चीज हाथ लगी है ।

वीरेन्द्र—बेशक उम्दा चीज है (किताब तेजसिंह के हाथ से लेकर) रोहतासगढ़ तहखाने का कुल हाल इससे तुम्हें मालूम हो जाएगा, बल्कि इसके अलावा वहाँ का और भी बहुत भेद मालूम होगा।

तेजसिंह—जी हाँ, इसमें दारोगा ने रोज-रोज का हाल लिखा है, मैं समझता हूँ वहाँ ऐसी-ऐसी और भी कई किताबें होंगी जो इसके पहले के और दारोगाओं के हाथ से लिखी गई होंगी।

वीरेन्द्र—जरूर होंगी, और इससे उस तहखाने के खजाने का पता लगता है।

तेजसिंह—लीजिए, अब वह खजाना भी हमी लोगों का हुआ चाहता है! अब हमें यहाँ देर न करके बहुत जल्द वहाँ पहुँचना चाहिए, क्योंकि दिग्विजयसिंह मुझे और दारोगा को अपने पास बुला गया था। देर हो जाने पर वह फिर तहखाने में आवेगा और किसी को न देखेगा तो सब काम ही चौपट हो जाएगा।

वीरेन्द्र—ठीक है, अब तुम जाओ, देर मत करो।

कुछ जलपान करने के बाद ज्योतिषीजी, भैरोंसिंह और तारासिंह को साथ लिए हुए तेजसिंह वहाँ से रोहतासगढ़ की तरफ रवाना हुए और दो घण्टे दिन रहते ही तहखाने में जा पहुँचे। अभी तक तेजसिंह, रामानन्द की सूरत में थे। तहखाने का रास्ता दिखाने के बाद भैरोंसिंह और तारासिंह को तो वापस किया और ज्योतिषीजी को अपने पास ही रखा। अबकी दफे तहखाने से बाहर निकलने वाले दरवाजे में तेजसिंह ने ताला नहीं लगाया, उन्हें केवल खटकों पर बन्द रहने दिया।

तहखाने वाले रोजनामचे के पढ़ने से तेजसिंह को बहुत-सी बातें मालूम हो गईं जिन्हें यहाँ जिखने की कोई जरूरत नहीं, समय-समय पर वे आप ही मालूम हो जायेंगी। हाँ, उनमें से एक बात यहाँ लिख देना जरूरी है। जिस दालान में दारोगा रहता था, उसमें एक खम्भे के साथ लोहे की एक तार बँधी हुई थी, जिसका दूसरा सिरा छत में सूराख करके ऊपर की तरफ निकाल दिया था। तेजसिंह को किताब के पढ़ने से मालूम हुआ कि इस तार को खींचने या हिलाने से वह घण्टा बोलेगा जो खास दिग्विजयसिंह के दीवानखाने में लगा हुआ है क्योंकि उस तार का दूसरा सिरा उसी घंटे से बँधा है। जब किसी तरह की मदद की जरूरत पड़ती थी तब दारोगा उस तार को छेड़ता था। उस दालान की बगल की एक कोठरी के अन्दर भी एक बड़ा-सा घण्टा लटकता था जिसके साथ बँधी हुई लोहे की तार का दूसरा हिस्सा महाराज के दीवानखाने में था। महाराज भी जब तहखाने वालों को होशियार करना चाहते थे या और कोई जरूरत पड़ती थी, तो ऊपर लिखी रीति से वह तहखाने वाला घंटा भी बजाया जाता, लेकिन यह काम केवल महाराज का था क्योंकि तहखाने का हाल बहुत गुप्त था। तहखाना कैसा है और उसके अन्दर क्या होता है, यह हाल सिवाय बहुत खास आठ-दस आदमियों के और किसी को भी मालूम न था। इसके सब भेद मन्त्र की तरह गुप्त रखे जाते थे।

हम ऊपर लिख आये हैं कि असली रामानन्द को ऐयार समझकर महाराज दिग्विजयसिंह तहखाने में ले आए और लौटकर जाती समय नकली रामानन्द, अर्थात्

तेजसिंह और दारोगा को कहते गये कि तुम दोनों फुरसत पाकर हमारे पास आना।

महाराज के हुक्म की तालीम न हो सकी, क्योंकि दारोगा को कैद कर तेजसिंह अपने लश्कर में ले गये और ज्यादा हिस्सा दिन का उधर ही बीत गया था, जैसा कि हम ऊपर लिख आये हैं। जब तेजसिंह लौटकर तहखाने में आये तो ज्योतिषीजी को बहुत सी बातें समझाईं और उन्हें दारोगा बना कर गद्दी पर बैठाया। उसी समय सामने की कोठरियों में से खटके की आवाज आई। तेजसिंह समझ गये कि महाराज आ रहे हैं। ज्योतिषीजी को तो लिटा दिया और कहा कि "तुम हाय-हाय करो, मैं महाराज से बातचीत करूँगा।" थोड़ी देर में महाराज उस तहखाने में उसी राह से आ पहुँचे जिस राह से तेजसिंह को साथ लाये थे।

महाराज - (तेजसिंह की तरफ देखकर) रामानन्द, तुम दोनों को हम अपने पास आने के लिए हुक्म दे गये थे। क्यों नहीं आये? और इस दारोगा को क्या हुआ जो हाय-हाय कर रहा है?

तेजसिंह – महाराज, इन्हीं के सबब से तो आना नहीं हुआ। यकायक बेचारे के पेट में दर्द पैदा हो गया, बहुत-सी तरकीबें करने के बाद अब कुछ आराम हुआ है।

महाराज—(दारोगा के हाल पर अफसोस करने के बाद) ऐयार का कुछ हाल मालूम हुआ?

तेजसिंह—जी नहीं, उसने कुछ भी नहीं बताया। खैर, क्या हर्ज है, दो-एक दिन में पता लग ही जायगा, ऐयार लोग जिद्दी तो होते ही हैं।

थोड़ी देर बाद महाराज दिग्विजयसिंह वहाँ से चले गये। महाराज के जाने के बाद तेजसिंह भी तहखाने के बाहर हुए और महाराज के पास गये। दो घंटे तक हाजिरी देकर शहर में गश्त करने के बहाने से बिदा हुए। पहर रात से कुछ ज्यादा गयी थी कि तेजसिंह फिर महाराज के पास गये और बोले—

तेजसिंह—मुझे जल्द लौट आते देख महाराज ताज्जुब करते होंगे, मगर एक जरूरी खबर देने के लिए आना पड़ा।

महाराज—वह क्या?

तेजसिंह—मुझे पता लगा है कि मेरी गिरफ्तारी के लिए कई ऐयार आये हुए हैं, महाराज होशियार रहें। अगर रात भर मैं उनके हाथ से बच गया तो कल जरूर कोई तरकीब करूँगा, यदि फँस गया तो खैर!

महाराज—तो आज रात भर तुम यहीं क्यों नहीं रहते?

तेजसिंह --क्या उन लोगों के खौफ से बिना कुछ कार्रवाई किये मैं अपने को छिपाऊँ? यह नहीं हो सकता।

महाराज —शाबाश! ऐसा ही करना मुनासिब है। खैर जाओ, जो होगा देखा जायगा।

तेजसिंह घर की तरफ लौटे। रामानन्द के घर की तरफ नहीं, बल्कि अपने लश्कर की तरफ। उन्होंने इस बहाने अपनी जान बचाई और चलते हुए। सवेरे जब

दरबार में रामानन्द न आये, तो महाराज को विश्वास हो गया कि वीरेन्द्रसिंह के ऐयारों ने उन्हें फँसा लिया।

4

अपनी कार्रवाई पूरी करने के बाद तेजसिंह ने सोचा कि अब असली रामानन्द को तहखाने से ऐसी खूबसूरती के साथ निकाल लेना चाहिए जिसमें महाराज को किसी तरह का शक न हो और यह गुमान भी न हो कि तहखाने में वीरेन्द्रसिंह के ऐयार लोग घुसे हैं या तहखाने का हाल किसी दूसरे को मालूम हो गया है। यह काम तभी हो सकता है जब कोई ताजा मुर्दा हाथ लगे।

रोहतासगढ़ से चलकर तेजसिंह अपने लश्कर में पहुँचे और सब हाल वीरेन्द्रसिंह से कहने के बाद कई जासूसों को इस काम के लिए रवाना किया कि अगर कहीं कोई ताजा मुर्दा, जो सड़ न गया हो या फूल न गया हो, मिले तो उठा लावें और लश्कर के पास ही कहीं रखकर हमें इत्तिला दें। इत्तिफाक से लश्कर से दो-तीन कोस की दूरी पर नदी के किनारे एक लावारिस भिखमंगा उसी दिन मरा था जिससे जासूस लोग शाम होते-होते उठा लाये और लश्कर से कुछ दूर रख तेजसिंह को खबर की। भैरोंसिंह को साथ लेकर तेजसिंह मुर्दे के पास गये और अपनी कार्रवाई करने लगे।

तेजसिंह ने उस मुर्दे को ठीक रामानन्द की सूरत का बनाया और भैरोंसिंह की मदद[1] से उठाकर रोहतासगढ़ तहखाने के अन्दर ले गये। और तहखाने के दारोगा (ज्योतिषीजी) के सुपुर्द कर और उसके बारे में बहुत-सी बातें समझा-बुझाकर असली रामानन्द को अपने लश्कर में उठा लाये।

तेजसिंह के जाने के बाद हमारे नये दारोगा साहब ने खम्भे से बँधे हुए उस तार को खींचा, जिसके सबब से दिग्विजयसिंह के दीवानखाने वाला घण्टा बोलता था। उस समय दो घण्टे रात जा छुकी थी, महाराज अपने कई मुसाहिबों को साथ ले दीवानखाने में बैठे दुश्मन पर फतह पाने के लिए बहुत-सी तरकीबें सोच रहे थे, यकायक घण्टे की आवाज सुनकर वे चौंके और समझ गये कि तहखाने में हमारी जरूरत है। दिग्विजय-सिंह उसी समय उठ खड़े हुए और उन जल्लादों को बुलाने का हुक्म दिया जो जरूरत पड़ने पर तहखाने में जाया करते थे और जान के खौफ या नमकहलाली के सबब से वहाँ का हाल किसी दूसरे से कभी नहीं कहते थे।

महाराज दूसरे कमरे में गये। जब तक कपड़े बदलकर तैयार हों, जल्लाद लोग भी हाजिर हो गये। ये जल्लाद बड़े ही मजबूत, ताकतवर और कद्दावर थे। स्याह रंग,

---

1. मुर्दा अक्सर ऐंठ जाया करता है, इसलिए गठरी में बँध नहीं सकता, लाचार दो आदमी मिलकर उठा ले गये।

मूँछें चढ़ी हुईं, पोशाक में केवल जाँघिया, मिर्जई और कन्टोप पहने, हाथ में भारी तेगा लिए बड़े ही भयंकर मालूम होते थे। महाराज ने केवल चार जल्लादों को साथ लिया और उसी मामूली रास्ते से तहखाने में उतर गये। महाराज को आते देखकर दारोगा चैतन्य हो गया और सामने आ हाथ जोड़कर बोला, "लाचार महाराज को तकलीफ देनी पड़ी।"

महाराज—क्या मामला है ?

दारोगा—वह ऐयार मर गया जिसे दीवान रामानन्दजी ने गिरफ्तार किया था।

महाराज—(चौंककर) हैं, मर गया !

दारोगा—जी हाँ, मर गया। न मालूम कैसी जहरीली बेहोशी दी गयी थी कि जिसका असर यहाँ तक हुआ।

महाराज—यह बहुत ही बुरा हुआ, दुश्मन समझेगा कि दिग्विजयसिंह ने जान-बूझकर हमारे ऐयार को मार डाला जो कायदे के बाहर की बात है। दुश्मनों को अब हमसे जिद हो जायगी और वे भी कायदे के खिलाफ बेहोशी की जगह जहर को बरतने लगेंगे तो हमारा बड़ा नुकसान होगा और बहुत आदमी जान से मारे जायेंगे।

दारोगा—लाचारी है, अब क्या किया जाय ? भूल दीवान साहब की है।

महाराज—(कुछ जोश में आकर) रामानन्द तो पूरा उजड्ड है ! झक मारने के लिए उसने अपने को ऐयार मशहूर कर रखा है, तभी तो वीरेन्द्रसिंह का एक अदना ऐयार आया और उसे पकड़कर ले गया। चलो, छुट्टी हुई !

महाराज की बातें सुनकर मन-ही-मन ज्योतिषीजी हँसते और कहते थे कि देखो कितना होशियार और बहादुर राजा क्या जरा-सी बात में बेवकूफ बना है। वाह रे तेजसिंह, तू जो चाहे कर सकता है।

महाराज ने रामानन्द की लाश को खुद देखा और दूसरी जगह ले जाकर जमीन में गाड़ देने के लिए जल्लादों को हुक्म दिया। जल्लादों ने उसी तहखाने में एक जगह, जहाँ मुर्दे गाड़े जाते थे, ले जाकर उस लाश को दबा दिया। महाराज अफसोस करते हुए तहखाने के बाहर निकल आये और इस सोच में पड़े कि देखें, वीरेन्द्रसिंह के ऐयार लोग इसका क्या बदला लेते हैं।

5

ऊपर लिखी वारदात के तीसरे दिन दारोगा साहब अपनी गद्दी पर बैठे रोज-नामचा देख रहे थे और उस तहखाने की पुरानी बातें पढ़-पढ़कर ताज्जुब कर रहे थे कि यकायक पीछे की कोठरी से खटके की आवाज आयी। घबराकर उठ खड़े हुए और पीछे की तरफ देखने लगे। फिर आवाज आयी। ज्योतिषीजी दरवाजा खोलकर अन्दर गये, मालूम हुआ कि उस कोठरी के दूसरे दरवाजे से कोई भागा जाता है। कोठरी में बिलकुल अँधेरा था, ज्योतिषीजी कुछ आगे बढ़े ही थे कि जमीन पर पड़ी हुई एक लाश

उनके पैरों से टकराई, जिसकी ठोकर खा वे गिर पड़े, मगर फिर सम्हलकर आगे बढ़े, लेकिन ताज्जुब करते थे कि यह लाश किसकी है। मालूम होता है यहाँ कोई खून हुआ है, और ताज्जुब नहीं कि वह भागने ही वाला खूनी हो !

वह आदमी आगे-आगे सुरंग में भागा जाता था और पीछे-पीछे ज्योतिषीजी हाथ में खंजर लिये दौड़े जा रहे थे, मगर वे उसे किसी तरह पकड़ न सके। यकायक सुरंग के मुहाने पर रोशनी मालूम हुई। ज्योतिषीजी समझे कि अब वह बाहर निकल गया। दम-भर में ये भी वहाँ पहुँचे और सुरंग के बाहर निकल चारों तरफ देखने लगे। ज्योतिषीजी की पहली निगाह जिस पर पड़ी वह पण्डित बद्रीनाथ थे। देखा कि एक औरत को पकड़े हुए बद्रीनाथ खड़े हैं और दिन आधी घड़ी से कम बाकी है।

बद्रीनाथ—दारोगा साहब, देखिये आपके यहाँ चोर घुसे और आपको खबर भी नहीं !

ज्योतिषीजी—अगर खबर न होती तो पीछे-पीछे दौड़ा हुआ यहाँ तक क्यों आता।

बद्रीनाथ—फिर भी आपके हाथ से तो चोर निकल ही गया था। अगर इस समय हम न पहुँच जाते तो आप इसे न पा सकते।

ज्योतिषीजी—हाँ, बेशक इसे मैं मानता हूँ। क्या आप पहचानते हैं कि यह कौन है ? याद आता है कि इस औरत को मैंने कभी कहीं देखा है।

बद्रीनाथ—जरूर देखा होगा, अब इसे तहखाने में ले चलो, फिर देखा जायगा। इसका तहखाने से खाली हाथ निकलना मुझे ताज्जुब में डालता है।

ज्योतिषीजी—यह खाली हाथ नहीं, बल्कि हाथ साफ करके आयी है। इसके पीछे आते समय एक लाश मेरे पैरों से टकराई थी, मगर पीछा करने की धुन में मैं कुछ जाँच न कर सका।

पण्डित बद्रीनाथ और ज्योतिषीजी उस औरत को गिरफ्तार किये हुए तहखाने में आये और उस दालान या बारहदरी में, जिसमें दारोगा साहब की गद्दी लगी रहती थी, पहुँचे। उस औरत को खम्भे के साथ बाँध दिया और हाथ में लालटेन ले उस लाश को देखने गये जो ज्योतिषीजी के पैरों में अड़ी थी। बद्रीनाथ ने देखते ही उस लाश को पहचान लिया और बोले, "यह तो माधवी है !"

ज्योतिषीजी—यह यहाँ क्योंकर आयी ? (माधवी की नाक पर हाथ रखकर) अभी दम है, मरी नहीं। यह देखिये, इसके पेट में जख्म लगा है। जख्म भारी नहीं है, बच सकती है।

बद्रीनाथ—(नब्ज देखकर) हाँ, बच सकती है। अभी इसके जख्म पर पट्टी बाँध कर इसी तरह छोड़ दो, फिर बूझा जायगा। हाँ, थोड़ा-सा अर्क इसके मुँह में डाल देना चाहिए।

बद्रीनाथ ने माधवी के जख्म पर पट्टी बाँधी और थोड़ा-सा अर्क भी उसके मुंह में डालकर उसे वहाँ से उठा दूसरी कोठरी में ले गये। इस तहखाने में कई जगह से रोशनी और हवा पहुँचा करती थी, कारीगरों ने इसके लिए अच्छी तरकीब की थी।

बद्रीनाथ और ज्योतिषीजी माधवी को उठाकर एक ऐसी कोठरी में ले गये जहाँ बादा-कश की राह ठण्डी-ठण्डी हवा आ रही थी और उसे उसी जगह छोड़ आप बारहदरी में आये जहाँ उस औरत को, जिसने माधवी को घायल किया था, खम्भे के साथ बाँधा था। बद्रीनाथ ने धीरे से ज्योतिषीजो से कहा कि "आज कुँअर आनन्दसिंह और उनके थोड़ी ही देर बाद मैं बीस-पच्चीस आदमियों को साथ लेकर यहाँ आऊँगा। अब मैं जाता हूँ, वहाँ बहुत-कुछ काम है, केवल इतना ही कहने के लिए आया था। मेरे जाने के बाद तुम इस औरत से पूछताछ कर लेना कि यह कौन है, मगर एक बात का खौफ है।"

ज्योतिषीजी—वह क्या ?

बद्रीराथ—यह औरत हम लोगों को पहचान गयी है, कहीं ऐसा न हो कि तुम महाराज को बुलाओ और वे आ जायें तो यह कह उठे कि दारोगा साहब तो राजा वीरेन्द्रसिंह के ऐयार हैं !

ज्योतिषीजी—जरूर ऐसा होगा, इसका भी बन्दोबस्त कर लेना चाहिए।

बद्रीनाथ—खैर, कोई हर्ज नहीं, मेरे पास मसाला तैयार है। (बटुए में से एक डिबिया निकालकर और ज्योतिषीजी के हाथ में देकर) इसे आप रखें, जब मौका हो तो इसमें से थोड़ी-सी दवा इसकी जबान पर जबर्दस्ती मल दीजियेगा, बात की बात में जुबान ऐंठ जायगी। फिर यह साफ तौर पर कुछ भी न कह सकेगी। तब जो आपके जी आवे, महाराज को समझा दें।

बद्रीनाथ वहाँ से चले गये। उनके जाने के बाद उस औरत को डरा-धमका ओर कुछ मार-पीटकर ज्योतिषीजी ने उसका हाल मालूम करना चाहा, मगर कुछ न हो सका, पहरों की मेहनत बर्बाद गयी। आखिर उस औरत ने ज्योतिषीजी से कहा, "ज्योतिषीजी, मैं आपको अच्छी तरह से जानती हूँ। आप यह न समझिए कि माधवी को मैंने मारा है, उसको घायल करने वाला कोई दूसरा ही था। खैर, इन सब बातों से कोई मतलब नहीं, क्योंकि अब तो माधवी भी आपके कब्जे में नहीं रही।"

ज्योतिषीजी—माधवी मेरे कब्जे में से कहाँ जा सकती है ?

औरत—जहाँ जा सकती थी वहाँ गयी। आप जहाँ रख आये थे वहाँ जाकर देखिये, है या नहीं।

औरत की बात सुनकर ज्योतिषीजी बहुत घबराये और उठ खड़े हुए। वहाँ गये जहाँ माधवी को छोड़ आये थे। उस औरत की बात सच निकली, माधवी का वहाँ पता भी न था। हाथ में लालटेन ले घण्टों ज्योतिषीजी इधर-उधर खोजते रहे, मगर कुछ फायदा न हुआ, आखिर लौटकर फिर उस औरत के पास आये और बोले, "तेरी बात ठीक निकली, मगर अब मैं तेरी जान लिए बिना नहीं रहता, हाँ, अगर सच-सच अपना हाल बता देगी तो छोड़ दूंगा।"

ज्योतिषीजी ने हजार सिर पटका, मगर उस औरत ने कुछ भी न कहा। इसी औरत के चिल्लाने या बोलने की आवाज किशोरी और लाली ने इस तहखाने में आकर सुनी थी जिसका हाल इस भाग के पहले बयान में लिख आये हैं, क्योंकि इसी समय लाली और किशोरी भी वहाँ आ पहुँची थीं।

ज्योतिषीजी ने किशोरी को पहचाना, किशोरी के साथ लाली का नाम लेकर भी पुकारा, मगर अभी यह नहीं मालूम हुआ कि लाली को ज्योतिषीजी क्योंकर और कब से जानते थे। हाँ, किशोरी और लाली को इस बात का ताज्जुब था कि दारोगा ने उन्हें पहचान लिया, क्योंकि ज्योतिषीजी दारोगा के भेष में थे।

ज्योतिषी ने किशोरी ओर लाली को अपने पास बुलाकर कुछ बात करना चाहा, मगर मौका न मिला। उसी समय घण्टे के बजने की आवाज आयी और ज्योतिषीजी समझ गये कि महाराज आ रहे हैं। मगर इस समय महाराज क्यों आते हैं? शायद इस वजह से कि लाली और किशोरी इस तहखाने में घुस आयी हैं और इसका हाल महाराज को मालूम हो गया है।

जल्दी के मारे ज्योतिषीजी सिर्फ दो काम कर सके। एक तो किशोरी और लाली की तरफ देखकर बोले, "अफसोस, अगर आधी घड़ी की भी मोहलत मिलती तो तुम्हें यहाँ से निकाल ले जाता, क्योंकि यह सब बखेड़ा तुम्हारे ही लिए हो रहा है।" दूसरे, उस औरत की जुबान पर मसाला लगा सके जिसमें वह महाराज के सामने कुछ कह न सके। इतने ही में मशालचियों और कई जल्लादों को लेकर महाराज आ पहुँचे और ज्योतिषीजी की तरफ देखकर बोले, "इस तहखाने में किशोरी और लाली आई हैं, तुमने देखा है?"

दरोगा—(खड़े होकर) जी, अभी तक तो यहाँ नहीं पहुँचीं।

महाराज—खोजो, कहाँ हैं, यह औरत कौन है?

दरोगा—मालूम नहीं, कौन है और क्यों आई है? मैंने इसी तहखाने में इसे गिरफ्तार किया है, पूछने से कुछ नहीं बताती।

महाराज—खैर किशोरी और लाली के साथ इसे भी भूतनाथ पर चढ़ा देना (बलि देना) चाहिए, क्योंकि यही यहाँ का बँधा कायदा है कि लिखे आदमियों के सिवा दूसरा जो इस तहखाने को देख ले, उसे तुरत बलि दे देना चाहिए।

सब लोग किशोरी और लाली को खोजने लगे। इस समय ज्योतिषीजी घबराये और ईश्वर से प्रार्थना करने लगे कि कुँअर आनन्दसिंह और हमारे ऐयार लोग जल्द यहाँ आवें जिसमें किशोरी की जान बचे।

किशोरी और लाली कहीं दूर न थीं, तुरत गिरफ्तार कर ली गईं और उनकी मुश्कें बँध गईं। इसके बाद उस औरत से महाराज ने कुछ पूछा जिसकी जुबान पर ज्योतिषीजी ने दवा मल दी थी, पर उसने महाराज की बात का कुछ भी जबाब न दिया। आखिर खंभे से खोलकर उसकी भी मुश्कें बाँध दी गईं और तीनों औरतें एक दरवाजे की राह दूसरी संगीन बारहदरी में पहुँचाई गईं जिसमें सिंहासन के ऊपर स्याह पत्थर की वह भयानक मूरत बैठी हुई थी जिसका हाल इस सन्तति के तीसरे भाग के आखिरी बयान में हम लिख आये हैं। इसी समय आनन्दसिंह, भैरोंसिंह और तारासिंह वहाँ पहुँचे और उन्होंने अपनी आँखों से उस औरत के मारे जाने का दृश्य देखा जिसकी जुबान पर दवा लगा दी गई थी। जब किशोरी के मारने की बारी आई तब कुंअर आनन्दसिंह और दोनों ऐयारों से न रहा गया और उन्होंने खंजर निकाल कर उस झुण्ड

पर टूट पड़ने का इरादा किया, मगर वह न हो सका, क्योंकि पीछे से कई आदमियों ने आकर इन तीनों को पकड़ लिया।

6

अब हम अपने किस्से के सिलसिले को मोड़कर दूसरी तरफ झुकते हैं और पाठकों को पुण्यधाम काशी में ले चलकर संध्या के समय गंगा के किनारे बैठी हुई एक नौजवान औरत की अवस्था पर ध्यान दिलाते हैं।

सूर्य भगवान अस्त हो चुके हैं, चारों तरफ अँधेरी रात घिरी आती है। गंगाजी शान्त-भाव से धीरे-धीरे बह रही हैं। आसमान पर छोटे-छोटे बादल के टुकड़े पूरब की तरफ से चले आकर पश्चिम की तरफ इकट्ठे हो रहे हैं। गंगा के किनारे पर ही एक नौजवान औरत, जिसकी उम्र पन्द्रह वर्ष से ज्यादा न होगी, हवेली पर गाल रखे जल की तरफ देखती न मालूम क्या सोच रही है। इसमें कोई शक नहीं कि यह औरत नखशिख से दुरुस्त और खूबसूरत है मगर रंग इसका साँवला है, तो भी इसकी खूबसूरती और नजाकत में किसी तरह का बट्टा नहीं लगता। थोड़ी-थोड़ी देर पर यह औरत सिर उठा कर चारों तरफ देखती और फिर उसी तरह हथेली पर गाल रखकर कुछ सोचने लग जाती है।

इसके सामने ही गंगाजी में एक छोटा-सा बजरा खड़ा है जिस पर चार-पाँच आदमी दिखाई दे रहे हैं और कुछ सफर का सामान और दो-चार हर्बे भी मौजूद हैं।

थोड़ी देर में अँधेरा हो जाने पर वह औरत उठी,साथ ही बजरे पर से दो सिपाही उतर आए और उसे सहारा देकर बजरे पर ले गये। वह छत पर जा बैठी और किनारे की तरफ इस तरह देखने लगी जैसे किसी के आने की राह देख रही हो। बेशक ऐसा ही था, क्योंकि उसी समय हाथ में गठरी लटकाये एक आदमी आया जिसे देखते ही दो मल्लाह किनारे पर उतर आये, एक ने उसके हाथ से गठरी लेकर बजरे की छत पर पहुँचा दी और दूसरे ने उस आदमी को अपने हाथ का हल्का सहारा देकर बजरे पर चढ़ा लिया। वह भी छत पर उस औरत के सामने खड़ा हो गया और तब इशारे से पूछा कि 'अब क्या हुक्म होता है ?' जिसके जवाब में इशारे ही से उस औरत ने गंगा के उस पार की तरफ चलने को कहा। उस आदमी ने, जो अभी आया था, माँझियों को पुकार कर कहा कि बजरा उस पार ले चलो, इसके बाद अभी आये हुए आदमी और उस औरत में दो-चार बातें इशारों में हुईं जिन्हें हम कुछ नहीं समझे। हाँ, इतना मालूम हो गया कि यह औरत गूँगी और बहरी है, यह मुँह से कुछ नहीं बोल सकती और न कान से कुछ सुन सकती है।

बजरा किनारे से खोला गया और वह पार की तरफ चला। चार माँझी डाँड़े

लगाने लगे। वह औरत छत से उतर कर नीचे चली गई और मर्द भी अपनी गठरी को, जिसे लाया था, लेकर छत से नीचे उतर आया। बजरे में नीचे दो कोठरियाँ थीं, एक में सुन्दर-सफेद फर्श बिछा हुआ था और दूसरी में एक चारपाई बिछी थी और कुछ असबाब पड़ा हुआ था। यह औरत हाथ से कुछ इशारा करके फर्श पर बैठ गई और मर्द ने एक लकड़ी की पटिया और छोटी-सी खड़िये की टुकड़ी उसके सामने रख दी और आप भी बैठ गया और दोनों में उसी लकड़ी की पटिया पर खड़िया से लिखकर बात-चीत होने लगी। अब उन दोनों में जो बातचीत हुई हम नीचे लिखते हैं, परन्तु पाठक समझ रखें कि सारी बातचीत लिखकर हुई।

पहले उस औरत ने गठरी खोली और देखने लगी कि उसमें क्या है। पीतल का एक कलमदान निकला जिसे उस औरत ने खोला। पाँच-सात चिट्ठियाँ और पुर्जे निकले जिन्हें पढ़कर उसी तरह रख दिया और दूसरी चीजें देखने लगी। दो-चार तरह के रूमाल और कुछ पुराने सिक्के देखने के बाद टीन का एक बड़ा-सा डिब्बा खोला जिसके अन्दर कोई ताज्जुब की चीज थी। डिब्बा खोलने के बाद पहले कुछ कपड़ा हटाया, जो बेठन की तौर पर लगा हुआ था, इसके बाद झाँक कर उस चीज को देखा जो उस डिब्बे के अन्दर थी।

न मालूम उस डिब्बे में ऐसी क्या चीज थी कि जिसे देखते ही उस औरत की अवस्था बिल्कुल बदल गई। झाँक के देखते ही वह हिचकी और पीछे की तरफ हट गई, पसीने से तर हो गई और बदन काँपने लगा, चेहरे पर हवाई उड़ने लगी और आँखें बन्द हो गईं। उस आदमी ने फुर्ती से बेठन का कपड़ा डाल दिया और उस डिब्बे को उसी तरह बन्द कर उस औरत के सामने से हटा लिया। उसी समय बजरे के बाहर से एक आवाज आई, "नानकजी !"

नानकप्रसाद उसी आदमी का नाम था जो गठरी लाया था। उसका कद न लम्बा और न बहुत नाटा था। बदन मोटा, रंग गोरा और ऊपर के दाँत कुछ खुड़बुड़े से थे। आवाज सुनते ही वह आदमी उठा और बाहर आया, मल्लाहों ने डाँड़ लगाना बन्द कर दिया था, और तीन सिपाही दरवाजे पर मुस्तैद खड़े थे।

नानक—(एक सिपाही से) क्या है?

सिपाही—(पार की तरफ इशारा करके) मुझे मालूम होता है कि उस पार बहुत से आदमी खड़े हैं। देखिए, कभी-कभी बादल हट जाने से जब चन्द्रमा की रोशनी पड़ती है तो साफ मालूम होता है कि वे लोग भी बहाव की तरफ ही हटे जाते हैं जिधर हमारा बजरा जा रहा है।

नानक—(गौर से देखकर) हाँ, ठीक तो है।

सिपाही—क्या ठिकाना, शायद हमारे दुश्मन ही हों।

नानक—कोई ताज्जुब नहीं, अच्छा, तुम नाव को बहाव की तरफ जाने दो, पार मत चलो।

इतना कह कर नानकप्रसाद अन्दर गया, तब तक औरत के भी हवास ठीक हो गये थे और वह उस टीन के डिब्बे की तरफ, जो इस समय बन्द था, बड़े गौर से देख

रही थी । नानक को देखकर उसने इशारे से पूछा, "क्या है ?"

इसके जवाब में नानक ने लकड़ी की पटिया पर खड़िया से लिखकर दिखाया कि "पार की तरफ बहुत से आदमी दिखाई पड़ते हैं, कौन ठिकाना, शायद हमारे दुश्मन हों।"

औरत—(लिखकर) बजरे को बहाव की तरफ जाने दो। सिपाहियों को कहो, बन्दूकें लेकर तैयार रहें। अगर कोई जल में तैर कर यहाँ आता हुआ दिखाई, पड़े तो बेशक गोली मार दें।

नानक—बहुत अच्छा।

नानक फिर बाहर आया और सिपाहियों को हुक्म सुनाकर भीतर चला गया। उस औरत ने अपने आँचल से एक ताली खोल कर नानक के हाथ में दी और इशारे से कहा कि इस टीन के डिब्बे को हमारे सन्दूक में रख दो।

नानक ने वैसा ही किया, फिर दूसरी कोठरी में गया। इसमें पलंग बिछा हुआ था और कुछ असबाब और सन्दूक रखा हुआ था और उसी ताली से एक सन्दूक खोल कर वह टीन का डिब्बा रख दिया और उसी तरह ताला बन्द कर ताली उस औरत के हवाले की। उसी समय बाहर से बन्दूक की आवाज आई।

नानक ने तुरत बाहर आकर पूछा, "क्या है ?"

सिपाही—देखिये, कई आदमी तैर कर इधर आ रहे हैं।

दूसरा—मगर बन्दूक की आवाज पाकर अब लौट चले।

नानक फिर अन्दर गया और बाहर का हाल पटिया पर लिखकर औरत को समझाया। वह भी उठ खड़ी हुई और बाहर आकर पार की तरफ देखने लगी। घण्टा भर यों ही गुजर गया और अब वे आदमी, जो पार दिखाई दे रहे थे या तैर कर इस बजरे की तरफ आ रहे थे, कहीं चले गये, दिखाई नहीं देते। नानकप्रसाद को साथ आने का इशारा करके वह औरत फिर बजरे के अन्दर चली गई और नानक भी गया। उस गठरी में और जो-जो चीजें थीं, उन्हें वह गूँगी औरत देखने लगी। तीन-चार बेशकीमत मर्दाने कपड़ों के सिवाय और उस गठरी में कुछ भी नहीं था। गठरी बाँध कर एक किनारे रख दी गई और पटिया पर लिख-लिख कर दोनों में बातचीत होने लगी।

औरत—कलमदान में जो चिट्ठियाँ हैं, वे तुमने कहाँ पाईं ?

नानक —उसी कलमदान में थीं।

औरत --और वह कलमदान कहाँ पर था ?

नानक – उसकी चारपाई के नीचे पड़ा हुआ था, घर में सन्नाटा था और कोई दिखाई न पड़ा, जो कुछ जल्दी में पाया, ले आया।

औरत —खैर, कोई हर्ज नहीं। हमें केवल उस टीन के डिब्बे से मतलब था। यह कलमदान मिल गया तो इन चिट्ठी-पुर्जों से भी बहुत काम चलेगा।

इसके अलावा और कई बातें हुई जिसके लिखने की यहाँ कोई जरूरत नहीं। रात एक पहर से ज्यादा जा चुकी थी जब वह औरत वहाँ से उठी और शमादान को

बुझा कर अपनी चारपाई पर जाकर लेट रही। नानक भी एक किनारे फर्श पर सो रहा और रात-भर नाव बेखटके चलती गई, कोई बात ऐसी नहीं हुई जो लिखने योग्य हो।

जब थोड़ी रात बाकी रही, वह औरत अपनी चारपाई से उठी और खिड़की से बाहर झाँक कर देखने लगी। इस समय आसमान बिल्कुल साफ था, चन्द्रमा के साथ-ही-साथ तारे भी समयानुसार अपनी चमक दिखा रहे थे और दो-तीन खिड़कियों की राह इस बजरे के अन्दर भी चाँदनी आ रही थी। वल्कि जिस चारपाई पर वह औरत सोई हुई थी, चन्द्रमा की रोशनी अच्छी तरह पड़ रही थी। वह औरत धीरे से चारपाई के नीचे उतरी और उस संदूक को खोला जिसमें नानक का लाया हुआ टीन का डिब्बा रखवा दिया था। डिब्बा उसमें से निकाल कर चारपाई पर रक्खा और सन्दूक बन्द करने के बाद दूसरा संदूक खोलकर उसमें से एक मोमबत्ती निकाली और चारपाई पर आकर बैठ रही। मोमबत्ती में से मोम लेकर उसने टीन के डिब्बे की दरारों को अच्छी तरह बन्द किया और हर एक जोड़ में मोम लगाया जिसमें हवा तक भी उसके अन्दर न जा सके। इस काम के बाद वह खिड़की के बाहर गर्दन निकाल कर बैठी और किनारे की तरफ देखने लगी। दो माँझी धीरे-धीरे डाँड़ खे रहे थे। जब वे थक जाते तो दूसरे दो को उठा कर उसी काम पर लगा देते और आप आराम करते।

सवेरा होते-होते वह नाव एक ऐसी जगह पहुँची जहाँ किनारे पर कुछ आबादी थी, बल्कि गंगा के किनारे ही एक ऊँचा शिवालय भी था और उतर कर गंगाजी में स्नान करने के लिए सीढ़ियाँ भी बनी हुई थीं। औरत ने उस मुकाम को अच्छी तरह देखा और जब वह बजरा उस शिवालय के ठीक सामने पहुँचा तब उसने टीन का डिब्बा जिसमें कोई अद्‌भुत बस्तु थी और जिसके सूराखों को उसने अच्छी तरह मोम से बन्द कर दिया था, जल में फेंक दिया और फिर अपनी चारपाई पर लेट रही। यह हाल किसी दूसरे को मालूम न हुआ। थोड़ी ही देर में वह आबादी पीछे रह गई और बजरा भी दूर निकल गया।

जब अच्छी तरह सवेरा हुआ, सूर्य की लालिमा निकल आई, तो उस औरत के हुक्म के मुताबिक बजरा एक जंगल के किनारे पहुँचा। उस औरत ने किनारे-किनारे चलने का हुक्म दिया। यह किनारा इसी पार का था जिस तरफ काशी पड़ती है या जिस हिस्से से बजरा खोलकर सफर शुरू किया गया था।

बजरा किनारे-किनारे जाने लगा और वह औरत किनारे के दरख्तों को बड़े गौर से देखने लगी। जंगल गुंजान और रमणीक था, सुबह के सुहावने समय में तरह-तरह के पक्षी बोल रहे थे, हवा के झपेटों के साथ जंगली फलों की मीठी खुशबू आ रही थी। वह औरत एक खिड़की में सिर रक्खे जंगल की शोभा देख रही थी। यकायक उसकी निगाह किसी चीज पर पड़ी जिसे देखते ही वह चौंकी और बाहर आकर बजरा रोकने और किनारे लगाने का इशारा करने लगी।

बजरा किनारे लगाया गया और वह गूँगी औरत अपने सिपाहियों को कुछ इशारा करके नानक को साथ लेकर नीचे उतरी।

घण्टे-भर तक वह जंगल में घूमती रही। इसी बीच में उसने अपने जरूरी काम

और नहाने-धोने से छुट्टी पा ली और तब बजरे में आकर कुछ भोजन करने के बाद उसने अपनी मर्दानी सूरत बनाई। चुस्त पायजामा, घुटने के ऊपर तक का चपकन, कमर-बन्द, सिर से बड़ा-सा मुँड़ासा बाँध और ढाल-तलवार-खंजर के अलावा एक छोटी-सी पिस्तौल, जिसमें गोली भरी हुई थी, कमर में छिपा और थोड़ी-सी गोली-बारूद भी पास रख बजरे से उतरने के लिए तैयार हुई।

नानक ने उसकी ऐसी अवस्था देखी तो सामने अड़ कर खड़ा हो गया और इशारे से पूछा कि अब हम क्या करें? इसके जवाब में उस औरत ने पटिया और खड़िया माँगी और लिख-लिखकर दोनों में बातचीत होने लगी।

औरत—तुम इसी बजरे पर अपने ठिकाने चले जाओ। मैं तुमसे आ मिलूंगी!

नानक—मैं किसी तरह तुम्हें अकेला नहीं छोड़ सकता, तुम खूब जानती हो कि तुम्हारे लिए मैंने कितनी तकलीफें उठाई हैं और नीच-से-नीच काम करने को तैयार रहा हूँ।

औरत—तुम्हारा कहना ठीक है, मगर मुझ गूँगी के साथ तुम्हारी जिन्दगी खुशी से नहीं बीत सकती। हाँ, तुम्हारी मुहब्बत के बदले में तुम्हें अमीर किये देती हूँ, जिसके जरिये तुम खूबसूरत-से-खूबसूरत औरत ढूँढ़कर शादी कर सकते हो।

नानक—अफसोस, आज तुम इस तरह की नसीहत करने पर उतारू हुईं और मेरी सच्ची मुहब्बत का कुछ खयाल न किया। मुझे धन-दौलत की परवाह नहीं और न मुझे तुम्हारे गूँगी होने का रंज है। बस, मैं इस बारे में ज्यादा बातचीत नहीं करना चाहता, या तो मुझे कबूल करो या साफ जवाब दो ताकि मैं इसी जगह तुम्हारे सामने अपनी जान देकर हमेशा के लिए छुट्टी पाऊँ। मैं लोगों के मुँह से यह नहीं सुनना चाहता कि 'रामभोली के साथ तुम्हारी मुहब्बत सच्ची न थी और तुम कुछ न कर सके।'

रामभोली—(गूँगी औरत): अभी मैं अपने कामों से निश्चिन्त नहीं हुई, जब आदमी बेफिक्र होता है तो शादी-ब्याह और हँसी-खुशी की बातें सूझती हैं, मगर इसमें शक नहीं कि तुम्हारी मुहब्बत सच्ची है और मैं तुम्हारी कद्र करती हूँ।

नानक—जब तक तुम अपने कामों से छुट्टी नहीं पातीं, मुझे अपने साथ रक्खो, मैं हर काम में तुम्हारी मदद करूँगा और जान तक दे देने को तैयार रहूँगा।

रामभोली—खैर, मैं इस बात को मंजूर करती हूँ, सिपाहियों को समझा दो कि बजरे को ले जायँ और इसमें जो चीजें हैं, अपनी हिफाजत में रक्खें, क्योंकि वह लोहे का डिब्बा भी जो तुम कल लाये थे, मैं इसी नाव में छोड़े जाती हूँ।

नानकप्रसाद खुशी के मारे ऐंठ गये। बाहर आकर सिपाहियों को बहुत-कुछ समझाने-बुझाने के बाद आप भी बदन पर हर्बे लगा हर तरह से लैस हो, साथ चलने को तैयार हो गए। रामभोली और नानक बजरे के नीचे उतरे। इशारा पाकर माँझियों ने बजरा खोल दिया और वह फिर बहाव की तरफ जाने लगा।

नानक को साथ लिये हुए रामभोली जंगल में घुसी। थोड़ी ही दूर जाकर वह एक ऐसी जगह पहुँची जहाँ बहुत-सी पगडण्डियाँ थीं वहाँ खड़ी होकर चारों तरफ देखने लगी। उसकी निगाह एक कटे हुए साखू के पेड़ पर पड़ी जिसके पत्ते सूखकर गिर चुके

थे। वह उस पेड़ के पास जाकर खड़ी हो गई और इस तरह चारों तरफ देखने लगी जैसे कोई निशान ढूँढ़ती हो। उस जगह की जमीन बहुत पथरीली और ऊँची-नीची थी। लगभग पचास गज की दूरी पर एक पत्थर का ढेर नजर आया जो आदमी के हाथ का बनाया हुआ मालूम होता था। वह उस पत्थर के ढेर के पास गई और कुछ दम लेने या सुस्ताने के लिए बैठ गई। नानक ने अपना कमरबन्द खोला और एक पत्थर की चट्टान झाड़कर उसे बिछा दिया, रामभोली उसी पर जा बैठी और नानक को अपने पास बैठने का इशारा किया।

ये दोनों आदमी अभी सुस्ताये भी न थे कि सामने से एक सवार सुर्ख पोशाक पहने इन्हीं दोनों की तरफ आता हुआ दिखाई पड़ा। पास आने पर मालूम हुआ कि यह एक नौजवान औरत है जो बड़े ठाठ के साथ हर्बे लगाये मर्दों की तरह घोड़े पर बैठी बहादुरी का नमूना दिखा रही है। वह रामभोली के पास आकर खड़ी हो गई और उस पर एक भेद वाली नजर डालकर हँसी। रामभोली ने भी उसकी हँसी का जवाब मुस्करा-कर दिया और कनखियों से नानक की तरफ इशारा किया। उस औरत ने रामभोली को अपने पास बुलाया; और जब वह घोड़े के पास जाकर खड़ी हो गई तो आप घोड़े से नीचे उतर पड़ी। कमर से एक छोटा-सा बटुआ खोल एक चिट्ठी और एक अँगूठी निकाली जिस पर एक सुर्ख नगीना जड़ा हुआ था और रामभोली के हाथ में रख दिया।

रामभोली का चेहरा गवाही दे रहा था कि वह इस अँगूठी को पाकर हद से ज्यादा खुश हुई है। रामभोली ने इज्जत देने के ढंग पर उस अँगूठी को सिर से लगाया और इसके बाद अपनी उँगली में पहन लिया, चिट्ठी कमर में खोंसकर फुर्ती से उस घोड़े पर सवार हो गई और देखते-ही-देखते जंगल में घुसकर नजरों से गायब हो गई।

नानकप्रसाद यह तमाशा देख भौचक-सा रह गया, कुछ करते-धरते नहीं बन पड़ा। न मुँह से कोई आवाज निकली और न हाथ केइशारे ही से कुछ पूछ सका, पूछता भी तो किससे? रामभोली ने तो नजर उठाके उसकी तरफ देखा तक नहीं। नानक बिल्कुल नहीं जानता था कि यह सुर्ख पोशाक वाली औरत कौन है जो यकायक यहाँ आ पहुँची और जिसने इशारेबाजी करके रामभोली को अपने घोड़े पर सवार कर भगा दिया। वह औरत नानक के पास आई और हँस के बोली—

औरत—वह औरत जो तेरे साथ थी, मेरे घोड़े पर सवार होकर चली गई, कोई हर्ज नहीं, मगर तू उदास क्यों हो गया? क्या तुझसे और उससे कोई रिश्तेदारी थी?

नानकप्रसाद—रिश्तेदारी थी तो नहीं, मगर होने वाली थी, तुमने सब चौपट कर दिया।

औरत—(मुस्कुरा कर) क्या उससे शादी करने की धुन समाई थी?

नानकप्रसाद—बेशक ऐसा ही था। वह मेरी हो चुकी थी, तुम नहीं जानतीं कि मैंने उसके लिए कैसी-कैसी तकलीफें उठाईं। अपने बाप-दादों की जमींदारी चौपट की और उसकी गुलामी करने पर तैयार हुआ।

औरत—(बैठ कर) किसकी गुलामी?

नानकप्रसाद—उसी रामभोली की, जो तुम्हारे घोड़े पर सवार होकर चली गई।

औरत—(चौंक कर) क्या नाम लिया ? जरा फिर तो कहो !

नानकप्रसाद—रामभोली।

औरत—(हंस कर) बहुत ठीक, तू मेरी सखी अर्थात् उस औरत को कब से जानता है ?

नानकप्रसाद—(कुछ चिढ़कर और मुँह बनाकर) उसे मैं लड़कपन से जानता हूँ, मगर तुम्हें सिवाय आज के कभी नहीं देखा, वह तुम्हारी सखी क्योंकर हो सकती है ?

औरत—तू झूठा बेवकूफ और उल्लू बल्कि उल्लू का इत्र है ! तू मेरी सखी को क्या जाने, जब तू मुझे नहीं जानता तो उसे क्योंकर पहचान सकता है ?

उस औरत की बातों ने नानक को आपे से बाहर कर कर दिया। वह एकदम चिढ़ गया और गुस्से में आकर म्यान से तलवार निकालकर बोला—

नानकप्रसाद—कम्बख्त औरत, तू मुझे बेवकूफ बनाती है ! जली-कटी बातें कहती है और मेरी आँखों में धूल डालना चाहती है ! अभी तेरा सिर काटके फेंक देता हूँ !

औरत—(हँसकर) शाबाश, क्यों न हो, आप जवाँमर्द जो ठहरे ! (नानक के मुँह के पास चुटकियाँ बजाकर) चेत ऐंठासिंह, जरा होश की दवा कर !

अब नानकप्रसाद बर्दाश्त न कर सका और यह कहकर कि 'ले, अपने किये का फल भोग !' उसने उस औरत पर तलवार का वार किया। औरत ने फुर्ती से अपने को बचा लिया और हाथ बढ़ा नानक की कलाई पकड़ जोर से ऐसा झटका दिया कि तलवार उसके हाथ से निकलकर दूर जा गिरी और नानक आश्चर्य में आकर उसका मुँह देखने लगा। औरत ने हँस कर नानक से कहा, "बस, इसी जवाँमर्दी पर मेरी सखी से ब्याह करने का इरादा था ! बस, जा और हिजड़ों में मिलकर नाचा कर !"

इतना कहकर औरत हट गई और पश्चिम की तरफ रवाना हुई। नानक का क्रोध अभी शान्त नहीं हुआ था। उसने अपनी तलवार, जो दूर पड़ी हुई थी, उठाकर म्यान में रख ली और कुछ सोचता हुआ तथा दाँत पीसता हुआ उस औरत के पीछे-पीछे चला। वह औरत इस इस बात से भी होशियार थी कि नानक पीछे से आकर धोखे में तलवार न मारे, वह कनखियों से पीछे की तरफ देखती जाती थी।

थोड़ी दूर जाने के बाद वह औरत एक कुएँ पर पहुँची जिसका संगीन चबूतरा एक पुर्से से कम ऊँचा न था। चारों तरफ चढ़ने के लिए सीढ़ियाँ बनी हुई थीं। कुआँ बहुत बड़ा और खूबसूरत था। वह औरत कुएँ पर चली गई और बैठ कर धीरे-धीरे कुछ गाने लगी।

समय दोपहर का था, धूप खूब निकली हुई थी, मगर इस जगह कुएँ के चारों तरफ घने पेड़ों की ऐसी छाया थी और ठंडी-ठंडी हवा आ रही थी कि नानक की तबीयत खुश हो गई। क्रोध, रंज और बदला लेने का ध्यान बिल्कुल ही जाता रहा, जिस पर उस औरत की सुरीली आवाज ने और भी रंग जमाया। वह उस औरत के सामने जाकर बैठ गया और उसका मुँह देखने लगा। दो ही तीन तान लेकर वह औरत चुप हो गई

और नानक से बोली—

औरत—अब तू मेरे पीछे-पीछे क्यों घूम रहा है ? जहाँ तेरा जी चाहे, जा और अपना काम कर । व्यर्थ समय क्यों नष्ट करता है ? अब तुझे तेरी रामभोली किसी तरह नहीं मिल सकती, उसका ध्यान अपने दिल से दूर कर दे ।

नानकप्रसाद—रामभोली झख मारेगी और मेरे पास आवेगी, वह मेरे कब्जे में है । उसकी एक ऐसी चीज मेरे पास है जिसे वह जीते-जी कभी नहीं छोड़ सकती ।

औरत—(हँस कर) इसमें कोई शक नहीं कि तू पागल है । तेरी बातें सुनने से हँसी आती है । खैर तू जान तेरा काम जाने, मुझे इससे क्या मतलब !

इतना कहकर उस औरत ने कुएँ में झाँका और पुकार कर कहा, "कूपदेव, मुझे प्यास लगी है, जरा पानी तो पिलाना ।"

औरत की बात सुनकर नानक घबराया और जी में सोचने लगा कि यह अजब औरत है जो कुएँ पर हुकूमत चलाती है और कहती है कि मुझे पानी पिला । यह औरत मुझे पागल कहती है, मगर मैं इसी को पागल समझता हूँ, भला कुआँ इसे क्योंकर पानी पिलायेगा ? जो हो, मगर यह औरत बहुत खूबसूरत है और इसका गाना भी बहुत ही उम्दा है ।

नानक इन बातों को सोच ही रहा था कि कोई चीज देख कर चौंक पड़ा, बल्कि घबरा कर उठ खड़ा हुआ और काँपते हुए तथा डरी हुई सूरत से कुएँ की तरफ देखने लगा । वह एक हाथ था जो चाँदी के कटोरे में साफ और ठंडा जल लिये हुए कुएँ के अन्दर से निकला और इसी को देखकर नानक घबरा गया था ।

वह हाथ किनारे पर आया, उस औरत ने कटोरा ले लिया और जल पीने के बाद कटोरा उसी हाथ पर रख दिया, हाथ कुएँ के अन्दर चला गया और वह औरत फिर उसी तरह गाने लगी । नानक ने अपने जी में कहा, 'नहीं-नहीं, यह औरत पागल नहीं, बल्कि मैं ही पागल हूँ, क्योंकि इसे अभी तक न पहचान सका । बेशक यह कोई गन्धर्वी या अप्सरा है, नहीं-नहीं, देवता है जो रूप बदल कर आई है तभी तो इसके बदन में इतनी ताकत है कि मेरी कलाई पकड़ और झटका देकर इसने तलवार गिरा दी । मगर रामभोली से इसका परिचय कहाँ हुआ ?"

गाते-गाते यकायक ही वह औरत उठ खड़ी हुई और बड़े जोर से चिल्लाकर उसी कुएँ में कूद पड़ी ।

7

लाल पोशाक वाली औरत की अद्‌भुत बातों ने नानक को हैरान कर दिया । वह घबराकर चारों तरफ देखने लगा और डर के मारे उसकी अजब हालत हो गई । वह उस कुएँ पर भी ठहर न सका और जल्दी-जल्दी कदम बढ़ाता हुआ इस उम्मीद में

गंगाजी की तरफ रवाना हुआ कि अगर हो सके तो किनारे-किनारे चलकर उस बजरे तक पहुँच जाय, मगर यह भी न हो सका, क्योंकि उस जंगल में बहुत-सी पगडण्डियाँ थीं जिन पर चलकर वह रास्ता भूल गया और किसी दूसरी ही तरफ जाने लगा।

नानक लगभग आधा कोस ही गया होगा कि प्यास के मारे बचैन हो गया। वह जल खोजने लगा, मगर उस जंगल में कोई चश्मा या सोता ऐसा न मिला जिससे प्यास बुझाता। आखिर घूमते-घूमते उसे पत्तों की बनी एक झोंपड़ी नजर पड़ी जिसे वह किसी फकीर की कुटिया समझकर उसी तरफ चल पड़ा। मगर वहाँ पहुँचने पर मालूम हुआ कि उसने धोखा खाया। उस जगह कई पेड़ ऐसे थे जिनकी डालियाँ झुक-कर और आपस में मिलकर ऐसी हो रही थीं कि दूर से झोंपड़ी मालूम पड़ती थी, तो भी नानक के लिए वह जगह बहुत उत्तम सिद्ध हुई। क्योंकि उन्हीं पेड़ों में उसे एक चश्मा साफ पानी का बहता हुआ दिखाई पड़ा जिसके दोनों तरफ खुशनुमा सायेदार पेड़ लगे हुए थे जिन्होंने एक तौर पर उस चश्मे को भी अपने साये के नीचे कर रखा था। नानक खुशी-खुशी-खुशी चश्मे के किनारे पहुँचा और हाथ-मुँह धोने के बाद जल पीकर आराम करने के लिए बैठ गया।

थोड़ी देर चश्मे के किनारे बैठे रहने के बाद दूर से कोई चीज पानी में बह कर इसी तरफ आती हुई नानक ने देखी। पास आने पर मालूम हुआ कि कोई कपड़ा है। वह जल में उतर गया और कपड़े को खींच लाकर गौर से देखने लगा क्योंकि यह वही कपड़ा था जो बजरे से उतरते समय रामभोली ने अपनी कमर में लपेट रखा था।

नानक ताज्जुब में आकर देर तक उस कपड़े को देखता और तरह-तरह की बातें सोचता रहा। रामभोली उसके देखते-देखते घोड़े पर सवार हो चली गयी थी, फिर उसे क्योंकर विश्वास हो सकता था कि यह कपड़ा रामभोली का है। तो भी उसने कई दफे अपनी आँखें मलीं और उस कपड़े को देखा, आखिर विश्वास करना ही पड़ा कि यह रामभोली की ही चादर है। रामभोली से मिलने की उम्मीद में वह चश्मे के किनारे-किनारे रवाना हुआ, जबकि उसे इस बात का गुमान हुआ कि घोड़े पर सवार होकर चले जाने के बाद रामभोली जरूर इसी चश्मे के किनारे पहुँची होगी और किसी सबब से यह कपड़ा जल में गिर पड़ा होगा।

नानक चश्मे के किनारे-किनारे कोस-भर के लगभग चला गया और चश्मे के दोनों तरह सायेदार पेड़ मिलते गये, यहाँ तक कि दूर से उसे एक छोटे से मकान की सफेदी नजर आई। वह यह सोचकर खुश हुआ कि शायद इसी मकान में रामभोली से मुलाकात हो जाय। कदम बढ़ता हुआ तेजी से जाने लगा और थोड़ी देर में उस मकान के पास जा पहुँचा।

वह मकान चश्मे के बीचोंबीच में पुल के तौर पर बना हुआ था। चश्मा बहुत चौड़ा न था, उसकी चौड़ाई बीस-पचीस हाथ से ज्यादा न होगी। चश्मे के दोनों पार की जमीन इस मकान के नीचे आ गई थी और बीच में पानी बह जाने के लिए नहर की चौड़ाई के बराबर पुल की तरह का एक दर बना हुआ था। नानक इस मकान को देख-

कर बहुत ही खुश हुआ और सोचने लगा कि यह जरूर किसी मनचले शौकीन का बनवाया हुआ होगा। यहाँ से इस चश्मे और चारों तरफ के जंगल की बहार खूब ही नजर आती है। इस मकान के अन्दर चलकर देखना चाहिए, खाली है या कोई इसमें रहता है। नानक उस मकान के सामने की तरफ गया। उसकी कुर्सी बहुत ऊँची थी, पन्द्रह सीढ़ियाँ चढ़ने के बाद वह दरवाजे पर पहुँचा। दरवाजा खुला हुआ था, बेधड़क अन्दर घुस गया।

इस मकान के चारों कोनों में चार कोठरियाँ और चारों तरफ चार दालान बरामदों के तौर पर थे जिसके आगे कमर बराबर ऊँचा जंगला लगा हुआ था अर्थात् हरएक दालान की दोनों बगल कोठरियाँ पड़ती थीं और बीचोंबीच में एक भारी कमरा था। इस मकान में किसी तरह की सजावट न थी, मगर साफ था।

दरवाजे के अन्दर पैर रखते ही बीच वाले कमरे में बैठे हुए एक साधु पर नानक की निगाह पड़ी। वह मृगछाले पर बैठा हुआ था। उसकी उम्र अस्सी वर्ष से भी ज्यादा होगी। उसके बाल रुई की तरह सफेद हो रहे थे, लम्बे-लम्बे सिर के बाल सूखे और खुले रहने के सबब खूब फैले हुए थे, और दाढ़ी नाभि तक लटक रही थी। कमर में मूंज की रस्सी के सहारे कौपीन थी, और कोई कपड़ा उसके बदन पर न था, गले में जनेऊ पड़ा हुआ था और उसके दमकते हुए चेहरे पर बुजुर्गी और तपोबल की निशानी पाई जाती थी। जिस समय नानक की निगाह उस साधु पर पड़ी वह पद्मासन में बैठा हुआ ध्यान में था, आँखें बन्द थीं और हाथ जाँघों पर पड़े हुए थे। नानक उसके सामने जाकर देर तक खड़ा रहा, मगर उसे कुछ खबर न हुई। नानक ने सिर उठाकर चारों तरफ अच्छी तरह देखा, मगर सिवाय बड़ी-बड़ी दो तस्वीरों के, जिन पर पर्दा पड़ा हुआ था और जो साधु के पीछे की तरफ दीवार के साथ लगी हुई थीं, और कहीं कुछ दिखाई न पड़ा।

नानक को ताज्जुब हुआ और वह सोचने लगा कि इस मकान में किसी तरह का सामान नहीं है, फिर महात्मा का गुजर क्योंकर चलता होगा? और वे दोनों तस्वीरें कैसी हैं जिनका रहना इस मकान में जरूरी समझा गया! इसी फिक्र में वह चारों तरफ घूमने और देखने लगा। उसने हरएक दालान और कोठरी की सैर की, मगर कहीं एक तिनका भी नजर न आया। हाँ, एक कोठरी में वह नहीं जा सका, जिसका दरवाजा बन्द था, मगर जाहिर में कोई ताला या जंजीर उसके दरवाजे में दिखाई न दिया। मालूम नहीं, वह क्योंकर बन्द था। घूमता-फिरता नानक बगल के दालान में आया और बरामदे से झाँक कर नीचे की बहार देखने लगा और इसी में उसने घण्टा-भर बिता दिया।

घूम-फिरकर पुनः बाबाजी के पास गया, मगर उन्हें उसी तरह आँखें बन्द किए बैठा पाया। लाचार इस उम्मीद में एक किनारे बैठ गया कि आखिर कभी तो आँख खुलेगी। शाम होते-होते बगल की कोठरी में से, जिसका दरवाजा बन्द था और जिसके अन्दर नानक न जा सका था, शंख बजने की आवाज आई। नानक को बड़ा ही ताज्जुब

हुआ, मगर उस आवाज ने साधु का ध्यान तोड़ दिया। आँखें खुलते ही नानक पर उसकी नजर पड़ी।

साधु—तू कौन है और यहाँ क्यों आया है ?

नानक—मैं मुसाफिर हूँ और आफत का मारा भटकता हुआ इधर आ निकला। यहाँ आपके दर्शन हुए, दिल में बहुत-कुछ उम्मीदें पैदा हुईं।

साधु—मनुष्य से किसी तरह की उम्मीद न रखनी चाहिए। खैर, यह बता, तेरा मकान कहाँ है और इस जंगल में, जहाँ आकर वापस जाना मुश्किल है, तू कैसे आया ?

नानक—मैं काशी का रहने वाला हूँ। कार्यवश एक औरत के साथ, जो मेरे मकान के बगल ही में रहा करती थी, यहाँ आना हुआ। इस जंगल में उस औरत का साथ छूट गया और ऐसी विचित्र बातें देखने में आईं जिनके डर से अभी तक मेरा कलेजा काँप रहा है।

साधु—ठीक है, तेरा किस्सा बहुत बड़ा मालूम होता है जिसके सुनने की अभी मुझे फुरसत नहीं है। जरा ठहर, मैं एक काम से छुट्टी पा लूँ तो तुझसे बातें करूँ। घबराना नहीं, मैं ठीक एक घण्टे में आऊँगा।

इतना कहकर साधु वहाँ से चला गया। दरवाजे की आवाज और अन्दाज से नानक को मालूम हुआ कि साधु उसी कोठरी में गया जिसका दरवाजा बन्द था और जिसके अन्दर नानक नहीं जा सका था। लाचार नानक बैठा रहा मगर इस बात से कि साधु को आने में घण्टे भर की देर लगेगी, वह घबराया और सोचने लगा कि तब तक क्या करना चाहिए। यकायक उसका ध्यान उन दोनों तस्वीरों पर गया जो दीवार के साथ लगी हुई थीं ! जी में आया कि इस समय यहाँ सन्नाटा है, साधु महाशय भी नहीं हैं, जरा पर्दा उठा कर देखें तो यह तस्वीर किसकी है। नहीं-नहीं, ऐसा न हो कि साधु आ जायँ, अगर देख लेंगे तो रंज होंगे, जिस तस्वीर पर पर्दा पड़ा हो, उसे बिना आज्ञा कभी न देखना चाहिए। लेकिन अगर देख ही लेंगे तो क्या होगा ? साधु तो आप ही कह गए हैं कि हम घण्टे भर में आवेंगे, फिर डर किसका है ?

नानक एक तस्वीर के पास गया और डरते-डरते पर्दा उठाया। उस तस्वीर पर निगाह पड़ते ही वह बड़े खौफ से चिल्ला उठा, हाथ से पर्दा गिर पड़ा, हाँफता हुआ पीछे हटा और अपनी जगह पर आकर बैठ गया। फिर यह हिम्मत न पड़ी कि दूसरी तस्वीर देखे।

वह तस्वीर दो औरतों और एक मर्द की थी। नानक उन तीनों को पहचानता था। एक औरत तो रामभोली और दूसरी वह थी जिसके घोड़े पर सवार होकर रामभोली चली गई थी और जो नानक के देखते-देखते कुएँ में कूद पड़ी थी, तीसरी तस्वीर नानक के पिता की थी। उस तस्वीर का भाव यह था कि नानक का पिता जमीन पर पड़ा हुआ था, दूसरी औरत उसके सिर के बाल पकड़े हुए थी, रामभोली उसकी छाती पर सवार गले पर छुरी फेर रही थी।

इस तस्वीर को देखकर नानक की अजब हालत हो गई। वह एक दम घबरा उठा

और बीती हुई बातें उसकी आँखों के सामने इस तरह मालूम होने लगीं जैसे आज हुई हैं। अपने बाप की हालत याद कर उसकी आँखें डबडबा आईं और कुछ देर तक सिर नीचा किए वह कुछ सोचता रहा। आखिर में उसने एक लम्बी साँस ली और सिर उठाकर कहा, "ओफ ! क्या मेरा बाप इन औरतों के हाथ से मारा गया ? नहीं, कभी नहीं, ऐसा नहीं हो सकता। मगर इस तस्वीर में ऐसी अवस्था क्यों दिखाई गई है ? बेशक दूसरी तरफ वाली तस्वीर भी कुछ ऐसे ही ढंग की होगी और उसका भी सम्बन्ध कुछ मुझ ही से होगा। जी घबराता है, यहाँ बैठना मुश्किल है !" इतना कह नानक उठ खड़ा हुआ और बाहर बरामदे में जाकर टहलने लगा। सूर्य बिल्कुल अस्त हो गये, शाम की पहली अँधेरी चारों तरफ फैल गई और धीरे-धीरे अंधकार का नमूना दिखाने लगी। इस मकान में भी अँधेरा हो गया और नानक सोचने लगा कि यहाँ रोशनी का कोई सामान दिखाई नहीं पड़ता। क्या बाबाजी अँधेरे में ही रहते हैं ? ऐसा सुन्दर साफ मकान मगर बालने के लिए दीया तक नहीं और सिवाय एक मृगछाला के, जिस पर बाबाजी बैठते हैं, एक चटाई तक नजर नहीं आती। शायद इसका सबब यह हो कि यहाँ की जमीन बहुत साफ, चिकनी और धोई हुई है।

इस तरह के सोच-विचार में नानक को दो घण्टे बीत गए। यकायक उसे याद आया कि बाबाजी एक घण्टे का वादा करके गये थे, अब वह अपने ठिकाने आ गये होंगे और वहाँ मुझे न देख न मालूम क्या सोचते होंगे। बिना उनसे मिले और बातचीत किए यहाँ का कुछ हाल मालूम न होगा, चलूँ, देखूँ तो सही, वे आ गये या नहीं।

नानक उठकर उस कमरे में गया जिसमें बाबाजी से मुलाकात हुई थी, मगर वहाँ सिवाय अंधकार के और कुछ दिखाई न पड़ा। थोड़ी देर तक उसने आँखें फाड़-फाड़ कर अच्छी तरह तरह देखा मगर कुछ मालूम न हुआ। लाचार हो उसने पुकारा—"बाबाजी !" मगर कुछ जवाब न मिला, उसने और दो दफे पुकारा, मगर कुछ फल न हुआ। आखिर टटोलता हुआ बाबाजी के मृगछाले तक गया, मगर उसे खाली पाकर लौट आया और बाहर बरामदे में, जिसके नीचे चश्मा बह रहा था, आकर बैठ रहा।

घण्टे भर तक चुपचाप सोच-विचार में बैठे रहने के बाद बाबाजी से मिलने की उम्मीद में वह फिर उठा और उस कमरे की तरफ चला। अबकी उसने कमरे का दरवाजा भीतर से बन्द पाया, ताज्जुब और खौफ से काँपता हुआ फिर लौटा और बरामदे में अपने ठिकाने आकर बैठ रहा। इसी फेर में पहर भर से ज्यादा रात गुजर गई और चारों तरफ से जंगल में बोलते हुए दरिन्दे जानवरों की आवाजें आने लगीं जिनके खौफ से वह इस लायक न रहा कि मकान के नीचे उतरे, बल्कि बरामदे में रहना भी उसने नापसन्द किया और बगल वाली कोठरी में घुसकर किवाड़ बन्द करके सो रहा। नानक आज दिन भर भूखा रहा और इस समय भी उसे खाने को कुछ न मिला, फिर भला नींद क्यों आने लगी थी। इसके अतिरिक्त उसने दिन भर में ताज्जुब पैदा करने वाली कई तरह की बातें देखी और सुनी थीं, जो अभी तक उसकी आँखों के सामने घूम रही थीं और नींद की बाधक हो रही थीं। आधी रात बीतने पर उसने और भी ताज्जुब की बातें देखीं।

रात आधी से कुछ ज्यादा जा चुकी थी जब नानक के कानों में दो आदमियों की बातचीत की आवाज आई। वह गौर से सुनने लगा क्योंकि जो कुछ बातचीत हो रही थी उसे वह अच्छी तरह सुन और समझ सकता था। नीचे लिखी बातें उसने सुनीं, आवाज बारीक होने से नानक ने समझा कि वे दोनों औरतें हैं —

एक—नानक ने इश्क को दिल्लगी समझ लिया।

दूसरी—इस कम्बख्त को सूझी क्या जो अपना घर-बार छोड़कर इस तरह एक औरत के पीछे निकल पड़ा ?

एक—यह तो उसी से पूछना चाहिए।

दूसरी—बाबाजी ने उससे मिलना मुनासिब न समझा। मालूम नहीं, इसका क्या सबब है।

एक—जो हो, मगर यह नानक आदमी बहुत ही होशियार और चालाक है, ताज्जुब नहीं कि उसने जो कुछ इरादा कर रक्खा है, उसे पूरा करे !

दूसरी—यह जरा मुश्किल है, मुझे उम्मीद नहीं कि रानी इसे छोड़ दे क्यों कि वह इसके खून की प्यासी हो रही है। हाँ, अगर यह उस बजरे पर पहुँच कर वह डिब्बा अपने कब्जे में कर ले, तो फिर इसका कोई कुछ न कर सकेगा।

एक—(हँस कर, जिसकी आवाज नानक ने अच्छी तरह सुनी) यह तो हो नहीं सकता।

दूसरी—खैर, इन बातों से अपने को क्या मतलब ? हम लौंडियों में इतनी अक्ल कहाँ कि इन बातों पर बहस करें।

एक—क्या लौंडी होने से अक्ल में बट्टा लग जाता है ?

दूसरी—नहीं, मगर असली बातों की लौंडियों को खबर ही कब होती है !

एक—मुझे तो खबर है।

दूसरी—सो क्या ?

एक—यही कि दम-भर में नानक गिरफ्तार कर लिया जायेगा। बस अब बातचीत करना मुनासिब नहीं, हरिहर आता ही होगा।

इसके बाद फिर नानक ने कुछ न सुना मगर इन बातों ने उसे परेशान कर दिया, डर के मारे काँपता हुआ उठ बैठा और चुपचाप यहाँ से भाग चलने पर मुस्तैद हुआ। धीरे से किवाड़ खोलकर कोठरी के बाहर आया, चारों तरफ सन्नाटा था। इस मकान से बाहर निकलकर जंगल में भालू, चीते या शेर के मिलने का डर जरूर था मगर इस मकान में रहकर उसने बचाव की कोई सूरत न समझी, क्योंकि उन दोनों औरतों की बातों ने उसे हर तरह से निराश कर दिया था। हाँ बजरे पर पहुँच उस डिब्बे पर कब्जा कर लेने के खयाल ने उसे बेबस कर दिया था और जहाँ तक जल्द हो सके, बजरे तक पहुँचना उसने अपने लिए उत्तम समझा।

नानक बरामदे से होता हुआ सदर दरवाजे पर आया और सीढ़ी के नीचे उतरना ही चाहता था कि दूसरे दालान में से झपटते हुए कई आदमियों ने आकर उसे गिरफ्तार कर लिया। उन आदमियों ने जबर्दस्ती नानक की आँखें चादर से बाँध दीं

और कहा, "जिधर हम ले चलें, चुपचाप चला चल, नहीं तो तेरे लिए अच्छा न होगा।" लाचार नानक को ऐसा ही करना पड़ा।

नानक कीं आँखें बन्द थीं और हर तरह से लाचार था, तो भी वह रास्ते की चलाई पर खूब ध्यान दिये हुए था। आधे घण्टे तक वह बराबर चलता गया, पत्तों की खड़खड़ाहट और जमीन की नमी से उसने जाना कि वह जंगल ही जंगल जा रहा है। इसके बाद एक ड्योढ़ी लाँघने की नौबत आई और उसे मालूम हुआ कि वह किसी फाटक के अन्दर जाकर पत्थर पर या किसी पक्की जमीन पर चल रहा है। वहाँ से कई दफे बाईं और दाहिनी तरफ घूमना पड़ा। बहुत देर बाद फिर एक फाटक के लाँघने की नौबत आई और फिर उसने अपने को कच्ची जमीन पर चलते हुए पाया। कोस भर जाने के बाद फिर एक चौखट लाँघ कर पक्की जमीन पर चलने लगा। यहाँ पर नानक को विश्वास हो गया कि रास्ते का भुलावा देने के लिए मुझे बेफायदे घुमाया जा रहा है। ताज्जुब नहीं कि यह वही जगह हो जहाँ पहले आ चुके हैं।

थोड़ी दूर जाने के बाद नानक सीढ़ी पर चढ़ाया गया। बीस-पचीस सीढ़ियाँ चढ़ने के बाद फिर नीचे उतरने की नौबत आई और सीढ़ियाँ खतम होने के बाद उसकी आँखें खोल दी गईं।

नानक ने अपने को एक विचित्र स्थान में पाया। उसकी पीठ की तरफ एक ऊँची दीवार और सीढ़ियाँ थीं, सामने की तरफ खुशनुमा बाग था जिसके चारों तरफ ऊँची दीवारें थीं और उसमें रोशनी बखूबी हो रही थी। फलों के कलमी पेड़ों में लगी शीशे की छोटी-छोटी कन्दीलों में मोमबत्तियाँ जल रही थीं और बहुत से आदमी भी घूमते-फिरते दिखाई दे रहे थे। बाग के बीचोंबीच एक आलीशान बँगला था। नानक वहाँ पहुँचाया गया और उसने आसमान की तरफ देख कर मालूम किया कि अब रात बहुत थोड़ी रह गई है।

यद्यपि नानक बहुत होशियार, चालाक, बहादुर और ढीठ था, मगर इस समय बहुत ही घबराया हुआ था। उसके ज्यादा घबराने का सबब यह था कि उसके हरबे छीन लिये गए थे और वह इस लायक न रह गया कि दुश्मनों के हमला करने पर उनका मुकाबला करे या किसी तरह अपने को बचा सके। हाँ, हाथ-पैर खुले रहने के सबब नानक इस खयाल से भी बेफिक्र न था कि अगर किसी तरह भागने का मौका मिले तो भाग जाय।

बाहर ही से मालूम हुआ कि मकान में रोशनी बखूबी हो रही है। बाहर के सहन में कई दीवारगीरें जल रही थीं और चोबदार हाथ में सोने का आसा लिये नौकरी अदा कर रहे थे। उन्हीं के पास नानक खड़ा कर दिया गया और वे आदमी, जो उसे गिरफ्तार कर के लाए थे और गिनती में आठ थे, मकान के अन्दर चले गये मगर चोबदार से यह कहते गये कि इस आदमी से होशियार रहना, हम सरकार में खबर करने जाते हैं। नानक को आधे घण्टे तक वहाँ खड़ा रहना पड़ा।

जब वे लोग, जो गिरफ्तार कर लाये थे और खबर करने के लिए अन्दर गये

थे, लौटे तो नानक की तरफ देखकर बोले, "इत्तिला कर दी गई, अब तू अन्दर चला जा।"

नानक—मुझे क्या मालूम है कि कहाँ जाना होगा और रास्ता कौन है?

एक—यह मकान तुझे आप ही रास्ता बतावेगा, पूछने की जरूरत नहीं!

लाचार नानक ने चौखट के अन्दर पैर रक्खा और अपने को तीन दर के एक दालान में पाया। घूम कर पीछे की तरफ देखा तो वह दरवाजा बन्द हो गया था जिस राह से इस दालान में आया था। उसने सोचा कि वह इसी जगह में कैद हो गया और अब नहीं निकल सकता, यह सब कार्रवाई केवल इसी के लिए थी। मगर नहीं, उसका विचार ठीक न था, क्योंकि तुरन्त ही उसके सामने का दरवाजा खुला और उधर रोशनी मालूम होने लगी। डरता हुआ नानक आगे बढ़ा और चौखट के अन्दर पैर रक्खा ही था कि दो नौजवान औरतों पर नजर पड़ी जो साफ और सुथरी पोशाक पहने हुए थीं, दोनों ने नानक के दोनों हाथ पकड़ लिये और साथ ले चलीं।

नानक डरा हुआ था, मगर उसने अपने दिल को काबू में रखा, तो भी उसका कलेजा उछल रहा था और दिल में तरह-तरह की बातें पैदा हो रही थीं। कभी तो वह अपनी जिन्दगी से नाउम्मीद हो जाता, कभी यह सोचकर कि मैंने कोई कसूर नहीं किया, उसे ढाढ़स होता और कभी सोचता कि जो कुछ होना है वह तो होगा ही, मगर किसी तरह उन बातों का पता तो लगे जिनके जाने बिना जी बेचैन हो रहा है कल से जो-जो बातें ताज्जुब की देखने में आई हैं, जब तक उनका असल भेद नहीं खुलता, मेरे हवास दुरुस्त नहीं होते।

वे दोनों औरतें उसे कई दालानों और कोठरियों में घुमाती-फिराती एक ऐनी बारहदरी में ले गईं जिसमें नानक ने कुछ अजब ही तरह का समाँ देखा। यह बारहदरी अच्छी तरह से सजी हुई थी और यहाँ रोशनी भी बखूबी हो रही थी। दरबार का सारा साज-सामान यहाँ मौजूद था। बीच में जड़ाऊ सिंहासन पर एक नौजवान औरत दक्षिणी ढंग की बेशकीमत पोशाक पहने सिर से पैर तक जड़ाऊ जेवरों से लदी हुई बैठी थी। अपनी जिन्दगी में नानक ने ऐसी खूबसूरत औरत कभी नहीं देखी थी। उसे इस बात का विश्वास होना मुश्किल हो गया कि यह औरत इस लोक की रहने वाली है। उसके दाहिनी तरफ सोने की चौकी पर मृगछाला बिछाए हुए वही साधु बैठा था, जिसे नानक ने शाम को नहर वाले कमरे में देखा था। साधु के बाद गोलाकार बीस जड़ाऊ कुर्सियाँ और थीं जिन पर एक से एक बढ़ के खूबसूरत औरतें दक्षिणी ढंग की पोशाक पहने ढाल-तलवार लगाये बैठी थीं। सिंहासन के बाईं तरफ छोटे जड़ाऊ सिंहासन पर रामभोली को उन्हीं लोगों की सी पोशाक पहने ढाल-तलवार लगाये बैठी देख नानक के ताज्जुब की कोई हद न रही, मगर साथ ही इसके यह विश्वास भी हो गया कि अब उसकी जान नहीं जाती। रामभोली की बगल में जड़ाऊ कुर्सी पर वह औरत बैठी थी जिसने नानक के सामने से रामभोली को घोड़े पर भगा दिया था। उसके बाद बीस जड़ाऊ कुर्सियों पर बीस नौजवान औरतें उसी ठाठ से बैठी हुई थीं जैसी सिंहासन के दाहिनी तरफ थीं।

सामने की तरफ बीस औरतें ढाल-तलवार लगाये, जड़ाऊ आसा हाथ में लिये अदब से अपने सिर झुकाए इशारे पर हुक्म बजाने के तैयार दुपट्टी खड़ी थीं, जिनके बीच में नानक को ले जाकर खड़ा कर दिया गया।

इस दरबार को देख कर नानक की आँखों में चकाचौंध-सी आ गई। वह एक दम घबड़ा उठा और अपने चारों तरफ देखने लगा। इस बारहदरी की जिस चीज पर भी उसकी नजर पड़ती, उसे लासानी पाता। नानक एक बडे अमीर बाप का लड़का था और बड़े-बड़े राजदरबारों को देख चुका था, मगर उसकी आँखों ने यहाँ जैसी चीजें देखीं वैसी स्वप्न में भी न देखी थीं। आलों (ताकों) पर जो गुलदस्ते सजाए हुए थे वे बिल्कुल बनावटी थे और उनमें फूल-पत्तियों की जगह पर बेशकीमत जवाहिरात काम में लाये गये थे। केवल इन गुलदस्तों ही को देखकर नानक ताज्जुब करता था कि इतनी दौलत इन लोगों के पास कहाँ से आई! इसके अतिरिक्त और जितनी चीजें सजावट की वहाँ थीं, सभी इस योग्य थीं कि जिनका मिलना मनुष्यों को बहुत ही कठिन समझना चहिए। उन औरतों की पोशाक और जेवरों का अन्दाज करना तो ताकत से बाहर था।

सब तरफ से घूम-फिर कर नानक की आँखें रामभोली की तरफ जा कर अटक गईं और वह एकटक उसकी सूरत देखने लगा।

उस औरत ने जो बड़े रोब के साथ जड़ाऊ सिंहासन पर बैठी हुई थी, एक नजर सिर से पैर तक नानक को देखा और फिर रामभोली की तरफ आँखें फेरीं। रामभोली तुरन्त अपनी जगह से उठ खड़ी हुई और सामने की तरफ हटकर सिंहासन की बगल में खड़ी हो हाथ जोड़कर बोली, "यदि आज्ञा हो तो हुक्म के मुताबिक कार्रवाई की जाये? इसके जवाब में उस औरत ने, जिसे महारानी कहना उचित है, बड़े गरूर के साथ सिर हिलाया, अर्थात् मना किया और उस दूसरी की तरफ देखा जो रामभोली की बगल में बैठी थी।

यह बात नानक के लिए बड़े ताज्छुब की थी। आज उसके कानों ने एक ऐसी आवाज सुनी जो कभी सुनी न थी और न सुनने की उम्मीद थी। एक तो यही ताज्जुब की बात कि जो रामभोली उसके पड़ोस में रहती थी, जिसे नानक लड़कपन से जानता था और सिवाय उस दिन के, जिस दिन बजरे पर सवार हो सफर में निकली, जिसे कभी अपना घर छोड़ते नहीं देखा था और न कभी जिसके माँ-बाप ने उसे अपनी आँखों से दूर किया था, आज इस जगह ऐसी अवस्था और ऊँचे दर्जे पर दिखाई दी। दूसरे, जो रामभोली जन्म से गूँगी थी, जिसके माँ-बाप ने भी कभी उसे बोलते नहीं सुना, आज इस तरह उसके मुँह से मीठी आवाज निकल रही है! इस आवाज ने नानक के दिल के साथ क्या काम किया, इसे वही जानता होगा। इस बात को नानक क्योंकर समझ सकता था कि जिस रामभोली ने कभी घर से बाहर पैर नहीं निकाला वह इन लोगों में आपस के तौर क्यों पाई जाती है और ये सब औरतें कौन हैं!

नानक को इन सब बातों को अच्छी तरह सोचने का मौका न मिला। वह दूसरी औरत, जो रामभोली के बगल में कुर्सी पर बैठी हुई थी और जिसको नानक ने पहले भी

देखा था, इशारा पाते ही उठ खड़ी हुई और कुछ आगे बढ़कर नानक से बातचीत करने लगी।

औरत—नानकप्रसाद, इसके कहने की तो जरूरत नहीं कि तुम मुजरिम बनाकर यहाँ लाये गये हो और तुम्हें किसी तरह की सजा दी जायगी।

नानक—हाँ, बेशक मैं मुजरिम बनाकर लाया गया हूँ मगर असल में मुजरिम नहीं हूँ और न मैंने कोई कसूर ही किया है।

औरत—तुम्हारा कसूर यही है कि तुमने वह बड़ी तस्वीर, जो बाबाजी के कमरे में थी और जिस पर पर्दा पड़ा हुआ था, बिना आज्ञा के देखी। क्या तुम यह नहीं जानते कि जिस तस्वीर पर पर्दा पड़ा हो, उसे बिना आज्ञा के नहीं देखना चाहिए?

नानक—(कुछ सोच कर) बेशक यह कसूर तो हुआ।

औरत—हमारे यहाँ का कानून यही है कि जो ऐसा कसूर करे, उसका सिर काट लिया जाय।

नानक—अगर ऐसा कानून है तो इसे ज़ुल्म ही कहना चाहिए!

औरत—जो हो, मगर अब तुम किसी तरह बच नहीं सकते।

नानक—खैर, मैं मरने से नहीं डरता और खुशी से मरना कबूल करता हूँ यदि आप मुझे मेरे कुछ सवालों का जवाब दे दें!

औरत—तुम मरने से तो किसी तरह इनकार नहीं कर सकते, मगर मेहरबानी करके तुम्हारे एक सवाल का जवाब मिल सकता है। ज्यादा सवाल तुम नहीं कर सकते। पूछो, क्या पूछते हो?

नानक—(कुछ देर तक सोच कर) खैर, जब एक ही सवाल का जवाब मिल सकता है तो मैं यह पूछता हूँ कि (रामभोली की तरफ इशारा करके) यह यहाँ क्योंकर आईं और यहाँ इन्हें इतनी बड़ी इज्जत क्योंकर मिली?

औरत—ये तो दो सवाल हुए! अच्छा, इनमें से एक सवाल का जवाब यह दिया जाता है कि जिसके बारे में तुम पूछते हो, वह हमारी महारानी की छोटी बहिन हैं और यही सबब है कि उनके बगल में सिंहासन के ऊपर बैठी हैं।

नानक—मुझे क्योंकर विश्वास हो कि तुम सच कहती हो?

औरत—मैं धर्म की कसम खाकर कहती हूँ कि यह बात झूठ नहीं है। मानने न मानने का तुम्हें अख्तियार है!

नानक—खैर, अगर ऐसा है तो मैं किसी प्रकार मरना पसन्द नहीं करता।

औरत—(हँस कर) मरना पसन्द न करने से क्या तुम्हारी जान छोड़ दी जायगी?

नानक—बेशक ऐसा ही है। जब तक मैं मरना न मंजूर करूँगा, तुम लोग मुझे मार नहीं सकतीं।

औरत—यह तो हम लोग जानते हैं कि तुम एक भारी कुदरत रखते हो और उसके सबब से बड़े-बड़े काम कर सकते हो, मगर इस जगह तुम्हारे किये कुछ नहीं हो सकता। हाँ, एक बात अगर तुम कबूल करो तो तुम्हारी जान छोड़ दी जायगी, बल्कि

इनाम के तौर पर तुम जो माँगोगे, सो दिया जायगा।

नानक—वह क्या ?

औरत—कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह की जान, जो तुम्हारे कब्जे में है, वह महारानी के कब्जे में दे दो।

नानक—(क्रोध के मारे लाल आँखें निकाल कर) कम्बख्त, खबरदार! फिर ऐसी बात जुबान पर भी न लाना! मैं नहीं जानता था कि ऐसी खूबसूरत मण्डली कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह की दुश्मन निकलेगी। तुझ ऐसी हजारों को मैं उन पर न्यौछावर करता हूँ! बस, मालूम हो गया कि तुम लोग सिर्फ कठपुतलियाँ हो। किसकी ताकत है जो मुझे मारे या मेरे साथ किसी तरह की जबर्दस्ती करे!

उस औरत का चेहरा नानक की तरह यह बात सुनकर क्रोध के मारे लाल हो गया, बल्कि और औरतें भी जो वहाँ मौजूद थीं, नानक की दबंगता देख क्रोध के मारे काँपने लगीं, मगर महारानी के चेहरे पर क्रोध की निशानी न थी।

औरत—(तलवार खींचकर) बेशक अब तुम मारे जाओगे। बीस-बीस मर्दों की ताकत (कुर्सियों की तरफ इशारा करके) इन एक-एक औरत में और मुझमें है। यह न समझना कि तुम्हारे हाथ-पैर खुले हैं तो कुछ कर सकोगे। क्या भूल गये कि मैंने तुम्हारे हाथ से तलवार गिरा दी थी ?

नानक—इतनी ही ताकत अगर तुम लोगों में है तो दोनों कुमारों की जान मुझसे क्यों माँगती हो ? खुद जाकर उन लोगों का सिर क्यों नहीं काट लातीं ?

औरत—कोई खास सबब है कि हम लोग अपने हाथ से इस काम को नहीं करतीं, कर भी सकती हैं मगर देर होगी, इसलिए तुमसे कहती हैं। अब भी मंजूर करो; नहीं तो मैं जान लिए बिना न छोड़ूँगी।

नानक—(रामभोली की तरफ इशारा करके) उस औरत की जान, जिसे तुम महारानी की बहिन बताती हो, मेरे कब्जे में है, जरा इसका भी खयाल करना।

इतना सुनते ही रामभोली अपनी जगह से उठी और बोली, "यह कभी न समझना कि वह डिब्बा, जिसे तुम लाये थे, मैं बजरे में ही छोड़ आई और वह तुम्हारे या तुम्हारे सिपाहियों के कब्जे में है। मैंने उसे गंगा जी में फेंक दिया था और अब मँगा लिया, (हाथ का इशारा करके) देखो, उस कोने में छत से लटक रहा है।"

नानक ने घूम कर देखा और छत से उस डिब्बे को लटकता पाया। यह देख वह एकदम घबरा गया, उसके होश-हवास जाते रहे, उसके मुँह से एक चीख की आवाज निकली और वह बेहोश होकर जमीन पर गिर पड़ा।

आधी घड़ी तक नानक बेहोश पड़ा रहा। इसके बाद जब वह होश में आया, उसमें खड़े होने की ताकत न थी। वह बैठा-बैठा इस तरह सोचने लगा जैसे कि अब वह जिन्दगी से बिल्कुल ही नाउम्मीद हो चुका हो। वह औरत नंगी तलवार लिए अभी तक उसके पास खड़ी थी। एकाएक भी नानक को कोई बात याद आई जिससे उसकी हालत बिल्कुल ही बदल गई, गई हुई ताकत बदन में फिर से लौट आई और वह यह कहता हुआ कि 'मैं व्यर्थ ही सोच में पड़ा हूँ', उठ खड़ा हुआ तथा उस औरत से फिर

बातचीत करने लगा।

नानक—नहीं-नहीं, मैं कभी नहीं मर सकता।

औरत—अब तुम्हें बचाने वाला कौन है ?

नानक—(रामभोली की तरफ देख के) उस कोठरी की ताली, जिसमें किसी के खून से लिखी हुई पुस्तक रखी है।

इतना सुनते ही रामभोली चौंकी। उसका चेहरा उतर गया, सिर घूमने लगा, और वह यह कहती हुई सिंहासन की बगली पर झुक गई, "आह, गजब हो गया! भूल हुई! वह ताली तो उसी जगह छूट गई! कम्बख्त, तेरा बुरा हो, मुझे जबर्दस्ती अ···प···ने···हा···थ !"

केवल रामभोली ही की ऐसी दशा नहीं हुई बल्कि वहाँ जितनी औरतें थीं सभी का चेहरा पीला पड़ गया, खून की लाली जाती रही और सब की सब एकटक नानक की तरफ देखने लगीं। अब नानक को भी विश्वास हो गया कि उसकी जान बच गई, जो कुछ उसने सोचा था, वह ठीक निकला। कुछ देर ठहर कर नानक फिर बोला—

नानक—उस किताब को मैं पढ़ भी चुका हूँ बल्कि एक दोस्त को भी इस काम में अपना साथी बना चुका हूँ। यदि तीन दिन के अन्दर मैं उससे न मिलूँगा तो वह जरूर कोई काम शुरू कर देगा।

नानक की इस बात ने सभी की बेचैनी और बढ़ा दी। महारानी ने आँखों में आँसू भरकर अपनी बगल में बैठे बाबाजी की तरफ इस ढंग से देखा जैसे वह अपनी जिन्दगी से निराश हो चुकी हो। बाबाजी ने इशारे से उसे ढाढ़स दिया और नानक की तरफ देखकर कहा—

बाबा—शाबाश बेटे, तुमने खूब काम किया! मैं तुमसे बहुत प्रसन्न हूँ, चेला बनाने के लिए मैं भी किसी ऐसे चतुर आदमी को ढूँढ़ रहा था!

इतना कहकर बाबाजी उठे और नानक का हाथ पकड़कर दूसरी तरफ ले चले। बाबाजी का हाथ इतना कड़ा था कि नानक की कलाई दर्द करने लगी, उसे मालूम हुआ मानो लोहे के हाथ ने उसकी कलाई पकड़ी हो जो किसी तरह नर्म या ढीला नहीं हो सकता। साफ सवेरा हो चुका था बल्कि सूर्य की लालिमा ने बाग के खुशनुमा पेड़ों की ऊपर वाली टहनियों पर अपना दखल जमा लिया था जब बाबाजी नानक को लिए एक कोठरी के दरवाजे पर पहुँचे जिसमें ताला लगा हुआ था। बाबाजी ने दूसरे हाथ से एक ताली निकाली जो उनकी कमर में थी और उस कोठरी का ताला खोलकर नानक को उसके अन्दर धकेल दिया और फिर दरवाजा बन्द करके ताला लगा दिया।

चाहे दिन निकल चुका हो, मगर उस कोठरी के अन्दर नानक को रात ही का समाँ नजर आया। बिल्कुल अँधेरा था, कोई सूराख भी ऐसा नहीं था जिससे किसी तरह की रोशनी पहुँचती। नानक को यह भी नहीं मालूम हो सकता था कि यह कोठरी कितनी बड़ी है, हाँ उस कोठरी की पत्थर की जमीन इतनी सर्द थी कि घण्टे भर में ही नानक के हाथ-पैर बेकार हो गए। घण्टे भर बाद नानक को चारों तरफ की दीवार दिखाई देने लगी। मालूम हुआ कि दीवारों में से किसी तरह की चमक निकल रही है

और वह चमक धीरे-धीरे बढ़ रही है। यहाँ तक कि थोड़ी देर में वहाँ अच्छी तरह उजाला हो गया और उस जगह की हरएक चीज साफ दिखाई देने लगी।

यह कोठरी बहुत बड़ी न थी। इसके चारों कोनों में हड्डियों के ढेर लगे थे, चारों तरफ दीवारों में पुरसे भर ऊँचे चार मोखे (छेद) थे जो बहुत बड़े न थे, मगर इस लायक थे कि आदमी का सिर उनके अन्दर जा सके। नानक ने देखा कि उसके सामने की तरफ वाले (मोखे) में कोई चीज चमकती हुई दिखाई दे रही है। बहुत गौर करने पर थोड़ी देर बाद मालूम हुआ कि वे बड़ी-बड़ी दो आँखें हैं जो उसी की तरफ देख रही हैं।

उस अँधेरी कोठरी में धीरे-धीरे चमक पैदा होने और उजाला हो जाने से ही नानक डरा था, अब उन आँखों ने और भी डरा दिया। धीरे-धीरे नानक का डर बढ़ता ही गया क्योंकि उसने कलेजा दहलाने वाली और भी कई बातें यहाँ पाईं।

हम ऊपर लिख आये हैं कि उस कोठरी की जमीन पत्थर की थी। धीरे-धीरे यह जमीन गर्म होने लगी जिससे नानक के बदन में हरारत पहुँची और वह सर्दी जिसके सबब से वह लाचार हो गया था, जाती रही। आखिर वहाँ की जमीन यहाँ तक गर्म हुई कि नानक को अपनी जगह से उठना पड़ा मगर कहाँ जाता! उस कोठरी की तमाम जमीन एक-सी गरम हो रही थी, वह जिधर जाता उधर ही पैर जलता था। नानक का ध्यान फिर मोखे की तरफ गया जिसमें चमकती हुई आँखें दिखाई दी थीं, क्योंकि इस समय उसी मोखे में से एक हाथ निकालकर नानक की तरफ बढ़ रहा था। नानक दबक कर एक कोने में हो रहा जिसमें वह हाथ उस तक न पहुँचे, मगर हाथ बढ़ता ही गया यहाँ तक कि उसने नानक की कलाई पकड़ ली।

न मालूम वह हाथ कैसा था जिसने नानक की कलाई मजबूती से थाम ली। बदन के साथ छूते ही एक तरह की झुनझुनी पैदा हुई और बात की बात में इतनी बढ़ी कि नानक अपने को किसी तरह सम्हाल न सका और न उस हाथ से अपने को छुड़ा ही सका, यहाँ तक कि वह बेहोश होकर अपने आपको बिल्कुल भूल गया।

जब नानक होश में आया, उसने अपने आपको गंगा के किनारे उसी जगह पाया जहाँ वह रामभोली के साथ बजरे से उतरा था। बगल में पक्के केले का एक घौद भी रखा देखा। दिन बहुत कम बाकी था और सूर्य भगवान अस्ताचल की तरफ जा रहे थे।

8

अब हम फिर उस महारानी के दरबार का हाल लिखते हैं, जहाँ से नानक निकाला जाकर गंगा के किनारे पहुँचाया गया था।

नानक को कोठरी के अन्दर धकेल कर बाबाजी लौटे तो महारानी के पास न जाकर दूसरी ही तरफ रवाना हुए और एक बारहदरी में पहुँचे। वहाँ कई आदमी बैठे

कुछ काम कर रहे थे। बाबाजी को देखते ही वे लोग उठ खड़े हुए। बाबाजी ने उन लोगों की तरफ देख कर कहा, "नानक को मैं ठिकाने पहुँचा आया हूँ, बड़ा भारी ऐयार निकला, हम लोग उसका कुछ न कर सके। खैर, उसे गंगा किनारे उसी जगह पहुँचा दो जहाँ बजरे से उतरा था, उसके लिए कुछ खाने की चीज भी वहाँ रख देना।" इतना कह-कर बाबाजी वहाँ लौटे और महारानी के पास पहुँचे। इस समय महारानी का दरबार उस ढंग का न था और न भीड़भाड़ ही थी। सिंहासन और कुर्सियों का नाम-निशान न था; केवल फर्श बिछा हुआ था जिस पर महारानी, रामभोली और वह औरत, जिसके घोड़े पर सवार हो रामभोली नानक से जुदा हुई थी, बैठी आपस में कुछ बातें कर रही थीं। बाबाजी ने पहुँचते ही कहा, "मैं नहीं समझता था कि नानक इतना बड़ा धूर्त और चालाक निकलेगा। धनपति ने कहा था कि वह बहुत सीधा है, सहज ही में काम निकल जायगा, व्यर्थ इतना आडम्बर करना पड़ा !"

पाठक याद रखें, धनपति उसी औरत का नाम था जिसके घोड़े पर सवार होकर रामभोली नानक के सामने से भागी थी। ताज्जुब नहीं कि धनपति के नाम से बारीक खयाल वाले पाठक चौंकें और सोचें कि ऐसी औरत का नाम धनपति क्यों हुआ ! यह सोचने की बात है और आगे चलकर यह नाम कुछ रंग लावेगा।

धनपति—खैर, जो होना था, सो हो चुका, इतना तो मालूम हुआ कि हम लोग नानक के पंजे में फँस गये। अब कोई ऐसी तरकीब करनी चाहिए जिससे जान बचे और नानक के हाथ से छुटकारा मिले।

बाबाजी—मैं तो फिर भी नसीहत करूँगा कि आप लोग इस फेर न पड़ें। कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह बड़े प्रतापी हैं, उन्हें अपने अधीन करना और उनके हिस्से की चीज छीन लेना बहुत कठिन है, सहज नहीं। देखा, पहली ही सीढ़ी में आप लोगों ने कैसा धोखा खाया। ईश्वर न करे, यदि नानक मर जाय या उसे कोई मार डाले और वह किताब उसी के कब्जे में रह जाय और पता न लगे तो क्या आप लोगों के बचने की कोई सूरत हो सकती है ?

रामभोली—बेशक कभी नहीं, बेशक हम लोग बुरी मौत मारे जायेंगे।

बाबाजी—मैं बेशक जोर देता और ऐसा कभी होने न देता मगर सिवाय समझाने के और कुछ नहीं कर सकता।

महारानी—(बाबाजी की तरफ देखकर) एक दफे और उद्योग करूँगी, अगर काम न चलेगा तो फिर जो कुछ आप कहेंगे, वही किया जायगा।

बाबाजी—मर्जी तुम्हारी, मैं कुछ कह नहीं सकता।

महारानी—(धनपति और रामभोली की तरफ देख कर) सिवाय तुम दोनों के इस काम के लायक और कोई भी नहीं है।

धनपति—मैं जान लड़ाने से कब बाज आने वाली हूँ।

रामभोली—जो हुक्म होगा, करूँगी ही।

महारानी—तुम दोनों जाओ और जो कुछ करते बने, करो !

रामभोली—काम बाँट दीजिए।

महारानी—(धनपति की तरफ देख कर) नानक के कब्जे से किताब निकाल लेना तुम्हारा काम और (रामभोली की तरफ देखकर) किशोरी को गिरफ्तार करके लाना तुम्हारा काम।

बाबाजी—मगर दो बातों का ध्यान रखना, नहीं तो जीती न बचोगी !

दोनों—वह क्या ?

बाबाजी—एक तो कुंअर इन्द्रजीतसिंह या आनन्दसिंह को हाथ न लगाना, दूसरे ऐसे काम करना जिसमें नानक को तुम दोनों का पता न लगे, नहीं तो वह बिना जान लिए कभी न छोड़ेगा और तुम लोगों के किए कुछ न होगा। (रामभोली की तरफ देखकर) यह न समझना कि वह तुम्हारा मुलाहिजा करेगा, अब उसे असल हाल मालूम हो गया है, वह हम लोगों को जड़-बुनियाद से खोदकर फेंक देने का उद्योग करेगा।

महारानी—ठीक है, इसमें कोई शक नहीं। मगर यह दोनों भी चालाक हैं, अपने को बचावेंगी। (दोनों की तरफ देखकर) खैर, तुम लोग जाओ, देखो, ईश्वर क्या करता है। खूब होशियार रहना और अपने को बचाना।

दोनों—जो आज्ञा !

9

अब हम रोहतासगढ़ की तरफ चलते हैं और तहखाने में बेबस पड़ी हुई बेचारी किशोरी और कुंअर आनन्दसिंह इत्यादि की सुध लेते हैं।

जिस समय कुंअर आनन्दसिंह, भैरोंसिंह और तारासिंह तहखाने के अन्दर गिरफ्तार हो गए और राजा दिग्विजयसिंह के सामने लाये गये तो राजा के आदमियों ने उन तीनों का परिचय दिया जिसे सुन राजा हैरान रह गया और सोचने लगा कि ये तीनों यहाँ क्योंकर आ पहुँचे। किशोरी भी उसी जगह खड़ी थी। उसने सुना कि ये लोग फलाँ हैं तो वह घबरा गई। उसे विश्वास हो गया कि अब इनकी जान नहीं बचती। इस समय वह मन-ही-मन ईश्वर से प्रार्थना करने लगी कि जिस तरह हो सके, इनकी जान बचाए, इनके बदले में मेरी जान जाय तो कोई हर्ज नहीं, परन्तु मैं अपनी आँखों से इन्हें मरते नहीं देखना चाहती, इसमें कोई शक नहीं कि ये मुझी को छुड़ाने आये थे, नहीं तो इन्हें क्या मतलब था कि इतना कष्ट उठाते।

जितने आदमी तहखाने के अन्दर मौजूद थे, सभी जानते थे कि इस समय तहखाने के अन्दर कुंअर आनन्दसिंह का मददगार कोई भी नहीं है, परन्तु हमारे पाठक महाशय जानते हैं कि पण्डित जगन्नाथ ज्योतिषीजी, जो इस समय दारोगा बने यहाँ मौजूद हैं, कुंअर वीरेन्द्रसिंह की मदद जरूर करेंगे, मगर एक आदमी के किए होता ही क्या है ? तो भी ज्योतिषीजी ने हिम्मत न हारी और वह राजा से बातचीत करने लगे। ज्योतिषी जी जानते थे कि मेरे अकेले के किए ऐसे मौके पर कुछ नहीं हो सकता, और वहाँ की

किताब पढ़ने से उन्हें यह भी मालूम हो गया था कि इस तहखाने के कायदे से मुताबिक ये जरूर मारे जायेंगे, फिर भी ज्योतिषीजी को इनके बचने की उम्मीद कुछ-कुछ जरूर थी, क्योंकि पण्डित बद्रीनाथ कह गये थे कि 'आज इस तहखाने में कुँअर आनन्दसिंह आवेंगे, और उनके थोड़ी ही देर बाद कुछ आदमियों को लेकर हम भी आवेंगे।' अब ज्योतिषीजी सिवाय इसके और कुछ नहीं कर सकते थे कि राजा को बातों में लगाकर देर करें, जिसमें पण्डित बद्रीनाथ वगैरह आ जायँ और आखिर उन्होंने ऐसा ही किया। ज्योतिषीजी अर्थात् दारोगा साहब राजा के सामने गये और बोले—

दारोगा—मुझे इस बात की बड़ी खुशी है कि आप-से-आप कुँअर आनन्दसिंह हम लोगों के कब्जे में आ गये।

राजा—(सिर से पैर तक ज्योतिषीजी को अच्छी तरह देख कर) ताज्जुब है कि आप ऐसा कहते हैं! मालूम होता है कि आज आपकी अक्ल घास चरने चली गई है! छी! छी!!

दारोगा—(घबराकर और हाथ जोड़कर) सो क्यों महाराज?

राजा—(रञ्ज होकर) फिर भी आप पूछते हैं, सो क्यों? आप ही कहिये, आनन्दसिंह आप से आप यहाँ आ फँसे तो क्यों आप खुश हुए?

दारोगा—मैं यह सोचकर खुश हुआ कि जब इनकी गिरफ्तारी का हाल राजा वीरेन्द्रसिंह सुनेंगे, तो जरूर कहला भेजेंगे कि आनन्दसिंह को छोड़ दीजिए, इसके बदले में हम कुँअर कल्याणसिंह को छोड़ देंगे।

राजा—अब मुझे मालूम हो गया कि तुम्हारी अक्ल सचमुच घास चरने गई है या तुम वह दारोगा नहीं हो, कोई दूसरे हो।

दारोगा—(काँप कर) शायद आप इसलिए कहते हों कि मैंने जो कुछ अर्ज किया, इस तहखाने के कायदे के खिलाफ किया।

राजा—हाँ, अब तुम राह पर आये! बेशक ऐसा ही है। मुझे इनके यहाँ आ फँसने का रंज है। अब मैं अपनी और अपने लड़के की जिन्दगी से भी नाउम्मीद हो गया। बेशक अब यह रोहतासगढ़ उजाड़ हो गया। मैं किसी तरह कायदे के खिलाफ नहीं कर सकता, चाहे जो हो, आनन्दसिंह को अवश्य मारना पड़ेगा और आनन्दसिंह पहले-पहल यहाँ नहीं आये बल्कि इनके कई ऐयार इसके पहले भी जरूर यहाँ आकर सब हाल देख गये होंगे। कई दिनों से यहाँ के मामले में जो विचित्रता दिखाई पड़ती है यह सब उसी का नतीजा है। सच तो यह है कि इस समय की बातें सुनकर मुझे आप पर भी शक हो गया है। यहाँ का दारोगा इस तरह आनन्दसिंह के आ फँसने से कभी यह न कहता कि मैं खुश हूँ। वह जरूर समझता कि कायदे के मुताबिक इन्हें मारना पड़ेगा, इसके बदले में कल्याणसिंह मारा जायेगा, और इसके अतिरिक्त वीरेन्द्रसिंह के ऐयार लोग ऐयारी के कायदे को तिलांजलि देकर बेहोशी की दवा के बदले जहर का इस्तेमाल करेंगे और एक ही सप्ताह में रोहतासगढ़ को चौपट कर डालेंगे। इस तहखाने के दारोगा को जरूर इस बात का रंज होता।

राजा की बातें सुनकर ज्योतिषीजी की आँखें खुल गयीं। उन्होंने मन में अपनी

भूल कबूल की और गर्दन नीची करके सोचने लगे। उसी समय राजा ने पुकार कर अपने आदमियों से कहा, "इस नकली दारोगा को भी गिरफ्तार कर लो और अच्छी तरह आजमाओ कि यहाँ का दारोगा है या वीरेन्द्रसिंह का कोई ऐयार !"

बात की बात में दारोगा साहब की मुश्कें बाँध ली गयीं और राजा ने दो आदमियों को गरम पानी लाने का हुक्म दिया। नौकरों ने यह समझ कर कि यहाँ पानी गरम करने में देर होगी, ऊपर दीवानखाने में हरदम गरम पानी मौजूद रहता है, वहाँ से लाना उत्तम होगा, महाराज से आज्ञा चाही। महाराज ने इसको पसन्द करके ऊपर दीवानखाने से पानी लाने का हुक्म दिया।

दो नौकर गरम पानी लाने के लिए दौड़े, मगर तुरन्त लौट आकर बोले, "ऊपर जाने का रास्ता तो बन्द हो गया।"

महाराज—सो क्यों ! रास्ता कैसे बन्द हो सकता है ?

नौकर—क्या जाने, ऐसा क्यों हुआ ?

महाराज—ऐसा कभी नहीं हो सकता ! (ताली दिखाकर) देखो, यह ताली मेरे पास मौजूद है, इस ताली के बिना कोई कैसे उन दरवाजों को बन्द कर सकता है ?

नौकर—जो हो, मैं कुछ नहीं अर्ज कर सकता, सरकार खुद चलकर देख लें।

राजा ने स्वयं जाकर देखा तो ऊपर जाने का रास्ता अर्थात् दरवाजा बन्द पाया। ताज्जुब हुआ और सोचने लगा कि दरवाजा किसने बन्द किया ! ताली तो मेरे पास थी ! आखिर दरवाजा खोलने के लिए ताली लगाई मगर ताला न खुला। आज तक इसी ताली से बराबर इस तहखाने में आने-जाने का दरवाजा खोला जाता था, लेकिन इस समय ताली कुछ काम नहीं करती। यह अनोखी बात, जो राजा दिग्विजयसिंह के ध्यान में कभी न आयी थी, आज यकायक पैदा हो गयी। राजा के ताज्जुब की कोई हद न रही। उस तहखाने में और भी बहुत से दरवाजे उसी ताली से खुला करते थे। दिग्विजयसिंह ने ताली ठोंक-पीटकर एक-दूसरे दरवाजे में लगाई, मगर वह भी न खुला। राजा की आँखों में आँसू भर आये और यकायक उसके मुँह से यह आवाज निकली, "अब इस तहखाने की और हम लोगों की उम्र पूरी हो गयी।"

राजा दिग्विजयसिंह घबराया हुआ चारों तरफ घूमता और घड़ी-घड़ी दरवाजों में ताली लगाता था, इतने ही में उस काले रंग की भयानक मूर्ति के मुँह में से, जिसके सामने एक औरत की बलि दी जा चुकी थी, एक तरह की आवाज निकलने लगी। यह भी एक नयी बात थी। दिग्विजयसिंह और जितने आदमी वहाँ थे, सब डर गये तथा उसी तरफ देखने लगे। काँपता हुआ राजा उस मूर्ति के पास जाकर खड़ा हो गया और गौर से सुनने लगा कि क्या आवाज आती है।

थोड़ी देर तक वह आवाज समझ में न आयी, इसके बाद यह सुनाई पड़ा— "तेरी ताली केवल बारह नम्बर की कोठरी को खोल सकेगी। जहाँ तक जल्दी हो सके, किशोरी को उसमें बन्द कर दे, नहीं तो सभी की जान मुफ्त में जायगी !"

यह नयी अद्भुत और अनोखी बात देख-सुनकर राजा का कलेजा दहलने लगा, मगर उसकी समझ में कुछ न आया कि यह मूर्ति क्योंकर बोली ! आज तक कभी ऐसी

बात न हुई थी। सैकड़ों आदमी इसके सामने बलि हो गये, लेकिन ऐसी नौबत न आयी थी। अब राजा को विश्वास हो गया कि इस मूरत में कोई करामात जरूर है तभी तो बड़े लोगों ने बलि का प्रबन्ध किया है। यद्यपि राजा ऐसी बातों पर विश्वास कम रखता था, परन्तु आज उसे डर ने दबा लिया। उसने सोच-विचार में ज्यादा समय नष्ट न किया और उसी ताली से बारह नम्बर वाली कोठरी खोलकर किशोरी को उसके अन्दर बन्द कर दिया।

राजा दिग्विजयसिंह ने अभी इस काम से छुट्टी न पायी थी कि बहुत से आदमियों को साथ लेकर पण्डित बद्रीनाथ उस तहखाने में आ पहुँचे। कुँअर आनन्दसिंह और तारासिंह को बेबस पाकर झपट पड़े और बहुत जल्द उनके हाथ-पैर खोल दिए। महाराज के आदमियों ने इनका मुकाबला किया, पण्डित बद्रीनाथ के साथ जो आदमी आये थे वे लोग भी भिड़ गये। जब आनन्दसिंह, भैरोंसिंह और तारासिंह छूटे तो लड़ाई गहरी हो गयी। इन लोगों के सामने ठहरने वाला कौन था? केवल चार ऐयार ही उतने लोगों के लिए काफी थे। कई मारे गये, कई जख्मी होकर गिर पड़े। राजा दिग्विजयसिंह को गिरफ्तार कर लिया गया, वीरेन्द्रसिंह की तरफ का कोई न मरा। इन सब कामों से छुट्टी पाने के बाद किशोरी की खोज की गयी।

इस तहखाने में जो कुछ आश्चर्य की बातें हुई थीं, सभी ने देखी-सुनी थीं। लाली और ज्योतिषीजी ने सब हाल आनन्दसिंह और ऐयार लोगों को बताया और यह भी कहा कि किशोरी बारह नम्बर की कोठरी में बन्द कर दी गयी है।

पण्डित बद्रीनाथ ने दिग्विजयसिंह की कमर से ताली निकाल ली और बारह नम्बर की कोठरी खोली, मगर किशोरी को उसमें न पाया। चिराग लेकर अच्छी तरह ढूँढ़ा परन्तु किशोरी न दिखाई पड़ी, न मालूम जमीन में समा गयी या दीवार खा गयी। इस बात का आश्चर्य सभी को हुआ कि बन्द कोठरी में से किशोरी कहाँ गायब हो गयी! हाँ, एक कागज का पुर्जा उस कोठरी में जरूर मिला जिसे भैरोंसिंह ने उठा लिया और पढ़कर सभी को सुनाया। यह लिखा था--

"धनपति रंग मचायौ, साध्यौ काम।
भोली भलि मुड़ि ऐहैं यदि यहि ठाम।।"

इस 'बरवै' का मतलब किसी की समझ में न आया, लेकिन इतना विश्वास हो गया कि अब इस जगह किशोरी का मिलना कठिन है। उधर लाली इस बरवै को सुनते ही खिलखिला कर हँस पड़ी, लेकिन जब लोगों ने हँसने का सबब पूछा तो कुछ जवाब न दिया, सिर नीचा करके चुप हो रही। जब ऐयारों ने बहुत जोर दिया तो बोली, "मेरे हँसने का कोई खास सबब नहीं है। बड़ी मेहनत करके किशोरी को मैंने यहाँ से छुड़ाया था। (किशोरी के छुड़ाने के लिए जो-जो काम उसने किये थे, सब कहने के बाद) मैं सोचे हुए थी कि इस काम के बदले में राजा वीरेन्द्रसिंह से कुछ इनाम पाऊँगी, लेकिन कुछ न हुआ, मेरी मेहनत चौपट हो गयी, मेरे देखते-ही-देखते किशोरी इस कोठरी में बन्द हो गयी थी। जब आप लोगों ने कोठरी खोली तो मुझे उम्मीद थी कि उसे देखूँगी और वह अपनी जुबान से मेरे परिश्रम का हाल कहेगी, परन्तु कुछ नहीं। ईश्वर की भी

क्या विचित्र गति है, वह क्या करता है, सो कुछ समझ में नहीं आता ! यही सोचकर मैं हँसी थी और कोई बात नहीं है ।"

लाली की बातों का और सभी को चाहे विश्वास हो गया हो, लेकिन हमारे ऐयारों के दिल में उसकी बातें न बैठीं। देखना चाहिए, अब वे लोग लाली के साथ क्या सलूक करते हैं ।

पण्डित बद्रीनाथ की राय हुई कि अब इस तहखाने में ठहरना मुनासिब नहीं। जब यहाँ की अजायबातों से खुद यहाँ का राजा परेशान हो गया, तो हम लोगों की क्या बात है । यह भी उम्मीद नहीं है कि इस समय किशोरी का पता लगे । अस्तु, जहाँ तक जल्द हो सके यहाँ से चले चलना ही मुनासिब है।

जितने आदमी मर गये थे, उसी तहखाने में गड़हा खोदकर गाड़ दिये गये । बाकी बचे हुए चार-पाँच आदमियों को राजा दिग्विजयसिंह के सहित कैदियों की तरह साथ लिया और सभी का मुँह चादर से बाँध दिया । ज्योतिषीजी ने भी ताली का झब्बा सँभाला, रोज़नामचा हाथ में लिया, और सभी के साथ तहखाने से बाहर हुए । अब की दफे तहखाने से बाहर निकलते हुए जितने दरवाजे थे, सभी में ज्योतिषीजी ताला लगाते गये जिसमें उसके अन्दर कोई आने न पावे ।

तहखाने से बाहर निकलने पर लाली ने कुँअर आनन्दसिंह से कहा, "मुझे अफसोस के साथ कहना पड़ता है कि मेरी सारी मेहनत बरबाद हो गयी और किशोरी से मिलने की कोई आशा न रही ! अब यदि आप आज्ञा दें, तो मैं अपने घर जाऊँ, क्योंकि किशोरी ही की तरह मैं भी इस किले में कैद की गयी थी ।"

आनन्दसिंह—तुम्हारा मकान कहाँ है ?

लाली—मथुराजी ।

भैरोंसिंह—(आनन्दसिंह से) इसमें कोई शक नहीं कि लाली का किस्सा भी बहुत बड़ा और दिलचस्प होगा । इन्हें हमारे महाराज के पास अवश्य ले चलना चाहिए ।

बद्रीनाथ—जरूर ऐसा होना चाहिए, नहीं तो महाराज रंज होंगे ।

ऐयारों का मतलब कुँअर आनन्दसिंह समझ गये और इसी जगह से लाली को बिदा होने की आज्ञा उन्होंने न दी । लाचार लाली को कुँअर साहब के साथ ही जाना पड़ा और ये लोग बिना किसी तरह की तकलीफ पाए राजा वीरेन्द्रसिंह के लश्कर में पहुँच गये जहाँ लाली इज्जत के साथ एक खेमे में रखी गई ।

10

दूसरे दिन संध्या के समय राजा वीरेन्द्रसिंह अपने खेमे में बैठे रोहतासगढ़ के बारे में बातचीत करने लगे । पण्डित बद्रीनाथ, भैरोंसिंह, तारासिंह, ज्योतिषीजी, कुँअर

आनन्दसिंह और तेजसिंह उनके पास बैठे हुए थे। अपने-अपने तौर पर सभी ने रोहतासगढ़ के तहखाने का हाल कह सुनाया और अन्त में वीरेन्द्रसिंह से बातचीत होने लगी।

वीरेन्द्रसिंह—रोहतासगढ़ के बारे में अब क्या करना चाहिए ?

तेजसिंह—इसमें तो कोई शक नहीं कि रोहतासगढ़ के मालिक आप हो चुके ! जब राजा और दीवान दोनों आपके कब्जे में आ गये तो अब किस बात की कसर रह गई ? हाँ, अब यह सोचना है कि राजा दिग्विजय सिंह के साथ क्या सलूक किया जाय।

वीरेन्द्रसिंह—और किशोरी के लिए क्या बन्दोबस्त करना चाहिए ?

तेजसिंह—जी हाँ, यही दो बातें हैं। किशोरी के बारे में तो मैं अभी कुछ कह कह नहीं सकता, बाकी राजा दिग्विजयसिंह के बारे में पहले आपकी राय सुनना चाहता हूँ।

वीरेन्द्रसिंह—मेरी राय तो यही है कि यदि वह सच्चे दिल से ताबेदारी कबूल करे तो रोहतासगढ़ पर खिराज (मालगुजारी) मुकर्रर करके उसे छोड़ देना चाहिए।

तेजसिंह—मेरी भी यही राय है।

भैरोंसिंह—यदि वह इस समय कबूल करने के बाद पीछे बेईमानी पर कमर बाँधे, तो ?

तेजसिंह—ऐसी उम्मीद तो नहीं है। जहाँ तक मैंने सुना है, वह ईमानदार, सच्चा और बहादुर जाना जाता है। ईश्वर न करे यदि उसकी नीयत कुछ दिन बात बदल भी जाय तो हम लोगों को इसकी परवाह न करनी चाहिए।

वीरेन्द्रसिंह—इसका विचार कहाँ तक किया जायगा ! (तारासिंह की तरफ देख कर) तुम जाओ, दिग्विजयसिंह को ले आओ, मगर मेरे सामने हथकड़ी-बेड़ी के साथ मत लाना।

'जो हुक्म' कहकर तारासिंह दिग्विजयसिंह को लाने के लिए चले गये और थोड़ी ही देर में उन्हें अपने साथ लेकर हाजिर हुए। तब तक इधर-उधर की बातें होती रहीं। दिग्विजयसिंह ने अदब के साथ राजा वीरेन्द्रसिंह को सलाम किया और हाथ जोड़ कर सामने खड़ा हो गया।

वीरेन्द्रसिंह—कहिये, अब क्या इरादा है ?

दिग्विजयसिंह—यही इरादा है कि जन्म भर आपके साथ रहूँ और ताबेदारी करूँ।

वीरेन्द्रसिंह—नीयत में किसी तरह का फर्क तो नहीं है ?

दिग्विजयसिंह—आप ऐसे प्रतापी राजा के साथ खुटाई रखने वाला पूरा कम्बख्त है। वह पूरा बेवकूफ है जो किसी तरह पर आपसे जीतने की उम्मीद रक्खे। इसमें कोई शक नहीं कि आपका एक-एक ऐयार दस-दस राज्य गारत कर देने की सामर्थ्य रखता है। मुझे इस रोहतासगढ़ किले की मजबूती पर बड़ा भरोसा था, मगर अब निश्चय हो गया कि वह मेरी भूल थी। आप जिस राज्य को चाहें, बिना लड़े फतह कर सकते हैं। मेरी तो अक्ल नहीं काम करती, कुछ समझ में नहीं आता कि क्या हुआ और आपके

ऐयारों ने क्या तमाशा कर दिया। सैकड़ों वर्षों से जिस तहखाने का हाल एक भेद के तौर पर छिपा चला आता था, बल्कि सच तो यह है कि जहाँ का ठीक हाल अभी तक मुझे भी मालूम न था, उसी तहखाने पर बात-की-बात में आपके ऐयारों ने कब्जा कर लिया, यह करामात नहीं तो क्या है! बेशक ईश्वर की आप पर कृपा है और यह सब सच्चे दिल से उपासना का प्रताप है। आपसे दुश्मनी रखना अपने हाथ से अपना सिर काटना है।

दिग्विजयसिंह की बात सुन कर राजा वीरेन्द्रसिंह मुस्कुराये और उनकी तरफ देखने लगे। दिग्विजयसिंह ने जिस ढंग से ऊपर लिखी बातें कहीं, उसमें सचाई की बू आती थी। वीरेन्द्रसिंह बहुत खुश हुए और दिग्विजयसिंह को अपने पास बैठा कर बोले—

वीरेन्द्रसिंह—सुनो दिग्विजयसिंह, हम तुम्हें छोड़ देते हैं और रोहतासगढ़ की गद्दी पर अपनी तरफ से तुम्हें बैठाते हैं, मगर इस शर्त पर कि तुम हमेशा अपने को हमारा मातहत समझो और खिराज के तौर पर कुछ मालगुजारी दिया करो।

दिग्विजयसिंह—मैं तो अपने को आपका तबेदार समझ चुका, अब क्या समझूंगा। बाकी रही रोहतासगढ़ की गद्दी, सो मुझे मंजूर नहीं। इसके लिए आप कोई दूसरा नायब मुकर्रर कीजिए और मुझे अपने साथ रहने का हुक्म दीजिये।

बीरेन्द्रसिंह—तुमसे बढ़ कर और कोई नायब रोहतासगढ़ के लिए मुझे दिखाई नहीं देता।

दिग्विजयसिंह—(हाथ जोड़कर) बस, मुझ पर कृपा कीजिये। अब राज्य का जंजाल मैं नहीं उठा सकता।

आधे घण्टे तक यही हुज्जत रही। वीरेन्द्रसिंह अपने हाथ से रोहतासगढ़ की गद्दी पर दिग्विजयसिंह को बैठाना चाहते थे और दिग्विजयसिंह इन्कार करते थे, लेकिन आखिर लाचार होकर दिग्विजयसिंह को वीरेन्द्रसिंह का हुक्म मंजूर करना पड़ा, मगर साथ ही इसके उन्होंने वीरेन्द्रसिंह से इस बात का इकरार करा लिया कि महीने भर तक आपको वहाँ मेरा मेहमान बनना पड़ेगा और इतने दिनों तक रोहतासगढ़ में रहना पड़ेगा।

वीरेन्द्रसिंह ने इस बात को खुशी से मंजूर किया, क्योंकि रोहतासगढ़ के तहखाने का हाल उन्हें बहुत-कुछ मालूम करना था। वीरेन्द्रसिंह और तेजसिंह को विश्वास हो गया था कि वह तहखाना जरूर कोई तिलिस्म है।

राजा दिग्विजयसिंह ने हाथ जोड़ कर तेजसिंह की तरफ देखा और कहा, "कृपा कर मुझे समझा दीजिए कि आप और आपके मातहत ऐयार लोगों ने रोहतासगढ़ में क्या किया, अभी तक मेरी अक्ल हैरान है।"

तेजसिंह ने सब हाल खुलासा तौर पर कह सुनाया। दीवान रामानन्द का हाल सुन दिग्विजयसिंह खूब हँसे बल्कि उन्हें अपनी बेवकूफी पर भी हँसी आई और बोले, "आप लोगों से कोई बात दूर नही है।" इलके बाद दीवान रामानन्द भी उसी जगह पर बुलाये गये और दिग्विजयसिंह के हवाले किए गये और दिग्विजयसिंह के लड़के कुँअर

कल्याणसिंह को लाने के लिए भी कई आदमी चुनारगढ़ रवाना किए गए।

इन सब कामों से छुट्टी पाकर लाली के बारे में बातचीत होने लगी। तेजसिंह ने दिग्विजय सिंह से पूछा कि लाली कौन है और आपके यहाँ कब से है? इसके जवाब में दिग्विजयसिंह ने कहा कि लाली को हम बखूबी नहीं जानते। महीने भर से ज्यादा न हुआ होगा कि चार-पाँच दिन के आगे-पीछे लाली और कुन्दन दो नौजवान औरतें मेरे यहाँ पहुँचीं। उनकी चाल-ढाल और पोशाक से मुझे मालूम हुआ कि किसी इज्जतदार घराने की लड़कियाँ हैं। पूछने पर उन दोनों ने अपने को इज्जतदार घराने की लड़की जाहिर भी किया और कहा कि मैं अपनी मुसीबत के दो-तीन महीने आपके यहाँ काटना चाहती हूँ। रहम खाकर मैंने उन दोनों को इज्जत के साथ अपने यहाँ रखा, बस, इसके सिवाय और मैं कुछ नहीं जानता।

तेजसिंह—बेशक इसमें कोई भेद है, वे दोनों साधारण औरतें नहीं हैं।

ज्योतिषीजी—एक ताज्जुब की बात मैं सुनाता हूँ।

तेजसिंह—वह क्या?

ज्योतिषीजी—आपको याद होगा कि इस तहखाने का हाल कहते समय मैंने कहा था कि जब तहखाने में किशोरी और लाली को मैंने देखा, तो दोनों का नाम लेकर पुकारा जिससे उन दोनों को आश्चर्य हुआ।

तेजसिंह—हाँ-हाँ, मुझे याद है। मैं यह पूछने ही वाला था कि लाली को आपने कैसे पहचाना?

ज्योतिषीजी—बस, यही वह ताज्जुब की बात है जो अब मैं आपसे कहता हूँ।

तेजसिंह—कहिए, जल्द कहिए।

ज्योतिषीजी—एक दफे रोहतासगढ़ के तहखाने में बैठे-बैठे मेरी तबीयत घबराई तो मैं कोठरियों को खोल-खोल कर देखने लगा। उस ताली के झब्बे में, जो मेरे हाथ लगा था, एक ताली सबसे बड़ी है जो तहखाने की सब कोठरियों में लगती है मगर बाकी बहुत सी तालियों का पता मुझे अभी तक नहीं लगा कि कहाँ की हैं।

तेजसिंह—खैर, तब क्या हुआ?

ज्योतिषीजी—सब कोठरियों में अंधेरा था। चिराग ले जाकर मैं कहाँ तक देखता, मगर एक कोठरी में दीवार के साथ चमकती हुई कोई चीज दिखाई दी। यद्यपि कोठरी में अँधेरा था, तो भी अच्छी तरह मालूम हो गया कि यह कोई तस्वीर है। उस पर ऐसा मसाला लगा हुआ था कि अँधेरे में भी वह तस्वीर साफ मालूम होती थी। आँख, कान, नाक, बल्कि बाल तक साफ मालूम होते थे। तस्वीर के नीचे 'लाली' ऐसा लिखा हुआ था। मैं बड़ी देर तक ताज्जुब से उस तस्वीर को देखता रहा, आखिर कोठरी बन्द करके अपने ठिकाने चला आया। उसके बाद जब किशोरी के साथ मैंने लाली को देखा तो साफ पहचान लिया कि वह तस्वीर इसी की है। मैंने तो सोचा था कि लाली उसी जगह की रहने वाली है इसीलिए उसकी तस्वीर वहाँ पाई गई, मगर इस समय महाराज दिग्विजयसिंह की जुबानी उसका हाल सुनकर ताज्जुब होता है, लाली अगर वहाँ की रहने वाली नहीं, तो उसकी तस्वीर वहाँ कैसे पहुँची?

दिग्विजयसिंह—मैंने अभी तक वह तस्वीर नहीं देखी, ताज्जुब है।

वीरेन्द्रसिंह—अभी क्या, जब मैं आपको साथ लेकर अच्छी तरह उस तहखाने की छानबीन करूँगा, तो बहुत-सी बातें ताज्जुब की दिखाई पड़ेंगी।

दिग्विजयसिंह—ईश्वर करे, जल्द ऐसा मौका आये। अब तो आपको बहुत जल्द रोहतासढ़ चलना चाहिए।

वीरेन्द्रसिंह—(तेजसिंह की तरफ देखकर) इन्द्रजीतसिंह के बारे में क्या बन्दोबस्त हो रहा है?

तेजसिंह—मैं बेफिक्र नहीं हूँ। जासूस लोग चारों तरफ भेजे गये हैं। इस समय तक रोहतासगढ़ की कार्रवाई में फँसा हुआ था, अब स्वयं उनकी खोज में जाऊँगा, कुछ पता लगा भी है।

वीरेन्द्रसिंह—हाँ! क्या पता लगा है?

तेजसिंह—इसका हाल कल कहूँगा, आज भर और सब्र कीजिए।

राजा वीरेन्द्रसिंह अपने दोनों लड़कों को बहुत चाहते थे। इन्द्रजीतसिंह के गायब होने का रंज उन्हें बहुत था, मगर वह अपने चित्त के भाव भी खूब ही छिपाते थे और समय का ध्यान उन्हें बहुत रहता था। तेजसिंह का भरोसा उन्हें बहुत था और उन्हें मानते भी बहुत थे। जिस काम में उन्हें तेजसिंह रोकते थे, उसका नाम फिर वह जुबान पर तब तक न लाते थे जब तक तेजसिंह स्वयं उसका जिक्र न छेड़ते। यही सबब था कि इस समय वे तेजसिंह के सामने इन्द्रजीतसिंह के बारे में कुछ न बोले।

दूसरे दिन महाराज दिग्विजयसिंह सेना-सहित तेजसिंह को रोहतासगढ़ किले में ले गये। कुँअर आनन्दसिंह के नाम का डंका बजाया गया। यह मौका ऐसा था कि खुशी के जलसे होते, मगर कुँअर इन्द्रजीतसिंह के खयाल से किसी तरह की खुशी न की गई।

राजा दिग्विजयसिंह के बर्ताव और खातिरदारी से राजा वीरेन्द्रसिंह और उनके साथी लोग बहुत प्रसन्न हुए। दूसरे दिन दीवानखाने में थोड़े आदमियों की कमेटी इसलिए की गई कि अब क्या करना चाहिए। इस कमेटी में केवल नीचे लिखे बहादुर और ऐयार लोग इकट्ठे थे—राजा वीरेन्द्रसिंह, कुँअर आनन्दसिंह, तेजसिंह, देवीसिंह, पण्डित बद्रीनाथ, ज्योतिषीजी, राजा दिग्विजयसिंह और रामानन्द। इनके अतिरिक्त एक और आदमी मुँह पर नकाब डाले मौजूद था जिसे तेजसिंह अपने साथ लाये थे और उसे अपनी जमानत पर कमेटी में शरीक किया था।

वीरेन्द्रसिंह—(तेजसिंह की तरफ देखकर) इस नकाबपोश आदमी के सामने, जिसे तुम अपने साथ लाये हो, हम लोग भेद की बातें कर सकते हैं?

तेजसिंह—हाँ-हाँ, कोई हर्ज की बात नहीं है।

वीरेन्द्रसिंह—अच्छा, तो अब हम लोगों को पहले किशोरी के पता लगाने का, दूसरे यहाँ के तहखाने में जो बहुत-सी बातें जानने और विचारने लायक हैं उनके मालूम करने का, तीसरे इन्द्रजीतसिंह के खोजने का बन्दोबस्त सबसे पहले करना चाहिए।

(तेजसिंह की तरफ देखकर) तुमने कहा था कि इन्द्रजीतसिंह का कुछ हाल मालूम हो चुका है ?

तेजसिंह—जी हां, बेशक मैंने कहा था और उसका खुलासा हाल इस समय आपको मालूम हुआ चाहता है, मगर इसके पहले मैं दो-चार बातें राजा साहब से (दिग्विजयसिंह की तरफ इशारा करके) पूछना चाहता हूँ जो बहुत जरूरी हैं, इसके बाद अपने मामले में बातचीत करूँगा।

वीरेन्द्रसिंह—कोई हर्ज नहीं।

दिग्विजयसिंह—हाँ-हाँ, पूछिये।

तेजसिंह—आपके यहाँ पहले शेरसिंह[1] नाम का कोई ऐयार था ?

दिग्विजय—हाँ था, बेचारा बहुत ही नेक, ईमानदार और मेहनती आदमी था और ऐयारी के फन में पूरा उस्ताद था। रामानन्द और गोविन्दसिंह उसी के चेले हैं। उसके भाग जाने का मुझे बहुत ही रंज है। आज के दो-तीन दिन पहले दूसरी तरह का रंज था, मगर आज और तरह का अफसोस है।

तेजसिंह—दो तरह का रंज और अफसोस! इसका मतलब मेरी समझ में नहीं आया। कृपा कर साफ-साफ कहिये।

दिग्विजयसिंह—पहले उसके भाग जाने का अफसोस क्रोध के साथ था मगर आज इस बात का अफसोस है कि जिन बातों को सोच कर वह भागा था, वे बहुत ठीक थीं। उसकी तरफ से मेरा रंज होना अनुचित था। यदि इस समय वह होता तो बड़ी खुशी से आपके काम में मदद करता।

तेजसिंह—उससे आप क्यों रंज हुए थे और वह क्यों भाग गया था ?

दिग्विजयसिंह—इसका सबब यह था कि जब मैंने किशोरी को अपने कब्जे में कर लिया तो उसने मुझे बहुत-कुछ समझाया और कहा कि 'आप ऐसा काम न कीजिए बल्कि किशोरी को राजा बीरेन्द्रसिंह के यहाँ भेज दीजिये।' यह बात मैंने मंजूर न की, बल्कि उससे नाखुश होकर मैंने इरादा कर लिया कि उसे कैद कर लूँ। असल बात यह है कि मुझसे और रणधीरसिंह से दोस्ती थी, शेरसिंह मेरे यहाँ रहता था और उसका छोटा भाई गदाधरसिंह, जिसकी लड़की कमला है, आप उसे जानते होंगे...

तेजसिंह— हाँ-हाँ, हम सब कोई उसे अच्छी तरह जानते हैं।

दिग्विजयसिंह—खैर, तो गदाधरसिंह, रणधीरसिंह के यहाँ रहता था। गदाधर सिंह को मरे बहुत दिन हो गये, इसी बीच में मुझसे और रणधीरसिंह से भी कुछ बिगड़ गई। इधर जब मैंने रणधीरसिंह की नातिनी किशोरी को अपने लड़के के साथ ब्याहने का बन्दोबस्त किया तो शेरसिंह को बहुत बुरा मालूम हुआ। मेरी तबीयत भी शेरसिंह से फिर गई। मैंने सोचा कि शेरसिंह की भतीजी कमला हमारे यहाँ से किशोरी को निकाल ले जाने का जरूर उद्योग करेगी और इस काम में अपने चाचा शेरसिंह से

---

1. शेरसिंह (कमला का चाचा) जिसका हाल इस सन्तति के तीसरे भाग के तेरहवें बयान में लिखा गया है।

मदद लेगी। यह बात मेरे दिल में बैठ गई और मैंने शेरसिंह को कैद करने का विचार किया। उसे मेरा इरादा मालूम हो गया और वह चुपचाप न मालूम कहाँ भाग गया।

तेजसिंह—अब आप क्या सोचते हैं ? उसका कोई कसूर था या नहीं ?

दिग्विजयसिंह—नहीं-नहीं, वह बिल्कुल बेकसूर था, बल्कि मेरी ही भूल थी थी जिसके लिए आज मैं अफसोस करता हूँ। ईश्वर करे, उसका पता लग जाय तो मैं उससे अपना कसूर माफ कराऊँ।

तेजसिंह—आप मुझे कुछ इनाम दें तो मैं शेरसिंह का पता लगा दूं !

दिग्वजयसिंह—आप जो माँगेंगे मैं दूंगा और इसके अतिरिक्त आपका भारी अहसान मुझ पर होगा।

तेजसिंह—बस, मैं यही इनाम चाहता हूँ कि यदि शेरसिंह को ढूँढ़ कर ले आऊँ तो उसे आप हमारे राजा वीरेन्द्रसिंह के हवाले कर दें ! हम उसे अपना साथी बनाना चाहते हैं।

दिग्वजयसिंह—मैं खुशी से इस बात को मंजूर करता हूँ। वादा करने की क्या जरूरत है, जब कि मैं स्वयं राजा वीरेन्द्रसिंह का ताबेदार हूँ।

इसके बाद तेजसिंह ने उस नकाबपोश की तरफ देखा जो उनके पास बैठा हुआ था और जिसे वह अपने साथ इस कमेटी में लाये थे। नकाबपोश ने अपने मुँह पर से नकाब उतार कर फेंक दिया और यह कहता हुआ राजा दिग्विजयसिंह के पैरों पर गिर पड़ा कि 'आप मेरा कसूर माफ करें।' राजा दिग्विजयसिंह ने शेरसिंह को पहचाना, बड़ी खुशी से उठाकर गले लगाया और कहा, "नहीं-नहीं, तुम्हारा कोई कसूर नहीं, बल्कि मेरा कसूर है और मैं तुमसे क्षमा चाहता हूँ।"

शेरसिंहसिंहजते के पास जा बैठे। तेजसिंह ने कहा, "सुनो शेरसिंह, अब तुम हमारे हो चुके !"

शेरसिंह—बेशक मैं आपका हो चुका हूँ, जब आपने महाराज से वचन ले लिया तो अब क्या उज्र हो सकता है ?

राजा वीरेन्द्रसिंह ताज्जुब से ये बातें सुन रहे थे। अन्त में तेजसिंह की तरफ देखकर बोले, "तुम्हारी मुलाकात शेरसिंह से कैसे हुई ?"

तेजसिंह—शेरसिंह ने मुझसे स्वयं मिलकर सब हाल कहा। असल बात यह है हम लोगों पर भी शेरसिंह ने भारी अहसान किया है।

वीरेन्द्रसिंह—वह क्या ?

तेजसिंह—कुँअर इन्द्रजीतसिंह का पता लगाया है और अपने कई आदमी उनकी हिफाजत के लिए तैनात कर चुके हैं। इस बात का भी निश्चय दिला दिया है कि कुँअर इन्द्रजीतसिंह को किसी तरह की तकलीफ न होने पावेगी।

वीरेन्द्रसिंह—(खुश होकर और शेरसिंह की तरफ देख कर) वाह ! कहाँ पता लगा और किस हालत में है ?

शेरसिंह—जितना हाल मुझे मालूम था, मैं वह सब दीवान साहब (तेजसिंह) से कह चुका हूँ। वह आपसे कह देंगे, आप उसके जानने की जल्दी न करें। मैं इस समय

यहाँ जिस काम के लिए आया था, मेरा वह काम हो चुका। अब मैं यहाँ ठहरना मुनासिब नहीं समझता। आप लोग अपने मतलब की बातचीत करें, क्योंकि मदद के लिए मैं बहुत जल्द कुँअर इन्द्रजीतसिंह के पास पहुँचना चाहता हूँ। हाँ, यदि आप कृपा करके अपना एक ऐयार मेरे साथ कर दें तो उत्तम हो और काम भी शीघ्र हो जाय।

वीरेन्द्रसिंह—(खुश होकर) अच्छी बात है, आप जाइये और मेरे जिस ऐयार को चाहें, साथ लेते जाइये।

शेरसिंह—अगर आप मेरी मर्जी पर छोड़ते हैं तो मैं देवीसिंह को अपने साथ के लिए माँगता हूँ।

तेजसिंह—हाँ, आप खुशी से इन्हें ले जायं। (देवीसिंह की तरफ देखकर) आप तैयारी कीजिए।

देवीसिंह—मैं हरदम तैयार ही रहता हूँ। (शेरसिंह से) चलिए, अब इन लोगों का पीछा छोड़िए।

देवीसिंह को साथ लेकर शेरसिंह रवाना हुए और इधर इन लोगों में विचार होने लगा कि अब क्या करना चाहिए। घण्टे भर में यह निश्चय हुआ कि लाली से कुछ विशेष पूछने की जरूरत नहीं है, क्योंकि वह अपना हाल ठीक-ठीक कभी न कहेगी। हाँ, उसे हिफाजत में रखना चाहिए और तहखाने को अच्छी तरह देखना और वहाँ का हाल मालूम करना चाहिए।

11

अब तो कुन्दन का हाल जरूर ही लिखना पड़ा। पाठक महाशय उसका हाल जानने के लिए उत्कण्ठित हो रहे होंगे। हमने कुन्दन को रोहतासगढ़ महल के उसी भाग में छोड़ा है जिसमें किशोरी रहती थी। कुन्दन इस फिक्र में लगी रहती थी कि किशोरी किसी तरह लाली के कब्जे में न पड़ जाय।

जिस समय किशोरी को लेकर सेंध की राह लाली उस घर में उतर गई जिसमें से तहखाने का रास्ता था और यह हाल कुन्दन को मालूम हुआ, तो वह बहुत घबराई। उसने महल-भर में इस बात का गुल मचा दिया। वह सोच में पड़ी कि अब क्या करना चाहिए। हम पहले लिख आये हैं कि किशोरी और लाली के जाने के बाद 'धरो ! पकड़ो !' की आवाज लगाते हुए कई आदमी सेंध की राह उसी मकान में उतर गये जिसमें लाली और किशोरी गई थीं।

उन्हीं लोगों में मिलकर कुन्दन भी एक छोटी-सी गठरी कमर के साथ बाँध उस मकान के अन्दर चली गई और यह हाल घबराहट और शोरगुल में किसी को मालूम न हुआ। उस मकान के अन्दर भी बिल्कुल अँधेरा था। लाली ने दूसरी कोठरी में जाकर दरवाजा बन्द कर लिया, इसलिए लाचार होकर पीछा करनेवालों को लौटना

पड़ा और उन लोगों ने इस बात की इत्तिला महाराज से की, मगर कुन्दन उस मकान से न लौटी, बल्कि किसी कोने में छिप रही।

हम पहले लिख आये हैं और अब फिर लिखते हैं कि इस मकान के अन्दर तीन दरवाजे थे, एक तो वह सदर दरवाजा था जिसके बाहर पहरा पड़ा करता था, दूसरा खुला पड़ा था, तीसरे दरवाजे को खोलकर किशोरी को साथ लिये लाली गई थी।

जो दरवाजा खुला था उसके अन्दर एक दालान था। इसी दालान तक लाली और किशोरी को खोजकर पीछा करनेवाले लौट गये थे, क्योंकि कहीं आगे जाने का रास्ता उन लोगों को नहीं मिला था। जब वे लोग मकान के बाहर निकल गये तो कुन्दन ने अपनी कमर से गठरी खोली और उसमें से सामान निकालकर मोमबत्ती जलाने के बाद चारों तरफ देखने लगी।

यह एक छोटा-सा दालान था मगर चारों तरफ से बन्द था। इस दालान की दीवारों में तरह-तरह की भयानक तस्वीरें बनी हुई थीं, मगर कुन्दन ने उन पर कुछ भी ध्यान न दिया। दालान के बीचोंबीच बित्ते-बित्ते भर के ग्यारह डिब्बे लोहे के रखे हुए थे और हरएक डिब्बे पर आदमी की खोपड़ी रखी हुई थी। कुन्दन उन्हीं डिब्बों को गौर से देखने लगी। ये डिब्बे गोलाकार एक चौकी पर सजाये हुए थे। एक डिब्बे पर आधी खोपड़ी थी और बाकी डिब्बों पर पूरी-पूरी। कुन्दन इस बात को देखकर ताज्जुब कर रही थी कि इसमें से एक खोपड़ी जमीन पर क्यों पड़ी हुई है तथा औरों की तरह उसके नीचे डिब्बा क्यों नहीं है? कुन्दन ने उस डिब्बे से, जिस पर आधी खोपड़ी रखी हुई थी, गिनना शुरू किया। मालूम हुआ कि सातवें नम्बर की खोपड़ी के नीचे डिब्बा नहीं है। यकायक कुन्दन के मुँह से निकला, "ओह-ओह, बेशक, इसके नीचे का डिब्बा लाली ले गई क्योंकि असली तालीवाला डिब्बा वही था, मगर यह हाल उसे क्योंकर मालूम हुआ?"

कुन्दन ने फिर गिनना शुरू किया और टूटी हुई खोपड़ी से पाँचवें नम्बर पर रुक गई, खोपड़ी उठाकर नीचे रख दी और डिब्बे को उठा लिया। अब अच्छी तरह गौर से देखकर जोर से जमीन पर पटका। डिब्बे के चार टुकड़े हो गए, मानो चार जगहों से जोड़ लगाया हुआ हो। उसके अन्दर से एक ताली निकली जिसे देख कुन्दन हँसी और खुश होकर आप ही आप बोली, "अब देखो, लाली को मैं कैसा छकाती हूँ।"

कुन्दन ने उस ताली से काम लेना शुरू किया। उसी दालान में दीवार के साथ एक आलमारी थी जिसे कुन्दन ने उसी ताली से खोला। नीचे उतरने के लिए सीढ़ियाँ नजर आईं और वह बेखौफ नीचे उतर गई। एक कोठरी में पहुँची जहाँ एक छोटे सिंहासन के ऊपर हाथ-भर लम्बी और इससे कुछ कम चौड़ी ताँबे की एक पट्टी रखी हुई थी। कुन्दन ने उसे उठाकर अच्छी तरह देखा, मालूम हुआ कि कुछ लिखा हुआ है, अक्षर खुदे हुए हुए थे और उन पर किसी तरह की चिकनाई या तेल मला हुआ था जिसके सबब से पटिया अभी तक ज़ंग लगने से बची हुई थी। कुन्दन ने उस लेख को बड़े गौर से पढ़ा और हँसकर चारों तरफ देखने लगी। उस कोठरी की दीवार में दो तरफ दो दरवाजे थे और एक पल्ला जमीन में था। उसने एक दरवाजा खोला तो ऊपर चढ़ने

के लिए सीढ़ियाँ मिलीं। वह बेखौफ ऊपर चढ़ गई और एक ऐसी तंग कोठरी में पहुँची जिसमें चार-पाँच आदमी से ज्यादा के बैठने की जगह न थी। मगर इस कोठरी के चारों तरफ की दीवारों में छोटे-छोटे कई छेद थे, जलती हुई बत्ती बुझाकर उन छेदों में से एक छेद में आँख लगाकर कुन्दन ने देखा।

कुन्दन ने अपने को ऐसी जगह पाया, जहाँ से वह भयानक मूर्ति, जिसके आगे एक औरत बलि दी जा चुकी थी और जिसका हाल ऊपर लिख आये हैं, साफ दिखाई देती थी। थोड़ी देर में कुन्दन ने वहाँ महाराज दिग्विजयसिंह, तहखाने के दारोगा, लाली, किशोरी और बहुत-से आदमियों को देखा। उसके देखते-ही-देखते एक औरत की उस मूरत के सामने बलि दी गई और कुँअर आनन्दसिंह ऐयारों सहित पकड़े गये। इस तहखाने में से किशोरी और कुँअर आनन्दसिंह का भी कुछ हाल हम ऊपर लिख आये हैं वह सब कुन्दन ने देखा था। आखिर में कुन्दन नीचे उतर आई और उस पल्ले को, जो जमीन में था, उसी ताली से खोलकर तहखाने में उतरने के बाद बत्ती बाल कर देखने लगी। छत की तरफ निगाह करने से मालूम हुआ कि वह सिंहासन पर बैठी हुई भयानक मूर्ति, जो भीतर की तरफ से बिल्कुल (सिंहासन-सहित) पोली थी, उसके सिर के ठीक ऊपर है।

कुन्दन फिर ऊपर आई और दीवार में लगे हुए दूसरे दरवाजे को खोलकर एक सुरंग में पहुँची। कई कदम जाने के बाद एक छोटी खिड़की मिली। उसी ताली से कुन्दन ने उस खिड़की को भी खोला। अब वह उस रास्ते में पहुँच गई जो दीवानखाने और तहखाने में आने-जाने के लिए था और जिस राह से महाराज आते थे। तहखाने से दीवानखाने में जाने तक जितने दरवाजे थे, सभी को कुन्दन ने अपनी ताली से बन्द कर दिया। ताले के अलावे उन दरवाजों में एक-एक खटका और था, उसे भी कुन्दन ने चढ़ा दिया। इस काम से छुट्टी पाने के बाद फिर वहाँ पहुँची जहाँ से वह भयानक मूर्ति और आदमी सब दिखाई दे रहे थे। कुन्दन ने अपनी आँखों से राजा दिग्वजयसिंह की घबराहट देखी जो दरवाजा बन्द हो जाने से उन्हें हुई थी।

मौका देखकर कुन्दन वहाँ से उतरी और उस तहखाने में जो उस भयानक मूर्ति के नीचे था, पहुँची। थोड़ी देर तक कुछ बकने के बाद कुन्दन ने ही वे शब्द कहे जो उस भयानक मूर्ति के मुँह से निकलते हुए राजा दिग्विजयसिंह या और लोगों ने सुने थे और जिनके मुताबिक किशोरी बारह नम्बर की कोठरी में बन्द कर दी गई थी। असल में वे शब्द कुन्दन ही के कहे हुए थे, जो सब लोगों ने सुने थे।

कुन्दन वहाँ से निकलकर यह देखने के लिए कि राजा किशोरी को उस कोठरी में बन्द करता है या नहीं, फिर उस छत पर पहुँची जहाँ से सब लोग दिखाई पड़ते थे। जब कुन्दन ने देखा कि किशोरी उस कोठरी में कैद कर दी गई तो वह नीचे तहखाने में उतरी। उसी जगह से एक रास्ता था जो उस कोठरी के ठीक नीचे पहुँचता था जिसमें किशोरी बन्द की गई थी। वहाँ की छत इतनी नीची थी कि कुन्दन को बैठकर जाना पड़ा। छत में एक पेंच लगा हुआ या जिसके घुमाने से एक पत्थर की चट्टान हट गई और आँचल से मुँह ढाँपे कुन्दन किशोरी के सामने जा खड़ी हुई।

बेचारी किशोरी तरह-तरह की आफतों से आप ही बदहवास हो रही थी, अँधेरे में बत्ती लिये यकायक कुन्दन को निकलते हुए देख घबरा गई। उसने घबराहट में कुन्दन को बिल्कुल नहीं पहचाना, बल्कि उसे भूत, प्रेत या कोई आसेब समझकर डर गई और एक चीख मारकर बेहोश हो गई।

कुन्दन ने अपनी कमर से कोई दवा निकालकर किशोरी को सुँघाई जिससे वह अच्छी तरह बेहोश हो गई, इसके बाद अपनी छोटी गठरी में से सामान निकाल कर वह बरवा अर्थात् 'धनपति रंग मचायौ साध्यौ काम...' इत्यादि लिखकर कोठरी में एक तरफ रख दिया और अपनी कमर से एक चादर खोली, जिसे महल से लेती आई थी, उसी में किशोरी की गठरी बाँधी और नीचे घसीट ले गई। जिस तरह पेंच को घुमाकर पत्थर की चट्टान हटाई थी, उसी तरह रास्ता बन्द कर दिया।

यह सुरंग कोठरी के नीचे खत्म नहीं हुई थी, बल्कि दूर तक चली गई थी और आगे यह चौड़ी और ऊँची होती गई थी। किशोरी को लिये हुए कुन्दन उस सुरंग में चलने लगी। लगभग सौ कदम जाने के बाद एक दरवाजा मिला जिसे कुन्दन ने उसी ताली से खोला, आगे फिर उसी सुरंग में चलना पड़ा। आधी घड़ी के बाद सुरंग का अन्त हुआ और कुन्दन ने अपने को एक खोह के मुँह पर पाया।

इस जगह पहुँच कर कुन्दन ने सीटी बजाई। थोड़ी देर में इधर-उधर से पाँच आदमी आ मौजूद हुए और एक ने बढ़कर पूछा, "कौन है ? धनपतिजी !"

कुन्दन—हाँ रामा, तुम लोगों को यहाँ बहुत दुःख भोगना पड़ा और कई दिन तक अटकना पड़ा।

रामा—जब हमारे मालिक ही इतने दिनों तक अपने को बला में डाले हुए थे, जहाँ से जान बचाना मुश्किल था, तो फिर हम लोगों की क्या बात है। हम लोग तो खुले मैदान में थे।

कुन्दन—लो, किशोरी तो हाथ लग गई। अब इसे ले चलो और जहाँ तक जल्द हो सके, भागो।

वे लोग किशोरी को लेकर वहाँ से रवाना हुए।

पाठक तो समझ ही गये होंगे कि किशोरी धनपति के काबू में पड़ गई। कौन धनपति ? यह वही धनपति है, जिसे नानक और रामभोली के बयान में आप लोग जान चुके हैं। मेरे इस लिखने से पाठक महाशय चौंकेंगे और उनका ताज्जुब घटेगा नहीं बल्कि बढ़ जायगा, इसके साथ-ही-साथ पाठकों को नानक की यह बात कि 'वह किताब भी जो किसी के खून से लिखी गई है···' भी याद आयेगी, जिसके सबब से नानक ने अपनी जान बचाई थी। पाठक इस बात को भी जरूर सोचेंगे कि कुन्दन अगर असल में धनपति थी, तो लाली जरूर रामभोली होगी, क्योंकि धनपति को 'किसी के खून से लिखी हुई किताब' का भेद मालूम था और यह भेद रामभोली को मालूम था। जब धनपति ने रोहतासगढ़ महल में लाली के सामने उस किताब का जिक्र किया तो लाली काँप गई, जिससे मालूम होता है कि वह रामभोली ही होगी। किसी के खून से लिखी हुई किताब का नाम सुनकर अगर लाली डर गई तो धनपति भी जरूर समझ गई होगी कि यह

रामभोली है, फिर धनपति (कुन्दन) लाली से मिल क्यों न गई, क्योंकि वे दोनों तो एक ही के तुल्य थीं ? ऐसी अवस्था में तो इस बात का शक होता है कि लाली रामभोली न थी। फिर तहखाने में धनपति के लिखे हुए 'बरवे' को सुनकर लाली क्यों हँसी ? इत्यादि बातों को सोचकर पाठकों की चिन्ता अवश्य बढ़ेगी, पर क्या किया जाय, लाचारी है !

12

दूसरे दिन दो पहर दिन चढ़े बाद किशोरी की बेहोशी दूर हुई। उसने अपने को एक गहन वन में पेड़ों के झुरमुट में जमीन पर पड़े पाया और अपने पास कुन्दन और कई आदमियों को देखा। बेचारी किशोरी इन थोड़े ही दिनों में तरह-तरह की मुसीबतों में पड़ चुकी थी, बल्कि जिस सायत से वह घर से निकली, आज तक एक पल के लिए भी सुखी न हुई, मानो सुख तो उसके हिस्से ही में न था। एक मुसीबत से छूटी तो दूसरी में फँसी, दूसरी से छूटी तो तीसरी में फंसी। इस समय भी उसने अपने को बुरी अवस्था में पाया। यद्यपि कुन्दन उसके सामने बैठी थी, परन्तु उसे उसकी तरफ से किसी तौर पर कुछ भी भलाई की आशा न थी। इसके अतिरिक्त वहाँ और भी कई आदमियों को देख तथा अपने को बेहोशी की अवस्था में चैतन्य होते पा उसे विश्वास हो गया कि कुन्दन ने उसके साथ दगा की है। रात की बातें वह स्वप्न की तरह याद करने लगी और इस समय भी वह इस बात का निश्चय न कर सकी कि उसके साथ कैसा बर्ताव किया जायगा। थोड़ी देर तक वह अपनी मुसीबतों को सोचती और ईश्वर से अपनी मौत माँगती रही, आखिर उस समय उसे कुछ होश आया जब धनपति (कुन्दन) ने उसे पुकार कर कहा, "किशोरी, तू घबरा मत, तेरे साथ कोई बुराई न की जायगी।"

किशोरी—मेरी समझ में नहीं आता कि तुम क्या कह रही हो। जो कुछ तुमने किया, उससे बढ़कर और बुराई क्या हो सकती है ?

धनपति—तेरी जान नहीं मारी जायगी, बल्कि जहाँ तू रहेगी, हर तरह से आराम मिलेगा।

किशोरी—क्या इन्द्रजीतसिंह भी वहाँ दिखाई देंगे ?

धनपति—हाँ, अगर तू चाहेगी।

किशोरी—(चौंककर) हैं, क्या कहा ? अगर मैं चाहूँगी ?

धनपति—हाँ, यही बात है।

किशोरी—कैसे ?

धनपति—एक चिट्ठी इन्द्रजीतसिंह के नाम की लिखकर मुझे दे और उसमें जो कुछ मैं कहूँ, लिख दे !

किशोरी—उसमें क्या लिखना पड़ेगा ?

धनपति—केवल इतना ही लिखना पड़ेगा—"अगर आप मुझे चाहते हैं तो

बिना कुछ विचार किए इस आदमी के साथ मेरे पास चले आइये और जो कुछ य
माँगे दे दीजिए, नहीं तो मुझसे मिलने की आशा छोड़िए !"

किशोरी—(कुछ देर तक सोचने के बाद) मैं समझ गई कि तुम्हारी नीयत क्या है। नहीं, ऐसा कभी नहीं हो सकता। मैं ऐसी चिट्ठी लिखकर प्यारे इन्द्रजीतसिंह को आफत में नहीं फँसा सकती।

धनपति—तब तू किसी तरह भी नहीं छूट सकती।

किशोरी—जो भी हो।

धनपति—बल्कि तेरी जान भी चली जायगी।

किशोरी—बला से, इन्द्रजीतसिंह के नाम पर मैं जान देने को तैयार हूँ।

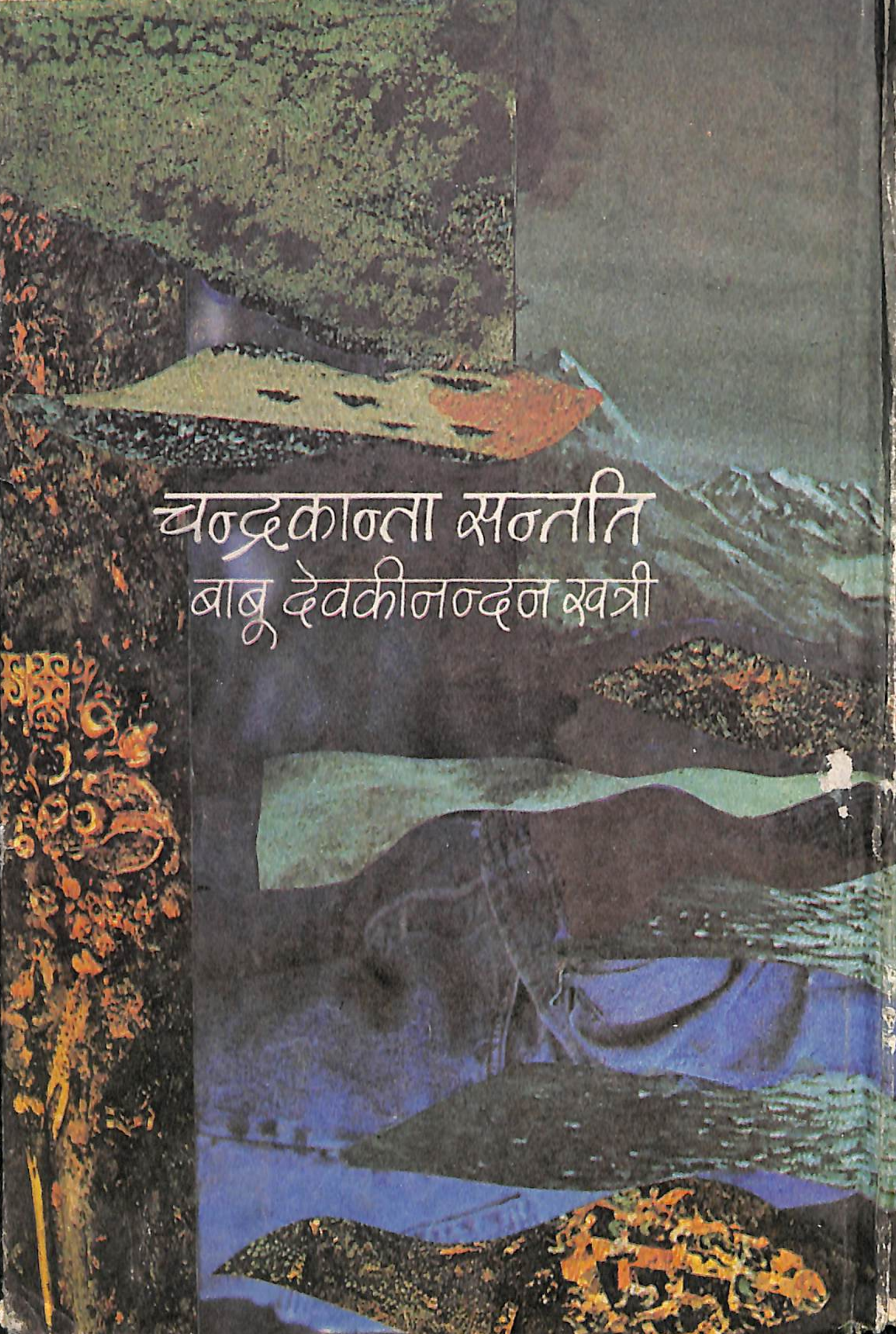
इतना सुनते ही धनपति (कुन्दन) का चेहरा मारे गुस्से के लाल हो गया, अपने साथियों की तरफ देखकर बोली, "अब मैं इसे नहीं छोड़ सकती, लाचार हूँ। इसके हाथ-पैर बाँधो और मुझे तलवार दो !" हुक्म पाते ही उसके साथियों ने बड़ी बेरहमी के साथ बेचारी किशोरी के हाथ-पैर बाँध दिए और धनपति तलवार लेकर किशोरी का सिर काटने के लिए आगे बढ़ी। उसी समय धनपति के एक साथी ने कहा, "नहीं, इस तरह मारना मुनासिब न होगा। हम लोग बात-की-बात में सूखी लकड़ियाँ बटोरकर ढेर करते हैं, इसे उसी पर रख कर फूँक दो, जलकर भस्म हो जायगी और हवा के झोंकों में इसकी राख का भी पता न लगेगा।"

इस राय को धनपति ने पसन्द किया और ऐसा ही करने के लिए उन्हें हुक्म दे दिया। संगदिल हरामखोरों ने थोड़ी ही देर में जंगल से चुनकर सूखी लकड़ियों का ढेर दिया। हाथ-पैर बाँध कर बेबस की हुई किशोरी उसी पर रख दी गई। धनपति के साथियों में से एक ने बटुए से सामान निकालकर एक छोटी-सी मशाल जलायी और उसे धनपति ने अपने हाथ में ले लिया। मुँह बन्द किए हुए किशोरी यह सब बात देख, सु और सह रही थी। जिस समय धनपति मशाल लिये चिता के पास पहुँची, किशोरी ने ऊँचे स्वर में कहा—

"हे अग्निदेव, तुम साक्षी रहना ! मैं कुँअर इन्द्रजीतसिंह की मुहब्बत में खुशी-खुशी अपनी जान देती हूँ। मैं खूब जानती हूँ कि तुम्हारी आँच प्यारे की जुदाई की आँच से बढ़कर नहीं है। जान निकलने में मुझे कुछ भी कष्ट न होगा। प्यारे इन्द्रजीत ! देखना, मेरे लिए दुःखी न होना, बल्कि मुझे बिलकुल ही भूल जाना !!

हाय ! प्रेम से भरी हुई बेचारी किशोरी की दिल को टुकड़े-टुकड़े कर देने वाली इन बातों से भी संगदिलों का दिल नरम न हुआ और हरामजादी कुन्दन ने, नहीं-नहीं धनपति ने, चिता में मशाल रख ही दी।

□□


चन्द्रकान्ता सन्तति
बाबु देवकीनन्दन खत्री